माँ

मक्सिम गोर्की

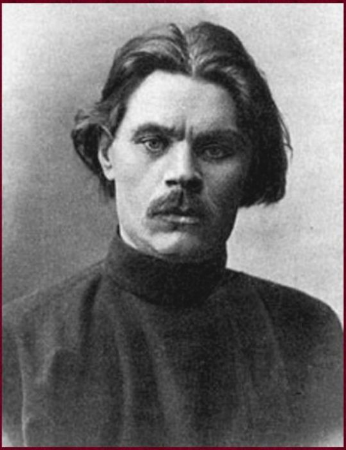

मक्सिम गोर्की

आप जब पैदा हुए थे तो सर्दियाँ उतार पर थीं, वसन्त क्रियाशील हो रहा था, और विषुव निकट आ रहा था। यह संयोग आपके समूचे जीवन के लिए प्रतीकात्मक है, एक जीवन जो पुरानी दुनिया के पराभव और झंझावातों से आविर्भूत, नयी दुनिया के जन्म के साथ दृढ़तापूर्वक जुड़ा हुआ है।

– रोम्याँ रोलाँ

(गोर्की को लिखे एक पत्र से)

"यह एक ज़रूरी किताब है", लेनिन ने 'माँ' के बारे में कहा था, "क्योंकि बहुतेरे मज़दूर सहज बोध से और स्वतःस्फूर्त तरीक़े से क्रान्तिकारी आन्दोलन में शामिल हो गये हैं, और अब वे 'माँ' पढ़ सकते हैं और इससे विशेष तौर पर लाभान्वित हो सकते हैं।"

यह उपन्यास वास्तविक घटनाओं पर आधाारित है जो वोल्गा के किनारे सोर्मोवो नगर में बीसवीं शताब्दी की शुरुआत में घटित हुईं। लेखक ने अपने प्रमुख चरित्रों – युवा सर्वहारा बोल्शेविक पावेल व्लासोव और उसकी माँ निलोवना में जो अभिलाक्षणिकताएँ निरूपित की हैं, उनमें से बहुतेरी वास्तविक जीवन के दो चरित्रों – प्योत्र अन्द्रेयेविच और आन्ना किरिलोवना ज़ालोमोव से उधार ली गयी हैं जिनसे गोर्की के दोस्ताना सम्बन्ध थे। लेकिन गोर्की की यह पुस्तक महज़ एक मज़दूर-परिवार की नियति का चित्रण करने के बजाय, समूचे सर्वहारा वर्ग के भवितव्य को विलक्षण शक्ति के साथ चित्रित करती है।

पाठकों के लिए यह सूचना दिलचस्प हो सकती है कि 'माँ' सबसे पहले रूसी के बजाय अंग्रेज़ी भाषा में प्रकाशित हुई थी। यह 1906 का वर्ष था जब ज़ारशाही के अत्याचार के शिकार गोर्की आप्रवासी के रूप में विदेश में रह रहे थे। 1905-07 की पहली रूसी क्रान्ति के समय लिखी गयी यह पुस्तक आज भी समूची दुनिया के पाठकों के बीच अत्यधिक लोकप्रिय है। दुनिया की पचास से अधिक भाषाओं में इसके सैकड़ों संस्करण निकल चुके हैं और करोड़ों पाठकों के जीवन को इसने प्रभावित किया है।

मक्सिम गोर्की लिखित

माँ

यह उपन्यास परिकल्पना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित किया गया है व प्रगतिशील साहित्य के वितरक जनचेतना द्वारा कम से कम दामों में जनता तक पहुँचाया जा रहा है। अगर आप पीडीएफ की बजाय प्रिण्ट कॉपी से पढ़ना चाहते हैं तो जनचेतना से सम्पर्क कर सकते हैं या फिर अमेजन से खरीद सकते हैं।

अमेजन लिंक : https://www.amazon.in/dp/8189760408

जनचेतना सम्पर्क : D-68, Niralanagar, Lucknow-226020
0522-4108495; 09721481546
janchetna.books@gmail.com
Website - http://janchetnabooks.org

माँ

(उपन्यास)

मक्सिम गोर्की

परिकल्पना प्रकाशन
लखनऊ

मूल्य : रु. 95.00

पहला संस्करण : जनवरी, 2002
पुनर्मुद्रण : जनवरी, 2004
दूसरा संस्करण : जनवरी, 2006
तीसरा संस्करण : जनवरी, 2010

परिकल्पना प्रकाशन
डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226 020 द्वारा प्रकाशित

कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फ़ाउण्डेशन द्वारा टाइपसेटिंग

सी. एस. ग्राफ़िक्स, दरियागंज, दिल्ली-110002 द्वारा मुद्रित

आवरण : **रामबाबू**

Maan by *Maxim Gorky*

ISBN 978-81-89760-40-3

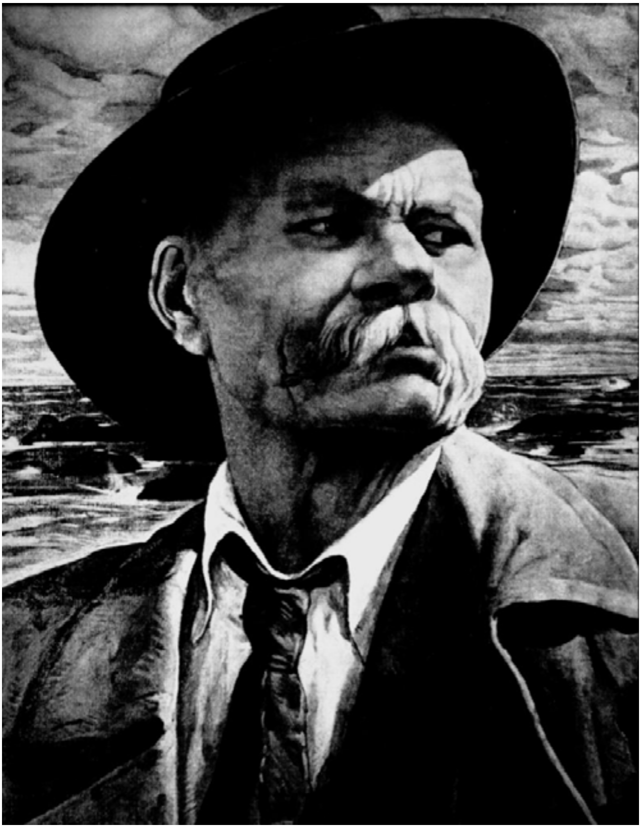

मक्सिम गोर्की

आमुख

प्रत्येक भाषा में कुछ पुस्तकें ऐसी होती हैं जो उस भाषा के साहित्य के इतिहास में मील का पत्थर, या यहाँ तक कि मोड़–बिन्दु बन जाती हैं। **मक्सिम गोर्की** की **माँ** रूसियों के लिए ऐसी ही एक पुस्तक है। हालाँकि यह पुस्तक रूस में सोवियत सत्ता की स्थापना से दस वर्षों पहले लिखी गयी थी, पर इसे हम सोवियत साहित्य की बुनियाद का पहला पत्थर मानते हैं।

रूस में **माँ** उपन्यास पहली बार 1907 में प्रकाशित हुआ। गोर्की ने जब इसे लिखा, तब वे एक परिपक्व शिल्पी थे जो अपने ऐतिहासिक मिशन से पूरी तरह परिचित था। वे, उस समय, लगभग चालीस साल के थे। तब पन्द्रह वर्षों से वे साहित्य और सार्वजनिक गतिविधियों में पूरी तरह लगे हुए थे। कई उपन्यास, कहानियाँ और नाटक वे लिख चुके थे और उन्हें अन्तरराष्ट्रीय ख्याति मिल चुकी थी। अपनी राजनीतिक सक्रियताओं और **बोल्शेविक पार्टी** से घनिष्ठ सम्बन्धों के चलते वे ज़ारशाही के उत्पीड़न के शिकार भी हो चुके थे। कई बार वे गिरफ़्तार भी किये जा चुके थे। लेकिन उनकी गतिविधियाँ निर्बाध जारी रहीं। 1905 की रूसी क्रान्ति के दौरान – यानी, रूस में **माँ** के प्रकाशन से दो वर्ष पूर्व – वे पहली बार **व्लादीमिर लेनिन** से मिले, जो आगे चलकर उनके घनिष्ठ मित्र बन गये।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में देश के विशाल भूभाग में की गयी बीहड़ घुमक्कड़ी और अपनी सामाजिक जागरूकता तथा क्रान्तिकारी दूरदर्शिता के चलते, गोर्की ने रूस को जिस गहराई से देखा और समझा, वैसा उनके बहुत कम समकालीन कर पाये। वे अपनी मातृभूमि की विशालता से और इसके प्राकृतिक दृश्यों के सौन्दर्य एवं वैविध्य से अभिभूत हो गये, लेकिन साथ ही अपने देशवासियों का अज्ञान, ग़रीबी और अनावश्यक कष्ट उन्हें भयंकर प्रतीत हुए।

गोर्की के समस्त कृतित्व में मौजूद सामाजिक जागरूकता रूसी साहित्य में कोई अपवाद नहीं है। यह उन दिसम्बरवादियों के बीच के कवियों की रचनाओं में भी पाया जाता है जिन्हें गोर्की ने रूसी क्रान्तिकारियों की पहली पीढ़ी कहा था। ये कवि, जो राजतन्त्र और भूदासता के विरुद्ध 14 दिसम्बर, 1825 के विद्रोह के भागीदार थे, दिल से गणतन्त्रवादी थे और अपने सर्जनात्मक प्रयासों को

जनसमुदाय की सेवा करने और बेहतर भविष्य के प्रति उनकी आशाओं को समर्थन देने के साधन के रूप में देखते थे दिसम्बरवादियों ने **पुश्किन, लर्मन्तोव, हर्जेन** जैसे लेखकों और यहाँ तक कि **लेव तोल्स्तोय** के चिन्तन को भी बहुत अधिक प्रभावित किया जो उनके बारे में एक उपन्यास लिखना चाहते थे और जिन्होंने *'युद्ध और शान्ति'* में क्रान्तिकारी विषय-वस्तु का उल्लेख किया।

विगत शताब्दी के मध्य के *राज्नोचिंत्सी* क्रान्तिकारियों के सोचने का तरीक़ा भी गोर्की के निकट था। **चेर्नीशेव्स्की** और **दोब्रोल्युबोव** राज्नोचिंत्सी क्रान्तिकारियों के नेता थे तथा **नेक्रासोव** और **साल्तीकोव-श्चेद्रिन** जैसे श्रेष्ठ लेखक उनके समर्थक थे। इस साहित्यिक पीढ़ी के लोग व्यापकतर सामाजिक दृष्टि रखते थे और अधिक निर्भीकता के साथ उसकी घोषणा करते थे।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के उपन्यासों ने रूसी साहित्य को काफ़ी ख्याति दिलायी। ये उपन्यास विविधतापूर्ण थे और इस सबने उस गतिरोध से बाहर निकलने का मार्ग ढूँढ़ने की कोशिश की, जिसमें रूसी सामाजिक जीवन जा फँसा था। यह बात शताब्दी के अन्त के महानतम सामाजिक-मनोवैज्ञानिक लेखक **तालस्तोय** पर और **दोस्तोयेव्स्की** पर समान रूप से लागू होती है (साथ ही यह **पुश्किन, गोगोल, लर्मोन्तोव, तुर्गनेव** और **गोंचारोव** जैसे पूर्ववर्ती दौर के लेखकों पर भी लागू होती है)।

मक्सिम गोर्की ने रूसी क्लासिकी साहित्य की सामाजिक परम्पराओं को अपने लेखन में संजोये रखा। वस्तुतः वे खुले तौर पर ख़ुद को अपने महान अग्रज लेखकों का, ख़ासतौर पर **तोल्स्तोय** और **चेखव** का ऋणी मानते थे। गोर्की ने उनसे सिर्फ़ अपना साहित्यिक शिल्प ही नहीं सीखा, बल्कि उन्हें उनसे रूस और रूसियों को जानने की, उनके आत्मिक जीवन और नैतिक आकांक्षाओं को समझने की शिक्षा भी मिली।

इस तरह, हम मक्सिम गोर्की के कृतित्व में रूसी क्लासिकी साहित्य की उत्कृष्टतम परम्पराओं को नैरन्तर्य देखते हैं। लेकिन साथ ही, वे नवीनता के प्रवर्तक भी थे, सावियत साहित्य के संस्थापक भी थे। महानतम सोवियत लेखकों में से एक, **अलेक्सेई तोल्स्तोय** ने गोर्की को क्लासिकी और सोवियत साहित्य के बीच "जीवित सेतु" की संज्ञा दी है। आज हम निर्विवाद रूप से गोर्की को रूप के उन क्लासिकी लेखकों के बीच स्थान देते हैं जिनमें पहला स्थान पुश्किन का था। उनकी सबसे प्रारम्भिक रचनाओं तक में, हम सभी राष्ट्रों, समूची मानवता के साथ बन्धुत्व की वह स्पिरिट मौजूद पाते हैं जो पुश्किन से चेखव तक, हमारे महानतम लेखकों की अभिलाक्षणिकता रही है। हमारे अपने रूसी समाज से जुड़े प्रश्नों के साथ ही, वे समग्रता में मानव समाज के प्रश्नों को, और साथ ही व्यक्ति

के अधिकारों और कर्तव्यों से जुड़े प्रश्नों को भी प्रस्तुत करते हैं। रूसी साहित्य ने ठीक अपने इसी गुण के चलते, जो ख़ासतौर पर तोल्स्तोय और दोस्तोयेव्स्की के कृतित्व में अभिव्यंजित हुआ है, पूरी दुनिया में प्रशंसा और मान्यता अर्जित की है। हालाँकि गोर्की तोल्स्तोय और दोस्तोयेव्स्की की दृष्टिकोणों की आलोचना करते थे और मानव–समाज के पुनर्निर्माण–विषयक उनके विचारों से वे बुनियादी तौर पर असहमत थे, लेकिन वे हमेशा ही, यहाँ तक कि बहस की गर्मी के बीच भी, यह मानते थे कि मानव–आत्मा की गहराइयों को थाहने में और ऐतिहासिक परिस्थितियों को समझने में तोल्स्तोय और दोस्तोयेव्स्की अद्वितीय थे।

जब हम यह कहते हैं कि गोर्की रूसी साहित्य की सर्वोत्तम परम्पराओं के अनुगामी होने के साथ ही नवीनता के प्रवर्तक भी थे तो हमारा यह मतलब नहीं है कि रूसी साहित्य ने जो नया मोड़ लिया उसका श्रेय अकेले गोर्की को ही जाता है। यह एक क्रमिक और संश्लिष्ट प्रक्रिया थी। गोर्की ने जब सर्वथा नये किस्म के उपन्यास की (हम इस पुस्तक की बात कर रहे हैं जो इस समय पाठक के हाथ में है) रचना की, उसके पहले से ही लेखक गण नये अभिव्यंजक माध्यमों की खोज में लगे हुए थे। अस्सी के दशक के प्रारम्भ में उन महान सामाजिक और मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में से अन्तिम लिखा जा चुका था, जिन्होंने रूसी साहित्य को ख्याति दिलाई थी। दोस्तोयेव्स्की का निधन हो चुका था। तुर्गनेव भी, अपनी मृत्यु से छः वर्षों पूर्व अपना आख़िरी उपन्यास लिखने के बाद, दिवंगत हो चुके थे। ताल्स्तोय 1877 में *अन्ना कारेनिना* पूरा कर चुके थे और उसके कहीं बीस वर्षों बाद, 19वीं शताब्दी के अन्तिम वर्ष में वे *पुनरुत्थान* का समापन कर पाये। नाटकों और कहानियों के लेखक अन्तोन चेखव, हार्दिक इच्छा के बावजूद कोई उपन्यास नहीं लिख पाये। वे उपन्यास लिख पाने की अपनी अक्षमता का कारण एक सटीक नायक खोज पाने में अपनी असमर्थता को बताते थे। उन्हीं वर्षों में, तोल्स्तोय ने अपने उपन्यास *पुनरुत्थान* के लिए दिमत्री नेख्लूदोव को एक निराशाजनक नायक के रूप में पाया और उसे लगातार पृष्ठभूमि में धकेलते रहे। तोल्स्तोय के इस अन्तिम उपन्यास में, जो उन्नीसवीं शताब्दी का अन्तिम रूसी उपन्यास भी था, क्रान्तिकारी विषयवस्तु स्वतः घुसपैठ कर गयी थी। यद्यपि तोल्स्तोय अपने जीवन के अन्त तक समाज को सुधारने की क्रान्तिकारी पद्धतियों के विरोधी बने रहे, लेकिन अपनी प्रतिभा की अन्तर्दृष्टि से उन्होंने उन स्रोतों को पहचान लिया था जो क्रान्तिकारी आन्दोलन के उद्गम थे। इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि तोल्स्तोय ने इस क्रान्तिकारी आन्दोलन के विशिष्ट चरित्रों को सर्वाधिक सहानुभूतिपूर्ण आलोक में प्रस्तुत किया।

माँ में गोर्की परम्परागत रूसी उपन्यास को नयी ज़मीन पर रोपने का काम

करते हैं। केवल इसी तरह इसके जीवन का पुनर्नवीकरण किया जा सकता था। यह रूसी साहित्य में मज़दूर वर्ग के बारे में पहला उपन्यास था और पहला ऐसा उपन्यास था जिसने इस वर्ग को मानव जाति द्वारा संचित समस्त भौतिक एवं आत्मिक मूल्यों के संरक्षण में सक्षम एक महान मुक्तिदायी शक्ति के रूप में चित्रित किया। मक्सिम गोर्की ने रूसी साहित्य में एक नये नायक को प्रस्तुत किया। ज़ाहिर है कि एक नयी कलात्मक पद्धति, चरित्रों को उद्घाटित करने के नये साधनों और संरचना के नये रूपों को अपनाये बिना ऐसा कर पाना असम्भव था।

गोर्की द्वारा *माँ* के लेखन से काफ़ी पहले साहित्य में, और सिर्फ़ साहित्य में ही नहीं, मज़दूर वर्ग के प्रतिनिधि प्रवेश कर चुके थे। जैसेकि यहाँ सिर्फ़ दो अंग्रेजी लेखकों का उल्लेख करें, **डिकेन्स** और **जॉर्ज इलियट** ने मज़दूर वर्ग के बारे में लिखा था। दूसरे यूरोपीय देशों के लेखकों ने भी ऐसा किया था। लेकिन गोर्की ने श्रमिक को एक अन्यायपूर्ण समाज के शिकार मात्र के रूप में ही नहीं देखा, बल्कि उसे इतिहास बनाते हुए व्यक्ति के रूप में देखा, अपने समय के सामाजिक अन्याय के विरुद्ध दिलेरी के साथ लड़ते हुए व्यक्ति के रूप में देखा। इस मायने में उन्होंने एक मिसाल क़ायम की और सही मायने में उन्हें नवीनता का प्रवर्तक कहा जा सकता है।

गोर्की का साहित्यिक कैरियर चौंधिया देने वाला था। बहुत कम लेखकों को इतने कम समय में इतनी सफलता मिली होगी। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में, यानी साहित्य में प्रवेश के दस वर्षों से भी कम समय के भीतर, उनका नाम पूरी दुनिया में जाना जाने लगा था। और वह भी इस तथ्य के बावजूद कि तोल्स्तोय और चेखव जैसे महान रूसी लेखक उनके समकालीन थे। **इब्सन, बर्नाड शा** और **अनातोल फ़्रांस** जैसे लब्धप्रतिष्ठ नाम भी शायद उतने उच्च स्वर में उद्घोषित नहीं होते थे। गोर्की ने "निचली गहराइयों" से, समाज के भूगर्भ-तल से स्वयं को प्रस्तुत किया था और ऐसा लगता था मानो भाग्य स्वयं ही उनके उन तमाम दुखों की भरपाई करने के लिए बेचैन था जो उन्होंने बचपन में और युवावस्था में झेले थे। नयी शताब्दी ने उन्हें अपने लिए चुना था, मानो यह नयी शताब्दी उनमें अपने ख़ुद के अस्तित्व की पहेली का हल पाने की उम्मीद कर रही थी।

साहित्य का इतिहास ऐसी सफलता के असंख्य उदाहरण प्रस्तुत करता है, जो जितनी चौंधिाया देने वाली होती है, उतनी ही क्षणभंगुर भी होती है। गोर्की की सफलता इस तरह की नहीं थी जैसाकि इस तथ्य से ही ज़ाहिर है कि सत्तर वर्षों बाद आज भी यह क़ायम है। इसका कारण यह है कि गोर्की ने नयी, बीसवीं

सदी के मूल स्वर को तुरन्त ही पकड़ लिया था और उसे अपनी रचनाओं का मूल स्वर बना लिया था। बीसवीं शताब्दी के साथ ही मज़दूर ने इतिहास के रंगमंच पर मुख्य चरित्र के रूप में प्रवेश किया, एक ऐसे चरित्र के रूप में जो दृढ़संकल्प होकर मामलों को अपने ख़ुद के हाथों में ले रहा था और अपनी ख़ुद की ज़रूरतों के मुताबिक घटनाओं को गढ़ रहा था। मक्सिम गोर्की ने इसी मज़दूर की जीवनी लिखी और उसके प्रशंसा-गीत गाये। और ऐसा उन्होंने सर्वाधिक सम्पूर्ण और कलात्कम रूप में **माँ** उपन्यास में किया।

ज़ाहिर है कि यह पुस्तक "पूरी तरह शस्त्रसज्जित होकर जीयस के सिर से सहसा प्रकट" नहीं हो गयी थी। धीरे-धीरे वे (गोर्की) अपनी रचनाओं में मज़दूर वर्ग के समग्र निरूपण तक पहुँचे थे। उनकी सबसे प्रारम्भिक रचनाओं में, जिनके चरित्र अधिकांशत: "समाज के तलछट" से लिये गये हैं, हम उनके भविष्य के नायक का महज सूचना-संकेत पाते हैं। नब्बे के दशक के अन्त और नयी शताब्दी की शुरुआत तक, हम गोर्की को अपने नायक और अपनी मुख्य विषय-वस्तु पर पकड़ बनाते हुए पाते हैं। ऐसा उनके उपन्यास *वे तीन* में देखा जा सकता है जिसमें उन्होंने समाजवादी रुझान वाले कामगारों को प्रस्तुत किया है। साथ ही, ऐसा उनके नाटकों – *'फिलिस्टाइन'* और *'दुश्मन'* में भी दिखाई देता है।

1905 की रूसी क्रान्ति लेखक के रूप में गोर्की की विकास-यात्रा का एक मोड़-बिन्दु थी। इस क्रान्ति के शीर्ष पर सर्वहारा खड़ा था। क्रान्ति पराजित हो गयी, लेकिन इसने सर्वहारा वर्ग के समक्ष यह सिद्ध कर दिया कि वह पराजय झेलते रहने के बजाय, विजय को वरण करने में सक्षम है।

इस क्रान्ति की पूर्ववेला में, 1903 में, गोर्की के दिमाग में उस उपन्यास का विचार आया जिसे उनके सम्पूर्ण कृतित्व के बीच, और समूचे विश्व-साहित्य की रचनाओं के बीच एक विशिष्ट स्थान प्राप्त करना था।

उपन्यास का कथानक सच्ची घटनाओं पर आधारित है : 1902 में सोर्मोवो के मज़दूरों का मई दिवस प्रदर्शन, सोर्मोवो पार्टी संगठन की गतिविधियाँ और प्रदर्शन को भंग किये जाने के बाद इसके सदस्यों पर चलने वाला मुक़दमा गोर्की ने ख़ुद इस बारे में लिखा है : "मज़दूरों के बारे में एक पुस्तक लिखने का विचार मेरे दिमाग में निझनी नोवगोरोद में सोर्मोवो प्रदर्शन के बाद आया। मैंने तत्काल सामग्री एकत्र करना और नोट्स बनाना शुरू कर दिया।" दूसरे शब्दों में, गोर्की का यह उपन्यास एक तरह का ऐतिहासिक दस्तावेज है। हालाँकि, इसमें लेखक द्वारा मूल घटनाओं का कलात्मक पुनर्संयोजन किया गया है और अपने नायकों के 'प्रोटोटाइपों' – प्योत्र जालोमोव और उनकी माँ का पुनर्सृजन किया गया है तथा उन्हें नयी और नाटकीय परिस्थितियों में डाल दिया गया है। इसका परिणाम हमारे

सामने एक ऐसी कलाकृति के रूप में आया है जिसमें 1905 की क्रान्ति की पूर्वबेला में रूसी मज़दूर वर्ग के संघर्ष का एक व्यापक और सामान्यीकृत चित्र उपस्थित किया गया है।

गोर्की का मज़दूर एक ऐसा आदमी है जिसका सरोकार सिर्फ़ अपने देश के अपने वर्ग की नियति से ही नहीं, बल्कि पूरे विश्व के प्रारब्ध से है। वह शब्द के सम्पूर्ण अर्थ में एक बुद्धिजीवी है। लेकिन वह मनन करने वाला और तात्विक चिन्तन करने वाला मनुष्य होने के साथ ही कार्रवाई करने वाला मनुष्य भी है। और वह अकेले कार्रवाई नहीं करता है, वह जनता के प्रतिनिधि के रूप में कार्रवाई करता है। और वह सर्वाधिक उदात्त और सर्वाधिक मानवीय आदर्शों के नाम पर कार्रवाई करता है। *माँ* उपन्यास ने इस बात की पुष्टि की कि मज़दूर वर्ग की ही रूस के बेहतर भविष्य के लिए संघर्ष का नेता है। यह पुस्तक उस *मज़दूर वर्ग के बारे में* है जो अपने उच्च आदर्शों को साकार करने में संलग्न है। यह पुस्तक *मज़दूर वर्ग के लिए* है जो उसे अपनी महत्ता को पहचानने में, और साथ ही अपनी राजनीतिक और विचारधारात्मक अपरिपक्कवता को भी देख पाने में सक्षम बनाती है। यह पुस्तक जब लिखी गयी थी, उसी समय रूसी मज़दूर वर्ग और समूची जनता के लिए अनिवार्य महत्त्व की पुस्तक बन गयी थी। 1907 में लेनिन ने *माँ* के बारे में ये विचार प्रकट किये थे : "यह पुस्तक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। जो बहुतेरे मज़दूर क्रान्तिकारी आन्दोलन में महज आवेग के वशीभूत होकर, कारण की समुचित समझ के बिना ही, शामिल हो गये हैं, वे माँ को पढ़ने के बाद इसे समझना शुरू कर देंगे।"

तोल्स्तोय ने एक बार कहा था किसी कलाकृति की अन्विति, चरित्र की अन्विति या कार्रवाई की अन्विति के माध्यम से नहीं, बल्कि लेखक की नैतिक अवस्थिति की अन्विति के माधयम से अर्जित की जाती है। *माँ* में गोर्की की नैतिक अवस्थिति उनकी नायिका निलोवना के चरित्र के माध्यम से अभिव्यक्त हुई है। यही वह समान्य मज़दूर स्त्री है जिसने पुस्तक को 'माँ' का नाम दिया है। उपन्यास के प्रारम्भ में निलोवना किसी भी तरह से उन सैकड़ों दूसरी मज़दूर माँओं से अलग नहीं है जो मिलों – कारख़ानों में अपनी ताकत से अधिक खटती हैं और फिर घरों में पीटी जाती हैं और पियक्कड़ उपद्रवियों द्वारा सताई जाती हैं। लेकिन जब उसका बेटा पावेल अपनी मज़दूर बस्ती में स्वीकृत ज़िन्दगी के तौर–तरीक़ों से ख़ुद को अलग कर लेता है और क्रान्तिकारी बन जाता है, तो वह उसके पक्ष में खड़ी होती है और उसके साथ–साथ आगे बढ़ती है। उपन्यास में निरूपित निलोवना का रास्ता उस आम मज़दूर का रास्ता है जो क्रान्ति में शामिल होने आता है। पाठक निलोवना की दुनिया को उसकी आँखों से देखता है और

घटनाओं का मूल्यांकन उसके मानदण्डों से करता है। पावेल के कामरेड भी उसे 'माँ' कहकर ही बुलाते हैं। उसी के माध्यम से, माँ के प्रति अपने रुख के माध्यम से, ये क्रान्तिकारी अपने सच्चे भाईचारे को महसूस करते हैं। उसके माध्यम से, सभी मनुष्यों के भाईचारे के बारे में उनमें गहन चेतना पैदा हो जाती है। पावेल का घनिष्ठतम मित्र अन्द्रेई नाखोद्का कहता है : "हम सभी एक माँ के बच्चे हैं, समूची दुनिया के मेहनतकशों के भाईचारे में अजेय आस्था की आग हम सबके भीतर जल रही है।" किसान रीबिन भी इसे अच्छी तरह समझता है : लोगों को उनके एक होने का अहसास कराना बहुत बड़ी बात है। जब तुम जान जाते हो कि लाखों वही चाहते हैं जो तुम चाहते हो, तो इससे तुम्हारा हृदय और अधिक दयालुता के अहसास से भर जाता है।"

एक बार जब हम इस विचार को स्वीकार कर लेते हैं कि कला जनता को एकजुट करने का एक साधन है, तो फिर हम गोर्की के सम्पूर्ण कृतित्व की, और ख़ासतौर पर उनके *माँ* उपन्यास की महत्ता स्वीकार किये बिना नहीं रह सकते। जैसाकि हम पहले ही कह चुके हैं, *माँ* एक पुस्तक है जो मज़दूर वर्ग के बारे में है, मानव–सम्बन्धों को सुधारने में मज़दूर वर्ग की भूमिका के बारे में है। इसका मतलब यह है कि यह पुस्तक सिर्फ़ मज़दूर वर्ग के लिए ही नहीं है, बल्कि पूरी दुनिया की समूची जनता के लिए है।

– बी. बुर्सोव

भाग 1

1

मज़दूरों की बस्ती की धुआँरी और गन्दी हवा में हर रोज़ फ़ैक्टरी के भोंपू का काँपता हुआ कर्कश स्वर गूँज उठता और उसके आवाहन पर छोटे-छोटे मटीले घरों से उदास लोग सहमे हुए तिलचट्टों की तरह भाग पड़ते। वे नींद पूरी करके अपने थके हुए अंगों को आराम भी नहीं दे पाते थे। ठिठुरते झुटपुटे में वे कच्ची सड़क पर फ़ैक्टरी की ऊँची-सी पत्थर की इमारत की तरफ़ चल पड़ते, जो बड़े निर्मम तथा निश्चिन्त भाव से उनकी प्रतीक्षा करती रहती थी और जिसकी तेल से चिकनी दर्जनों चौकोर आँखें सड़क पर प्रकाश करती थीं। उनके पेरों के नीचे कीचड़ की छप-छप होती थी। वे अलसाई हुई आवाज़ में चिल्लाते और हवा में उनकी गन्दी गालियाँ गूँज उठतीं और दूसरी आवाज़ें – मशीनों की गड़गड़ाहट और भाप की फक-फक हवा में तैरती हुई आकर इन आवाज़ों में मिल जातीं। ऊँची-ऊँची काली चिमनियाँ, जो बहुत कठोर और निराशापूर्ण मालूम होती थीं बस्ती के ऊपर मोटे-मोटे मुगदरों की तरह अपना मस्तक ऊँचा किये खड़ी रहती थीं।

शाम को जब डूबते हुए सूरज का थका-थका प्रतिबिम्ब घरों की खिड़कियों में दिखायी देता तो फ़ैक्टरी इन लोगों को अपने पाषाण उदर से उगल देती, मानो वे साफ़ की गयी धातु का बचा हुआ कचरा हों और वे फिर सड़क पर चल पड़ते... गन्दे, चेहरों पर कालिख, भूखे, दाँत चमकते हुए और शरीर से मशीन के तेल की दुर्गन्ध आती हुई। इस समय उनके स्वर में उत्साह होता था, उल्लास होता था क्योंकि काम का एक दिन और ख़त्म हो चुका था और घर पर रात का खाना और विश्राम उनकी बाट जोह रहा था।

दिन को तो फ़ैक्टरी निगल गयी थी; उसकी मशीनों ने जी भरकर मज़दूरों की शक्ति को चूस लिया था। दिन का अन्त हो गया था; उसका एक चिन्ह भी बाक़ी नहीं रहा था और मनुष्य अपनी क़ब्र के एक क़दम और निकट पहुँच गया था। परन्तु इस समय विश्राम की, और धुएँ से घुटे हुए शराबख़ाने की सुखद कल्पना कर रहा था और उसे सन्तोष था।

इतवार को छुट्टी के दिन लोग दस बजे तक सोते थे और फिर शरीफ़ विवाहित लोग अपने सबसे अच्छे कपड़े पहनकर गिरजाघर जाते थे और नौजवानों

को धर्म के प्रति उनकी उदासीनता के लिए डाँटते-फटकारते थे। गिरजे से लौटकर वे घर आते, कीमे के समोसे खाते और फिर शाम तक सोते।

बरसों की संचित थकान के कारण उनकी भूख मर जाती थी इसलिए शराब पीकर वे अपनी भूख चमकाते, तेज़ वोदका के घूँटों से अपने पेट की आग को भड़काते।

शाम को वे सड़कों पर घूमते-फिरते। जिनके पास रबड़ के जूते होते, वे ज़मीन सूखी होने पर भी उन्हें पहनते और जिनके पास छतरियाँ होतीं, वे आसमान साफ़ होने पर भी उन्हें लेकर चलते।

दोस्तों से मिलते तो फ़ैक्टरी की, मशीनों की और अपने फोरमैन की बातें करते; वे ऐसी चीज़ के बारे में न तो कभी सोचते थे और न बात ही करते थे जिसका उनके काम से सम्बन्ध न हो। उनके जीवन के नीरस ढर्रे में कभी-कभी इक्का-दुक्का भटकते हुए विचारों की मद्धिम चिंगारियाँ चमक उठतीं। जब ये लोग घर वापस लौटते तो अपनी घरवालियों से झगड़ते और बहुधा उन्हें पीटते। नौजवान लोग शराबख़ानों में या अपने दोस्तों के घर जाते, जहाँ वे अकार्डियन बजाते, गन्दे गीत गाते, नाचते, गालियाँ बकते और शराब पीकर मदहोश हो जाते। कठोर परिश्रम से चूर होने के कारण नशा भी उनको जल्दी चढ़ता और एक अज्ञात झुँझलाहट उनके सीनों में मचलती और बाहर निकलने के लिए बेचैन रहती। इसी लिए मौक़ा पाते ही वे दरिन्दों की तरह एक-दूसरे पर टूट पड़ते और अपने दिल की भड़ास निकालते। नतीजा यह होता कि ख़ूब मारपीट और ख़ून-ख़राबा होता। कभी-कभी किसी को बहुत सख़्त चोट लग जाती और कभी तो इन लड़ाइयों में किसी की जान भी चली जाती।

उनके आपस के सम्बन्धों में शत्रुता की एक छिपी हुई भावना छायी रहती। यह भावना उतनी ही पुरानी थी जितनी कि उनके अंग-अंग की बेहद थकान। आत्मा की ऐसी बीमारी वे अपने बाप-दादा से उत्तराधिकार में लेकर पैदा होते थे और यह परछाई की तरह क़ब्र तक उनके साथ लगी रहती थी। इसके कारण वे ऐसी बेतुकी क्रूर हरकतें करते थे कि घृणा होती थी।

छुट्टी के दिन नौजवान लोग बहुत रात गये घर लौटते; उनके कपड़े फटे होते, मिट्टी और कीचड़ में सने हुए, आँखें चोट से सूजी हुई और नाक से ख़ून बहता हुआ। कभी वे बड़ी कुत्सा के साथ इस बात की डींग मारते कि उन्होंने अपने किसी दोस्त को कितनी बुरी तरह पीटा था और कभी उनका मुँह लटका होता और वे अपने अपमान पर ग़ुस्सा होते या आँसू बहाते। वे शराब के नशे में चूर होते, उनकी दशा दयनीय, दुखद और घृणास्पद होती। बहुधा माता-पिता अपने बेटों को किसी बाड़ के पास या शराबख़ाने में नशे में चूर पड़े पाते। बड़े-बूढ़े

उन्हें बुरी तरह कोसते, उनके नरम, वोदका के कारण शिथिल हुए शरीरों पर घूँसे लगाते, फिर उन्हें घर लाकर किंचित स्नेह के साथ बिस्तर पर सुला देते ताकि जब मुँह–अँधेरे ही काली नदी की तरह भोंपू का कर्कश स्वर हवा में फिर गूँजे तो वे उन्हें काम पर जाने के लिए जगा दें।

वे अपने बच्चों को कोसते और बड़ी निर्ममता से पीटते थे, पर नौजवानों की मारपीट और उनकी दारू पीने की लत को स्वाभाविक माना जाता था। इन लोगों के पिता जब ख़ुद जवान थे तब वे भी इसी तरह लड़ते–झगड़ते और शराब पीते थे और उनके माता–पिता भी इसी तरह उनकी पिटाई करते थे। जीवन हमेशा से इसी तरह चलता आया था। जीवन का प्रवाह गन्दे पानी की धारा के समान बरसों से इसी मन्द गति के साथ नियमित रूप से जारी था, दैनिक जीवन पुरानी आदतों, पुराने संस्कारों, पुराने विचारों के सूत्र में बँधा हुआ था। और इस पुराने ढर्रे को कोई बदलना भी तो नहीं चाहता था।

कभी–कभी फ़ैक्टरी की बस्ती में कुछ नये लोग भी आकर बस जाते थे। शुरू–शुरू में तो उनकी ओर ध्यान जाता, क्योंकि वे नये होते, फिर धीरे–धीरे केवल इस कारण उनमें हल्की और ऊपरी सी दिलचस्पी बनी रहती कि वे उन जगहों के बारे में बताते, जहाँ पहले काम कर चुके थे। परन्तु शीघ्र ही उनका नयापन ख़त्म हो जाता, लोग उनके आदी हो जाते और उनकी ओर विशेष ध्यान देना छोड़ देते। ये नये आये हुए लोग जो कुछ बताते उससे इतना स्पष्ट हो जाता कि मेहनतकशों का जीवन हर जगह एक जैसा ही है और यदि यह सच है तो फिर बात ही क्या की जाये?

पर कुछ नये आने वाले ऐसी बातें बताते जो बस्तीवालों के लिए अनोखी होतीं। उनसे बहस तो कोई न करता, पर वे उनकी अजीब–अजीब बातें शंका के साथ सुनते। वे जो कुछ कहते, उससे कुछ लोगों को झुँझलाहट होती, कुछ को एक अस्पष्ट–सा भय अनुभव होता और कुछ से हृदय में आशा की एक हल्की–सी किरण जगमगा उठती और इसी कारण वे और ज़्यादा शराब पीने लगते ताकि जीवन की गुत्थी को और उलझा देने वाली आशंकाओं को दूर भगा सकें।

किसी नवागन्तुक में कोई असाधारण बात नज़र आने पर बस्ती वाले इसी कारण उससे असन्तुष्ट रहने लगते और जो कोई भी उनके जैसा न होता उससे वे सतर्क रहते। उन्हें तो मानो यह डर लगता कि वह उनके जीवन की नीरस नियमितता को भंग कर देगा जो कठिनाइयों के बावजूद कम से कम निर्विघ्न तो था। लोग इस बात के आदी हो गये थे कि जीवन को बोझ उन पर हमेशा एक जैसा रहे और चूँकि उन्हें छुटकारा पाने की कोई आशा नहीं थी, इसलिए वे यह मानते थे कि उनके जीवन में जो भी परिवर्तन आयेगा वह उनकी मुसीबतों को

और बढ़ा देगा।

नये विचार व्यक्त करने वालों से मज़दूर चुपचाप कन्नी काटते रहते। इसलिए ये नवागन्तुक वहाँ से कहीं और चले जाते। अगर कुछ यहीं रह जाते तो वे या तो धीरे-धीरे अपने साथियों जैसे ही हो जाते, या फिर कटे-कटे रहते... .

कोई पचास वर्ष तक इसी प्रकार का जीवन बिताने के बाद आदमी मर जाता।

2

मिख़ाइल व्लासोव भी इसी प्रकार का जीवन व्यतीत करता था, वह अक्खड़ स्वभाव का मिस्तरी था। उसके चेहरे पर हर दम उदासी छायी रहती थी और उसकी घनी भवों के नीचे से उसकी छोटी-छोटी आँखें सन्देह और तिरस्कार के भाव से चमकती रहती थीं। वह फ़ैक्टरी का सबसे अच्छा मिस्तरी और बस्ती का सबसे तगड़ा आदमी था। चूँकि अपने मालिकों से उसकी हमेशा ठनी रहती थी, इसलिए कमाता बहुत कम था। हर छुट्टी के दिन वह किसी न किसी को पीट देता। इसीलिए सभी लोग उसे नापसन्द करते थे और उससे डरते थे। उसकी पिटाई करने की भी कोशिश की गयी, मगर बेकार। व्लासोव जैसे ही लोगों को अपने पर झपटने के लिए आते देखता, वह कोई पत्थर या तख़्ता, या लोहे की छड़ उठा लेता, टाँगें फैलाकर खड़ा हो जाता और चुपचाप अपने शत्रुओं की प्रतीक्षा करता। बालों से ढँकी हुई भुजाएँ और आँखों से लेकर गर्दन तक फैली घनी काली दाढ़ीवाला चेहरा दिलों में दहशत पैदा करते थे। लोगों को सबसे ज़्यादा डर तो उसकी आँखों से लगता था... छोटी-छोटी और पैनी, बर्मों की तरह लोगों को चीरती हुईं उससे आँख मिलाने वाले को यही लगता कि वह किसी ऐसी दानवी शक्ति के सामने खड़ा है जो उस पर बिना किसी भय या दया के वार करने को तैयार है।

"ख़बरदार, जो आगे बढ़े, कुत्ते के पिल्लो," वह गरजकर कहता और उसके बड़े-बड़े पीले दाँत उसकी दाढ़ी में चमक उठते। लोग डरकर पीछे हट जाते और जाते-जाते कायरों की तरह उस पर गालियों की बौछार करते जाते।

"कुत्ते के पिल्लो!" वह पीछे से बस इतना ही कहता और तिरस्कार से उसकी आँखों में खंजर की सी तेज़ी आ जाती। फिर वह अपना सीना तानकर उनका पीछा करता और ऊँची आवाज़ से ललकारता :

"आ जाओ, कौन मरना चाहता है?"

कोई भी मरना नहीं चाहता था।

वह बहुत कम बोलता था और "कुत्ते के पिल्ले" उसका तकियाकलाम था। वह पुलिसवालों, अफ़सरों और फ़ैक्टरी में अपने मालिकों को भी यही संज्ञा देता। और बीवी को भी हमेशा कुतिया कहता।

"अरी कुतिया, तुझे दिखायी नहीं देता कि मेरा पतलूट फट गया है?"

जब उसका बेटा पावेल चौदह बरस का था एक बार उसने उसके बाल खींचने की कोशिश की थी। मगर पावेल ने एक भारी-सा हथौड़ा उठाकर बस इतना कहा था :

"ख़बरदार जो हाथ लगाया!"

"क्या कहा?" पिता ने पूछा और लम्बे तथा छरहरे बदन वाले बेटे की तरफ़ इस तरह बढ़ा जैसे बादल की छाया भोजपत्र के वृक्ष की तरफ़ बढ़ती है।

"बहुत हो चुका," पावेल बोला। "अब मैं और बरदाश्त नहीं करूँगा।" और इतना कहकर उसने हथौड़ा तान लिया।

पिता ने एक बार उसे घूरकर देखा और बालों से ढँके अपने हाथ पीठ के पीछे छुपा लिये।

"अच्छी बात है," उसने ज़रा हँसकर कहा और फिर एक गहरी आह भरकर बोला : "अरे, कुतिया के पिल्ले...."

इसके कुछ ही समय बाद उसने अपनी घरवाली से कहा :

"अब मुझसे कभी पैसे न माँगना, पावेल तुम्हारा पेट पालेगा।"

"और तुम अपनी सारी कमाई शराब में उड़ाया करोगे?" उसने पूछने का साहस किया।

"तुझे इससे क्या मतलब है, कुतिया! कोई रखैल रख लूँगा!"

रखैल तो उसने नहीं रखी, पर लगभग दो वर्ष, अपने मरने के दिन तक, उसने बेटे की ओर न तो कभी ध्यान दिया और न कभी उससे बात ही की।

उसके पास एक कुत्ता था, उसकी ही तरह बड़े डील-डौल का और झबरीला। वह हर सुबह उसके साथ फ़ैक्टरी तक जाता और शाम को फाटक पर उसकी प्रतीक्षा करता। व्लासोव छुट्टी का दिन एक शराबख़ाने से दूसरे शराबख़ाने में पीते-पिलाते ही काट देता। वह किसी से भी न बोलता और लोगों के चेहरों को ऐसे घूरकर देखता मानो किसी को ढूँढ़ रहा हो। और कुत्ता अपनी झबरी दुम हिलाता हुआ दिन-भर अपने मालिक के पीछे-पीछे लगा रहता। जब व्लासोव नशे में चूर घर लौटता और खाने बैठता तो कुत्ते को भी प्याले से ही खिलाता। वह उसे न तो कभी गाली देता, न कभी पीटता, पर न कभी पुचकारता ही। खाना खा चुकने पर अगर उसकी बीवी को मेज साफ़ करने में ज़रा भी देर हो जाती तो वह तश्तरियाँ फ़र्श पर पटक देता और अपने सामने वोदका की बोतल रखकर

दीवार के साथ पीठ टिकाकर बैठ जाता और फटी आवाज़ में आँखें मूँदकर तथा मुँह फाड़कर कोई उदासी-भरा गीत गाने लगता। करुण बेसुरी आवाज़ें उसकी दाढ़ी में उलझकर रह जातीं और उसमें फँसे हुए रोटी के टुकड़े नीचे गिर पड़ते; गाते समय यह अपनी दाढ़ी और मूँछों पर हाथ फेरता रहता। उसके गीत के शब्द समझ में न आते और गीत की धुन भी जाड़ों में भेड़ियों के चिल्लाने की याद दिलाती। जब तक वोदका की बोतल चलती, वह गाता रहता और फिर वहीं बेंच पर लोट जाता या मेज पर सिर टिकाकर भोंपू बजने तक सोता रहता। कुत्ता भी उसी के बगल में लेटा रहता।

हार्निया के कारण उसकी मृत्यु हुई वह पाँच दिन तक बिस्तर पर पड़ा तड़पता रहा; उसका चेहरा काला पड़ गया था, उसकी आँखें बन्द रहती थीं और वह अपने दाँत पीसता रहता था। कभी-कभी वह अपनी बीवी से कहता :

"मुझे थोड़ा-सा संखिया दे दे.... ज़हर दे दे!..."

डॉक्टर ने पुलटिस बाँधने को कहा, पर साथ ही यह भी जोड़ दिया कि मिख़ाइल का आपरेशन ज़रूरी है और उसे उसी दिन अस्पताल ले जाया जाये।

मिख़ाइल ने उखड़ी-उखड़ी साँसें लेते हुए कहा, "भाड़ में जाओ तुम! मैं तुम्हारी मदद के बिना ही मर जाऊँगा, कुत्ते के पिल्ले!"

जब डॉक्टर चला गया और उसकी बीवी ने आँखों में आँसू भरकर आपरेशन करवा लेने की विनती की तो उसने उसकी तरफ़ घूँसा तानकर कहा :

"अच्छा हो गया तो तुम्हारी ही ज़्यादा शामत आयेगी!"

सुबह जब फ़ैक्टरी का भोंपू बज रहा था, उसकी मृत्यु हुई जब वह ताबूत में लेटा हुआ था, तो उसका मुँह खुला था और भवें ग़ुस्से से तनी हुई थीं। उसकी बीवी, बेटे, कुत्ते, दनीला वेसोवश्चिकोव (पुराना शराबी और चोर जिसे फ़ैक्टरी से निकाल दिया गया था) और बस्ती के कुछ भिखमँगों ने उसे दफन किया। उसकी बीवी थोड़ा रोयी, सो भी चुपके-चुपके। पावेल बिल्कुल नहीं रोया। जनाजा ले जाते वक़्त रास्ते में मिलने वाले बस्ती के लोगों ने रुककर सीने पर सलीब का निशान बनाया और बोले :

"पेलागेया तो बहुत ही ख़ुश होगी कि यह चल बसा।"

दूसरों ने सही करते हुए कहा, "चल नहीं बसा, कुत्ते का दम निकल गया!"

ताबूत को दफन करके लोग तो चले गये, पर कुत्ता वहीं ताजी ख़ुदी हुई मिट्टी पर चुपचाप बैठा क़ब्र को सूँघता रहा। कुछ दिन बाद किसी ने कुत्ते को मार डाला...

3

अपने पिता के मरने के दो हफ़्ते बाद एक इतवार को पावेल व्लासोव नशे में चूर घर वापस आया। वह लड़खड़ाता हुआ घर में घुसा और घिसटता हुआ मेज के सिरे वाली कुर्सी पर जा बैठा, बाप की तरह ज़ोर से मेज पर मुक्का मारा और चिल्लाकर माँ से कहा :

"खाना!"

माँ बेटे के पास आकर बैठ गयी, उसके गले में बाहें डाल दीं और उसका सिर अपने सीने से लगा लिया। पर उसने माँ को दूर हटाते हुए चिल्लाकर कहा :

"लाओ, माँ! जल्दी करो!"

"नादान बच्चे," उसकी माँ ने उदास होकर बड़े स्नेह से उसे अपने साथ सटाते हुए कहा।

"और मैं तम्बाकू के कश भी लगाऊँगा! मुझे पिता का पाइप ला दो!" मुश्किल से अपनी जीभ हिलाते हुए पावेल ने बुदबुदाकर कहा।

उस दिन उसने पहली बार शराब पी थी। वोदका से उसका शरीर तो शिथिल हो गया था, पर उसकी चेतना नष्ट नहीं हुई थी और उसके मस्तिष्क में यह प्रश्न रह-रहकर उठता था :

"मैं नशे में हूँ? नशे में हूँ क्या?"

माँ के स्नेह से उसे झेंप महसूस हो रही थी और उसकी आँखों की व्यथा उसका मर्म छू रही थी। उसे रोना आ रहा था और अपने आँसुओं पर काबू पाने के लिए वह सचमुच जितना नशे में था, उससे कहीं ज़्यादा जताने का प्रयत्न करने लगा।

माँ उसके पसीने से तर और उलझे हुए बालों को सहलाते हुए धीरे से बोली :

"तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए था।"

पावेल को मतली होने लगी। बड़ी कै होने के बाद माँ ने उसे बिस्तर पर लिटा दिया और उसके माथे पर तौलिया भिगोकर रख दिया। इससे पावेल का कुछ नशा उतरा, लेकिन उसके नीचे और आस-पास सभी कुछ मानो घूम रहा था, उसकी पलकें इतनी भारी हो गयी थीं कि उन्हें खोलना भी कठिन हो रहा था। उसके मुँह का स्वाद बहुत बुरा-बुरा हो रहा था; उसने दबी नज़र से माँ के बड़े-से चेहरे को देखकर सोचा :

"मेरा ख़याल है कि मैं अभी बहुत छोटा हूँ। और लोग भी पीते हैं, उन्हें कुछ नहीं होता, मगर मेरा जी बुरा हो गया है..."

कहीं बहुत दूर से उसे अपनी माँ का कोमल स्वर आता सुनायी दिया :

"अगर तुमने पीना शुरू कर दिया तो मेरा पेट कैसे पालोगे?"

"सभी तो पीते हैं," उसने आँखें कसकर बन्द करते हुए उत्तर दिया।

माँ ने गहरी आह भरी। ठीक ही तो कहता था। वह जानती थी कि शराबख़ाना ही तो एक ऐसी जगह है, जहाँ लोगों को कुछ ख़ुशी नसीब होती थी। फिर भी उसने यही कहा :

"मगर तुम न पिया करो, तुम्हारे बाप ने तुम दोनों के लिए काफ़ी पी ली है। उसके हाथों ही काफ़ी मुसीबत झेल चुकी हूँ। तुम भी अपनी माँ पर तरस नहीं खाओगे?"

दुख में डूबे हुए ये प्यार-भरे उदास शब्द सुनकर पावेल को आभास हुआ कि पिता के जीवनकाल में उसने अपनी माँ के अस्तित्व की ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया था... हमेशा बेहद चुप-चुप अपनी पिटाई के डर से सहमी हुईं बाप की नज़र से बचने के लिए वह स्वयं भी जहाँ तक सम्भव होता घर से बाहर ही रहता था और इसलिए अपनी माँ से भी दूर हो गया था। अब नशा कुछ कम होने पर वह ग़ौर से अपनी माँ को देखने लगा।

लम्बा कद, कुछ झुकी कमर और कठोर परिश्रम तथा पति की मार के कारण बिल्कुल चूर शरीर। वह एक ओर को कुछ झुकती हुई ऐसे सँभल-सँभलकर चलती थी, मानो हमेशा डरती रहती हो कि कहीं किसी चीज़ से टकरा न जाये। बस्ती की अधिकांश औरतों की तरह भय और व्यथा से भरी हुई उसकी काली आँखें कुछ-कुछ लटकी त्वचा और झुर्रियों वाले चौड़े से लम्बोतरे चेहरे को आभा प्रदान करती थीं। उसकी दाहिनी भौंह पर चोट का एक गहरा-सा निशान था, जिसके कारण वह भौंह कुछ ऊपर को खिंच गयी थी और ऐसा लगता था कि उसका दाहिना कान उसके बायें कान से कुछ ऊँचा है। इसी कारण उसके चेहरे का भाव ऐसा रहता था मानो वह हमेशा किसी चिन्ता के कारण सतर्क रहती हो। उसके घने काले बालों में सफ़ेद बालों की धारियाँ चमकती थीं। वह ममता, उदासी और भीरुता की साकार मूर्ति थी...

उसके गालों पर धीरे-धीरे आँसू ढलक रहे थे।

"रोओ नहीं," बेटे ने धीरे से अनुरोध किया। "मुझे प्यास लगी है।"

"मैं तुम्हारे लिए बर्फ़ का पानी लाती हूँ।"

लेकिन माँ के लौटने तक वह सो गया था। वह क्षण-भर अपने बेटे को निहारती रही। सुराही उसके हाथ में काँप रही थी और बर्फ़ के टुकड़े उसमें इधर-उधर टकरा रहे थे। सुराही मेज पर रखकर वह चुपचाप देव-प्रतिमाओं के सामने घुटने टेककर बैठ गयी। बाहर से शराबियों की आवाज़ें खिड़की के शीशों से आकर टकरा रही थीं। शरद ऋतु की रात्रि की नमी और अँधेरे में अकार्डियन

किकिया रहा था, कोई फटी हुई आवाज़ में गा रहा था, कोई लगातार गन्दी गालियाँ बकता हुआ निकल गया और औरतों की उकताहट–भरी झुँझलायी हुई आवाज़ें आ रही थीं...

छोटे–से व्लासोव–परिवार में जीवन पहले की अपेक्षा अधिक शान्ति और चैन से, दूसरे घरों की अपेक्षा कुछ अलग ढंग से व्यतीत हो रहा था। उनका घर बस्ती के सिरे पर एक कम ऊँचे मगर बहुत ढालू पुश्ते पर स्थित था। पुश्ता दलदल तक चला गया था। घर के एक–तिहाई हिस्से में रसोई थी : इसी में आड़ लगाकर एक कमरा अलग कर दिया गया था, जिसमें माँ सोती थी। बाक़ी दो–तिहाई हिस्सा दो खिड़कियोंवाला चौकोर कमरा था। इस कमरे के एक कोने में पावेल का पलँग था और दूसरे कोने में एक मेज और दो बेंचें। घर का बाक़ी सामान यह था : कुछ कुर्सियाँ, एक नीची अलमारी जिस पर छोटा–सा आईना लगा हुआ था, एक सन्दूक़ जिसमें कपड़े थे, दीवार पर एक घड़ी और कोने में ताक पर दो देव–प्रतिमाएँ।

एक नौजवान आदमी से जो कुछ आशा की जा सकती थी वह सब कुछ पावेल ने किया : उसने अपने लिए अकार्डियन, कलफ़दार क़मीज़, भड़कीली टाई, रबड़ के जूते और एक छड़ी ख़रीद ली। इस प्रकार वह अपनी उम्र के दूसरे लड़कों की तरह हो गया। वह शामों को अपने दोस्तों की महफिलों में जाता, उसने क्वैड्रिल और पोल्का नाच सीख लिये थे और हर इतवार को वह शराब पिये हुए घर वापस आता। पर वोदका पीकर उसकी तबीयत हमेशा ख़राब हो जाती थी। सोमवार को सुबह जब वह उठता तो उसके सिर में दर्द रहता, दिल में जलन होती, चेहरा पीला और मुरझाया हुआ होता।

"कल रात ख़ूब मजा रहा?" माँ ने एक बार उससे पूछा।

"बहुत बुरा हाल है," उसने मुँह लटकाकर झुँझालाहट के साथ कहा। "इससे अच्छा मैं मछलियाँ पकड़ने जाऊँगा। या फिर बंदूक ख़रीद लूँगा और शिकार खेलने जाया करूँगा।"

वह काम बड़ी मेहनत से करता था, कभी कामचोरी नहीं करता था और न कभी उस पर जुर्माना ही हुआ था। वह बहुत कम बोलता था और उसकी, माँ की आँखों की तरह बड़ी–बड़ी तथा नीली आँखों में एक असन्तोष भरा था। उसने न तो बंदूक ही ख़रीदी और न वह मछलियों के शिकार को ही गया, पर शीघ्र ही इतना अवश्य स्पष्ट हो गया कि वह उस रास्ते से अलग जा रहा था जिस पर दूसरे सभी लोग चलते थे। उसने महफिलों में जाना कम कर दिया था। इतवार को वह ग़ायब ज़रूर हो जाता, पर हमेशा शराब पिये बिना घर लौटता। माँ की पैनी दृष्टि को यह भाँपते देर न लगी कि उसके बेटे का सांवला चेहरा और भी

दुबला होता जा रहा है, उसकी आँखों में ज़्यादा गम्भीरता आ गयी है और वह अपने होंठ हमेशा कसकर बन्द किये रहता है। वह ज़रूर मन ही मन किसी बात पर कुढ़ता होगा या शायद कोई बीमारी उसके शरीर को घुलाये दे रही है। पहले उसके दोस्त अक्सर उससे मिलने आते थे, पर अब उन्होंने आना छोड़ दिया था क्योंकि वह कभी घर पर होता ही नहीं था। माँ को इस बात की ख़ुशी थी कि उसका बेटा कारख़ाने के दूसरे नौजवानों की तरह नहीं था, पर ज़िन्दगी के उस अँधेरे रास्ते से हटकर, जिस पर सब लोग चलते थे, अपना अलग रास्ता निकालने के लिए बेटे को कितना कठिन प्रयास करना पड़ रहा था, इस बात से उसे अपने हृदय में एक अस्पष्ट–सा भय भी अनुभव होता।

"तुम्हारा जी तो अच्छा है, पावेल?" वह कभी–कभी उससे पूछती।

"बिल्कुल," वह उत्तर देता।

"तुम कितने दुबले हो गये हो!" वह आह भरकर कहती।

वह घर किताबें लाने लगा। वह उन्हें चोरी–चोरी पढ़ता और पढ़ने के बाद हमेशा छिपा देता। कभी–कभी वह किताब का कोई टुकड़ा नकल करता और उस काग़ज़ को छिपा देता.....

माँ–बेटा बहुत कम एक साथ बैठते और बातचीत तो शायद कभी नहीं होती थी। सुबह वह चुपचाप चाय पीकर काम पर चला जाता और दोपहर को खाने के लिए लौटता। खाने की मेज पर मामूली–सी दो–चार बातें होतीं और खाना खाकर वह फिर शाम तक के लिए ग़ायब हो जाता। शाम को हाथ–मुँह धोकर वह खाना खाता और किताब लेकर बैठ जाता। इतवार के दिन वह सबेरे ही घर से निकल जाता और रात को देर से लौटता। माँ जानती थी कि वह शहर जाता है और कभी–कभी नाटक भी देखता है, पर शहर से कभी कोई उससे मिलने नहीं आता था। माँ को लगता था कि वह दिन–ब–दिन कम बोलने लगा है, पर साथ ही उसने यह भी अनुभव किया कि वह ऐसे नये शब्दों को प्रयोग करने लगा था जिन्हें वह समझ नहीं पाती थी और पहले के भद्दे और लट्ठमार शब्द उसकी जबान से उतर गये थे। पावेल के आचरण में कई छोटी–छोटी ऐसी नयी बातें थीं जिनकी ओर उसका ध्यान आकर्षित हुआ : उसने भड़कीले कपड़े पहनना छोड़ दिया था और अपने शरीर तथा कपड़ों की सफ़ाई की ओर ज़्यादा ध्यान देने लगा था। उसकी चाल–ढाल में पहले की अपेक्षा एक उन्मुक्तता आ गयी थी, उसका व्यवहार ज़्यादा सीधा–सादा हो गया था और उसका अक्खड़पन भी कम हो गया था। इन परिवर्तनों की वजह से, जिनका कोई कारण उसकी समझ में नहीं आता था, माँ चिन्तित रहती। उसके प्रति भी पावेल का बर्ताव बदल गया था : कभी–कभी वह फ़र्श बुहारता, इतवार को हमेशा अपना बिस्तर ठीक

करता और काम में हर तरह से अपनी माँ का हाथ बँटाने का प्रयत्न करता। बस्ती में कोई और यह सब नहीं करता था ...

एक दिन उसने एक तस्वीर लाकर दीवार पर टाँग दी। तस्वीर में तीन आदमी सड़क पर तन्तय होकर बातें करते चले जा रहे थे।

"ईसा मसीह पुनर्जीवित होकर एम्माउस जा रहे हैं," पावेल ने माँ को समझाते हुए कहा।

तस्वीर देखकर माँ प्रसन्न हुई, पर उसने सोचा, "अगर ईसा मसीह से इसे इतना ही लगाव है, तो यह कभी गिरजे क्यों नहीं जाता?"

पावेल के बढ़ई दोस्त द्वारा बनाये गये ख़ूबसूरत-से शेल्फ में किताबों की संख्या बढ़ती जा रही थी। कमरा प्यारा दिखने लगा था।

पावेल आम तौर पर अपनी माँ को "माँ" कहकर ही पुकारता था, पर कभी-कभी अचानक ही वह ज़्यादा प्यार के साथ उसे सम्बोधित करता :

"अम्मा, मेरे बारे में चिन्ता न करना, आज रात मैं ज़रा देर से लौटूँगा..."

माँ को यह बात अच्छी लगी। उसके इन शब्दों में उसे दृढ़ता और गम्भीरता का आभास हुआ।

पर उसकी आशंकाएँ बढ़ती गयीं। यद्यपि इन आशंकाओं का अब भी कोई स्पष्ट कारण नहीं था, फिर भी किसी असाधारण चीज़ के पूर्वाभास से उसके हृदय पर बोझ बढ़ता गया। कभी-कभी उसे अपने बेटे पर भी खीझ आती और वह सोचती:

"वह दूसरों जैसा क्यों नहीं है? यह बिल्कुल साधु-सन्त हो गया है। इतना गम्भीर रहता है। इस उमर में यह ठीक नहीं है..."

फिर कभी वह सोचती :

"शायद किसी लड़की के चक्कर में पड़ गया है?"

मगर लड़की के चक्कर में तो पैसों की ज़रूरत होती है और वह लगभग अपनी सारी तनख्याह लाकर उसे दे देता था।

समय बीतता गया और इसी प्रकार दो वर्ष निकल गये - अस्पष्ट विचारों और बढ़ती हुई आशंकाओं से पूर्ण, विचित्र शान्त जीवन के दो वर्ष

4

एक रात खाना खाने के बाद पावेल ने खिड़की पर परदा डाला, दीवार पर टीन का लैम्प टाँगा और कोने में बैठकर पढ़ने लगा। माँ बर्तन धोकर रसोई से निकली और धीरे-धीरे उसके पास गयी। पावेल ने सिर उठाकर प्रश्नसूचक दृष्टि से माँ की ओर देखा।

"कुछ नहीं, पावेल, मैं तो ऐसे ही आ गयी थी," वह झटपट बोली और जल्दी से फिर रसोई में चली गयी। घबराहट के कारण उसकी भवें फड़क रही थीं। पर थोड़ी देर तक अपने विचारों से संघर्ष करने के बाद वह हाथ धोकर फिर पावेल के पास गयी।

"मैं तुमसे पूछना चाहती थी कि तुम हर वक़्त यह क्या पढ़ते रहते हो?" उसने धीरे से पूछा।

पावेल ने किताब बन्द कर दी।

"अम्मा, बैठ जाओ।"

माँ जल्दी से सीधी तनकर बैठ गयी; वह कोई बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात सुनने को तैयार थी।

पावेल माँ की तरफ़ देखे बिना बहुत धीमे और न जाने क्यों कठोर स्वर में बोला :

"मैं ग़ैर-क़ानूनी किताबें पढ़ता हूँ। ये ग़ैर-क़ानूनी इसलिए हैं कि इनमें मज़दूरों के बारे में सच्ची बातें लिखी हैं। ये चोरी से छापी जाती हैं और अगर मेरे पास पकड़ी गयीं तो मुझे जेल में बन्द कर दिया जायेगा... जेल में इसलिए कि मैं सच्चाई मालूम करना चाहता हूँ, समझीं?"

सहसा माँ को घुटन महसूस होने लगी। बहुत ग़ौर से उसने अपने बेटे को देखा और उसे वह पराया-सा लगा। उसकी आवाज़ भी पहले जैसी नहीं थी – अब वह ज़्यादा गहरी, ज़्यादा गम्भीर थी, उसमें ज़्यादा गूँज थी। वह अपनी बारीक मूँछों के नरम बालों को ऐंठने लगा और आँखें झुकाकर अजीब ढंग से कोने की तरफ़ ताकने लगा। माँ उसके बारे में चिन्तित हो उठी, और उसे उस पर तरस भी आ रहा था।

"पावेल, किसलिए तुम ऐसा करते हो?" माँ ने पूछा।

उसने सिर उठाकर माँ की तरफ़ देखा।

"क्योंकि मैं सच्चाई जानना चाहता हूँ," उसने बड़े शान्त भाव से उत्तर दिया।

उसका स्वर कोमल पर दृढ़ था और उसकी आँखो में एक चमक थी। माँ ने समझ लिया कि उसके बेटे ने जन्म भर के लिए अपने आपको किसी गुप्त और भयानक काम के लिए अर्पित कर दिया है। वह परिस्थितियों को अनिवार्य मानकर स्वीकार कर लेने और किसी आपत्ति के बिना सब कुछ सह लेने की आदी हो चुकी थी। इसलिए वह धीरे-धीरे सिसकने लगी, पीड़ा और व्यथा के बोझ से उसका हृदय इतनी बुरी तरह दबा हुआ था कि वह कुछ भी कह न पायी।

"रोओ नहीं, माँ," पावेल ने कोमल और प्यार-भरे स्वर में कहा और माँ

को ऐसा लगा मानो वह उससे विदा ले रहा हो। "ज़रा सोचो तो, कैसा जीवन है हम लोगों का! तुम चालीस बरस की हुईं, कुछ भी सुख देखा है तुमने अपने जीवन में? पिता हमेशा तुम्हें मारते थे ... अब मैं इस बात को समझने लगा हूँ कि वह अपने तमाम दुख-दर्दों, अपने जीवन के सभी कटु अनुभवों का बदला तुमसे लेते थे। कोई चीज़ लगातार उनके सीने पर बोझ की तरह रखी रहती थी पर वह नहीं जानते थे कि वह चीज़ क्या थी। तीस बरस तक उन्होंने यहाँ ख़ून-पसीना एक किया... जब वह यहाँ काम करने लगे थे, तब इस फ़ैक्टरी की सिर्फ़ दो इमारतें थीं और अब सात हैं।"

माँ बड़ी उत्सुकता के साथ किन्तु धड़कते दिल से उसकी बातें सुन रही थी। उसके बेटे की आँखों में बड़ी प्यारी चमक थी। मेज के कगर से अपना सीना सटाकर वह आगे झुका और माँ के आँसुओं से भीगे हुए चेहरे के पास होकर उसने सच्चाई के बारे में पहला भाषण दिया जिसका उसे अभी ज्ञान हुआ था। अपनी युवावस्था के पूरे जोश के साथ, उस विद्यार्थी के पूरे उत्साह के साथ जो अपने ज्ञान पर गर्व करता है, उसमें पूरी आस्था रखता है, वह उन चीज़ों की चर्चा कर रहा था जो उसके दिमाग में साफ़ थीं। वह अपनी माँ को समझाने के उद्देश्य से इतना नहीं, जितना अपने आपको परखने के लिए बोल रहा था। बीच में शब्दों के अभाव के कारण वह रुका और तब उस व्यथित चेहरे की ओर उसका ध्यान गया, जिस पर आँसुओं से धुँधलायी हुई दयालु आँखें धीमे-धीमे चमक रही थीं। वे भय और विस्मय के साथ उसे घूर रही थीं। उसे अपनी माँ पर तरस आया। वह फिर से बोलने लगा, मगर अब माँ और उसके जीवन के बारे में।

"तुम्हें कौन-सा सुख मिला है?" उसने पूछा। "कौन-सी मधुर स्मृतियाँ हैं तुम्हारे जीवन में?"

माँ ने सुना और बड़ी वेदना से अपना सिर हिला दिया। उसे एक विचित्र-सी नयी अनुभूति हो रही थी जिसमें हर्ष भी था और व्यथा भी, जो उसके टीसते हृदय को सहला रही थी। अपने जीवन के बारे में ऐसी बातें उसने पहली बार सुनी थीं और इन शब्दों ने एक बार फिर वही अस्पष्ट विचार जागृत कर दिये थे जिन्हें वह बहुत समय पहले भूल चुकी थी, इन बातों ने जीवन के प्रति असन्तोष की मरती हुई भावना में दुबारा जान डाल दी थी - उसकी युवावस्था के भूले हुए विचारों तथा भावनाओं को फिर सजीव कर दिया था। अपनी युवावस्था में उसने अपनी सहेलियों के साथ जीवन के बारे में बातें की थीं, उसने हर चीज़ के बारे में विस्तार के साथ बातें की थीं, पर उसकी सब सहेलियाँ - और वह ख़ुद भी - केवल दुखों का रोना रोकर ही रह जाती थीं। कभी किसी ने यह स्पष्ट नहीं किया था कि उनके जीवन की कठिनाइयों का कारण क्या है।

परन्तु अब उसका बेटा उसके सामने बैठा था और उसकी आँखें, उसका चेहरा और उसके शब्द जो भी व्यक्त कर रहे थे वह सभी कुछ माँ के हृदय को छू रहा था; उसका हृदय अपने इस बेटे के लिए गर्व से भर उठा, जो अपनी माँ के जीवन को इतनी अच्छी तरह समझता था, जो उसके दुख-दर्द का जिक्र कर रहा था, उस पर तरस खा रहा था।

माँओं पर कौन तरस खाता है।

वह इस बात को जानती थी। उसका बेटा औरतों के जीवन के बारे में जो कुछ कह रहा था एक चिर-परिचित कटु सत्य था और उसकी बातों ने उन मिश्रित भावनाओं को जन्म दिया जिनकी असाधारण कोमलता ने माँ के हृदय को द्रवित कर दिया।

"तो तुम करना क्या चाहते हो?" माँ ने उसकी बात काटकर पूछा।

"पहले ख़ुद पढ़ूँगा और फिर दूसरों को पढ़ाऊँगा। हम मज़दूरों को पढ़ना चाहिए। हमें इस बात का पता लगाना चाहिए और इसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि हमारी ज़िन्दगी में इतनी मुश्किलें क्यों हैं।"

माँ को यह देखकर ख़ुशी हुई कि उसके बेटे की हमेशा गम्भीर और कठोर रहने वाली नीली आँखों में इस समय कोमलता और मृदुलता चमक रही थी। यद्यपि माँ के गालों की झुर्रियों में अभी तक आँसुओं की बूँदें काँप रही थीं, पर उसके होंठों पर एक शान्त मुस्कराहट दौड़ गयी। उसके हृदय में एक द्वन्द्व मचा हुआ था। एक तरफ़ तो उसे अपने बेटे पर गर्व था कि वह जीवन की कटुताओं को इतनी अच्छी तरह समझता है और दूसरी तरफ़ उसे इस बात की चेतना भी थी कि अभी वह बिल्कुल जवान है, वह जैसी बातें कर रहा है वैसी कोई दूसरा नहीं करता और उसने केवल अपने बलबूते पर ही एक ऐसे जीवन के विरुद्ध संघर्ष करने का बीड़ा उठाया है जिसे बाक़ी सभी लोग, जिनमें वह ख़ुद भी शामिल थी, अनिवार्य मानकर स्वीकार करते हैं। उसकी इच्छा हुई कि अपने बेटे से कहे, "मगर, मेरे लाल, तू अकेला क्या कर लेगा?"

पर वह ऐसा करने से झिझक गयी, क्योंकि मुग्ध होकर वह बेटे को जी भर देख लेना चाहती थी। उस बेटे को, जो सहसा ऐसे समझदार पर कुछ-कुछ अजनबी व्यक्ति के रूप में उसके सामने प्रकट हुआ था।

पावेल ने अपनी माँ के होंठों पर मुस्कराहट, उसके चेहरे पर चिन्तन का भाव, उसकी आँखों में प्यार देखा और उसे ऐसा लगा कि वह माँ को अपने सत्य का भान कराने में सफल हो गया है। अपनी वाणी की शक्ति में युवोचित गर्व ने उसका आत्म-विश्वास बढ़ा दिया। वह बड़े जोश से बोल रहा था, कभी मुस्कराता, कभी उसकी त्योरियाँ चढ़ जातीं और कभी उसका स्वर घृणा से भर

उठता; उसके शब्दों में गूँजती कठोरता को सुनकर माँ को डर लगने लगता और वह सिर झुलाते हुए धीरे से पूछती

"पावेल, क्या ऐसा ही है?"

और वह दृढ़तापूर्वक उत्तर देता, "हाँ।" और वह उन लोगों के बारे में बताता जो जनता की भलाई के लिए उसमें सच्चाई के बीच बोते थे तथा इसी कारण जीवन के शत्रु हिंसक पशुओं की तरह उनके पीछे पड़ जाते थे, उन्हें जेलों में ठूँस देते थे, निर्वासित कर देते थे...

"मैं ऐसे लोगों को जानता हूँ!" उसने बड़े जोश के साथ कहा। "वे धरती के सच्चे लाल हैं!"

ऐसे लोगों के विचार से ही वह काँप गयी और एक बार फिर उसकी इच्छा अपने बेटे से पूछने की हुई कि क्या ऐसा ही है, पर उसे साहस नहीं हुआ। दम साधकर वह उससे उन लोगों के बारे में क़िस्से सुनती रही जिनकी बातें तो वह नहीं समझती थी पर जिन्होंने उसके बेटे को इतनी ख़तरनाक बातें कहना और सोचना सिखा दिया था। आख़िरकार उसने अपने बेटे से कहा :

"सबेरा होने को आया। अब तुम थोड़ी देर सो लो।"

"हाँ, अभी," उसने कहा और फिर उसकी तरफ़ झुककर बोला, "मेरी बातें समझ गयीं न?"

"हाँ," उसने आह भरकर उत्तर दिया। एक बार फिर आँसुओं की धारा बह चली और सहसा वह ज़ोर से कह उठी, "तबाह हो जाओगे तुम!"

पावेल उठा, उसने कमरे का चक्कर लगाया और फिर बोला :

"अच्छा, तो अब तुम जान गयीं कि मैं क्या करता हूँ और कहाँ जाता हूँ," पावेल ने कहा, "मैंने तुम्हें सब कुछ बता दिया है। और अम्मा, अगर तुम मुझे प्यार करती हो, तो तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि मेरी राह में बाधा न बनना।"

"ओह, मेरे लाल!" माँ ने रोते हुए कहा। "शायद... शायद अगर तुम मुझसे न बताते तो अच्छा होता।"

पावेल ने माँ का हाथ अपने हाथों में लेकर दबाया।

उसने जितने प्यार के साथ "अम्मा" कहा था और जिस नये तथा विचित्र ढंग से उसने आज पहली बार उसका हाथ दबाया था, उससे माँ का हृदय भर आया।

"मैं बाधा नहीं बनूँगी," उसने भाव-विह्वल होकर कहा। "मगर अपने को बचाये रखना, बचाये रखना!"

वह नहीं जानती थी कि उसे किस चीज़ से अपने को बचाना चाहिए, इसलिए उसने दुखी होते हुए इतना जोड़ दिया :

“तुम दिन-ब-दिन दुबले होते जा रहे हो...”

वह अपने बेटे के लम्बे-चौड़े बलिष्ठ शरीर पर एक प्यार-भरी नज़र दौड़ाते हुए जल्दी-जल्दी और धीमी आवाज़ में बोली :

“तुम जो ठीक समझो करो – मैं तुम्हारी राह में बाधा नहीं बनूँगी। बस, इतनी ही प्रार्थना करती हूँ – इस बात का ध्यान रखना कि किससे बात कर रहे हो। तुम्हें लोगों के मामले में सतर्क रहना चाहिए। लोग एक-दूसरे से नफ़रत करते हैं। वे लालची हैं, एक-दूसरे से जलते हैं, जान-बूझकर दूसरों को नुकसान पहुँचाना चाहते हैं। जैसे ही तुम उन्हें उनकी वास्तविकता बताओगे, भला-बुरा कहोगे, वे जल-भुन जायेंगे और तुम्हें मिटा देंगे।”

पावेल दरवाज़े पर खड़ा हुआ उसके वे व्यथा-भरे शब्द सुनता रहा और जब वह अपनी बात ख़त्म कर चुकी तो मुस्कराकर बोला :

“तुम ठीक कहती हो – लोग बुरे हैं। लेकिन जैसे ही मुझे यह मालूम हुआ कि इस दुनिया में सच्चाई नाम की भी एक चीज़ है तो लोग भले मालूम होने लगे।”

वह फिर मुस्कराया और कहता गया :

“कारण मैं नहीं जानता, पर बचपन में मैं सबसे डरता था। ज्यों-ज्यों बड़ा होता गया, सबसे नफ़रत करने लगा, कुछ से उनकी नीचता के लिए और कुछ से बस यों ही! लेकिन अब हर चीज़ बदली हुई मालूम होती है। शायद मुझे लोगों पर तरस आता है? समझ नहीं पाता, पर जब मुझे इस बात का आभास हुआ कि अपनी पशुता के लिये हमेशा ख़ुद लोग ही दोषी नहीं होते थे तो मेरा हृदय कोमल हो उठा...”

वह बोलते-बोलते रुक गया मानो अपनी अन्तरात्मा की आवाज़ सुन रहा हो और फिर उसने बड़े शान्त स्वर में विचारशीलता से कहा :

“ऐसा होता है सच्चाई का असर।”

“हे भगवान! ख़तरनाक परिवर्तन हो गया है तुममें,” माँ ने कनखियों से उसे देखते हुए आह भरकर कहा।

जब वह सो गया, तो माँ अपने बिस्तर से उठकर दबे पाँव उसके पास गयी। पावेल सीधा लेटा हुआ था और सफ़ेद तकिये की पृष्ठभूमि पर उसके सांवले चेहरे की गम्भीर तथा कठोर रूप-रेखा स्पष्ट उभरी हुई थी। नंगे पैर और रात की पोशाक पहने हुए माँ सीने पर दोनों हाथ रखे उसके पास खड़ी थी – मूक होंठ हिल रहे थे और उसके गालों पर आँसू की बड़ी-बड़ी बूँदें ढलक रही थीं।

फिर पहले की तरह ही उनका जीवन बीतने लगा, दोनों चुप-चुप रहते, एक-दूसरे से दूर, फिर भी बहुत निकट।

5

एक त्योहार के दिन पावेल घर से बाहर जाते समय माँ से बोला :

"सनीचर को कुछ लोग शहर से मेरे पास आयेंगे।"

"शहर से?" माँ ने उसके शब्द दोहराये और सहसा वह रोने लगी।

"क्या बात है, माँ?" पावेल ने कुछ झल्लाकर पूछा।

माँ ने अपने दामन से आँसू पोंछते हुए आह भरकर कहा।

"मालूम नहीं, ऐसे ही..."

"डर लगता है?"

"हाँ," माँ ने स्वीकार किया।

वह माँ की तरफ़ झुक गया और बिल्कुल अपने बाप की तरह झुँझलाकर बोला :

"यही डर तो हमारी तबाही का कारण है! हम पर हुकुम चलानेवाले भी हमारे इसी डर का फ़ायदा उठाकर हमें और ज़्यादा डराते रहते हैं।"

"बिगड़ो नहीं," माँ ने दुखी होकर रोते हुए कहा। "मैं कैसे न डरूँ? सारा जीवन डर में बीता है। वह मेरी आत्मा में समा गया है!"

"माँ, मुझे अफसोस है, मगर मेरे लिए कोई दूसरा रास्ता नहीं है!" पावेल ने धीरे से स्नेहपूर्वक कहा।

और इतना कहकर वह चला गया।

तीन दिन तक माँ भयभीत रही। जब भी उसे याद आता कि कुछ अपरिचित और भयानक लोग उसके घर आने वाले हैं, उसका दिल धड़कने लगता। इन्हीं लोगों ने तो उसके बेटे को वह रास्ता दिखाया था, जिस पर वह चल रहा था!. .

सनीचर की शाम को पावेल ने फ़ैक्टरी से वापस आकर मुँह-हाथ धोया, कपड़े बदले और बाहर चला गया।

"अगर कोई आये तो कहना कि मैं अभी आता हूँ," उसने माँ से नज़र न मिलाते हुए कहा। "और कृपा करके डर को अपने मन से निकाल दो..."

वह बेंच पर बैठ गयी, जैसे किसी ने उसकी शक्ति छीन ली हो। पावेल ने उदास भाव से उसे देखा।

"तुम ऐसा क्यों नहीं करतीं कि... कहीं... चली जाओ!" पावेल ने सुझाव रखा।

पावेल की इस बात से माँ को दुख हुआ। उसने सिर हिलाते हुए कहा :

"नहीं। वह किसलिए?"

नवम्बर का अन्त था। दिन को सर्दी से अकड़ जाने वाली पृथ्वी पर अब

सूखी बर्फ़ की पतली चादर बिछ गयी थी, और माँ को बेटे के पैरों तले बर्फ़ के चरमराने की आवाज़ सुनायी दे रही थी। बैरिन रात का अन्धकार चोरों की तरह खिड़कियों की शीशों से चिपका हुआ था, मानो किसी की घात में हो। माँ दोनों हाथों से बेंच पकड़े वहीं बैठी रही, उसकी आँखें दरवाज़े पर जमी हुई थीं...

उसे लगा कि अँधेरे में सभी ओर से अजीब से कपड़े पहने हुए भयानक लोग चोरों की तरह घर की ओर आ रहे हैं, झुके-झुके और इधर-उधर देखते हुए। अब कोई घर के गिर्द चक्कर लगा रहा है और अपनी उँगलियों से दीवार को टोहता हुआ चल रहा है।

उसने किसी को गाने की धुन पर सीटी बजाते सुना। वह उदास और सुरीली आवाज़ अन्धकार और निस्तब्धता में लहराती हुई आ रही थी, मानो कुछ ढूँढ़ रही हो, आवाज़ निरन्तर निकट आती जा रही थी। सहसा खिड़की के बिल्कुल पास आकर आवाज़ रुक गयी, मानो दीवार की लकड़ी में समाकर रह गयी हो।

बरामदे से किसी के पैरों के घिसटने की आवाज़ आयी। माँ चौंक पड़ी और आशंका से उसकी भवें ऊपर चढ़ गयीं। वह उठी।

दरवाज़ा खुला। बड़ी-सी फर की टोपी में पहले एक सिर दिखायी दिया, फिर एक लम्बा-सा शरीर झुककर दरवाज़े से अन्दर आया और तनकर खड़ा हो गया। आगन्तुक ने अपना दाहिना हाथ उठाकर सलाम किया, और फिर एक गहरी आह भरकर भारी गूँजती हुई आवाज़ में कहा :

"सलाम!"

माँ ने कुछ कहे बिना झुककर उसके अभिवादन का उत्तर दिया।

"पावेल है?"

आगन्तुक ने धीरे-धीरे अपनी फर की जाकेट उतारी, एक पैर उठाकर अपनी टोपी से जूतों पर जमी हुई बर्फ़ झाड़ी, फिर दूसरा पैर उठाकर यही क्रिया दुहराई और अपनी टोपी को एक कोने में फेंककर लम्बी-लम्बी टाँगों पर झूलता टहलता हुआ-सा कमरे के दूसरे कोने में चला गया। उसने एक कुर्सी को ग़ौर से देखा, मानो यह विश्वास कर लेना चाहता हो कि वह कुर्सी उसे सम्भाल भी पायेगी कि नहीं और फिर कुर्सी पर बैठकर मुँह पर हाथ रखकर जम्हाई लेने लगा। उसका सिर बहुत सुडौल था और उसके बाल छोटे-छोटे कटे हुए थे। उसकी दाढ़ी बिल्कुल सफाचट थी और मूँछों के दोनों सिरे नीचे को लटके हुए थे। उसने अपनी बड़ी-बड़ी भूरी आँखों से कमरे का हर चीज़ को बड़े ध्यान से देखा।

"यह घर तुम्हारा अपना है या किराये का है?" उसने टाँग पर टाँग रखकर कुर्सी पर झूलते हुए कहा।

"किराये का है," माँ ने, जो उसके सामने बैठी थी, उत्तर दिया।

"कोई ख़ास अच्छी जगह तो है नहीं" उसने अपना मत प्रकट करते हुए कहा।

"पावेल अभी आ जायेगा, थोड़ी देर इन्तज़ार करो।"

"सो तो कर ही रहा हूँ," उस बड़े डीलडौल वाले आदमी ने शान्त भाव से उत्तर दिया।

उसके शान्त भाव, उसके कोमल स्वर और उसके सीधे-सादे साधारण चेहरे से माँ को ढाढ़स बँधा। उसका देखने का ढंग बड़ा निस्संकोच और मित्रतापूर्ण था और उसकी निर्मल आँखों की गहराइयों में उल्लास की ज्योति नाचती थी। उसका बेडौल शरीर कुछ झुका हुआ और टाँगें बहुत ही लम्बी थीं, फिर भी उसकी आकृति में कोई ऐसी चीज़ थी जो बरबस मोह लेती थी। वह एक नीली क़मीज़ पहने था और चौड़ी मोहरी की उसकी काली पतलून बूटों में खुँसी हुई थी। माँ उससे पूछना चाहती थी कि वह कौन था, कहाँ से आया था और क्या वह उसके बेटे को बहुत समय से जानता था, पर सहसा वह ख़ुद ही आगे को झुका और पहले उसी ने बोलना शुरू किया :

"अम्मा, तुम्हारा यह माथा किसने फोड़ा था?" उसने पूछा।

उसके स्वर में नरमी और आँखों में मुस्काराहट थी, फिर भी माँ को उसका यह पूछना बुरा लगा।

माँ ने होंठ सिकोड़े, कुछ देर चुप रही और फिर भावहीन शिष्टता के साथ पूछा :

"भले आदमी, तुम्हें इससे क्या लेना-देना है?"

"बुरा न मानो," आगन्तुक ने अपना पूरा शरीर उसकी तरफ़ झुकाते हुए कहा। "मैंने तो इसलिए पूछा था कि जिस औरत ने मुझे माँ की तरह पाला था उसके माथे पर भी ऐसा ही चोट का निशान था। वह जिस आदमी के साथ रहती थी उसी ने उसको वह चोट लगायी थी। वह मोची था। उसने कलबूत से उसे मारा था। वह धोबिन थी और वह मोची। उसका फूटा नसीब, न जाने कहाँ वह मोची उसे मिल गया था। बला का शराबी था वह। यह उसके बाद की बात है जब वह मुझे गोद ले चुकी थी। कितनी बुरी तरह मारता था वह उसे! डर के मारे मेरी तो आँखें बाहर निकल पड़ती थीं..."

उसके इस तरह निस्संकोच सब कुछ उसे बता देने पर माँ कुछ सिटपिटा गयी, उसे डर लगने लगा कि पावेल उस पर नाराज़ होगा कि उसने इतनी सख़्ती से जवाब क्यों दिया था।

"मैं नाराज़ नहीं हुई थी," उसने अपराधी की तरह मुस्कराकर कहा। "तुमने एकदम से यह सवाल पूछ लिया था, इसीलिए। मेरी भी यह निशानी मेरे घरवाले

की ही दी हुई है, भगवान उसकी आत्मा को शान्ति दे। क्या तुम तातार हो?"

उस व्यक्ति ने अपने पैरों को झटककर इतने ज़ोर से खीसें निकालीं कि उसके कान तक हिल गये। फिर उसने मुँह लटकाकर कहा :

"नहीं, अभी तो नहीं हूँ।"

"मगर तुम्हारी बोली तो रूसियों जैसी नहीं लगती," माँ ने उसके इस मज़ाक़ पर धीरे से मुस्कराकर अपनी बात को समझाते हुए कहा।

"नहीं, रूसी से अच्छी है," अतिथि ने पुलकित होकर कहा। "मैं तो कानेव का रहने वाला उक्रइनी हूँ।"

"यहाँ बहुत दिन से हो?"

"शहर में कोई साल भर रहा, मगर इधर एक महीने से फ़ैक्टरी में आ गया हूँ। यहाँ कुछ बहुत अच्छे लोग हैं – तुम्हारा बेटा और कुछ दूसरे लोग भी। इसलिए मेरा ख़याल है कि मैं तो यहीं रहूँगा," उसने अपनी मूँछों के बाल खींचते हुए कहा।

माँ को वह बहुत अच्छा लगा और उसके बेटे के बारे में उसने प्रशंसा के जो शब्द कहे थे उनके लिए वह अपनी कृतज्ञता प्रकट करना चाहती थी।

"एक गिलास चाय पिओगे?" माँ ने पूछा।

"अकेले?" उसने कन्धे बिचकाकर उत्तर दिया। "औरों को भी आ जाने दो, तब हम सब की खातिर एक साथ करना..."

उसकी इस बात ने माँ को फिर अपने भय की याद दिला दी।

"काश बाक़ी लोग भी इसके जैसे ही हों!" उसने सोचा।

एक बार फिर उसने बरामदे में किसी के क़दमों की आहट सुनी। दरवाज़ा खुला और माँ फिर उठकर खड़ी हो गयी। लेकिन उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि एक नौजवान लड़की ने रसोई में प्रवेश किया। उसका कद कुछ छोटा और चेहरा किसानों जैसा सीधा-सादा था और उसने अपने सुनहरे बालों को एक ही चोटी में गूँध रखा था।

"क्या मुझे देर हो गयी?" लड़की ने कोमल स्वर में पूछा।

"नहीं तो," उक्रइनी ने दरवाज़े से बाहर एक नज़र डालते हुए कहा। "क्या पैदल आयी हो?"

"और क्या। आप पावेल मिख़ाइलोविच की माँ हैं? सलाम! मेरा नाम नताशा है।"

"पूरा नाम क्या है?" माँ ने पूछा।

"नताल्या वासील्येवना। और आपका?"

"पेलागेया निलोवना।"

"अब हम लोग एक दूसरे से परिचित हो गये।"

"हाँ," माँ ने तनिक आह भरते हुए लड़की की तरफ़ देखकर मुस्कराते हुए कहा।

"सर्दी लग रही है?" उक्रइनी ने लड़की को कोट उतारने में सहायता देते हुए पूछा।

"बहुत! बाहर खेतों में इतनी तेज़ हवा है कि बस!..."

उसकी आवाज़ बहुत सुरीली और साफ़ थी, मुँह छोटा-सा, होंठ भरे-भरे, देखने में वह बिल्कुल ख़ूबानी की तरह गोल और ताजी लगती थी। कोट वग़ैरह उतारने के बाद उसने अपने गुलाबी गालों को छोटे-छोटे हाथों से रगड़ा जो सर्दी के कारण सूज गये थे, और जल्दी से दूसरे कमरे में चली गयी, फ़र्श पर उसके जूतों की एड़ियों की आवाज़ साफ़ सुनायी दे रही थी।

"यह रबड़ के जूते नहीं पहनती!" माँ ने अपने मन में यह बात अंकित कर ली।

"ब-र्र-र्र!" लड़की ने काँपते हुए कहा, "मैं तो सर्दी के मारे बिल्कुल अकड़ गयी।"

"लो मैं समोवार गर्म किये देती हूँ," माँ ने जल्दी से रसोई में जाते हुए कहा, "एक मिनट ठहरो..."

उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो वह उस लड़की को बहुत समय से जानती है और उसके हृदय में उस लड़की के प्रति माँ की ममता और प्यार जाग उठा। बगलवाले कमरे में उन लोगों की बातें सुनते समय माँ के होंठों पर मुस्कराहट नाच रही थी।

"नाखोदका, तुम क्या सोच रहे हो इतने ग़ौर से?" लड़की ने पूछा।

"कोई ख़ास बात नहीं," उक्रइनी ने शान्त भाव से उत्तर दिया। "इस विधवा की आँखें बड़ी अच्छी हैं, मैं सोच रहा था कि शायद मेरी माँ की आँखें भी ऐसी ही रही होंगी। मैं अक्सर अपनी माँ के बारे में सोचता हूँ, मेरा ख़याल है कि वह ज़िन्दा है।"

"मगर तुमने तो कहा था कि वह मर गयी।"

"वह तो उस माँ के बारे में कहा था जिसने मुझे पाला था। मैं अपनी माँ की बात कर रहा हूँ। वह शायद कीयेव की सड़कों पर कहीं भीख माँगती होगी। और शराब पीती होगी। और जब भी वह नशे में चूर हो जाती होगी तो पुलिसवालों के थप्पड़ खाती होगी..."

"बेचारा!..." माँ ने आह भरकर सोचा।

नताशा ने कोई बात बड़ी जल्दी से कोमल स्वर में और बड़े जोश के साथ

कही। एक बार फिर उक्रइनी की आवाज़ गूँज उठी :

"तुम अभी बिल्कुल बच्ची हो – अभी दुनिया देखी नहीं है तुमने," वह बोला। "मनुष्य को इस संसार में लाना तो कठिन है ही पर उसे भला आदमी बनाना और भी कठिन है..."

"हाय बेचारा!" माँ ने अपने मन में कहा, वह उक्रइनी से सांत्वना के दो शब्द कहने के लिए बेचैन हो रही थी। लेकिन इतने में दरवाज़ा धीरे-धीरे खुला और पुराने चोर दनीला का बेटा निकोलाई वेसोवश्चिकोव अन्दर आया। निकोलाई मिलनसार न होने की वजह से सारी बस्ती में बदनाम था। वह हमेशा मुँह फुलाये सबसे अलग-अलग रहता था और लोग इसी कारण उसको चिढ़ाते थे।

"क्यों, क्या है, निकालाई?" माँ ने आश्चर्य से पूछा।

"पावेल है?" उसने चेचक के दागों से भरे हुए अपने चौड़े से चेहरे को हथेली से पोंछते हुए माँ को सलाम किये बिना ही पूछा।

"नहीं।"

उसने कमरे के अन्दर एक नज़र डाली और फिर अन्दर चला गया।

"सलाम, कामरेड," उसने कहा।

"यह?" माँ ने बड़े तिरस्कार के भाव से सोचा और उसे नताशा को उसकी तरफ़ इस प्रकार हाथ बढ़ाते देखकर आश्चर्य हुआ मानो वह उससे मिलकर बहुत ख़ुश हुई हो।

निकोलाई के बाद दो आदमी और आये, दोनों बिल्कुल लड़के ही थे। माँ उनमें से एक को जानती थी, जिसका नाक-नक्शा बहुत सुडौल, बाल घुँघराले और माथा चौड़ा था, वह फ़ैक्टरी के पुराने मज़दूर सिजोव का भतीजा फ़्योदोर था। दूसरा लड़का बहुत शर्मीला था और उसके सीधे-सीधे बाल बिल्कुल चिपके रहते थे। माँ उसे नहीं जानती थी पर वह कोई ख़तरनाक आदमी नहीं मालूम होता था। आख़िरकार पावेल अन्दर आया, उसके साथ फ़ैक्टरी के दो नौजवान मज़दूर और थे जिन्हें माँ जानती थी।

"समोवार गरम कर रही हो?" पावेल ने बड़े प्यार से कहा, "धन्यवाद!"

"जाकर थोड़ी-सी वोदका ख़रीद लाऊँ?" माँ ने पूछा, उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसी चीज़ के लिए, जिसे वह स्वयं भी ठीक से नहीं जानती थी, वह कृतज्ञता कैसे प्रकट करे।

"नहीं, हम लोग शराब नहीं पीते," पावेल ने स्नेहपूर्ण मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया।

माँ को ऐसा लगा कि उसके बेटे ने जान-बूझकर इस बैठक के ख़तरे को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बयान किया था ताकि बाद में उसको लक्ष्य बनाकर ख़ूब हँसे।

“क्या यही लोग – यही गैरक़ानूनी लोग हैं?” उसने बहुत ही दबे स्वर में पूछा।

“हाँ, यही हैं,” पावेल ने जल्दी से दूसरे कमरे में जाते हुए उत्तर दिया।

“मैं नहीं मानती!” उसने बड़े प्यार से पुकारकर कहा और अपने मन में दयालु भाव से सोचने लगी : “यह भी अभी तक कैसा नादान बच्चा है!”

6

जब समोवार गरम हो गया तो माँ उसे कमरे में लेकर गयी। अतिथि मेज के चारों तरफ़ बैठे हुए थे और नताशा कोने में लैम्प की रोशनी में एक किताब पढ़ रही थी।

“इस बात को समझने के लिए कि लोगों का जीवन इतना कठोर क्यों है...” नताशा ने कहा।

“और वे ख़ुद इतने कठोर क्यों हैं...” उक्रइनी बीच में बोल उठा।

“...हमें यह मालूम करना चाहिए कि उनका सामाजिक जीवन कैसे आरम्भ हुआ...”

“हाँ, मालूम करो, मेरे बच्चो, ज़रूर मालूम करो,” माँ चाय बनाते हुए बुड़बुड़ायी।

सबने बात करना बन्द कर दिया।

“माँ, क्या बात है?” पावेल ने त्योरियाँ चढ़ाकर पूछा।

“कौन-सी बात?” माँ ने नज़र उठाकर देखा और सबको अपनी तरफ़ देखता हुआ पाया। “अरे, मैं तो यों ही अपने आप से बातें कर रही थी,” माँ ने खिसियाहट से बुदबुदाकर कहा, “मैं सोच रही थी कि अगर तुम लोग कोई बात मालूम ही करना चाहते हो तो क्यों न मालूम करो।”

नताशा हँस दी और पावेल भी खिलखिला पड़ा।

“अम्मा, चाय के लिए धन्यवाद,” उक्रइनी ने कहा।

“पहले पी लो, तब धन्यवाद देना, माँ ने कहा और फिर अपने बेटे की तरफ़ देखकर पूछा, “शायद मेरी वजह से तुम लोगों के काम में बाधा पड़ रही है?”

“मेजबान की वजह से मेहमानों के काम में क्या बाधा पड़ सकती है?” नताशा ने उत्तर दिया, “लेकिन मुझे जल्दी से चाय दे दो। मैं सिर से पाँव तक काँप रही हूँ और पैर तो मेरे बिल्कुल बरफ हो गये हैं!” उसके स्वर में बच्चों जैसी याचना थी।

“अभी लो, अभी,” माँ ने जल्दी से उत्तर दिया।

चाय पीकर नताशा ने ज़ोर से एक आह भरी, अपनी चोटी कन्धे पर से उछाल दी और पीली जिल्दवाली सचित्र पुस्तक में से कुछ पढ़ने लगी। माँ ने कोशिश की कि चाय बनाते हुए कोई शोर न हो और वह चुपचाप सुनती रही। उस लड़की की गूँजती हुई आवाज़ समोवार की विचारमग्न-सी गुनगुनाहट में घुलमिल गयी थी, कहानियों का एक क्रम चल रहा था, सब कहानियाँ ऐसे जंगली लोगों के बारे में थीं जो किसी ज़माने में गुफाओं में रहते थे और पत्थर से शिकार करते थे। बिल्कुल परियों की कहानियों जैसी थीं ये कहानियाँ। माँ कनखियों से अपने बेटे को देखती रही, वह पूछना चाहती थी कि ऐसी कहानियाँ ग़ैर-क़ानूनी क्यों ठहरायी गयी थीं। पर थोड़ी ही देर में वह जो कुछ पढ़ा जा रहा था उसे सुनते-सुनते उकता गयी और नज़र बचाकर इस प्रकार अतिथियों को ग़ौर से देखने लगी कि उन्हें और उसके बेटे को इसका पता न चलने पाये।

पावेल नताशा के बगल में बैठा था; वह उन सब लोगों में सबसे ज़्यादा ख़ूबसूरत था। झुकी हुई नताशा किताब पढ़ रही थी और बीच-बीच में अपनी कनपटियों पर से बालों की लटें पीछे हटा देती थी। अपना सिर झटककर और आवाज़ धीमी करके किताब की तरफ़ देखे बिना अपने चारों ओर बैठे हुए लोगों के चेहरों पर प्यार-भरी नज़र डालकर वह बीच-बीच में अपनी तरफ़ से भी कोई बात कहती थी। उक्रइनी मेज के एक सिरे पर फैलकर बैठा अपनी मूँछें नोच रहा था और आँखें भेंगी करके नाक से नीचे उन मूँछों के सिरे देखने का प्रयत्न कर रहा था। वेसोवश्चिकोव अपनी कुर्सी पर डण्डे की तरह सीधा तनकर बैठा हुआ था; वह अपनी दोनों हथेलियों से कसकर अपने घुटते दबाये हुए था और उसका पतले होंठोंवाला चेचकरू चेहरा, जिस पर भवें थीं ही नहीं, बिल्कुल भावहीन था जैसे वह नकाब पहने हो। चमकदार समोवार में उसके चेहरे का जो प्रतिबिम्ब पड़ रहा था, उसी पर उसकी पतली-पतली आँखें अपलक जमी हुई थीं और ऐसा मालूम होता था कि शायद वह साँस भी नहीं ले रहा है। नताशा जो कुछ पढ़ रही थी उसे सुनते हुए नाटा फ़्योदोर बग़ैर आवाज़ किये अपने होंठ हिला रहा था मानो पुस्तक के शब्दों को मन ही मन दुहरा रहा हो और उसका दोस्त घुटनों पर कुहनियाँ रखे और दोनों हथेलियों पर अपने गाल टिकाये हुए कमर दोहरी किये बैठा था, उसके होठों पर एक विचारशील मुस्कराहट खेल रही थी। पावेल के साथ जो लड़का आया था, उसके लाल घुँघराले बाल थे और उल्लासपूर्ण कंजी आँखें थीं। वह एक पल बैठ ही नहीं पाता था मानो कुछ कहना चाहता हो। दूसरा लड़का, जिसके बाल सुनहरे रंग के और बहुत छोटे कटे हुए थे, लगातार अपने सिर पर हाथ फेर रहा था और फ़र्श को घूर रहा था; माँ को उसका चेहरा भी ठीक से दिखायी नहीं दे रहा था। कमरे में एक विचित्र-सा सुखद वातावरण था।

यह वातावरण कुछ अपरिचित-सा था; नताशा किताब पढ़ रही थी और माँ को स्वयं अपनी जवानी के वे कोलाहलमय जमघट और उन लड़कों की भद्दी बातें और क्रूर मज़ाक़ याद आ रहे थे जिनके मुँह से हमेशा वोदका के भभके आते रहते थे। इन बातों को याद करके उसका हृदय आत्म-क्षोभ से द्रवित हो उठा।

उसे याद आया कि उसके पति के साथ उसकी मंगनी किस प्रकार हुई थी। इसी प्रकार के एक जमघट में उसने उसे एक अँधेरी ड्योढ़ी में दबोच लिया था और भारी तुनकती आवाज़ में पूछा था :

"मुझसे ब्याह करोगी?"

उसे बहुत दर्द और दुख भी हो रहा था, मगर वह बहुत बेरहमी से उसकी छातियाँ मसल रहा था और उसके मुँह पर अपनी तप्त और आर्द्र साँसों की वर्षा करता जा रहा था।

उसके चंगुल से निकलने का प्रयत्न करते हुए उसने खींचातानी भी की थी।

"सीधी खड़ी रहो!" उसने भेड़िये की तरह दाँत निकालकर कहा था। "मुझे जवाब दो, सुना कि नहीं?"

लज्जा और अपमान के कारण माँ का दम फूल रहा था; वह कोई उत्तर न दे सकी थी।

इतने में किसी ने दरवाज़ा खोल दिया था और उसने धीरे-धीरे उसे छोड़ दिया था।

"मैं इतवार को तुम्हारे यहाँ सगाई करने के लिए किसी को भेजूँगा," उसने कहा था।

और उसने भेजा भी।

माँ ने आँखें बन्द करके एक गहरी आह भरी...

"मैं जानना चाहता हूँ कि लोगों को कैसे रहना चाहिए, न कि वे किस तरह रहते थे," वेसोवश्चिकोव का खीझ-भरा स्वर सुनायी दिया।

"ठीक है," लाल बालों वाले ने खड़े होकर कहा।

"मैं सहमत नहीं हूँ!" फ़्योदोर ने चिल्लाकर कहा।

उनकी बहस में शब्द आग की लपटों की तरह लपक रहे थे। माँ की समझ में नहीं आ रहा था कि वे किस बात पर इतना चिल्ला रहे हैं। सबके चेहरे उत्तेजना से तमतमाये हुए थे, पर न तो कोई क्रोध में आपे से बाहर हुआ और न किसी ने उस भद्दी भाषा ही का प्रयोग किया जिससे वह भली-भाँति परिचित थी।

"लड़की के सामने शरमाते होंगे," उसने अपने मन में फ़ैसला किया।

नताशा हर नौजवान को बड़े ध्यान से देख रही थी, मानो वे बिल्कुल बच्चे हों और माँ को उसके चेहरे पर गम्भीरता का भाव बहुत अच्छा लगा।

“ज़रा देर चुप रहिये, कामरेड,” उसने सहसा कहा और वे सब चुप होकर उसकी तरफ़ देखने लगे।

“आपमें से जो लोग कहते हैं कि हमें हर बात जाननी चाहिए वे ठीक हैं। हमें अपने अन्दर ज्ञान की ज्योति जगानी चाहिए, ताकि वे लोग जो अँधेरे में भटक रहे हैं वे हमें देख सकें। हमारे पास हर चीज़ का सच्चा और ईमानदार जवाब होना चाहिए। हमें पूरी सच्चाई और पूरे झूठ की जानकारी होनी चाहिए...”

उक्रइनी सुन रहा था और उसके शब्दों की ताल पर अपना सिर हिला रहा था। वेसोवश्चिकोव और वह लाल बालों वाला और फ़ैक्टरी का एक लड़का जो पावेल के साथ आया था, एक तरफ़ दल बाँधे खड़े थे; न जाने क्यों माँ को वे अच्छे नहीं लगे।

जब नताशा बोल चुकी, तब पावेल खड़ा हुआ।

“क्या हम सिर्फ़ यह सोचते हैं कि हमारा पेट भरा रहे? बिल्कुल नहीं,” उसने उन तीनों की तरफ़ देखकर शान्त स्वर में कहा। “हमें उन लोगों को जो हमारी गर्दन पर सवार हैं और हमारी आँखों पर पट्टियाँ बाँधे हुए हैं यह जता देना चाहिए कि हम सब कुछ देखते हैं। हम न तो बेवक़ूफ़ हैं और न जानवर कि पेट भरने के अलावा और किसी बात की हमें चिन्ता ही न हो। हम इन्सानों का सा जीवन बिताना चाहते हैं! हमें अपने दुश्मनों के सामने यह साबित कर देना चाहिए कि उन्होंने हमारे ऊपर ख़ून-पसीना एक करने का जो जीवन थोप रखा है, वह हमें बुद्धि में उनके बराबर या उनसे बढ़कर होने से रोक नहीं सकता!”

पावेल की बातें सुनते समय माँ का हृदय गर्व से फूल गया। वह कितने अच्छे ढंग से बोलता है!

“ऐसे बहुत से लोग हैं जिन्हें खाने-पीने की कोई कमी नहीं, मगर उनमें बहुत थोड़े ही ईमानदार होते हैं।” उक्रइनी ने कहा। “हमें जानवरों की सी इस ज़िन्दगी की दलदल के पार मनुष्यों के भाईचारे के भावी राज्य तक एक पुल बनाना चाहिए। साथियो, हमारे सामने यही काम है!”

“अगर यह लड़ने का वक़्त है तो हम हाथ पर हाथ धरे क्यों बैठे हैं?” वेसोवश्चिकोव ने गुर्राकर आपत्ति प्रकट की।

आधी रात के बाद जाकर बैठक ख़त्म हुई सबसे पहले वेसोवश्चिकोव और वह लाल बालोंवाला बाहर गये; माँ को यह बात भी अच्छी नहीं लगी।

“आख़िर इतनी जल्दी क्या है इन्हें!” उसने भावहीनता से झुककर उन्हें विदा करते हुए सोचा।

“नाखोदका, तुम मुझे घर तक पहुँचा दोगे?” नताशा ने पूछा।

“ज़रूर, क्यों नहीं?” उक्रइनी ने उत्तर दिया।

जब नताशा रसोईघर में अपने कपड़े पहन रही थी, तब माँ ने उससे कहा :

"ऐसे मौसम के लिए तुम्हारे मोजे बहुत पतले हैं। कहो तो मैं तुम्हारे लिए एक जोड़ा ऊनी मोजे बुन दूँ।"

"पेलागेया निलोवना, आपका बहुत धन्यवाद, लेकिन ऊनी मोजे गड़ते हैं," नताशा ने हँसकर उत्तर दिया।

"मैं ऐसे बुन दूँगी जो गड़ेंगे नहीं," माँ ने कहा।

नताशा ने आँखें सिकोड़कर माँ को देखा और उसके इस प्रकार घूरने से माँ कुछ सिटपिटा गयी।

"मेरी अटपटी बातों का बुरा न मानना। मैंने सच्चे दिल से यह बात कही थी," माँ ने धीरे से कहा।

"तुम कितनी अच्छी हो, माँ!" नताशा भी भाव-विह्वल होकर उसके हाथ दबाते हुए वैसे ही धीरे से बोली।

"अच्छा, अम्मा, अब चलते हैं," माँ से नज़र मिलाते हुए उक्रइनी ने कहा और सिर झुकाकर नताशा के पीछे-पीछे ड्योढ़ी में चला गया।

माँ ने अपने बेटे की तरफ़ देखा। वह दरवाज़े पर खड़ा मुस्करा रहा था।

"किस बात पर मुस्कारा रहे हो?" माँ ने सिटपिटाकर पूछा।

"कोई ख़ास बात नहीं। बस यों ही, जी ख़ुश है।"

"मैं बूढ़ी और नासमझ ज़रूर हूँ, लेकिन मैं भले-बुरे को पहचानती हूँ," माँ ने किंचित खिन्न होकर कहा।

"बड़ी ख़ुशी है मुझे इस बात की," पावेल बोला। "लेकिन अब तुम जाकर सो जाओ।"

"अभी जाती हूँ।"

वह चाय के बर्तन वग़ैरह समेटने के बहाने वहीं मेज के आस-पास बनी रही, वह बहुत ख़ुश थी – सचमुच इतनी ख़ुश थी कि उसके पसीना छूट रहा था। उसे इस बात की ख़ुशी थी कि हर चीज़ इतनी सुखद रही और ऐसे शान्तिपूर्वक निबट गयी।

"पावेल, तुमने उन लोगों को यहाँ बुलाकर अच्छा ही किया," माँ ने कहा। "उक्रइनी बहुत भला है! और वह लड़की – वह तो बहुत ही समझदार है। कौन है वह?"

"अध्यापिका है," पावेल ने कमरे में टहलते हुए संक्षेप में उत्तर दिया।

"बहुत ग़रीब होगी। ढंग के कपड़े भी नहीं हैं उसके पास। सर्दी लगते कितनी देर लगती है। उसके माँ-बाप कहाँ हैं?"

"मास्को में," पावेल ने उत्तर दिया और फिर अपनी माँ के सामने रुककर

बहुत स्नेह और गम्भीरता से बोला :

"उसका बाप बहुत अमीर है। वह लोहे का व्यापार करता है और काफ़ी जायदाद है उसके पास। उसने अपनी बेटी को इसलिए घर से निकाल दिया कि उसने जीवन का यह रास्ता अपनाया। वह बहुत आराम में पली, जो भी वह चाहती थी, वह उसे मिलता था। लेकिन अब वह रात को कई कोस अकेली चली जाती है..."

यह जानकर माँ को आघात पहुँचा। वह कमरे के बीच में खड़ी अपनी भवें फड़काती रही और अपने बेटे की ओर देखती रही। फिर उसने चुपके से पूछा :

"क्या वह शहर गयी है?"

"हाँ।"

"हाय सच! उसे डर नहीं लगता?"

"बिल्कुल डर नहीं लगता," पावेल ने हँसकर कहा।

"लेकिन वह गयी क्यों? वह रात यहीं रह सकती थी, मेरे पास सो जाती।"

"यह मुमकिन नहीं था। कोई सुबह उसे यहाँ देख लेता और हम यह नहीं चाहते।"

माँ विचारों में डूबी हुई खिड़की के बाहर घूरती रही।

"पावेल, मेरी समझ में नहीं आता कि इसमें ऐसी ख़तरनाक और ग़ैर-क़ानूनी क्या बात है?" उसने धीमे से पूछा। "तुम कोई गलत काम तो नहीं कर रहे हो न?"

माँ का इसी बात की चिन्ता थी और वह आश्वस्त हो जाना चाहती थी।

"नहीं, हम कोई गलत काम नहीं करते," पावेल ने बड़े शान्त भाव से अपनी माँ की आँखों में आँखें डालकर दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया। "फिर भी हम सब लोग किसी न किसी दिन जेल में ठूँस दिये जायेंगे। तुम्हें यह मालूम होना चाहिए।"

माँ के हाथ काँपने लगे।

"भगवान की इच्छा हुई तो शायद तुम किसी तरह इससे बच भी जाओ, क्यों है न?" माँ ने दबी जबान से पूछा।

"नहीं," बेटे ने प्यार से उत्तर दिया। "मैं तुम्हें धोखे में नहीं रखना चाहता। इससे बचा नहीं जा सकता।"

वह मुस्करा दिया।

"अब जाकर सो जाओ। तुम थक गयी हो। मैं तो जाता हूँ बिस्तर पर।"

जब माँ अकेली रह गयी तब वह खिड़की के पास गयी और वहाँ खड़ी बाहर देखती रही। बाहर सर्दी और अँधेरा था। तेज़ हवा के झोंके छोटे-छोटे

ऊँघते-से मकानों की छतों पर से बर्फ़ उड़ाकर दीवारों से टकराते, फिर तेज़ी से ज़मीन की तरफ़ झपटते हुए साँय-साँय की आवाज़ पैदा करते और सड़क पर बर्फ़ के छोटे-छोटे बादलों का पीछा करते...

"हे ईसा मसीह, हम पर दया करो!" माँ ने बहुत धीमे स्वर में कहा।

उसका हृदय भर आया था और उस विपत्ति का पूर्वाभास, जिसका उल्लेख उसके बेटे ने इतने शान्त भाव और दृढ़ विश्वास के साथ किया था, उसके सीने में उसी प्रकार फड़फड़ा रहा था जैसे रात्रि के अन्धकार में कोई पतंगा। उसे अपनी आँखों के सामने बर्फ़ से ढँका हुआ एक मैदान दिखायी दे रहा था, जिसमें हवा मानो फटे हुए सफ़ेद कपड़े पहने महीन स्वर में चीख़ती हुई भाग रही थी और भागते-भागते बार-बार गिर पड़ती थी। मैदान के बीच में एक लड़की की छोटी-सी काली आकृति लड़खड़ाती हुई जा रही थी। हवा उसके पैरों को अपने भंवर में लपेट लेती, उसका साया उड़ाती और तीर की तरह चुभती हुई बर्फ़ उसके चेहरे पर झोंक देती। वह बड़ी कठिनाई से आगे बढ़ रही थी। उसके छोटे-छोटे पाँव बर्फ़ के ढेरों में धँसे जा रहे थे। बड़ी ठण्ड थी और डर लगता था। उस लड़की का शरीर आगे की तरफ़ इस तरह झुका हुआ था जैसे शरद ऋतु की तेज़ हवा के वेग से घास की कोई अकेली पत्ती झुक जाये। उसके दाहिनी तरफ़ दलदल से जंगल की एक दीवार उभर आयी थी जिसमें पतले-पतले बर्च वृक्ष और पल्लवहीन ऐस्पेन के पेड़ विपदा के मारे हुओं की तरह कानाफूसी कर रहे थे। बहुत दूर आगे शहर की बत्तियाँ जगमगा रही थीं।

"हे जग के रखवाले, दया करो," माँ ने काँपकर धीरे से कहा...

7

माला के दानों की तरह दिन बीतते गये, दिन सप्ताहों में और सप्ताह महीनों में बदलते गये। हर शनिवार को पावेल के मित्र उसके घर पर जमा होते और उनकी हर बैठक उस लम्बी सीढ़ी पर आगे की दिशा में एक और क़दम होती थी जिसके सहारे वे लोग धीरे-धीरे किसी सुदूर लक्ष्य की ओर चढ़ते चले जा रहे थे।

नये लोग पुरानों में आकर मिलते गये। व्लासोव-परिवार के घर का वह छोटा-सा कमरा खचाखच भरा रहने लगा। नताशा जब भी आती हमेशा थकी हुई और सर्दी से अकड़ी हुई, पर हमेशा प्रसन्नचित। पावेल की माँ ने उसके लिए एक जोड़ा ऊनी मोजे बुन दिया और अपने हाथ से उस लड़की के छोटे-छोटे पैरों पर उन्हें पहना दिया। नताशा हँस दी, पर सहसा चुप और विचारमग्न हो गयी।

"मेरी एक आया थी, जो बहुत ही नेक थी," उसने स्नेह से कहा।

“पेलागेया निलोवना, कैसी अजीब बात है कि मेहनतकश लोग अपने जीवन में इतनी कठिनाइयाँ और इतना अन्याय सहते हैं और फिर भी वे उन दूसरे लोगों से ज़्यादा नेक होते हैं,” उसने बहुत दूर, उससे बहुत दूर रहने वाले लोगों की ओर संकेत करते हुए कहा।

“कैसी हो तुम भी!” पेलागेया निलोवना ने कहा। “अपने माता–पिता और घर–बार सभी कुछ छोड़ दिया...” वह एक आह भरकर चुप हो गयी; वह अपने विचारों को व्यक्त करने में असमर्थ थी। पर नताशा की सूरत देखते ही उसने फिर किसी ऐसी चीज़ के लिए कृतज्ञता की भावना का अनुभव किया, जिसकी वह व्याख्या नहीं कर सकती थी। माँ उस लड़की के सामने ज़मीन पर बैठी थी और वह लड़की आगे को सिर झुकाये कुछ सोच–सोचकर मुस्करा रही थी।

“सभी कुछ छोड़ दिया?” उसने माँ के शब्द दुहराये। “यह कोई बड़ी बात नहीं है। मेरे पिता बड़े बुरे स्वभाव के आदमी हैं, और वही हाल मेरे भाई का है। और साथ ही वह शराबी भी हैं। मेरी बड़ी बहन बहुत दुखी है... उसने अपने से कहीं ज़्यादा उम्र के आदमी से ब्याह किया था, जो अमीर तो बहुत था पर बड़ा लालची था। मुझे अपनी माँ के लिए दुख होता है! तुम्हारी तरह से वह भी बहुत ही सीधी–सादी हैं। बिल्कुल चुहिया जैसी छोटी, भागती भी चुहिया की तरह ही तेज़ हैं और हर आदमी से डरती भी उसी तरह हैं। कभी–कभी उनसे मिलने को मेरा जी चाहता है... ओह, बेहद जी चाहता है!”

“हाय बेचारी!” माँ ने उदास होकर अपना सिर झुकाते हुए कहा।

लड़की ने पीछे की ओर सिर झटका और अपना हाथ इस प्रकार फैला लिया, मानो किसी चीज़ को धक्का देकर दूर कर रही हो।

“ओह, नहीं! कभी–कभी तो मैं बहुत ख़ुश होती हूँ – बहुत ही ज़्यादा ख़ुश होती हूँ!”

उसका चेहरा पीला पड़ गया और उसकी नीली आँखें चमकने लगीं। उसने अपने दोनों हाथ माँ के कन्धों पर रख दिये।

“काश तुम जानती होतीं, काश तुम समझ सकतीं कि हम लोग कितना बड़ा काम कर रहे हैं!” उसने बहुत धीमे से और प्रभावशाली ढंग से कहा।

ईर्ष्या जैसी एक भावना पेलागेया के हृदय में एक क्षण के लिए उठी।

“अब मैं इन सब बातों के लिए बहुत बूढ़ी हो चुकी हूँ। और अनपढ़ हूँ...” उसने ज़मीन पर से उठते हुए बड़ी हसरत से कहा।

...पावेल अब और ज़्यादा मौक़ों पर बोलने लगा था, वह अब ज़्यादा देर तक और ज़्यादा जोश के साथ बोलता था, वह प्रतिदिन दुबला होता जा रहा था। उसकी माँ को ऐसा लगता था कि जब वह नताशा की ओर देखता और उससे बात करता

तो उसकी आँखों में एक कोमलता और आवाज़ में एक नरमी पैदा हो जाती थी और उसके बात करने के ढंग में भी अक्खड़पन कम हो जाता था।

“भगवान करे कि ऐसा हो जाये,” वह कुछ सोचकर मुस्कराने लगी।

जब कभी उनकी इन बैठकों में बहुत गरमागरम और तूफानी बहस छिड़ जाती तो उक्रइनी उठता और गिरजे के घण्टे की लटकन की तरह आगे-पीछे डोलते हुए थोड़े से सीधे-सादे अच्छे शब्द कहता, शीघ्र ही सब लोग शान्त हो जाते और सारी गरमागरमी ख़त्म हो जाती। उदास मुद्रावाला वेसोवश्चिकोव हमेशा दूसरों को कुछ करने के लिए उकसाता रहता था; वह और लाल बालों वाला, जिसे सब लोग समोइलोव कहते थे, यही दोनों हर बहस को शुरू करते थे। सन जैसे बालों वाला इवान बुकिन, जो ऐसा मालूम होता था कि सज्जी के पानी में नहला दिया गया हो, हमेशा उनका समर्थन करता था। चिकना-सुथरा याकोव सोमोव बहुत कम बोलता था, मगर जो कुछ भी वह कहता बड़े विश्वास के साथ। वह और चौड़े माथेवाला फ़्योदोर माजिन हमेशा पावेल और उक्रइनी का पक्ष लेते थे।

कभी-कभी निकोलाई इवानोविच नाम का एक व्यक्ति नताशा का स्थान ले लेता था। वह चश्मा लगाता था और उसके छोटी-सी भूरी दाढ़ी थी। वह किसी सुदूर प्रान्त में पैदा हुआ था जिसके कारण बोलते समय वह “ओ” पर ख़ास ज़ोर देता था। वह बिल्कुल ही “परदेसी” था। वह साधारण से साधारण चीज़ों के बारे में, लोगों के प्रतिदिन के जीवन से सम्बन्ध रखने वाली सभी समस्याओं के बारे में - पारिवारिक जीवन की, बच्चों की, व्यापार की, पुलिस की और रोटी तथा गोश्त की क़ीमतों की बातें करता था। इन बातों के दौरान वह हर झूठी, बेतूकी चीज़ की कलई खोलता, हर उस चीज़ का पर्दाफाश करता जो मूर्खतापूर्ण और हास्यास्पद पर जनता के लिए हानिकारक थी। माँ को लगता कि वह कहीं बहुत दूर से, किसी दूसरी दुनिया से आया है, जहाँ हर आदमी आराम और ईमानदारी का जीवन बिताता है। यहाँ की हर चीज़ उसके लिए अजीब थी और वह न तो इस जीवन का आदी हो सकता था और न इसे स्वीकार ही कर सकता था। वह इस जीवन से घृणा करता था और इस घृणा के कारण उसके हृदय में इस जीवन को अपने ढंग से बदलने की एक ख़ामोश पर दृढ़ इच्छा जागृत हुई थी। उसका चेहरा पीला और मुरझाया-सा था और उसकी आँखों के नीचे हल्की-हल्की झुर्रियाँ पड़ी हुई थीं। उसका स्वर कोमल था और उसके हाथ हमेशा गरम रहते थे। जब भी वह पेलागेया से हाथ मिलाता वह उसके पूरे हाथ को कसकर दबा लेता और माँ को इससे बड़ा सुख मिलता।

इन बैठकों में शहर से दूसरे लोग भी आने लगे – सबसे ज़्यादा तो एक दुबली-सी लम्बी लड़की आती थी, पीले चेहरे पर बड़ी-बड़ी आँखों वाली। उसका नमा साशा था। उसकी चाल और हाव-भाव में कुछ-कुछ मर्दानापन था। वह हमेशा अपनी घनी काली भवों को एक-दूसरे के निकट लाकर देखती थी, मानो खफा हो और बोलते समय उसकी सीधी नाक के पतले नथुने फड़कते रहते थे।

उसी ने पहली बार तेज़ ऊँची आवाज़ में घोषणा की थी :

"हम समाजवादी हैं।"

जब माँ ने ये शब्द सुने तो वह भय से आतंकित होकर चुपचाप उस लड़की को घूरती रही। पेलागेया ने सुना था कि समाजवादियों ने ज़ार को मार डाला था। यह उसकी युवावस्था के दिनों की बात थी। उन दिनों यह अफवाह थी कि बड़े-बड़े जागीरदारों ने ज़ार से इस बात का बदला लेने के लिए कि उसने उनके भू-दासों को आजाद कर दिया था, यह सौगंध खायी थी कि जब तक वे उसे मार नहीं डालेंगे तब तक अपने बाल नहीं कटवायेंगे। इसीलिए उन्हें समाजवादी कहते थे। मगर अब पेलागेया की समझ में नहीं आ रहा था कि उसका बेटा और उसके साथी अपने आपको समाजवादी क्यों कहते हैं।

जब सब लोग घर चले गये तो उसने पावेल के पास जाकर उससे पूछा :

"पावेल, क्या तुम समाजवादी हो?"

"हाँ," उसने हमेशा की तरह माँ के सामने दृढ़तापूर्वक तनकर खड़े होकर उत्तर दिया। "क्यों, क्या बात है?"

उसकी माँ ने एक गहरी आह भरी और आँखें झुका लीं।

"सच कहते हो, पावेल? लेकिन वे लोग तो ज़ार के ख़िलाफ़ हैं। एक ज़ार को तो उन्होंने मार भी डाला।"

पावेल हाथ से अपना गाल रगड़ता हुआ कमरे के दूसरी तरफ़ चला गया।

"हम लोगों को इस तरह से काम करने की ज़रूरत नहीं पड़ती," उसने धीरे से मुस्कराकर कहा।

इसके बाद वह बड़ी देर तक बहुत गम्भीर और शान्त भाव से बातें करता रहा। उसके चेहरे को देखकर माँ ने सोचा :

"वह कभी कोई गलत काम नहीं करेगा। वह कर ही नहीं सकता।"

इसके बाद वह भयानक शब्द बार-बार दुहराया गया, यहाँ तक कि उसका तीखापन ख़त्म हो गया और माँ के कान उन लोगों द्वारा इस्तेमाल किये जाने वाले दर्जनों दूसरे विचित्र शब्दों की तरह इस शब्द के भी आदी हो गये। पर साशा उसे

अच्छी नहीं लगती थी और उसके सामने उसे कुछ बेचैनी और घबराहट-सी होती थी...

एक दिन उसने अरुचि से अपने होंठ सिकोड़कर उक्रइनी से साशा के बारे में बात की :

"वह बहुत कठोर है! सब पर हुकुम चलाती रहती है - यह करो, वह करो!"

उक्रइनी ठहाका मारकर हँस पड़ा।

"अम्मा, तुमने लाख टके की बात कह दी! पावेल, कहो क्या कहते हो अब?"

फिर माँ की तरफ़ आँख मारकर उसने कहा :

"ये हैं बड़े घराने के लोग।" और उसकी आँखें चमक उठीं।

"वह बहुत अच्छी लड़की है," पावेल ने रुखाई से कहा।

"सो तो है," उक्रइनी ने उसकी बात की पुष्टि करते हुए कहा, "मगर वह यह नहीं समझती कि उसे क्या करना है, जबकि हम लोग यह जानते हैं और कर भी सकते हैं!"

इसके बाद वे दोनों किसी ऐसी बात के बारे में बहस करने लगे जो माँ की समझ से बाहर थी।

माँ ने देखा कि साशा सबसे ज़्यादा सख़्ती पावेल के साथ बरतती थी; कभी-कभी तो वह उसे फटकार भी देती थी। ऐसे मौक़ों पर पावेल कुछ भी न कहता; वह केवल हँस देता और उस लड़की के चेहरे को वैसी ही कोमल दृष्टि से देखता जैसे वह कभी नताशा को देखा करता था। माँ को यह अच्छा न लगता।

कभी-कभी उन लोगों पर सहसा उल्लास का ऐसा उन्माद छा जाता कि पेलायेगा निलोवना आश्चर्यचकित रह जाती। बहुधा ऐसा उन रातों को होता था जब वे अखबारों में विदेशों के मज़दूर आन्दोलन के बारे में पढ़ते थे। उस समय उनकी आँखें चमकने लगतीं और वे एक विचित्र ढंग से बच्चों की तरह हर्षोन्मत्त हो जाते; वे खुलकर उल्लासपूर्ण हँसी हँसते और बड़े प्यार से एक-दूसरे के कन्धे थपथपाते।

"हमारे जर्मन साथी ज़िन्दाबाद!" कोई ऐसे चिल्लाता मानो हर्ष के नशे में चूर हो।

"इटली के मज़दूर ज़िन्दाबाद!" किसी दूसरे अवसर पर वे नारा लगाते।

ऐसा मालूम होता था कि सुदूर देशों में रहने वाले मज़दूरों को, जो उन्हें जानते भी नहीं थे और उनकी बोली भी नहीं समझ सकते थे, इस हर्षध्वनि से

सम्बोधित करते समय उन्हें इस बात का विश्वास हो कि ये अज्ञात लोग उनकी आवाज़ सुन रहे हैं और उनके उल्लास को समझ रहे हैं।

"क्या यह अच्छा न होगा कि हम उन्हें खत लिखें?" उक्रइनी ने कहा; उसकी आँखों में एक मन्द ज्योति चमक उठी। "ताकि उन्हें यह मालूम हो जाये कि यहाँ रूस में भी उनके दोस्त रहते हैं जो उन्हीं के विचारों को मानते और उनका प्रचार करते हैं, जो उसी उद्देश्य के लिए जीते हैं और उन्हीं सफलताओं पर खुशियाँ मनाते हैं।"

फ़्रांसीसियों, अंग्रेजों और स्वीडेनवासियों के बारे में वे अपने दोस्तों की तरह बातें करते, ऐसे लोगों के बारे में, जो उनके हृदय के निकट थे, जिनका वे सम्मान करते थे और जिनके सुख-दुख में वे साझेदार थे, उनकी बातें करते समय उनके चेहरे खिल उठते।

इस छोटे-से घुटे हुए कमरे में सारी दुनिया के मज़दूरों के साथ आत्मिक रूप से एकबद्ध होने की भावना जागृत हुईं यह भावना सबके हृदय में थी, माँ के हृदय में भी, और यद्यपि वह इसका अर्थ नहीं समझ सकती थी फिर भी यह उसे शक्ति प्रदान करती थी - इसमें कितनी उमंग, कितना मादक उल्लास और कितनी आशा भरी हुई थी।

"ज़रा सोचो तो!" एक बार उसने उक्रइनी से कहा। "सभी लोग तुम्हारे साथी हैं - यहूदी भी, आर्मीनियाई भी और आस्ट्रियाई भी - उन सबके सुख-दुख में साथ हो!"

"हाँ अम्मा, सबके! सबके!" उक्रइनी ने जोश के साथ कहा। "हम किसी जाति या कौम का भेद नहीं मानते। सिर्फ़ साथी हैं या सिर्फ़ दुश्मन। सारे मेहनतकश हमारे साथी हैं, सब अमीर लोग, सब सरकारें हमारी दुश्मन हैं। जब हम इस दुनिया पर नज़र डालते हैं और देखते हैं कि हमारे जैसे मज़दूर कितने अधिक हैं और वे कितने ताकतवर हैं तो हमारी ख़ुशी और हमारे दिलों में जोश की कोई हद नहीं रहती! माँ, जब कोई फ़्रांसीसी या जर्मन चीज़ों को इसी तरह देखता है तो वह भी यही अनुभव करता है और यही हाल इटलीवालों का है। हम सभी एक ही माँ के बच्चे हैं - सारी दुनिया के मज़दूरों के भ्रातृत्व के अजेय विचार के बच्चे हैं। यह विचार हमारे दिलों को गरमाता है। यह विचार एक न्यायपूर्ण आकाश पर चमकते हुए सूर्य के समान है और वह आकाश मज़दूर का हृदय है। वह कोई भी हो, अपने आपको वह कुछ भी कहता हो, हर समाजवादी आत्मा के रिश्ते से हमेशा हमारा भाई है - कल भी था, आज भी है और कल भी रहेगा!"

उनका यह बच्चों जैसा, पर दृढ़ विश्वास अधिकाधिक स्पष्ट रूप से,

अधिकाधिक उदात्त रूप से प्रकट होता गया और बढ़ते-बढ़ते एक प्रबल शक्ति बन गया। और जब माँ ने यह देखा तो उसकी अन्तरात्मा ने यह अनुभव किया कि संसार ने सचमुच सूर्य जैसीकिसी महान और उज्ज्वल वस्तु को जन्म दिया है जिसे वह स्वयं अपनी आँखों से देख सकती है।

वे बहुधा गाने गाते। ऊँचे, उल्लास-भरे स्वर में वे सीधे-सादे गीत गाते जिनसे सभी लोग परिचित थे। पर कभी-कभी वे नये गीत भी गाते, गम्भीर गीत, जिनका संगीत बहुत प्यारा और धुनें अनोखी होती थीं। इन गीतों को वे धीमे स्वरों में गाते थे जैसे गिरजाघरों का संगीत होता है। गानेवालों के चेहरे लाल या पीले हो जाते और उनके गूँजते हुए शब्दों में बड़ी सबलता व्यक्त होती थी।

माँ को एक नये गीत ने विशेष रूप से आन्दोलित किया। उसमें शंका और अनिश्चय की भूल-भुलैयों में अकेली भटकती हुई किसी पीड़ित आत्मा के व्यथा-भरे उद्गार व्यक्त नहीं किये गये थे। ने उसमें अभाव के मारे और भय के कुचले हुए, नीरस और व्यक्तित्वहीन प्राणियों का करुण क्रन्दन ही था। न उसमें अनन्त गगन में भटकती हुई किसी अन्ध-शक्ति की उदास आहें सुनायी देती थीं और न भले और बुरे दोनों ही पर समान रूप से प्रहार करने को तत्पर विवेकहीन दुस्साहस की चुनौतियों की ललकार ही। गीत में अन्याय के ऐसे आभास या प्रतिरोध की ऐसी इच्छा का भी वर्णन नहीं किया गया था जो मनुष्य को अन्धा बना दे, जिसमें नष्ट करने की क्षमता तो हो, पर सृजन की नहीं। इस गीत में पुराने, दासता के बँधनों में जकड़े हुए संसार की कोई बात नहीं थी।

माँ को इसकी गम्भीर धुन और कठोर शब्द बिल्कुल पसन्द नहीं थे, पर इन शब्दों और इस धुन के पीछे कोई इससे भी बड़ी चीज़ थी जो शब्दों और धुन पर छा जाती थी और एक ऐसी चीज़ की भावना उत्पन्न करती थी जो इतनी विशाल थी कि कल्पना की परिधि में उसे नहीं समेटा जा सकता था। उसने इस चीज़ को नौजवानों की आँखों में और उनके चेहरों में देखा; उसे आभास हुआ कि वह चीज़ उनके अन्दर काम करती है। वह एक ऐसी शक्ति के वश में होकर जो शब्दों और संगीत की सीमाओं को तोड़कर बहुत आगे निकल जाती थी, इस गीत को किसी भी दूसरे गीत की अपेक्षा अधिक ध्यान से, अधिक विकलता के साथ सुनती थी।

वे इस गीत को और गीतों की अपेक्षा मन्द स्वर में गाते थे, पर उसकी गूँज अधिक प्रबल होती थी और लोगों पर उसका नशा बसन्ती बयार की मादकता की तरह छा जाता था।

"समय आ गया है कि अब हम इस गीत को सड़कों पर गाया करें," वेसोवश्चिकोव बहुत गम्भीर मुद्रा धारण करके कहा करता था।

जब उसके पिता को एक बार फिर चोरी करने के अपराध में जेल भेज दिया गया तो वेसोवश्चिकोव ने अपने साथियों से कहा :

"अब हमारी ये बैठकें मेरे घर हो सकती हैं..."

प्राय: रोज़ शाम को पावेल का कोई न कोई साथी काम के बाद उसके साथ घर आता था और वे बैठकर कुछ पढ़ते-लिखते थे। वे इतनी जल्दी में होते थे और अपने काम में इतने खोये रहते थे कि हाथ-मुँह भी नहीं धोते थे। किताबें हाथ में लिये-लिये ही वे खाना खाते और चाय पीते। माँ के लिए उनकी बातें समझना दिन-प्रतिदिन अधिक कठिन होता गया।

"हमें एक अखबार निकालना चाहिए!" पावेल बहुधा कहा करता था।

जीवन की धारा अधिक वेगमय तथा प्रबल हो गयी और लोग ज़्यादा जल्दी-जल्दी एक पुस्तक को समाप्त करके दूसरी पुस्तक पढ़ने लगे, जैसे मधु-मक्खियाँ एक फूल का रस चूसकर दूसरे फूल पर जा बैठती हैं।

"अब हम लोगों की चर्चा होने लगी है," वेसोवश्चिकोव ने कहा। "जल्द ही वे हमें गिरफ़्तार करना शुरू कर देंगे..."

"बकरे की माँ कब तक ख़ैर मनायेगी," उक्रइनी ने अपना मत प्रकट किया।

माँ को दिन-प्रतिदिन वह ज़्यादा अच्छा लगने लगा था। जब वह उसे "अम्मा" कहता तो उसे ऐसा लगता जैसे किसी नन्हे-से बच्चे ने अपना कोमल हाथ उसके गाल पर फेर दिया हो। यदि किसी दिन इतवार को पावेल व्यस्त होता तो उक्रइनी लकड़ी चीर देता। एक दिन वह कन्धे पर एक तख़्ता लादे हुए आया और कुल्हाड़ी लेकर उसने जल्दी-जल्दी और बड़ी दक्षता के साथ बरामदे के लिए पुराने जीने के स्थान पर, जो बिल्कुल सड़ गया था, एक नया जीना बना दिया। एक बार उसने इसी प्रकार बिना किसी को जताये चहारदीवारी का जंगला ठीक कर दिया, जो बिल्कुल झुक गया था। काम करते समय वह हमेशा किसी सुन्दर दर्दीली धुन पर सीटी बजाता रहता था।

"उक्रइनी को हम अपने घर में ही क्यों न रख लें?" एक दिन माँ ने अपने बेटे से कहा। "तुम दोनों के लिए अच्छा रहेगा - हर वक़्त भाग-भागकर एक-दूसरे के घर नहीं जाना पड़ेगा।"

"क्यों अपनी तकलीफ बढ़ाती हो?" पावेल ने कन्धे झटककर उत्तर दिया।

"यह क्या कहते हो?" माँ बोली। "सारी उमर मैंने बेकार ही तकलीफ उठायी है। अब अगर उसके जैसे भले आदमी के लिए कुछ तकलीफ भी हो, तो क्या है!"

"जैसा चाहो, करो!" बेटे ने कहा। "उसके आ जाने से मुझे तो ख़ुशी ही होगी।"

और इस प्रकार उक्रइनी उनके साथ रहने लगा।

8

बस्ती के सिरे पर स्थित उस छोटे-से घर की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित हुआ, दर्जनों चोर निगाहें उसकी दीवारों को बेधकर अन्दर देखने का प्रयत्न करने लगीं। अफवाहों के दूषित पंख तेज़ी से उस घर पर फड़फड़ाने लगे। लोग कोशिश करने लगे कि पुश्ते के सिरे पर स्थित उस घर में जिस रहस्यमय वस्तु के छिपे होने का उन्हें आभास था उसे किसी प्रकार आतंकित करके बाहर निकाल लायें। रात को वे खिड़की से अन्दर झाँकते और कभी-कभी तो शीशे पर खटखटाते भी, पर डरकर भाग जाते।

एक दिन पेलागेया निलोवना को भटियारख़ाने के मालिक बेगुनत्सोव ने रास्ते में रोका। वह देखने में बहुत नेक बूढ़ा आदमी था जो हमेशा मोटे मखमल की बैंगनी वास्कट पहनता था और उसकी पिलपिली लाल गर्दन पर काला रेशमी रूमाल बँधा रहता था। उसकी चमकदार नुकीली नाक पर कछुए की खपरी की बनी हुई कमानियोंवाली ऐनक चढ़ी रहती थी और इसी कारण लोगों ने उसका नाम "हड्डी की आँखें" रख दिया था।

दम लेने के लिए रुके बिना या उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना उसने माँ पर ओलों की तरह शब्दों की बौछार शुरू कर दी।

"पेलागेया निलोवना, कहो कैसी हो? और तुम्हारा बेटा? कुछ ब्याह-व्याह करने का इरादा नहीं है क्या उसका? मेरे ख़याल में तो अब उसकी उमर हो गयी है। बेटों का ब्याह जितनी जल्दी हो जाये, माँ-बाप के लिए उतना ही अच्छा होता है। आदमी अपना घर बसा ले तो उसके तन-मन दोनों के लिए ठीक वैसा ही अच्छा रहता है, जैसे सिरके में खुम्बी नहीं ख़राब होने पाती। तुम्हारी जगह अगर मैं होता, तो अब तक उसका ब्याह कर दिया होता। ज़माना ही ऐसा आ गया है कि इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि कौन कैसे रहता है। लोग मनमाने ढंग से रहने लगे हैं। उल्टी-सीधी बातें सोचने लगे हैं और वैसे ही काम करने लगे हैं। नौजवानों ने गिरजाघरों में भी जाना छोड़ दिया है और जहाँ बहुत से लोग जमा हों उन जगहों से कतराने लगे हैं। अँधेरे कोनों में छुप-छुपकर वे अपने रहस्यों के बारे में कानाफूसी करते हैं। मैं पूछता हूँ यह खुसुर-फुसुर क्यों? लोगों से कतराना क्यों? ऐसी कौन-सी बात है जिसे सबके सामने - जैसे भटियारख़ाने में - कहने से वे डरते हैं? कोई भेद की बात है? तो भेद की बात करने की तो बस एक

ही जगह है और वह है हमारा पवित्र गिरजाघर! यह कोनों में छिप-छिपकर खुसुर-फुसुर करने की आदत दिमाग का खलल है! अच्छा, पेलागेया निलोवना, ख़ुश रहो!"

उसने अपनी टोपी उतारकर हिलायी और चल दिया; माँ आश्चर्य चकित खड़ी रह गयी।

एक बार और ऐसा ही हुआ : व्लासोव-परिवार की पड़ोसिन मारिया कोरसुनोवा, जो एक लोहार की विधवा थी और फ़ैक्टरी के फाटक पर खाने की चीज़ें बेचकर अपना पेट पालती थी, बाज़ार में पेलागेया निलोवना को मिल गयी। बोली :

"पेलागेया, अपने बेटे पर नज़र रखो!"

"क्या मतलब है तुम्हारा?" माँ ने पूछा।

"तरह-तरह की बातें सुन रही हूँ!" मारिया ने बड़े रहस्यपूर्ण ढंग से कहा। "बुरी-बुरी बातें, समझीं, माँ। लोग कहते हैं कि वह एक गुप्त सम्प्रदाय बना रहा है, "लैगेलान्टों की तरह। "लैगेलान्टों की तरह ही वे एक-दूसरे की खाल खींच लेंगे..."

"यह सब बकवास है, मारिया!"

"आग के बिना धुआँ नहीं होता," खोमचेवाली ने कहा।

माँ ने इन सब बातों की सूचना अपने बेटे को दी, पर उसने केवल अपने कन्धे झटक दिये और उक्रइनी हमेशा की तरह अपनी कोमल आवाज़ में खिलखिलाकर हँस दिया।

"लड़कियाँ भी बहुत बुरा माने हुए हैं," माँ ने कहा। "तुम लोग बहुत भले लड़के हो, कोई भी लड़की तुमसे ब्याह करके अपने आपको भाग्यवान समझेगी; मेहनती हो और शराबी भी नहीं हो, मगर तुम लड़कियों की तरफ़ ज़रा भी ध्यान नहीं देते! लोग कहते हैं कि शहर की बुरी लड़कियाँ तुमसे मिलने आती हैं..."

"हटाओ भी!" पावेल ने झुँझलाहट के साथ मुँह बनाकर कहा।

"दलदल की हर चीज़ से सड़ांध आती है," उक्रइनी ने आह भरकर कहा। "अरे माँ, तुम इन नादान छोकरियों को समझा दो कि ब्याह करके घर बसाने का मतलब क्या होता है, तब वे अपना सर ओखली में देने को इतनी बेताब न होंगी..."

"कैसी बात कहते हो!" माँ ने कहा। "वे सब कुछ अच्छी तरह जानती हैं, सब समझती हैं मगर वे कर ही क्या सकती हैं?"

"अगर वे समझती होतीं तो कोई दूसरा रास्ता ढूँढ़ लेतीं," पावेल ने अपना विचार प्रकट किया।

माँ ने अपने बेटे के गम्भीर चेहरे को देखा।

"तुम इनको पढ़ाते क्यों नहीं? उनमें जो समझदार हैं उन्हें यहाँ बुला लिया करो।"

"यह बेतुकी बात होगी," बेटे ने रुखाई से जवाब दिया।

"पर अगर आजमाकर देखा जाये तो?" उक्रइनी ने पूछा।

पावेल ने कुछ देर चुप रहकर उत्तर दिया :

"जोड़ों के सैर-सपाटे शुरू हो जायेंगे, कुछ का ब्याह हो जायेगा और बस, क़िस्सा ख़त्म!"

उसकी माँ सोच में पड़ गयी। उसे पावेल की साधु-सन्तों जैसी नीरसता के कारण चिन्ता होने लगी थी। वह देखती थी कि सभी लोग, उक्रइनी की भाँति उससे बड़ी उमर के उसके साथी भी उससे सलाह लेते थे, पर उसे ऐसा लगता था कि वे उसके बेटे से डरते थे और उसकी नीरसता के कारण कोई भी उससे प्यार नहीं करता था।

एक दिन रात को जब वह सोने लेट चुकी थी और उसका बेटा तथा उक्रइनी पढ़ रहे थे, उसे पतली-सी ओट के उस पार से उनकी दबी-दबी आवाज़ सुनायी दी।

"मुझे वह नताशा अच्छी लगती है," सहसा उक्रइनी ने कहा।

"मैं जानता हूँ," पावेल ने कुछ देर रुककर कहा।

माँ को उक्रइनी के धीरे से उठकर नंगे पैर कमरे में टहलने की आहट सुनायी दी। वह बहुत धीमे स्वर में किसी उदास धुन पर सीटी बजाने लगा, फिर यकायक रुककर दबी आवाज़ में बोला :

"मालूम नहीं उसने कभी इस बात पर ध्यान दिया भी है कि नहीं।"

पावेल ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"तुम्हारा क्या ख़याल है?" उक्रइनी ने लगभग उसके कान में कहा।

"उसने ज़रूर ध्यान दिया है," पावेल ने उत्तर दिया। "इसीलिए तो उसने यहाँ आना छोड़ दिया।"

उक्रइनी अपने बोझल क़दमों को घसीटता हुआ कमरे में टहलने लगा और एक बार फिर उसकी सीटी का मन्द स्वर कमरे में कम्पित हो उठा।

"अगर मैं उससे साफ़-साफ़ कह दूँ तो क्या कुछ हर्ज है?" उक्रइनी ने पूछा।

"क्या कह दो?"

"यही कि – कि मैं..." उक्रइनी ने स्वर धीमा कर लिया।

"आख़िर क्यों?" पावेल ने उसे बीच में ही टोक दिया।

माँ ने आहट से अंदाजा लगाया कि उक्रइनी ने टहलना बन्द कर दिया है और उसे ऐसा लगा कि जैसे वह खड़ा मुस्करा रहा है।

"मेरा ख़याल है कि किसी को अगर किसी लड़की से प्यार हो जाये तो उसे उससे कह देना चाहिए, नहीं तो उसका नतीजा कोई नहीं निकलता।"

पावेल ने ज़ोर से अपनी किताब बन्द की।

"आख़िर तुम क्या नतीजा चाहते हो?" उसने पूछा।

दोनों बड़ी देर तक चुप रहे।

"तुम्हारा क्या ख़याल है?" उक्रइनी ने पूछा।

"अन्द्रेई, तुम्हें इस बात का सही-सही अंदाज होना चाहिए कि तुम क्या चाहते हो," पावेल ने धीमे-धीमे कहा। "मान लो वह भी तुमसे प्यार करती है – मुझे इसमें शक है मगर फिर भी मान लो – और तुम दोनों की शादी हो जाती है। क्या ख़ूब जोड़ी रहेगी। वह पढ़ी-लिखी और तुम निरे मज़दूर! फिर बच्चे होंगे और उनका पेट पालने के लिए तुम्हें दिन-रात ख़ून-पसीना एक करना पड़ेगा। रोटी के टुकड़ों, बच्चों और मकान के किराये की फ़िक्र में ज़िन्दगी एक जंजाल बन जायेगी। तुम हमारे ध्येय के लिए किसी काम के नहीं रह जाओगे। तुम दोनों!"

थोड़ी देर तक ख़ामोशी रही। इसके बाद पावेल ने फिर बोलना शुरू किया पर उसके स्वर में अब उतनी सख़्ती नहीं थी।

"अन्द्रेई, अच्छा यही है कि यह सब कुछ भूल जाओ। उसके लिए कठिनाइयाँ पैदा न करो..."

ख़ामोशी। घड़ी की टिक-टिक साफ़ सुनायी दे रही थी, समय बीत रहा था।

"मेरा आधा दिल प्यार करता है और आधा दिल नफ़रत। यह भी कोई दिल है?"

पन्ने उलटने की आवाज़ सुनायी दी – पावेल ने शायद फिर अपनी किताब पढ़नी शुरू कर दी थी। उसकी माँ आँखें बन्द किये लेटी थी। वह साँस लेने तक से डर रही थी। वह उक्रइनी के लिए दुखी थी उसका हृदय रो रहा था, पर अपने बेटे के लिए वह और भी दुखी थी।

"हाय, बेचारा मेरा बच्चा!" माँ ने सोचा।

"तुम्हारा ख़याल है कि मुझे चुप ही रहना चाहये?" सहसा उक्रइनी ने आवेश में आकर कहा।

"यह ज़्यादा ईमानदारी होगी," पावेल ने शान्त भाव से उत्तर दिया।

"चलो, ऐसा ही सही," उक्रइनी बोला, कुछ क्षण बाद उसने उदास होकर बहुत धीरे से कहा, "पावेल, जब तुम पर ऐसी बनेगी, तब जानोगे।"

"अभी जान रहा हूँ..."

हवा घर की दीवार से टकरा रही थी। घड़ी की टिक-टिक समय बीतने की सूचना दे रही थी।

"कोई मज़ाक़ नहीं है यह!" उक्रइनी ने धीरे-धीरे कहा।

माँ तकिये में मुँह छुपाकर चुपके-चुपके रोने लगी।

सुबह उसे ऐसा लगा कि अन्द्रेई और भी छोटा हो गया है और पहले से भी ज़्यादा प्यारा लगने लगा है। उसका दुबला-पतला और ताड़ जैसा सीधा बेटा हमेशा की तरह ख़ामोश था। अब से पहले माँ ने कभी उक्रइनी को अन्द्रेई ओनीसिमोविच के अलावा और कुछ कहकर सम्बोधित नहीं किया था, पर आज अनजाने ही उसने कहा :

" अन्द्रेई, अपने जूते मरम्मत करा लो, नहीं तो तुम्हें ठण्ड लग जायेगी।"

"अब की तनख्वाह मिलने पर मैं नया जोड़ा ले लूँगा," उसने हँसकर उत्तर दिया। फिर उसने अपनी लम्बी भुजा माँ के कन्धे पर रखकर कहा, "शायद तुम ही मेरी असली माँ हो! लेकिन तुम इस बात को मानना नहीं चाहतीं, क्योंकि मैं इतना बदसूरत हूँ। है न यही बात?"

माँ ने कोई उत्तर दिये बिना उसका हाथ थपथपाया। वह बहुत-सी स्नेह-भरी बातें कहना चाहती थी, पर उसका दिल भर आया और शब्द उसके होंठों से निकल ही नहीं पाये।

9

बस्ती में समाजवादियों की चर्चा होने लगी, जो नीली स्याही में छपे हुए पर्चे बाँटते थे। इन पर्चों में फ़ैक्टरी के व्यवस्थापकों की कड़ी आलोचना की जाती थी, उनमें पीटर्सबर्ग और दक्षिणी रूस की हड़तालों के बारे में बताया जाता था, और मज़दूरों को अपने हितों की रक्षा के लिए अपनी एकता क़ायम करने के लिए ललकारा जाता था।

अधेड़ उम्र के लोग जो फ़ैक्टरी में अच्छे पैसे पैदा कर रहे थे, बहुत नाराज़ थे।

"बेकार झगड़ा कराने वाले लोग हैं!" वे कहते। "इन हरकतों पर तो इनका मुँह तोड़ देना चाहिए!" और वे ये परचे अपने मालिकों को दे आते थे।

नौजवान लोग उन्हें बड़े उत्साह से पढ़ते थे।

"एक-एक बात सच है!" वे कहते।

अधिकांश मज़दूर अपनी प्रतिदिन की मेहनत से इतने शिथिल होते थे कि वे इनकी ओर कोई विशेष ध्यान ही नहीं देते थे।

"इससे कुछ होने वाला नहीं है। क्या यह मुमकिन है?"

लेकिन इन पर्चों ने एक हलचल पैदा कर दी और एक बार जब हफ़्ते-भर तक कोई नया पर्चा नहीं निकला तो मज़दूर आपस में कहने लगे, "मालूम होता है कि उन लोगों ने छापना ही बन्द कर दिया है।"

लेकिन अगले सोमवार को फिर नये पर्चे बाँटे गये और मज़दूर फिर आपस में कानाफूसी करने लगे।

फ़ैक्टरी और भटियारख़ाने में ऐसे नये लोग दिखायी पड़ने लगे जिन्हें कोई भी नहीं जानता था। वे टोह लगाते, चारों तरफ़ नज़र रखते और लोगों से तरह-तरह के सवाल पूछते। उनकी अत्यधिक सतर्कता और हर आदमी की बात में टाँग अड़ाने के उनके ढंग के कारण उनके बारे में फ़ौरन शंका उत्पन्न होती थी।

माँ ने अनुभव किया कि यह सारी हलचल उसके बेटे की कार्यवाहियों का ही नतीजा थी। उसने देखा कि लोग उसकी तरफ़ खिंचकर आते थे, और अपने बेटे की कुशल की चिन्ता के साथ ही उसकी गर्व की भावना भी मिली हुई थी।

एक दिन शाम को मारिया कोरसुनोवा ने व्लासोव के घर की खिड़की पर दस्तक दी और जब माँ ने खिड़की खोली तो उसने काफ़ी ज़ोर से उसके कान में कहा :

"पेलागेया, सावधान रहना! भण्डा फूट गया। आज तुम्हारे घर की तलाशी ली जायेगी और माजिन और वेसोवश्चिकोव के घर की भी..."

मारिया के मोटे-मोटे होंठ जल्दी-जल्दी खुलते और बन्द होते रहे, उसने अपने मोटे नथुनों से ज़ोर से कई बार साँस अन्दर खींची और पलकें झपकाकर पहले एक तरफ़ और फिर दूसरी तरफ़ देखा। वह देख रही थी कि सड़क पर कोई आ तो नहीं रहा है।

"और यह भी ध्यान रखना कि मुझे तो न कुछ मालूम है, न मैं तुमसे कुछ कहा है और न मैं तुमसे आज मिली हूँ, सुन लिया?"

इतना कहकर वह चली गयी।

माँ ने खिड़की बन्द कर दी और धीरे-धीरे एक कुर्सी पर बैठ गयी। पर उस ख़तरे का ध्यान आते ही जो उसके बेटे के सिर पर मंडरा रहा था, वह जल्दी से फिर खड़ी हो गयी। उसने जल्दी-जल्दी कपड़े पहने और सिर पर रूमाल बाँधकर भागी हुई फ्योदोर माजिन के घर गयी। वह बीमार था इसलिए फ़ैक्टरी नहीं गया था। जिस समय उसने घर में प्रवेश किया वह खिड़की के पास बैठा किताब पढ़ रहा था और अपना दाहिना हाथ सहला रहा था, जिसका अँगूठा कुछ अस्वाभाविक रूप से अकड़ा हुआ था। यह ख़बर सुनते ही उसका रंग पीला पड़ गया और वह उछलकर खड़ा हो गया।

"भला सोचो तो!" उसने बुदबुदाकर कहा।

"अब हम क्या करें?" पेलागेया निलोवना ने काँपते हाथों से अपने माथे का पसीना पोंछते हुए पूछा।

"ज़रा रुको, घबराओ नहीं," फ़्योदोर ने अपने चंगे हाथ से घुँघराले बालों को पीछे करते हुए कहा।

"अरे, तुम तो ख़ुद घबराये हुए हो!" उसने चिल्लाकर कहा।

"मैं?" वह शर्मा गया और खिसियाकर मुस्कराने लगा। "हु, लानत है... हमें पावेल को ख़बर देनी चाहिए। मैं किसी को भेजता हूँ। लेकिन तुम घर जाओ और चिन्ता न करो। वे हमें कोड़े थोड़े ही मारेंगे?"

घर पहुँचकर माँ ने सारी किताबें बटोरीं और उन्हें अपने सीने से चिपकाये हुए इधर-उधर टहलने लगी। उसने चूल्हे के अन्दर, चूल्हे के नीचे और पानी की बाल्टी में नज़र दौड़ायी। उसने सोचा था कि पावेल फ़ैक्टरी से फ़ौरन भागा हुआ घर आयेगा, पर वह नहीं आया। आख़िर वह थककर रसोईघर की बेंच पर किताबें अपने नीचे रखकर बैठ गयी और जब तक पावेल और उक्रइनी घर नहीं आ गये तब तक वहीं बैठी रही, डर के मारे वहाँ से हिली भी नहीं।

"ख़बर मिल गयी तुम्हें?" उसने वहीं बैठे-बैठे चिल्लाकर कहा।

"हाँ," पावेल मुस्करा दिया। "तुम्हें डर लगता है?"

"बहुत..."

"डरो नहीं," उक्रइनी ने कहा। "इससे कोई फ़ायदा नहीं होगा।"

"अभी तक समोवार भी नहीं जलाया," पावेल ने कहा।

"इनकी वजह से," माँ ने अपराधी की तरह उठकर किताबों की तरफ़ संकेत करते हुए कहा।

पावेल और उक्रइनी ज़ोर से हँस पड़े, इससे माँ को कुछ ढाढ़स बँधा। पावेल ने कुछ किताबें निकाल लीं और उन्हें छिपाने के लिए बाहर ले गया।

"अम्मा, डरने की कोई बात नहीं है," उक्रइनी ने समोवार में आग सुलगाते हुए कहा। "मगर शर्म की बात है कि लोग इस तरह की बेवक़ूफ़ियों में अपना वक़्त ख़राब करते हैं। तलवारें लटकाये और जूतों की एड़ियाँ बजाते हुए प्रौढ़ लोग यहाँ आयेंगे और हर चीज़ उलट-पलट डालेंगे, पलँग के नीचे ढूँढेंगे, चूल्हे के नीचे ढूँढ़ेंगे, तहख़ाने में जायेंगे, ऊपर अटारी पर चढ़ेंगे! उनकी नाक में मकड़ी का जाला घुसेगा और वे झुँझलाकर अपने नथुने फुफकारने लगेंगे। बड़ी ऊब पैदा करने वाला काम है यह, उन्हें शर्म आती है और इसलिए वे ऐसा जताते हैं जैसे बहुत ग़ुस्सैल हों और हम पर आगबबूला हो रहे हैं। वे तो जानते हैं कि उनका काम बहुत गन्दा है! एक बार तो मेरी सारी चीज़ें उलट-पुलटकर देखने पर उन्हें इतनी

खिसियाहट हुई कि वे तलाशी अधूरी ही छोड़कर चले गये। एक बार और ऐसा ही हुआ और वे मुझे साथ लेते गये और चार महीने तक जेल में बन्द रखा। जेल में हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने के अलावा कुछ होता ही नहीं है। कुछ दिन बाद सम्मन मिलता है और सिपाही अपने साथ सड़कों पर घुमाते हुए कहीं ले जाते हैं जहाँ कोई बहुत बड़ा अफ़सर बहुत-से सवाल पूछता है। ये अफ़सर भी काफ़ी बुद्ध होते हैं – दुनिया भर की उल्टी-सीधी बातें करते हैं और इसके बाद सिपाहियों को हुक्म देते हैं कि कैदी को फिर जेल में पहुँचा दिया जाये। इसी तरह वे इधर से उधर रपटाते हैं – आख़िर उन्हें जो तनख्वाह मिलती है उसके बदले में वे कुछ कारगुजारी भी तो दिखलायें! अन्त में वे कैदी को छोड़ देते हैं और बस क़िस्सा ख़त्म हो जाता है!"

"अन्द्रेई, कैसी बातें किया करते हो तुम हमेशा!" माँ ने आश्चर्य से कहा।

वह घुटनों के बल झुका हुआ समोवार में आग सुलगा रहा था; उसने अपना तमतमाया हुआ चेहरा उठाया और मूँछों पर हाथ फेरकर पूछा :

"कैसी?"

"जैसे किसी ने कभी तुम्हारा दिल ही न दुखाया हो।"

"इस दुनिया में कोई भी ऐसा है जिसका दिल कभी न दुखा हो?" उक्रइनी उठा और सिर हिलाते हुए मुस्कराकर बोला। "मुझे इतना दुख दिया गया है कि मैंने अब ध्यान ही देना छोड़ दिया है। जब लोग हैं ही ऐसे तो हो ही क्या सकता है? अगर आदमी इन सब बातों की तरफ़ ध्यान देने लगे तो उसके काम में हर्ज होने के अलावा कुछ नहीं होता और इन बातों पर कुढ़ना अपना वक़्त ख़राब करना है। ज़िन्दगी का ढंग ही कुछ ऐसा है! पहले मैं भी लोगों से नाराज़ हो जाया करता था, लेकिन फिर मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि यह सब बेकार है। हर आदमी डरता है कि उसका पड़ोसी उसे खा जायेगा, इसलिए वह पहले ख़ुद ही उस पर वार करना चाहता है। मेरी माँ, ज़िन्दगी का ढंग ही ऐसा है!"

उसके शब्दों का प्रवाह अबाध गति से जारी था और उसकी इन बातों से होने वाली तलाशी के बारे में माँ का भय दूर होता गया। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में चमक थी और माँ ने देखा कि बेडौल होने के बावजूद उसमें कितनी फुर्ती है।

माँ ने एक आह भरी।

"अन्द्रेई, भगवान तुम्हें सुखी रखे!" उसने हार्दिक कामना की।

उक्रइनी लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ फिर समोवार के पास जाकर उकड़ूँ बैठ गया।

"अगर मुझे कभी ज़रा-सी भी ख़ुशी नसीब हुई, तो मैं उसे ठुकराऊँगा

नहीं," उसने अस्फुट स्वर में कहा, "मगर उसके लिए हाथ पसारकर नहीं दौड़ूँगा।"

पावेल बाहर से आया।

"अब उन्हें उमर-भर कुछ भी नहीं मिल सकता," उसने विश्वास के साथ कहा और अपने हाथ धोने लगा। अच्छी तरह हाथ पोंछते हुए वह माँ को सम्बोधित करके बोला :

"अगर तुमने उन्हें यह मालूम हो जाने दिया कि तुम डर रही हो तो वे सोचेंगे कि ज़रूर घर में कोई ऐसी-वैसी चीज़ होगी तभी तो वह इस तरह थरथर काँप रही है। तुम जानती हो कि हम लोग कोई गलत काम नहीं कर रहे हैं, न्याय हमारी तरफ़ है और हम लोग जीवन-भर इसी के लिए काम करते रहेंगे। यही हमारा अपराध है, फिर हम क्यों डरें?"

"पावेल, मैं अपने को सम्भाल लूँगी," उसने आश्वासन दिया, पर दूसरे ही क्षण वह वेदनापूर्ण आवाज़ में कह उठी, "काश वे जल्दी से आ जायें!"

उस रात वे नहीं आये और इससे पहले कि अगली सुबह को वे दोनों लड़के उसकी हँसी उड़ाते, वह ख़ुद ही अपने आप पर हँसने लगी :

"ख़तरा आने से पहले ही डर गयी!"

10

राजनीतिक पुलिस उस भयावह रात के लगभग एक महीने बाद आयी। निकोलाई वेसोवश्चिकोव पावेल और अन्द्रेई से मिलने आया था और वे तीनों अपने अखबार के बारे में बहस कर रहे थे। बहुत देर हो चुकी थी - लगभग आधी रात का समय था। माँ सोने जा चुकी थी और बिस्तर पर ऊँघते-ऊँघते वह उनकी दबी-दबी उत्सुकता-भरी आवाज़ें सुन रही थी। इतने में अन्द्रेई ने दबे पाँव रसोईघर को लाँघा और अपने पीछे दरवाज़ा बन्द कर लिया। एक बाल्टी के गिरने की आवाज़ हुई, दरवाज़ा जल्दी से खुला और अन्द्रेई फिर रसोईघर में चला गया।

"एड़ों के खनकने की आवाज़ आ रही है!" उसने दबी आवाज़ में कहा।

माँ उछलकर पलँग से नीचे आ खड़ी हुई और अपनी काँपती हुई उँगलियों से उसने झपटकर अपने कपड़े उठा लिए, पर इतने में पावेल दरवाज़े पर आया और उसने शान्त स्वर में कहा :

"जाओ, लेट जाओ, तुम्हारा जी अच्छा नहीं है।"

बाहर कुछ आहट हुई पावेल ने जाकर झटके के साथ दरवाज़ा खोला, और बोला :

"कौन है?"

भूरी पोशाक में एक लम्बा–चौड़ा आदमी फ़ौरन अन्दर आया और उसके पीछे एक दूसरा आदमी, दो हथियारबन्द सन्तरियों ने पावेल को धक्का दिया और उसके दोनों तरफ़ एक–एक खड़ा हो गया।

"इन्तज़ार तुम्हें किसका था और आ गया कौन, है न?" किसी ने व्यंग्यपूर्वक उच्च स्वर में कहा।

ये शब्द छिदरी–सी काली मूँछोंवाले लम्बे कद के एक दुबले–पतले अफ़सर के थे। एक स्थानीय पुलिसवाला, जिसका नाम फेद्याकिन था, माँ के पलँग की तरफ़ गया।

"यह माँ है, हुजूर," उसने एक हाथ से फ़ौजी सलाम करके और दूसरे से पेलागेया निलोवना की ओर संकेत करते हुए कहा।

"और वह यह है," उसने पावेल की ओर हाथ उठाकर कहा।

"पावेल व्लासोव?" अफ़सर ने अपनी आँखें सिकोड़कर पूछा।

पावेल ने सिर हिला दिया।

"मैं तुम्हारे घर की तलाशी लेने आया हूँ," अफ़सर ने अपनी मूँछें ऐंठते हुए कहा। "उठ, बुढ़िया! वहाँ अन्दर कौन है?" दरवाज़े में से झाँककर वह दूसरे कमरे में गया।

"तुम लोगों के नाम क्या हैं?" उसकी आवाज़ सुनायी दी।

दो गवाह अन्दर आये। एक तो था बुजुर्ग ढलाई मज़दूर त्वेर्याकोव और दूसरा भट्ठी में कोयला झोंकनेवाला रीबिन। वह एक भूरे रंग का भारी–भरकम आदमी था और त्वेर्याकोव के घर में किराये की कोठरी लेकर रहता था।

"सलाम, निलोवना," उसने माँ से ऊँचे, भारी स्वर में कहा।

कपड़े पहनते हुए माँ अपनी हिम्मत बनाये रखने के लिए बुदबुदा रही थी :

"यह कौन–सा तरीक़ा है आधी रात को इस तरह आने का! लोग जब सोने लगे तब ये आये हैं!..."

कमरा भरा हुआ था और न जाने क्यों वहाँ जूते की पालिश की गन्ध बसी हुई थी। उन दो राजनीतिक पुलिसवालों और स्थानीय थानेदार रीस्किन ने काफ़ी खड़बड़ करते हुए अल्मारियों पर से किताबें उतारीं और उस अफ़सर के सामने मेज पर ढेर कर दीं। दो और आदमी दीवार पर घूँसे मारकर टोह लगा रहे थे, कुर्सियों के नीचे झाँक रहे थे और उनमें से एक ने तो चूल्हे के ऊपर चढ़कर भी देखा। उक्रइनी और वेसोवश्चिकोव एक कोने में अगल–बगल खड़े थे। निकोलाई के चेचकरू चेहरे पर जहाँ–तहाँ लाली दौड़ गयी और वह एकटक अपनी छोटी–छोटी भूरी आँखों से उस अफ़सर को घूरता रहा। उक्रइनी खड़ा अपनी मूँछें ऐंठ रहा था और जब माँ कमरे में आयी तो उसका उत्साह बढ़ाने के

लिए उसने धीरे से मुस्कराकर अपना सिर हिलाया।

अपने भय को काबू में रखने के लिए माँ हमेशा की तरह तिरछी होकर चलने के बजाय अपना सीना तानकर, सीधी चल रही थी जिसके कारण उसकी चाल-ढाल बहुत रोबदार मालूम हो रही थी और उसे देखकर कुछ हँसी भी आती थी। चलते समय वह बड़े ज़ोर से पटककर पाँव रखती थी। पर उसकी भवें फड़क रही थीं।

अफ़सर अपने गोरे हाथ की पतली-पतली उँगलियों से झपटकर एक किताब उठाता और जल्दी-जल्दी उसके पन्ने पलटकर एक तरफ़ को फेंक देता। कुछ किताबें फ़र्श पर गिर पड़ी। किसी ने एक शब्द भी न कहा। पसीने से तर सिपाही हाँप रहे थे, उनके जूतों की एड़ें खनक रही थीं और वे बीच-बीच में पूछ लेते थे :

"यहाँ देख लिया?"

माँ दीवार से सटी हुई पावेल के पास और उसकी ही तरह दोनों हाथ सीने पर बाँधे खड़ी थी और उसकी नज़रें बराबर उस अफ़सर पर जमी हुई थीं। उसके घुटने जवाब दे रहे थे और उसकी आँखों पर एक शुष्क धुँधलापन छाया हुआ था।

"किताबें नीचे फेंके बिना काम नहीं चल सकता?" सहसा इस निस्तब्धता को चीरती हुई निकोलाई की कड़कदार आवाज़ सुनायी दी।

माँ चौक पड़ी। त्वेर्याकोव ने अपना सिर इस तरह झटका मानो किसी ने ठेल दिया हो; रीबिन खंखारा और उसने निकोलाई को घूरा।

अफ़सर ने अपनी आँखें सिकोड़कर तीर जैसी एक नज़र निकोलाई के चेचकरू कठोर चेहरे पर डाली। वह किताबों के पन्ने और भी तेज़ी से पलटने लगा। कभी-कभी उसकी बड़ी-बड़ी भूरी आँखें फैल जातीं, मानो उसे असह्य पीड़ा हो रही हो और वह बेबसी के कारण अपना प्रतिरोध व्यक्त करने के लिए रो पड़नेवाला हो।

"ए, सिपाही!" वेसोवश्चिकोव ने फिर कहा। "किताबें उठाओ!..."

सब सिपाहियों ने मुड़कर उसकी तरफ़ और फिर अपने अफ़सर की तरफ़ देखा। अफ़सर ने अपना सिर उठाया और निकोलाई के हृष्ट-पुष्ट शरीर को ग़ौर से आँका।

"हूँ!" उसने नाक के सुर में कहा। "उठाकर रख दो!"

एक सिपाही झुककर फटी हुई किताबें उठाने लगा।

"निकोलाई चुप क्यों नहीं रहता," माँ ने पावेल के कान में कहा।

उसने अपने कन्धे झटक दिये। उक्रइनी ने अपना सिर झुका लिया।

"बाइबिल कौन पढ़ता है?"

"मैं!" पावेल ने उत्तर दिया।

"ये सब किताबें किसकी हैं?"

"मेरी!" पावेल ने जवाब दिया।

"अच्छी बात है," अफ़सर ने टेक लगाकर आराम से कुर्सी पर बैठते हुए कहा। उसने अपने पतले-पतले हाथों की उँगलियाँ चटकायीं, टाँगें मेज के नीचे फैला लीं, और मूँछों पर ताव देकर निकोलाई से बोला :

"क्या तुम अन्द्रेई नाखोदका हो?"

"हाँ!" निकोलाई ने आगे बढ़कर कहा। उक्रइनी ने उसे कन्धा पकड़कर पीछे ढँकेल दिया।

"नहीं, यह नहीं, मैं हूँ अन्द्रेई..."

अफ़सर ने अपना हाथ उठाकर उँगली से वेसोवश्चिकोव की तरफ़ संकेत करते हुए कहा :

"देखो, तुम ज़रा सँभलकर रहो!"

और वह फिर अपने काग़ज़ों को उलटने-पुलटने लगा।

चाँदनी रात बड़े निरीह और उदासीन भाव से खिड़की में झाँक रही थी। कोई मकान के पास से गुज़रा और उसके पाँवों के नीचे बर्फ़ के चरमराने की आवाज़ आयी।

"नाखोदका, तुम पहले भी राजनीतिक कैदी रह चुके हो न?"

"हाँ, एक बार रोस्तोव में और दूसरी बार सरातोव में। लेकिन वहाँ के सिपाही मुझे 'आप' कहकर सम्बोधित करते थे..."

अफ़सर ने अपनी दाहिनी आँख बन्द करके उसे मला और फिर अपने छोटे-छोटे दाँत निकालकर बोला :

"हाँ, नाखोदका, आप जानते हैं कि ये कौन लफंगे हैं जो कारख़ाने में गन्दा प्रचार करते हैं?"

उक्रइनी दाँत खोलकर मुस्कराने लगा, अपने पंजों पर झूला और कुछ उत्तर देने ही को था कि निकोलाई की आवाज़ फिर सुनायी दी :

"लफंगों को तो हम अब पहली बार देख रहे हैं..."

सन्नाटा छा गया। किसी ने कुछ भी नहीं कहा।

माँ के माथे का निशान सफ़ेद पड़ गया और उसकी दाहिनी भौंह तन गयी। रीबिन की काली दाढ़ी एक विचित्र ढंग से काँपने लगी; उसने दाढ़ी में उँगलियाँ फेरकर अपनी आँखें झुका लीं।

"इस बदमाश को ले जाओ यहाँ से!" अफ़सर ने चिल्लाकर कहा।

दो सिपाहियों ने निकोलाई की बाँहें पकड़ लीं और उसे ढँकेलकर रसोई

में ले गये; वहाँ पहुँचकर निकोलाई ने अपने पाँव ज़ोर से फ़र्श पर गड़ा दिये और उन्हें आगे बढ़ने से रोक दिया।

"ठहरो!" उसने चिल्लाकर कहा। "मैं अपना कोट तो पहन लूँ!"

बाग में से थानेदार अन्दर आया।

"वहाँ तो कुछ भी नहीं है, हमने हर जगह देख लिया।"

"सो तो पहले से ही नज़र आ रहा था," अफ़सर ने व्यंगपूर्वक मुस्कराते हुए कहा। "बहुत घुटे हुए आदमी से पाला पड़ा है हमारा!..."

माँ ने उसकी बारीक और खनकदार आवाज़ सुनी और भय से उसके पीले चेहरे को देखा; उसे ऐसा आभास हुआ कि वह एक निर्मम शत्रु था जो आम लोगों को तिरस्कार और घृणा की दृष्टि से देखता था। ऐसे लोगों से उसका पाला बहुत कम पड़ा था और वह उनके अस्तित्व को प्रायः भूल चुकी थी।

"तो ये हैं वे लोग जो उन पर्चों से बौखला उठते हैं," उसने सोचा।

"हराम की औलाद, जनाब अन्द्रेई ओनीसिमोविच नाखोदका, आप गिरफ़्तार किये जाते हैं!"

"किसलिए?" उक्रइनी ने अविचलित भाव से पूछा।

"बाद में मालूम हो जायेगा," अफ़सर ने अपने स्वर में बनावटी मिठास भरकर द्वेषपूर्ण ढंग से कहा। "तुम पढ़ना-लिखना जानती हो?" उसने पेलागेया निलोवना की तरफ़ मुड़कर पूछा।

"नहीं, यह पढ़ी-लिखी नहीं हैं!" पावेल ने उत्तर दिया।

"मैं तुमसे नहीं पूछ रहा हूँ!" अफ़सर ने सख़्ती के साथ पावेल को टोका। "बता, बुढ़िया!"

माँ का हृदय इस व्यक्ति के प्रति घृणा से भर उठा। सहसा वह काँपने लगी मानो ठण्डे पानी से नहा ली हो। उसने अपने को सम्भाला, उसका चोट का निशान नीला पड़ गया और उसकी भृकुटि तन गयी।

"इतना चिल्लाने की कोई ज़रूरत नहीं है!" उसने हाथ उठाकर कहा। "अभी तमने इस दुनिया में देखा ही क्या है, तुम क्या जानो कि मुसीबत किसे कहते हैं..."

"माँ, शान्त हो जाओ," पावेल ने उसे रोकने का प्रयत्न करते हुए कहा।

"ज़रा रुको, पावेल!" माँ ने चिल्लाकर कहा और मेज की तरफ़ बढ़ी। "किसलिए तुम लोगों की पकड़-धकड़ करते हो?"

"इससे तुम्हें कोई मतलब नहीं! चुप रहो!" अफ़सर ने कुर्सी से उठते हुए चिल्लाकर कहा। "गिरफ़्तार किये गये वेसोवश्चिकोव को यहाँ लाओ!"

अफ़सर एक कागज़ अपनी नाक के पास लाकर पढ़ने लगा।

निकोलाई वहाँ लाया गया। अफ़सर ने पढ़ना बन्द करके चिल्लाकर कहा, "टोपी उतारो!"

रीबिन ने पेलागेया निलोवना के निकट आकर अपना कन्धा उससे छुआते हुए कहा :

"माँ, आपे से बाहर न हो!"

"मेरे दोनों हाथ तो ये लोग पकड़े हैं, मैं टोपी कैसे उतारूँ?" निकोलाई ने कहा। उसकी आवाज़ की गरज में अफ़सर की आवाज़ डूब गयी, जो क़ानूनी कार्रवाई की रिपोर्ट पढ़ रहा था।

"इस पर दस्तखत करो!" अफ़सर ने डपटकर कहा और काग़ज़ मेज पर फेंक दिया।

माँ ने जब उनको दस्तखत करते देखा तो उसका ग़ुस्सा दब गया, उसका दिल डूबने लगा और आँखों में वेदना और बेबसी के आँसू छलक आये। अपने विवाहित जीवन के बीस वर्षों में उसने अक्सर ऐसे आँसू बहाये थे, पर इधर कुछ दिनों से वह उनकी जलन भूल गयी थी। अफ़सर ने माँ की तरफ़ देखा और बहुत तिरस्कार के साथ मुँह बनाकर कहा :

"देवी जी, अगर आप अभी इतने आँसू बहायेंगी, तो आगे चलकर इन्हें कहाँ से लायेंगी!"

माँ के हृदय में फिर क्रोध की लहर उठी।

"माँ की आँखों में हमेशा हर बात के लिए काफ़ी आँसू रहते हैं, हर बात के लिए! अगर तुम्हारी माँ है, तो वह इस बात को जानती होगी।"

अफ़सर ने जल्दी-जल्दी अपने काग़ज़ एक नये थैले में भरे, जिसका ताला चाँदी की तरह चमक रहा था।

"चलो!" उसने आज्ञा दी।

"अच्छा, अन्द्रेई, विदा! विदा, निकोलाई!" पावेल ने उनसे हाथ मिलाते हुए शान्त भाव से प्यार-भरे स्वर में कहा।

"शायद तुम्हारी इनसे जल्दी ही मुलाक़ात होगी!" अफ़सर ने धीरे से मुस्कराते हुए कहा।

वेसोवश्चिकोव गहरी-गहरी साँसें ले रहा था; उसकी मोटी-सी गर्दन पर उबलते ख़ून की लाली दौड़ गयी और उसकी आँखें रोष से चमकने लगीं। उक्रइनी के होंठों पर मुस्कराहट खिल उठी और उसने अपना सिर झुकाकर माँ के कान में कुछ कहा। माँ ने हाथ से उस पर सलीब का निशान बनाया और बोली :

"भगवान भला-बुरा सब देखता है..."

आख़िरकार भूरी वर्दियों वाले सिपाही दल बाँधकर बरामदे में निकल गये और अपनी एड़ें खनकाते हुए ग़ायब हो गये। रीबिन सबसे आख़िर में गया। चलते-चलते भी वह पावेल को टकटकी बाँधे देखता रहा।

"अच्छा, तो मैं चलता हूँ," उसने कुछ सोचकर कहा और अपनी दाढ़ी में खाँसता हुआ दरवाज़े से बाहर चला गया।

पावेल पीठ के पीछे दोनों हाथ बाँधकर फ़र्श पर बिखरी हुई किताबों और कपड़ों को फलांगता हुआ कमरे में टहलने लगा।

"देखा? यह है इन लोगों का तरीक़ा," उसने उदास होकर कहा।

माँ इधर-उधर बिखरी हुई चीज़ों को इस तरह देख रही थी मानो उसे विश्वास न हो रहा हो।

"आख़िर निकोलाई को इतनी जली-कटी बातें करने की क्या ज़रूरत थी?" माँ ने खिन्न होकर कहा।

"मैं समझता हूँ कि वह डर गया था," पावेल ने उत्तर दिया।

"यह भी कोई बात हुई... आये, उन्हें पकड़ा और लेकर चल दिये!" माँ ने हाथ मलते और बुड़बुड़ाते हुए कहा।

उसका बेटा गिरफ़्तार नहीं किया गया था इसलिए उसके हृदय की धड़कन कुछ शान्त थी। लेकिन उसने जो कुछ देखा था वह उसे इतना असंगत मालूम हो रहा था कि उसकी सोचने की शक्ति बिल्कुल नष्ट हो गयी थी।

"वह पीले चेहरेवाला हमारी हँसी उड़ा रहा था। हमें डराना चाहता था..."

"अच्छा, अम्मा," पावेल ने सहसा संकल्प के साथ कहा, "आओ, यह सब साफ़ कर दें।"

उसने उसे "अम्मा" कहा था और उसके स्वर में इस समय वही बात थी जो हमेशा उसके हृदय में माँ के प्रति प्यार उमड़ने पर उसके स्वर में पैदा हो जाती थी। माँ पास जाकर उसके चेहरे को घूरने लगी।

"क्या तुम्हें बहुत दुख हो रहा है?" उसने शान्त स्वर में पूछा।

"हाँ," पावेल ने उत्तर दिया। "हाँ, दुख तो होता ही है। वे लोग उसके साथ मुझे भी लेते जाते तो अच्छा होता।"

माँ को लगा मानो पावेल की आँखों में आँसू हों। उसकी पीड़ा को कुछ-कुछ अनुभव करते हुए और उसे दिलासा देने के लिए उसने आह भरकर कहा :

"कुछ ही दिन की बात है, तुम्हें भी ले जायेंगे।"

"यह तो मैं जानता हूँ कि वे मुझे भी ले जायेंगे," पावेल ने उत्तर दिया।

माँ कुछ देर तक चुप रही।

"तुम भी कितने कठोर हो, पावेल!" उसने आख़िरकार कहा। "कभी तो मुझे ढाढ़स बँधाया करो! तुम्हें क्या मालूम कि मैंने कलेजे पर कैसे पत्थर रखकर इतनी बात कही थी, तुमने जले पर और नमक छिड़क दिया!"

उसने नज़र ऊपर उठायी, माँ के पास आया और धीरे से बोला :

"माँ, मैं झूठी तसल्ली देना नहीं जानता! तुम्हें इसकी आदत डालनी होगी!"

माँ ने गहरी आह भरी और इस बात का प्रयत्न करते हुए कि उसका गला रुँध न जाये, थोड़ी देर रुककर पूछा :

"क्या वे लोगों को बहुत यातनाएँ देते हैं? सुना है खाल खींच लेते हैं और हड्डी-पसली तोड़ देते हैं? जब भी मुझे इसका ख़याल आता है – मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं..."

"वे आत्मा को कुचल देते हैं। जब वे अपने गन्दे हाथों से आत्मा पर प्रहार करते हैं तो उसमें ज़्यादा तकलीफ होती है..."

11

दूसरे दिन मालूम हुआ कि बुकिन, समोइलोव, सोमोव और पाँच दूसरे लोगों को भी गिरफ़्तार किया गया था। शाम को फ़्योदोर माजिन आया। उसके घर की भी तलाशी ली गयी थी। वह बहुत ख़ुश था और अपने को बहुत बहादुर समझ रहा था।

"फ़्योदोर, तुम्हें डर लगा था?" माँ ने पूछा।

उसके चेहरे का रंग उतर गया, उसकी मुखाकृति में तनाव पैदा हो गया और उसके नथुने काँपने लगे।

"मुझे डर लग रहा था कि अफ़सर मुझे मारेगा। वह एक मोटा-सा काली दाढ़ीवाला आदमी था; उसकी उँगलियों पर बड़े-बड़े बाल थे और नाक पर काली ऐनक चढ़ाये था। ऐसा मालूम होता था कि जैसे वह बिल्कुल अन्धा हो। वह बहुत चीख़ा-चिल्लाया, बहुत हाथ-पाँव पटके। उसने चिल्लाकर कहा, "मैं तुम्हें जेल में ठूँस दूँगा!" मुझे आज तक किसी ने नहीं मारा, मेरे माँ-बाप तक ने नहीं। मैं उनका इकलौता बेटा था और वे मुझे बहुत प्यार करते थे।"

उसने एक क्षण के लिए आँखें बन्द करके अपने होंठ भींच लिये और दोनों हाथों से बड़ी फुरती से अपने बाल पीछे किये। फिर उसने पावेल की तरफ़ देखकर कहा :

"अगर कभी किसी ने मुझ पर हाथ उठाने की हिम्मत की तो मैं अपनी जान की बाजी लगाकर उस पर टूट पड़ूँगा। दाँतों से काटूँगा, चाहे वह मुझे वहीं मार ही क्यों न डाले, क़िस्सा तो ख़त्म हो जायेगा हमेशा के लिए!" उसकी आँखों

में क्रोध की लाली थी।

"बिल्कुल सींक-सलाई तो हो, लड़ोगे क्या?" माँ ने कहा।

"मगर फिर भी मैं लड़ूँगा!" फ़्योदोर ने दबी जबान से उत्तर दिया।

जब फ़्योदोर चला गया तो माँ ने पावेल से कहा :

"सबसे पहले यही टूटेगा!"

पावेल ने कोई उत्तर नहीं दिया।

कुछ मिनट बाद रसोई का दरवाज़ा धीरे से खुला और रीबिन अन्दर आया।

"लो मैं फिर आ गया," उसने थोड़ा-सा हँसकर कहा। "कल रात वे लोग मुझे लाये थे और आज मैं अपनी मर्जी से आया हूँ!" उसने बड़े तपाक से पावेल से हाथ मिलाया और एक हाथ पेलागेया निलोवना के कन्धे पर रखकर बोला :

"चाय मिलेगी?"

पावेल उसके चौड़े-चकले, साँवले चेहरे को, उसकी काली दाढ़ी और काली आँखों को बहुत ग़ौर से चुपचाप देखता रहा। उसकी शान्त नज़र में कुछ विशेष अर्थ था।

माँ समोवार में आग सुलगाने के लिए रसोई में गयी। रीबिन ने अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरा, मेज पर कुहनियाँ टिकाकर बैठ गया और पावेल को घूरने लगा।

"तो मामला यह है," उसने इस तरह कहा मानो अधूरी रह गयी बात का तार जोड़ रहा हो, "कि मैं तुमसे साफ़-साफ़ बात कर लेना चाहता हूँ। मैं कुछ दिनों से तुम्हें देख रहा हूँ। तुम्हारे बिल्कुल पड़ोस में ही रहता हूँ। मैंने देखा है कि तुम्हारे घर में बहुत-से लोग आते हैं, पर वे न तो शराब पीते हैं और न हुल्लड़ करते हैं। पहली बात तो यह हुई जो लोग इतनी शराफ़त से रहते हैं उनकी तरफ़ ध्यान जाता ही है। आदमी सोचता है कि दाल में कुछ काला ज़रूर है। जैसे मैं ख़ुद भी सबसे कटा-कटा रहने के कारण लोगों की आँखों में खटकता हूँ।"

उसकी आवाज़ भारी थी पर बात करने के ढंग में प्रवाह था। उसने दाढ़ी पर हाथ फेरा और पावेल के चेहरे को घूरता रहा।

"लोग तुम्हारे बारे में तरह-तरह की बातें करने लगे हैं। जैसे हमारे मकान-मालिक को ही ले लो। वह तुम्हें नास्तिक कहता है, क्योंकि तुम गिरजाघर नहीं जाते। वैसे तो मैं ख़ुद भी नहीं जाता। फिर वे पर्चे उन्हें तुम तैयार करते हो?"

"हाँ," पावेल ने उत्तर दिया।

"क्या कह रहे हो?" उसकी माँ ने भय से आतंकित होकर रसोई के दरवाज़े में से सिर निकालकर ऊँचे स्वर में कहा। "तुम अकेले ही तो नहीं हो।"

पावेल हँस पड़ा और रीबिन भी।

"अच्छी बात है," रीबिन ने कहा।

माँ फुफकारती हुई वहाँ से चली गयी; इन लोगों ने उसकी बात की जिस तरह उपेक्षा की थी, उससे वह कुछ बुरा भी मान गयी थी।

"अच्छी बात है ऐसे पर्चे निकालना! लोगों में जोश पैदा होता है इनसे। कुल उन्नीस थे, है न?"

"हाँ," पावेल ने उत्तर दिया।

"तो इसका मतलब है कि मैंने सब पढ़े हैं। उनकी कुछ बातें मेरी समझ में नहीं आयीं, कुछ बातें बेकार भी थीं, मगर जब कोई आदमी इतनी बहुत-सी बातें कहेगा तो उसमें एक-दो बातें फालतू तो होंगी ही।"

रीबिन अपने मज़बूत सफ़ेद दाँत खोलकर मुस्करा दिया।

"उसके बाद तलाशी हुई। इसने मुझे तुम्हारी तरफ़ सबसे ज़्यादा खींचा। तुम और उक्रइनी और निकोलाई – तुम सबने यह दिखला दिया कि..."

वह उचित शब्द ढूँढ़ने के लिए रुका और खिड़की के बाहर घूरते हुए अपनी उँगलियों से मेज पर ताल देने लगा।

"...दिखला दिया कि तुम्हारा क्या रवैया है। कुछ यह रवैया था तुम लोगों का : 'हुजूर, आप अपना काम करते जाइये, हम अपना काम करते रहेंगे।' उक्रइनी भी बहुत उम्दा आदमी है। कभी-कभी जब मैं उसे फ़ैक्टरी में बोलते हुए सुनता हूँ तो अपने मन में कहता हूँ : 'यह अपने रास्ते से कभी नहीं हटेगा। मौत ही इसे इसके रास्ते से हटा सकती है। फौलाद का बना हुआ है।' पावेल, क्या तुम मुझ पर एतबार करते हो?"

"हाँ, करता हूँ," पावेल ने हामी भरी।

"बहुत अच्छी बात है। मुझे देखो, मैं चालीस बरस का हो गया हूँ; उमर में तुमसे दूना हूँ और दुनिया तुमसे बीस गुनी ज़्यादा देख चुका हूँ। तीन साल से ज़्यादा तक मैं फ़ौजी था। दो बार शादी की – पहली बीवी मर गयी, दूसरी को मैंने निकाल दिया। काकेशिया हो आया हूँ और दूखोबोर्त्सी* से भी परिचित हूँ। वे ज़िन्दगी की समस्याओं को हल नहीं कर सकते, भाई, बिल्कुल नहीं कर सकते!"

माँ बड़ी उत्सुकता से उसका नपा-तुला भाषण सुन रही थी। उसे यह देखकर ख़ुशी हुई कि यह अधेड़ उम्र का आदमी अपने दिल की सारी बातें उसके बेटे के सामने खोलकर कह रहा था। पर उसे पावेल के रवैये में बहुत रुखाई प्रतीत हुई और इस कमी को पूरा करने के लिए उसने आतिथ्य-भाव दिखाने का प्रयत्न किया।

"मिख़ाइलो इवानोविच, कुछ खाओगे न?" उसने पूछा।

"धन्यवाद। मैं तो खाना खाकर आया हूँ। तो पावेल, तुम्हारा यह ख़याल है

कि ज़िन्दगी वैसी नहीं है जैसी होनी चाहिए।"

पावेल उठा और हाथ पीठ पीछे बाँधकर टहलने लगा।

"वह सही ढर्रे पर आ रही है," उसने उत्तर दिया। "क्या ज़िन्दगी ने तुम्हें खुले दिल से मेरे यहाँ आने को मजबूर नहीं किया? धीरे-धीरे वह हम मेहनत करने वालों को एक कर रही है और फिर वह वक़्त आयेगा जब वह हम सबको एक कर देगी! हमारी ज़िन्दगी कठोर है और हमारे साथ अन्याय करती है, लेकिन हमारी आँखें खुलने लगी हैं और हम उसका कटु अर्थ समझने लगे हैं, वह हमें चीज़ों की रफ़्तार तेज़ करना सिखा रही है।"

"तुम ठीक कहते हो!" रीबिन ने टोका। "लोगों को झकझोरने की ज़रूरत है। किसी के सिर में अगर जूँएँ पड़ जायें, तो ख़ूब रगड़-रगड़कर नहलाने-धुलाने और साफ़ कपड़े पहनाने पर वह फिर भला आदमी बन जाता है। लेकिन आदमी के दिल को कैसे साफ़ किया जाये? असल सवाल तो यह है!"

पावेल ने बड़े जोश के साथ फ़ैक्टरी और उसके मालिकों की चर्चा की, उसने बताया कि दूसरे देशों में मज़दूर अपने अधिकारों के लिए किस तरह लड़ रहे थे। बीच-बीच में रीबिन मेज पर इस तरह उँगली मारता, मानो पावेल के भाषण में विराम-चिन्ह लगा रहा हो।

"यही तो बात है!" वह बार-बार कह उठता।

और एक बार उसने हँसकर बड़े शान्त भाव से कहा :

"अभी तुम बच्चे हो! लोगों को अच्छी तरह नहीं पहचानते!"

"देखो, बूढ़े और बच्चे होने की बात छोड़ दो," पावेल ने रीबिन के सामने रुककर गम्भीरतापूर्वक कहा। "यह देखो कि किसके विचार अधिक सही हैं।"

"तो तुम्हारा यह ख़याल है कि ईश्वर के बारे में भी हमें अब तक बेवक़ूफ़ बनाया गया है? हूँ... मेरा भी यह ख़याल है कि हमारा धर्म किसी काम का नहीं है।"

यहाँ पर माँ भी बहस में कूद पड़ी। जब कभी उसका बेटा ईश्वर के बारे में या ईश्वर के प्रति उसकी श्रद्धा के बारे में, उस श्रद्धा के बारे में जिसे वह बहुत प्रिय और पवित्र मानती थी, कुछ कहता तो वह सदा उसकी नज़र से नज़र मिलाने का प्रयत्न और यह मूक विनय करती कि ईश्वर के प्रति अविश्वास के कटु शब्द कहकर वह उसके जी को न दुखाये। पर बेटे की नास्तिकता के पीछे माँ को दृढ़ आस्था का आभास मिलता था, जिससे उसे बड़ी सांत्वना प्राप्त होती थी।

"मैं उसके विचारों को कैसे समझ सकती हूँ?" वह सोचती।

उसका विचार था कि यह अधेड़ उम्र का आदमी भी उसके बेटे की बातों

से उतना ही नाराज़ होगा। पर जब रीबिन ने शान्त भाव से पावेल से यह प्रश्न पूछा तो वह अपने आपको रोक न सकी।

"देखो, जहाँ तक ईश्वर की बात है, तुम सोच-समझकर कुछ कहना!" उसने एक गहरी साँस ली और फिर इससे भी ज़्यादा आवेश के साथ बोली, "तुम जो चाहो सोचो, मगर जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं तो बूढ़ी हो चुकी हूँ और अगर तुमने मेरे परमेश्वर को भी मुझसे छीन लिया तो अपनी विपदा में मैं किसका सहारा लूँगी!"

उसकी आँखों में आँसू भर आये और तश्तरियाँ धोते हुए उसकी उँगलियाँ काँपने लगीं।

"तुम हम लोगों की बात समझीं नहीं," पावेल ने स्नेह से कहा।

"माँ, हमें माफ़ करना," रीबिन ने अपनी गहरी और धीमी आवाज़ में कहा। फिर उसने धीरे से मुस्कराकर पावेल की तरफ़ देखा और माँ से बोला, "मैं तो भूल ही गया था कि तुम इतनी बूढ़ी हो गयी हो कि तुम्हारे विचार बदले नहीं जा सकते।"

"मैं उस दयालु और कृपानिधान ईश्चर के बारे में बात नहीं कर रहा था जिसमें तुम्हारी आस्था है," पावेल कहता गया, "बल्कि उस ईश्वर की बात कर रहा था जिसका नाम लेकर पादरी लोग हमें डराते हैं, जैसे वह कोई डण्डा हो; मैं उस ईश्वर की बात कर रहा था जिसके नाम पर वे कुछ लोगों की कुत्सित इच्छाओं के सामने सब लोगों को झुका देने का प्रयत्न करते हैं..."

"यही तो मुसीबत है!" रीबिन ने मेज पर मुक्का मारकर कहा। "उन्होंने एक झूठा ईश्वर हमारे ऊपर थोप दिया है! जो हथियार भी उनके हाथ लग जाता है उसी से वे हम लोगों के ख़िलाफ़ लड़ते हैं! माँ, इस बात पर ग़ौर करना : ईश्वर ने जब मनुष्य की सृष्टि की तो उसे अपना ही रूप दिया, जिसका मतलब यह है कि अगर मनुष्य उससे मिलता-जुलता है तो उसे भी मनुष्य से मिलता-जुलता होना चाहिए! मगर हम देवताओं जैसे तो क्या, जंगली जानवरों जैसे हैं। गिरजाघरों ने हमारे सामने एक हौआ खड़ा कर दिया है... माँ, हमें अपने ईश्वर को बदलना पड़ेगा। उसे साफ़ भी करना पड़ेगा! उन्होंने उसे झूठ और मिथ्या प्रचार में लपेट रखा है, हमारी आत्माओं का हनन करने के लिए उसका रूप बिगाड़ दिया है!..."

वह बहुत नरमी से बोल रहा था, पर उसका एक-एक शब्द माँ के हृदय पर हथौड़े की तरह चोट कर रहा था। और काली दाढ़ी में उसके बड़े-से मौत जैसे भयावह चेहरे को देखकर माँ को डर लगने लगा। उसकी काली आँखों की चमक उसके लिए असह्य थी; माँ का हृदय भय से पीड़ित हो उठा।

"मैं जाती हूँ," उसने अपना सिर हिलाते हुए कहा। "मुझमें ऐसी बातें सुनने की शक्ति नहीं!"

वह जल्दी से रसोई में चली गयी।

"समझे, पावेल?" रीबिन ने कहा। "हर चीज़ का केन्द्र हमारा दिमाग नहीं, बल्कि दिल है। मनुष्य की आत्मा में उसका एक विशेष स्थान है, और वहाँ कोई दूसरी चीज़ पनप ही नहीं सकती..."

"केवल ज्ञान ही मनुष्य को मुक्ति दे सकता है!" पावेल ने दृढ़ता से कहा।

"ज्ञान से उसे बल नहीं मिलता!" रीबिन ने ऊँचे स्वर में अपनी बात पर अड़े रहकर कहा। "बल हृदय से मिलता है, दिमाग से नहीं!"

माँ कपड़े बदलकर भगवान की स्तुति किय बिना ही बिस्तर पर लेट गयी। उसे बड़ी सर्दी लग रही थी और वह मन ही मन कुढ़ रही थी। रीबिन शुरू में बहुत होशियार मालूम हुआ था और माँ पर उसका बहुत रोब पड़ा था। पर अब उसी से माँ को घृणा हो रही थी।

"पाखण्डी! बागी!" उसकी आवाज़ सुनकर माँ सोचने लगी। "आख़िर उसे यहाँ आने की क्या ज़रूरत थी?"

पर वह बड़े शान्त भाव से विश्वास के साथ बोलता रहा।

"दिल बहुत पवित्र स्थान है, उसे ख़ाली नहीं छोड़ा जा सकता। मनुष्य के हृदय में जहाँ ईश्वर का वास है, वह सबसे कोमल जगह है। अगर तुम उसे काट दो तो बहुत बड़ा घाव रह जायेगा। पावेल, हमें कोई नया विश्वास ढूँढ़ना होगा... ऐसा भगवान बनाना पड़ेगा, जो मनुष्य का दोस्त हो, असल बात यह है।"

"ईसा मसीह थे तो!" पावेल ने कहा।

"ईसा मसीह कमज़ोर थे। उन्होंने कहा था, 'यह पात्र कोई मुझसे ले ले।' और फिर उन्होंने राजा की सत्ता को स्वीकार किया था। ईश्वर भला अपने रचे हुए प्राणियों पर किसी मनुष्य की सत्ता को कैसे स्वीकार कर सकता है? वह सर्वशक्तिमान है! वह अपनी आत्मा को बाँट तो नहीं सकता – कि यह ईश्वर की है और यह मनुष्य की। मगर ईसा मसीह भी न तो व्यापार के ख़िलाफ़ थे और न विवाह के। फिर अंजीर के पेड़ को श्राप देकर उन्होंने बड़ी गलती की थी – अगर उसमें फल न लगते थे तो क्या यह अंजीर के पेड़ का दोष था? मनुष्य की आत्मा में अगर नेकी न उत्पन्न हो, तो उसमें दोष आत्मा का नहीं मानना चाहिए। क्या अपनी आत्मा में बुराई का बीज मैंने स्वयं बोया है?"

कमरे में दोनों आवाज़ों में द्वन्द्व होता रहा, एक अत्यन्त उत्तेजनापूर्ण मल्लयुद्ध चल रहा था। इधर-उधर टहलते समय पावेल के पैरों के नीचे फ़र्श के चरचराने की आवाज़ आ रही थी। जब पावेल बोलता तो और सब आवाज़ें उसमें दब जातीं।

लेकिन जब रीबिन अपने शान्त, भारी स्वर में बोलता तो माँ को घड़ी की टिक-टिक और पाले की जकड़ में आती हुई मकान की दीवारों के धीरे से चिटकने की आवाज़ भी सुनायी देती।

"मैं इसी बात को अपने ढंग से कहूँगा - एक सीधे-सादे कोयला झोंकनेवाले के शब्दों में : ईश्वर एक ज्वाला है! उसका वास मनुष्य के हृदय में है। कहा गया है कि : 'सृष्टि के आरम्भ में शब्द था और वह शब्द ही ईश्वर था।' इसलिए शब्द ही आत्मा है।"

"विवेक है," पावेल ने ज़ोर देकर कहा।

"अच्छी बात है! तो ईश्वर हृदय और विवेक में है लेकिन गिरजाघर में नहीं। गिरजाघर तो ईश्वर की क़ब्र है।"

माँ सो गयी और उसे मालूम भी न हुआ कि रीबिन कब गया।

अब वह अक्सर आने लगा। जब वह आता और उस समय यदि वहाँ पावेल का कोई दोस्त मौजूद होता तो वह चुपचाप एक कोने में बैठा रहता और बीच-बीच में कभी बस इतना कह देता :

"यही तो बात है!"

एक दिन उसने साथियों को अपनी भयंकर मुद्रा से दहला दिया। फिर चिढ़कर बोला :

"जो चीज़ जैसी है, हमें उसे वैसा ही बताना चाहिए। उसे कैसा होना चाहिए, इससे हमें सरोकार नहीं। कौन जानता है, आगे चलकर किसी चीज़ का रूप क्या होगा? जनता एक बार स्वतन्त्र और उन्मुक्त हो ले, फिर वह आप ही इन बातों का फ़ैसला कर लेगी कि उसके लिए क्या उपयुक्त अथवा उचित है। पहले ही लोगों के मगज में मनमाने ढंग से बहुत कुछ ठूँस दिया गया है। अब अपना भला-बुरा सोचने की उन्हें आजादी होनी चाहिए। जो कुछ उन्हें जीवन के बारे में बताया गया है, सम्भव है, लोग उस सब को रद्द कर डालना चाहें। हो सकता है कि भगवान की तरह वे परम्परागत ज्ञान को भी अपना शत्रु समझें। उन तक पुस्तकें पहुँचाइये और फिर वे स्वयं अपने सवालों का हल ढूँढ़ निकालेंगे। बस! इतना ही!"

वह और पावेल जब अकेले होते, तो लगातार बहस करते, लेकिन बहस के दौरान दोनों में से कोई भी नाराज़ न होता। माँ बड़े ध्यान से उनकी बातें सुनती, एक-एक शब्द पर विचार करती और यह समझने का प्रयत्न करती कि वे क्या कह रहे हैं। कभी-कभी तो उसे ऐसा लगता कि वह चौड़े कन्धों और काली दाढ़ीवाला आदमी और उसका लम्बे डीलडौलवाला बलिष्ठ बेटा दोनों ही अन्धे हो गये हैं। वे कभी एक दिशा और कभी दूसरी दिशा में राह ढूँढ़ते हैं, बाहर

निकलने की कोई राह खोजते हैं, अपनी मज़बूत पर अन्धी उँगलियों से हर चीज़ को पकड़ते हैं, जगह–जगह भटकते हैं, चीज़ों को फ़र्श पर गिराते हैं और पैरों तले कुचल डालते हैं। वे चीज़ों से टकराते हैं, उन्हें टटोलते और एक तरफ़ को फेंक देते हैं, पर अपने विश्वास और आशा का आँचल कभी नहीं छोड़ते...

उन्होंने माँ को ऐसे शब्द सुनने का आदी बना दिया था जो स्पष्टवादिता और साहसिकता के कारण भयावह प्रतीत होते थे, पर अब इन शब्दों को सुनकर उसे पहली बार की तरह गहरा आघात नहीं पहुँचता था। वह इन शब्दों का विरोध करना सीख चुकी थी। कभी–कभी तो ईश्वर को अस्वीकार करने वाले इन शब्दों के पीछे माँ को उसके प्रति एक दृढ़ आस्था छिपी दिखायी देती। तब वह मन ही मन मुस्कराकर उनके सब अपराधों को क्षमा कर देती। और हालाँकि वह रीबिन को पसन्द नहीं करती थी, फिर भी उसके प्रति अब वह इतना द्वेष भी न रखती थी।

हर हफ़्ते वह उक्रइनी के लिए किताबें और साफ़ कपड़े लेकर जेल जाती। एक बार उसे उससे मिलने की इजाजत भी दे दी गयी।

"वह बिल्कुल भी नहीं बदला है," उसने वापस आकर बड़े प्यार से कहा। "वह सबके साथ बहुत अच्छा व्यवहार करता है और सब लोग भी उससे ख़ूब हँसी–मज़ाक़ करते हैं। उसके दिल पर बहुत भारी गुजरती है, पर वह ज़ाहिर नहीं होने देता।"

"ऐसा ही होना भी चाहिए," रीबिन ने कहा। "दुख एक खाल है जिसे हम पहने रहते हैं, आहें भरते हैं मगर पहनते हैं। इसमें शेखी की कोई बात नहीं है। सबकी आँखों पर तो पट्टी बँधी नहीं है, कुछ लोग ख़ुद ही अपनी आँखें बन्द कर लेते हैं, बस यही बात है! इसलिए जो बेवक़ूफ़ हैं वे चुपचाप सब कुछ सहन करते रहते हैं।"

12

बस्ती के लोग व्लासोव–परिवार के उस छोटे–से मटीले घर में अधिकाधिक दिलचस्पी लेने लगे। इस दिलचस्पी में सन्देह और द्वेष का भाव भी मिला हुआ था जिसका उन्हें स्वयं भी आभास नहीं था, पर साथ ही इस दिलचस्पी ने उनमें विश्वास–मिश्रित उत्सुकता भी जागृत की। कभी–कभी कोई बिल्कुल अपरिचित व्यक्ति पावेल के पास आता और नज़रें बचाकर इधर–उधर देखने के बाद कहता : "भाई, सुनो, तुम तो किताबें पढ़ते हो और क़ानून भी जानते हो, क्या तुम मुझे बता सकते हो कि..."

और फिर वह फरियादी पुलिस या फ़ैक्टरी के व्यवस्थापकों के किसी

अन्याय की कहानी सुनाता। यदि मामला अधिक पेचीदा होता तो पावेल उसे शहर के एक वकील के नाम, जो उसका मित्र था, पुर्ज़ा लिख देता। परन्तु यदि सम्भव होता तो वह स्वयं ही समझा देता।

धीरे-धीरे लोग इस लगनवाले नवयुवक की इज्जत करने लगे, जो सीधे-सादे शब्दों में साहस के साथ अपनी बात कहता था, जो अपनी आँखें खोलकर हर चीज़ देखता था और जिसके कान हर बात के प्रति चौकन्ने रहते थे, जो हर विवाद की तह में पहुँचे बिना दम नहीं लेता था और हमेशा तथा हर जगह सभी लोगों को एकबद्ध करने वाले सूत्र का पता लगाने का प्रयत्न करता था।

"दलदल के लिए एक कोपेक" वाली घटना के बाद पावेल की साख विशेष रूप से बढ़ गयी।

फ़ैक्टरी की सीमा से बाहर उसे प्रायः चारों तरफ़ से सड़े हुए नासूर की तरह घेरे हुए एक बड़ी-सी दलदल थी जिसमें फर और बर्च के वृक्षों का एक जंगल उगा हुआ था। गर्मियों में इस दलदल से पीले रंग की घनी भाप-सी उठती और मच्छरों के दल निकल पड़ते, जो बस्ती में बुखार फैला देते। यह दलदल फ़ैक्टरी की सम्पत्ति थी और नये डायरेक्टर ने उस दलदल की भूमि का लाभ उठाने के उद्देश्य से उसे सुखाने और साथ ही उससे पीट निकालने का फ़ैसला किया। यह बनाकर कि वह मज़दूरों के रहन-सहन की परिस्थितियों में सुधार करने के लिए ऐसा कर रहा है, उसने आज्ञा जारी की कि दलदल को सुखाने के लिए हर मज़दूर की मज़दूरी से रूबल के पीछे एक कोपेक काटा जाये।

मज़दूरों को गुस्सा आया। उन्होंने विशेष रूप से इस बात पर आपत्ति की कि फ़ैक्टरी में काम करने वाले बाबुओं की तनख्वाह में कोई कटौती नहीं की गयी थी।

जिस शनिवार को डायरेक्टर ने कोपेक कटाने की यह घोषणा चिपकवायी थी, उस दिन पावेल घर पर बीमार था। इसलिए उसे इसके बारे में कुछ भी मालूम न हुआ। अगले दिन सिजोव और माखोतिन उससे मिलने आये। सिजोव ढलाई के विभाग में काम करने वाला एक सुडौल वृद्ध मज़दूर था और माखोतिन लम्बे कद का गुस्सैल मिस्तरी था। उन्होंने पावेल को डायरेक्टर के निर्णय के बारे में बताया।

"हम बुजुर्गों ने मिलकर इस सवाल के बारे में बातचीत की थी," सिजोव ने बड़ी गम्भीरता से कहा। "साथियों ने हमें तुम्हारे पास भेजने का फ़ैसला किया क्योंकि तुम सब बातें समझते हो। वे जानना चाहते हैं कि क्या कोई ऐसा क़ानून है जो डायरेक्टर को हमारे पैसों से मच्छर मारने का अधिकार देता हो?"

"देखो, चार साल पहले इन जल्लादों ने एक गुसलख़ाना बनवाने के लिए हमसे पैसा लिया था," माखोतिन ने कहा। उसकी छोटी-छोटी आँखें चमक उठीं। "तीन हज़ार आठ सौ रूबल जमा किये थे इन लोगों ने। वह सब पैसे कहाँ गये? गुसलख़ाना तो हमने आज तक देखा नहीं!"

पावेल ने उन्हें समझाया कि यह कटौती सरासर अन्याय है और यह भी बताया कि दलदल को सुखाने से फ़ैक्टरी को स्पष्टत: कितना अधिक लाभ होगा। वे दोनों त्योरियाँ चढ़ाये हुए चले गये। उनको दरवाज़े पर विदा करने के बाद माँ ने धीरे से हँसकर कहा :

"अब तो बूढ़े भी तुम से सलाह के लिए आने लगे।"

माँ की बात का कुछ उत्तर दिये बिना पावेल मेज के पास बैठकर कुछ लिखने लगा। कुछ ही मिनट बाद उसने कहा :

"माँ, मेरा एक काम कर दो! ज़रा शहर चली जाओ और यह खत दे आओ..."

"कोई ख़तरनाक बात है इसमें?" माँ ने पूछा।

"हाँ! मैं तुम्हें वहाँ भेज रहा हूँ, जहाँ हमारा अखबारा छपता है। दलदल साफ़ कराने के लिए कोपेक काटने की यह ख़बर हमें हर हालत में अगले अंक में छपवानी है।"

"अच्छी बात है..." माँ ने कहा, "मैं अभी जाती हूँ।"

यह पहला काम था जो उसके बेटे ने उसे सौंपा था। माँ को बड़ी ख़ुशी थी कि उसने ऐसे खुलकर उससे बात की थी।

"पावेल, मैं समझ गयी," माँ ने कपड़े पहनते हुए कहा। "यह सरासर लूट है। क्या नाम बताया तुमने उस आदमी का - येगोर इवानोविच न?"

माँ शाम को देर से लौटी। वह थकी हुई, पर ख़ुश थी।

"मैं साशा से मिली थी," माँ ने बेटे को बताया। "उसने सलाम कहा है। येगोर इवानोविच बहुत सीधा-सादा और ख़ुशमिजाज आदमी है। उसकी बातें सुनकर हँसी आती है।"

"मुझे बड़ी ख़ुशी है कि वे लोग तुम्हें पसन्द आये," पावेल ने धीमे से कहा।

"वे बहुत ही सीधे-सादे लोग हैं, पावेल। जो लोग ज़्यादा शान नहीं दिखाते, वे बहुत अच्छे लगते हैं। वे तुम्हारा बड़ा सम्मान करते हैं..."

सोमवार को भी पावेल घर पर ही रहा क्योंकि उसकी तबीयत पूरी तरह अच्छी नहीं थी। खाने के समय फ़्योदोर माजिन हाँफता हुआ भागा-भागा आया। वह प्रसन्न और उत्तेजित था।

"आओ चलो!" उसने चिल्लाकर कहा। "सारी फ़ैक्टरी के मज़दूर कमर कसकर उठ खड़े हुए हैं। उन्होंने तुम्हें बुला लाने के लिए मुझे भेजा है। सिजोव और माखोतिन ने कहा था कि तुम जितनी अच्छी तरह सब कुछ समझा दोगे उतनी अच्छी तरह कोई नहीं समझा सकता। देखो तो चलकर क्या हो रहा है!"

बिना कुछ कहे पावेल कपड़े पहनने लगा।

"औरतों ने भी आकर काफ़ी हल्ला-गुल्ला मचा रखा है।"

"मैं भी चलती हूँ," माँ ने कहा। "आख़िर वे लोग चाहते क्या हैं? मैं भी चलूँगी!"

"चलो," पावेल ने कहा।

वे तेज़ी से चुपचाप सड़क पर चले जा रहे थे। माँ इतनी उत्तेजित थी कि उसे साँस लेने में कठिनाई हो रही थी। उसे ऐसा लगा कि कोई अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात होने जा रही है। फ़ैक्टरी के फाटक पर औरतों की भीड़ जमा थी, जो चिल्लाकर गालियाँ बक रही थीं। जब वे तीनों चुपके से यार्ड में पहुँचे तो उन्हें चारों ओर लोगों की भीड़ दिखायी दी। लोग उत्तेजित होकर चिल्ला रहे थे। माँ ने देखा कि सब लोग फाउण्ड्री की दीवार की तरफ़ मुँह किये खड़े हैं जहाँ सिजोव, माखोतिन, व्यालोव और पाँच-छः बुर्जुग तथा प्रभावशील मज़दूर पुराने लोहे के ढेर पर खड़े थे; उनके पीछे दीवार थी।

"व्लासोव आ रहा है!" किसी ने चिल्लाकर कहा।

"व्लासोव? उसे इधर आ जाने दो..."

"चुप रहो!" कई आवाज़ें एक साथ आयीं।

कहीं पास ही रीबिन का सपाट स्वर सुनायी दिया :

"हम कोपेक के लिए नहीं, बल्कि न्याय के लिए लड़ रहे हैं, असल बात यह है! हमें अपना कोपेक इतना प्यारा नहीं है – वह भी दूसरे कोपेकों जितना ही गोल है, पर भारी उनसे ज़्यादा है – उसमें इंसानों का जितना ख़ून है उतना डायरेक्टर के रूबल में भी नहीं! क़ीमत कोपेक की नहीं, बल्कि ख़ून की है, न्याय की है!"

भीड़ में लोगों ने उसके शब्द सुने और चारों तरफ़ से तरह-तरह की आवाज़ें आने लगीं :

"रीबिन तुम ठीक कहते हो!"

"बहुत पते की बात कही है तुमने!"

"लो, व्लासोव आ गया!"

ये सब स्वर मिलकर एक गर्जना बन गये जिसमें मशीनों की गड़-गड़ाहट, भाप की सी-सी और तारों का गुँजन सब कुछ डूब गया। चारों तरफ़ से लोग अपने

हाथ हिलाते हुए आगे आ रहे थे और तीखे शब्दों से एक-दूसरे को उत्तेजित कर रहे थे। उनके शिथिल सीनों में जो असन्तोष हमेशा से सुलग रहा था, वह सहसा भड़क उठा था और बाहर निकलने को बेताब था। यह असन्तोष विजयोल्लास के साथ वातावरण में छा गया और उसके अशुभसूचक पंख निरन्तर फैलते गये। यह असन्तोष लोगों को अपने पंजे में कसता गया, उसने उन्हें एक-दूसरे का शत्रु बना दिया और स्वयं प्रतिकार की एक ज्वाला के रूप में भड़क उठा। जनसमुदाय पर धूल और कालिख का एक बादल-सा छा गया, पसीने से तर चेहरे उत्तेजना से चमक उठे, गालों पर व्यथा के आँसू बहकर सूख गये और अपना चिन्ह छोड़ गये, काले चेहरों पर आँखें और दाँत चमकने लगे।

पावेल पुराने लोहे के ढेर पर जा पहुँचा जहाँ सिजोव और माखोतिन खड़े हुए थे।

"साथियो!" उसने ऊँचे स्वर में कहा।

माँ ने देखा कि उसका चेहरा बहुत पीला पड़ गया है और उसके होंठ काँप रहे हैं। अनायास ही वह भीड़ को चीरकर आगे बढ़ने लगी।

"धक्का क्यों देती है?" लोगों ने झुँझलाकर उसे डाँटते हुए कहा।

दूसरों ने उलटकर उसे धक्का दिया पर इससे भी वह न रुकी। कन्धों और कुहनियों से ठेलती हुई वह आगे बढ़ती गयी। अपने बेटे के पास जाकर खड़े होने की इच्छा उसे आगे लिये जा रही थी।

जब पावेल ने वह शब्द उच्चारित किया जो उसके लिए गूढ़ महत्त्व रखता था, तब उसे ऐसा लगा कि उसका गला उल्लास के आवेग से रुँधाा जा रहा है। उसका जी चाहता था कि वह अपना दिल निकालकर इन लोगों को अर्पित कर दे, वह दिल जिसमें न्याय प्राप्त करने के स्वप्नों ने एक आग-सी लगा रखी थी।

"साथियो!" उसने फिर ऊँचे स्वर में कहा; इस शब्द ने उसमें नयी शक्ति और उल्लास भर दिया। "हम वह लोग हैं जो गिरजाघर और कारख़ाने बनाते हैं, जो जंजीरें ढालते हैं और सिक्के बनाते हैं। हम वह जीवन-शक्ति हैं जिसके सहारे सभी लोग पैदा होने से लेकर मरने तक अपना पेट भरते और ज़िन्दा रहते हैं।"

"ठीक कहते हो!" रीबिन ने चिल्लाकर कहा।

"हमेशा और हर जगह जब कोई काम करना होता है तो सबसे पहले हमें बुलाया जाता है और जब कोई सुविधा पाने का सवाल आता है तो हम सबसे पीछे होते हैं। हमारी परवाह कौन करता है? हमारे लिए किसने कुछ किया है? हमारे साथ कोई इन्सानों जैसा बरताव भी करता है क्या? नहीं!"

"नहीं!" किसी ने उसके शब्द को प्रतिध्वनित किया।

कुछ देर बाद जब पावेल के भाषण में प्रवाह आ गया तो वह अधिक

सीधे–सादे शब्दों में और शान्त भाव से बोलने लगा। भीड़ धीरे–धीरे और निकट आती गयी और गठते–गठते ऐसी लगने लगी मानो एक ही शरीर पर हज़ारों सिर लगे हों जो अपनी असंख्य आँखों से बड़े ध्यान के साथ पावेल का मुँह देख रहे थे और उसके एक–एक शब्द को अमृत की बूँदों की तरह पी रहे थे।

"हम अपनी हालत उस समय तक कभी नहीं सुधार सकते जब तक हम यह न समझ लें कि हम सब साथी हैं, मित्रों का एक परिवार हैं जो अपने अधिकारों के लिए लड़ने की एकमात्र इच्छा के सूत्र में एक–दूसरे से बँधे हुए हैं।"

"मतलब की बात कहो," माँ के पास खड़े हुए किसी व्यक्ति ने कर्कश स्वर में चिल्लाकर कहा।

"टोको नहीं," दो तरफ़ से दो आवाज़ें आयीं।

काले चेहरों पर उदासी और निराशा के बादल छाये हुए थे, पर कुछ आँखें बड़े ध्यान से पावेल के चेहरे को देख रही थीं।

"समाजवादी है, मगर बेवक़ूफ़ नहीं है!" किसी ने अपनी राय देते हुए कहा।

"बड़ी हिम्मत से बोल रहा है, है न?" लम्बे कद के एक काने मज़दूर ने माँ को कुहनी मारते हुए कहा।

"साथियो, अब वक़्त आ गया है कि हम इस बात को समझ लें कि ख़ुद हमारे अलावा और कोई हमारी मदद नहीं करेगा! अगर हमें अपने दुश्मन को हराना है तो हमारा नारा यह होना चाहिए कि अगर किसी एक पर भी कोई मुसीबत आये तो सब उसके लिए लड़ेंगे और हर आदमी सबके लिए लड़ेगा!"

"सच बात कह रहा है!" माखोतिन ने अपनी मुट्ठी हवा में हिलाते हुए कहा।

"डायरेक्टर को बुलवाओ!" पावेल बोलता जा रहा था।

ऐसा मालूम हुआ कि जैसे सहसा भीड़ पर तूफान की एक लहर दौड़ गयी। भीड़ में एक खलबली हुई और दर्जनों आवाज़ें एक साथ पुकार उठीं :

"डायरेक्टर को बुलवाओ!"

"कुछ लोगों को उसके पास भेजा जाये!"

माँ कुछ और आगे बढ़ गयी और अपने बेटे को टकटकी बाँधकर देखने लगी। उसका चेहरा गर्व से चमक उठा। उसका पावेल इन पुराने, साखवाले मज़दूरों के बीच खड़ा था और सब लोग उसकी बातें सुन रहे थे और उससे सहमत थे। माँ ख़ुश थी कि पावेल न तो ग़ुस्से में ही आया और न उसने दूसरों की तरह गालियाँ ही दीं।

जिस तरह टीन की छत पर ओले बरसते हैं उसी तरह गालियाँ, कोसने और क्रोध-भरे शब्द सुनायी दे रहे थे। पावेल ने एकत्रित जन-समुदाय पर एक नज़र दौड़ायी। ऐसा मालूम होता था कि वह अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से कुछ ढूँढ़ रहा हो।

"हमारी तरफ़ से कौन-कौन जायेगा?"

"सिजोव!"

"व्लासोव!"

"रीबिन! उसके दाँत भयानक हैं!"

सहसा भीड़ में कुछ खुसुर-फुसुर सुनायी दी।

"वह ख़ुद ही आ रहा है!.."

"डायरेक्टर!..."

भीड़ ने एक लम्बे कद के, नुकीली दाढ़ी और लम्बोतरे चेहरेवाले व्यक्ति के लिये रास्ता कर दिया।

"जाने दीजिये!" - उसने हाथ से लोगों को रास्ता छोड़ देने का संकेत किया कि कहीं छू न जाये। वह अपनी आँखें सिकोड़कर मज़दूरों को एक ऐसे अनुभवी मालिक की दृष्टि से देख रहा था, जो सूरत देखते ही आदमी को पहचान लेता हो। लोगों ने जल्दी से अपनी टोपियाँ उतारीं और झुककर उसे सलाम किया, पर उनके सलाम का जवाब दिये बिना ही वह आगे बढ़ता गया। भीड़ पर सन्नाटा छा गया; लोग कुछ घबराये हुए थे और खिसियानी हँसी हँसकर इस तरह चुपके-चुपके कानाफूसी कर रहे थे जैसे बच्चे शैतानी करते हुए पकड़े गये हों।

वह कठोर दृष्टि से माँ के चेहरे को देखता हुआ उसके पास से गुज़रा और लोहे के ढेर के सामने पहुँचकर खड़ा हो गया। किसी ने उसे सहारा देने के लिये अपना हाथ बढ़ाया, पर उसने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। एक झटके के साथ ज़ोर लगाकर वह ऊपर चढ़ा और पावेल और सिजोव के सामने जाकर खड़ा हो गया।

"यह भीड़ क्यों जमा है? तुम लोगों ने काम क्यों बन्द कर रखा है?"

कुछ क्षण तक ख़ामोशी रही। लोगों के सिर अनाज की बालियों की तरह हिल रहे थे। सिजोव ने अपनी टोपी हिलाकर कन्धे बिचकाये और सिर झुका लिया।

"मेरे सवाल का जवाब दो!" डायरेक्टर ने चिल्लाकर कहा।

पावेल बढ़कर उसके पास आया और सिजोव तथा रीबिन की तरफ़ संकेत करके ऊँचे स्वर में बोला :

"हमारे साथियों ने हम तीनों को यह माँग करने के लिए चुना है कि आप

कोपेक काटने के बारे में अपनी आज्ञा वापस ले लें।"

"क्यों?" डायरेक्टर ने पावेल की ओर देखे बिना ही पूछा।

"क्योंकि हम इस कटौती को बेइन्साफ़ी समझते हैं," पावेल ने ज़ोर से कहा।

"क्या तुम यह समझते हो कि मैं दलदल को मज़दूरों के रहन-सहन की हालत सुधारने के लिए नहीं, बल्कि उनका शोषण करने की इच्छा से सुखवाना चाहता हूँ?"

"हाँ," पावेल ने उत्तर दिया।

"और तुम भी?" डायरेक्टर ने रीबिन की तरफ़ मुड़कर पूछा।

"हम सबकी एक ही राय है।"

"और तुम, भले आदमी?" उसने सिजोव की तरफ़ मुड़कर पूछा।

"मैं भी। हम अपने कोपेक अपने पास ही रखना चाहते हैं।"

सिजोव एक बार फिर सिर झुकाकर अपराधियों की तरह मुस्कराने लगा।

डायरेक्टर ने धीरे-धीरे भीड़ पर नज़र डालकर अपने कन्धे झटके। फिर वह पावेल की तरफ़ मुड़ा और उसे ग़ौर से देखने लगा।

"तुम कुछ पढ़े-लिखे आदमी मालूम होते हो। क्या तुम भी इस काम के फ़ायदों को नहीं समझते?"

"अगर फ़ैक्टरी अपने ख़र्च से दलदल को सुखवा दे तो कोई भी उसके फ़ायदों को समझ सकता है," पावेल ने इतने ऊँचे स्वर में कहा कि सब लोग उसकी बात सुन लें।

"फ़ैक्टरी कोई धर्मखाता नहीं," डायरेक्टर ने रुखाई से कहा। "मैं हुक्म देता हूँ कि तुम लोग काम पर वापस चले जाओ।"

वह बड़ी सावधानी से लोहे को अपने पाँव से टटोलता हुआ बिना किसी की ओर देखे नीचे उतरने लगा।

भीड़ में असन्तोष की एक लहर दौड़ गयी।

"क्या बात है?" डायरेक्टर ने जहाँ के तहाँ रुककर पूछा।

दूर से किसी की आवाज़ ने निस्तब्धता को भंग किया :

"जाओ, तुम ख़ुद काम करो!.."

"अगर तुम सब लोग पन्द्रह मिनट के अन्दर-अन्दर काम पर वापस न चले गये तो मैं तुम सब पर जुर्माना कर दूँगा!" डायरेक्टर ने बड़ी सख़्ती के साथ ज़ोर देकर कहा।

एक बार फिर वह भीड़ में से रास्ता बनाता हुआ चला, लेकिन जैसे-जैसे वह आगे बढ़ाता गया भीड़ में एक मन्द गर्जना-सी उत्पन्न हुई और वह जितनी

दूर होता गया यह गर्जना उतनी ही तेज़ होती गयी।

"बात करके देख लिया उससे!"

"हम लोगों के लिए यही इंसाफ़ है! यह भी कोई ज़िन्दगी है!"

वे पावेल को सम्बोधित करके चिल्लाने लगे :

"अरे, क़ानूनदां, अब क्या किया जाये?"

"भाषण तो बहुत अच्छा दिया था, मगर जब मालिक ने अपनी सूरत दिखायी तो उस भाषण का क्या फ़ायदा हुआ?"

"अच्छा, व्लासोव, बताओ अब हम क्या करें?"

जब लोग बहुत जिद्द करने लगे तो पावेल बोला :

"साथियो, मैं तो यह कहता हूँ कि जब तक कोपेक कटौती बन्द करने का वादा न कर लिया जाये तब तक हममें से कोई काम पर वापस न जाये।"

लोग उत्तेजित होकर कहने लगे :

"हम सबको क्या बेवक़ूफ़ समझ रखा है?"

"इसका मतलब तो है हड़ताल?"

"एक-दो कोपेक के लिए?"

"हड़ताल में नुकसान क्या है?"

"हम सब निकाल दिये जायेंगे..."

"फिर काम कौन करेगा उसके यहाँ?"

"बहुतेरे मिल जायेंगे!"

"तुम्हारा मतलब है गद्दार?"

13

पावेल नीचे उतरकर माँ के पास आकर खड़ा हो गया।

भीड़ उत्तेजित हो उठी थी। सब लोग बहस कर रहे थे और उत्तेजित होकर चिल्ला रहे थे।

"तुम इन लोगों को हड़ताल करने पर कभी राजी नहीं कर सकते," रीबिन ने पावेल के पास आकर कहा। "पैसे का लालच ज़रूर है इन्हें, पर लड़ने का बूता नहीं है! तीन सौ से ज़्यादा लोग तुम्हारा साथ नहीं देंगे। इतना कचरा एक दफे में थोड़े ही साफ़ हो जायेगा..."

पावेल चुप था। जन-समुदाय का विशाल काला चेहरा उसके सामने घूम रहा था और उसकी आँखों में अपने सवाल का जवाब ढूँढ़ रहा था। पावेल का हृदय घबराहट के मारे ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा। उसे ऐसा लगा कि उसके शब्दों का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ा था, मानो पानी की इक्का-दुक्का बूँदें तपती हुई

ज़मीन पर पड़ते ही छन्न से ग़ायब हो गयी हों।

वह थका हुआ और निराश घर लौटा। माँ और सिजोव उसके पीछे आ रहे थे; रीबिन उसके बगल में चल रहा था।

"तुम बोलते अच्छा हो पर तुम्हारी बात दिल को नहीं छूती! यही तो बात है! तुम्हें उनके दिल को छूना चाहिए – उनके दिल के बीचों-बीच चिनगारी लगानी चाहिए। तुम लोगों को तर्क से नहीं समझा सकते। कोई जूता उनके पाँव पर ठीक ही नहीं आता – या तो बहुत कसा होता है या बहुत ढीला!"

"पेलागेया, हम बूढ़े लोगों को तो अब क़ब्र का रास्ता लेना चाहिए!" सिजोव कह रहा था। "अब नये ढंग के लोग पैदा हो रहे हैं। हम लोग कैसी ज़िन्दगी बसर करते थे, तुम्हारे और मेरे जैसे लोग? जानवरों की तरह घुटनों के बल रेंगते थे, अपने से बड़े लोगों के आगे ज़मीन पर नाक रगड़ते थे। लेकिन अब – मालूम नहीं, या तो लोगों की आँखें खुल गयी हैं या वे पहले से भी बड़ी गलती कर रहे हैं, मगर कम से कम वे हमारे जैसे नहीं हैं। इन नौजवानों को ही देख लो – डायरेक्टर से ऐसे बात करते हैं जैसे वह इनके बराबर का हो!.. अच्छा, पावेल मिख़ाइलोविच, मैं तुमसे बाद में मिलूँगा। जिस तरह तुम दूसरों के लिए लड़ते हो वह बहुत अच्छी बात है। ईश्वर तुम्हारी सहायता करे! शायद तुम्हीं इन सब मुसीबतों से छुटकारा पाने का कोई रास्ता निकाल लो। भगवान तुम्हें सुखी रखे!"

और इतना कहकर वह चला गया।

"जा मर जाके," रीबिन ने अस्फुट स्वर में कहा। "इसके जैसे लोगों को तो इन्सान भी न कहना चाहिए। ये तो बस गारे का काम दे सकते हैं, कहीं कोई दरार पड़ जाये तो उसे भरने के लिए। भला तुमने ग़ौर किया, पावेल, कि तुम्हें प्रतिनिधि बनाने के लिए कौन चिल्लाया था? वही लोग जिन्होंने यह ख़बर उड़ायी थी कि तुम समाजवादी हो और हंगामा कराना चाहते हो। वही लोग थे! उन्होंने अपने मन में सोचा होगा : यह काम से अलग कर दिया जायेगा – इसकी यही सजा है।"

"अपने हिसाब से उन्होंने ठीक ही किया," पावेल बोला।

"और भेड़िये भी ठीक ही करते हैं जब वे अपने भाई-बन्धुओं को चीर-फाड़कर खा जाते हैं..."

रीबिन के चेहरे पर चिन्ता के बादल छाये हुए थे और उसके स्वर से मालूम होता था कि वह बहुत उद्विग्न है।

"लोग ख़ाली शब्दों को नहीं सुनते – उन्हें बात समझाने के लिए मुसीबत उठानी पड़ती है – ख़ून में डूबे हुए शब्द कहने पड़ते हैं!..."

पावेल दिन भर थका-थका और उदास घूमता रहा। उसे एक अजीब चिन्ता सता रही थी, उसकी आँखों से चिंगारियाँ निकल रही थीं और ऐसा मालूम होता था जैसे वह कुछ ढूँढ़ रहा हो। माँ ने इस बात को देखा।

"क्या बात है, पावेल?" उसने डरते-डरते सावधानी से पूछा।

"सिर में दर्द है," उसने उत्तर दिया।

"तुम लेट जाओ, मैं डॉक्टर को बुलाये लाती हूँ।"

"नहीं, तुम फ़िक्र न करो," उसने जल्दी से उत्तर दिया। फिर उसने दबी जबान से कहा :

"मैं अभी कमउम्र और कमज़ोर हूँ, यही मुसीबत है! उन्होंने मेरी बात पर भरोसा नहीं किया, मेरा साथ नहीं दिया, जिसका मतलब है कि मुझे अपनी बात ठीक से कहनी नहीं आती। मैं अपने आप से परेशान और लज्जित हूँ।"

माँ ने अपने बेटे के विचारमग्न चेहरे को घूरकर देखा और उसे धीरज बँधाने का प्रयत्न किया :

"सब्र से काम लो," उसने नरमी से कहा। "जिस बात को वे आज नहीं समझे हैं कल समझ जायेंगे।"

"उन्हें समझना पड़ेगा।!" पावेल ने आवेश में कहा।

"मैं भी समझ गयी कि तुम ठीक बात कह रहे हो..."

पावेल माँ के निकट जाकर बोला :

"माँ, तुम कितनी अच्छी हो!" और मुँह दूसरी ओर कर लिया। माँ चौक पड़ी, मानो उसके इस शान्त भाव से कहे गये शब्दों ने उसे अंगारे की तरह जला दिया हो। माँ ने हाथ अपने हृदय पर रखा और बेटे के इस प्यार को अपने हृदय में संयोये हुए वहाँ से चली गयी।

उसी रात जब माँ सो गयी थी और पावेल बिस्तर पर लेटा पढ़ रहा था, राजनीतिक पुलिसवाले आये और भुनभुनाते हुए घर की हर चीज़ उलट-पुलटकर तलाशी लेने लगे। उन्होंने ऊपर अटारी पर देखा और बाहर बाग का भी कोना-कोना छान मारा। उस पीले चेहरेवाले अफ़सर ने इस बार भी वैसा ही बरताव किया जैसा पहले किया था – वही अपमानजनक व्यंग, उनके दिलों को जलानेवाली व्यंग-भरी बातों में उसे विशेष आनन्द आता था। माँ चुपचाप एक कोने में बैठी एकटक अपने बेटे की सूरत देखती रही थी। पावेल बहुत प्रयत्न कर रहा था कि उसकी भावनाएँ प्रकट न होने पायें, पर जब भी वह अफ़सर हँसता पावेल की उँगलियाँ फड़कने लगतीं। माँ जानती थी कि जब वह पुलिसवाला कोई मज़ाक़ करता था तो अपने ऊपर काबू रखना पावेल के लिए कितना कठिन हो जाता था। इस बात उसे इतना डर नहीं लगा जितना पहली बार

लगा था। भूरी वर्दीवाले इन निशाचरों के प्रति उसकी घृणा बढ़ गयी थी और इस घृणा की भावना में उसका भय दब गया था।

"मुझे पकड़कर ले जायेंगे," पावेल ने मौक़ा पाकर माँ के कान में कहा।

"मैं समझ गयी हूँ..." माँ ने सिर झुकाकर धीरे से उत्तर दिया।

वह जानती थी कि दिन में पावेल ने मज़दूरों के सामने जो कुछ कहा था उसके कारण उसे जेल में ठूँस दिया जायेगा। पर उसने जो कुछ कहा था, उससे सभी सहमत थे और इसलिए वे उसकी रक्षा के लिए उठ खड़े होंगे। उसे ज़्यादा दिन तक जेल में रखने का साहस किसी को न होगा...

माँ का जी चाह रहा था कि वह उसके गले में बाँहें डालकर जी भरकर रोये, पर अफ़सर बगल में ही खड़ा अपनी आँखें सिकोड़कर उसे घूर रहा था। उसकी मूँछें और होंठ फड़क रहे थे और पेलागेया निलोवना को ऐसा लगा कि यह व्यक्ति इस प्रतीक्षा में है कि कब मेरे आँसू छलकते हैं और कब मैं गिड़गिड़ाकर उससे प्रार्थना करती हूँ। सारी शक्ति बटोरकर उसने बेटे का हाथ पकड़ लिया और दम साधकर धीमे स्वर में बड़े प्यार से बोली :

"अच्छा जाओ, पावेल। अपनी ज़रूरत की हर चीज़ ले ली है न तुमने?"

"हाँ, उदास न हो।..."

"भगवान तुम्हारी रक्षा करे!.."

जब वे लोग पावेल को लेकर चले गये तो माँ एक बेंच पर बैठकर चुपके-चुपके रोने लगी। वह दीवार की तरफ़ पीठ किये बैठी थी जैसे उसका पति बैठा करता था; उसका हृदय व्यथा से भरा हुआ था और उसे अपनी निस्सहाय दशा की वेदनापूर्ण चेतना खाये जा रही थी। अपना सिर पीछे झटककर माँ ने एक दबी हुई लम्बी चीख़ मारी जिसमें उसके आहत हृदय की सारी वेदना उमड़ आयी थी। उसके मस्तिष्क में नकाब जैसा वही भावहीन पीला चेहरा, वही पतली-पतली मूँछें और हर्ष से चमकती हुई वही मिंची-मिंची आँखें घूम रही थीं। उसके सीने में उन लोगों के प्रति, जो माँओं से उनके बेटों को केवल इसलिए छीन लेते थे कि वे न्याय चाहते थे, कटुता और घृणा के घने बादल छा गये।

सर्दी बहुत थी और वर्षा की बूँदें खिड़की पर सिर पटक रही थीं। माँ को ऐसा लगा कि लम्बी-लम्बी भुजाओं और बिना आँखों की लाल चेहरोंवाली भूरी आकृतियाँ रात को सन्तरियों की तरह उसके घर का चक्कर काट रही थीं और उसे उनकी एड़ों को मन्द-मन्द खनक सुनायी दे रही थी।

"वे मुझे भी ले जाते तो अच्छा होता," माँ ने सोचा।

लोगों को काम पर बुलाने के लिए भोंपू बजा। आज सुबह उसकी आवाज़ न जाने क्यों सदैव की अपेक्षा धीमी और भर्रायी हुई थी जैसे उसमें विश्वास की

कमी हो। दरवाज़ा खुला और रीबिन अन्दर आया।

"क्या उसे पकड़ ले गये?" उसने अपनी भीगी हुई दाढ़ी का पानी पोंछते हुए पूछा।

"हाँ, ले गये कलमुँहे!" माँ ने आह भरकर उत्तर दिया।

"यह तो पहले ही से मालूम था," वह धीरे से हँसा। "मेरे घर की भी तलाशी ली थी। हर चीज़ टटोलकर देखी। गाली-गलौज बहुत की, मगर नुकसान कम ही किया। तो पावेल को पकड़ ले गये! डायरेक्टर ने इशारा किया, पुलिस ने सिर हिलाया और – एक आदमी और चला गया। अच्छी मिलीभगत है। एक सींग पकड़ता है और दूसरा एक-एक बूँद दूध निचोड़ लेता है..."

"तुम लोगों को पावेल की तरफ़ से आवाज़ चाहिए!" माँ ने अपनी जगह से उठते हुए ऊँचे स्वर में कहा। "उसने जो कुछ किया वह सबके लिए किया!"

"किसे आवाज़ उठानी चाहिए?"

"सबको!"

"हुँ! तो तुम्हारा यह ख़याल है! मगर यह कभी नहीं होने का।

वह हँसता हुआ बाहर चला गया और उसके निराशाजनक शब्दों ने माँ को पहले से भी ज़्यादा दुखी कर दिया।

"अगर उन्होंने उसे मारा-पीटा तो क्या होगा?.."

वह कल्पना करने लगी कि उसके बेटे को बहुत मारा गया है और उसके शरीर पर बहुत से घाव हैं और वह ख़ून में लथपथ है। माँ के हृदय में भय समा गया। उसकी आँखों में पीड़ा होने लगी।

उस दिन उसने न चूल्हा जलाया न खाना पकाया; चाय तक नहीं पी। रात को बहुत देर से उसने रोटी का एक टुकड़ा खाया। जब वह सोने के लिए लेटी तो उसे ऐसा लगा कि उसके जीवन में कभी इतना सूनापन और अकेलापन नहीं था। पिछले कुछ वर्षों में वह निरन्तर किसी बहुत ही अच्छी महत्त्वपूर्ण बात की आशा में अपना जीवन बिताने की आदी हो चुकी थी। उसके चारों तरफ़ नौजवान लोगों की उल्लासपूर्ण और कोलाहलमय सरगर्मियाँ और उसके बेटे का लगन से भरा हुआ चेहरा, जो इस अच्छे पर संकटमय जीवन के लिए जिम्मेदार था, हमेशा उसके सामने रहता था। अब उसके जाते ही जैसे हर चीज़ चली गयी थी।

14

एक दिन बीता; पहाड़ जैसी एक और रात बीती। माँ को रात भर नींद न आयी; लेकिन उसके बाद जो दिन आया वह और भी धीरे-धीरे बीता। वह सोच रही थी कि कोई आयेगा पर कोई नहीं आया। संध्या आयी। रात हो गयी। वर्षा

की ठण्डी बौछारें आहें भरकर दीवार से अपना सिर टकरा रही थीं; तेज़ हवा सीटी बजाती हुई चिमनी में होकर अन्दर आ रही थी और ऐसा मालूम हो रहा था कि जैसे फ़र्श के नीचे कोई चीज़ करवटें बदल रही है। छत से पानी टपक रहा था और बूँदें टपकने की आवाज़ एक विचित्र सामंजस्य के साथ घड़ी की टिक-टिक में विलीन हुई जा रही थी। ऐसा लगता था कि पूरा घर धीरे-धीरे डगमगा रहा है; व्यथा के कारण हर वस्तु निष्प्राण और व्यर्थ प्रतीत हो रही थी. ..

खिड़की पर किसी के खटखटाने की आवाज़ आयी। कुछ देर रुककर फिर वहीं आवाज़ आयी... माँ इन खटखटाहटों की आदी हो चुकी थी; उसे उनसे बिल्कुल भी डर नहीं लगता था, पर इस बार तो वह किंचित हर्ष से चौंक पड़ी। अस्पष्ट आशाओं के उत्साह में वह जल्दी से उठ खड़ी हुई कन्धों पर एक शाल डालकर उसने जाकर दरवाज़ा खोला...

समोइलोव अन्दर आया। उसके पीछे एक और आदमी था जिसका चेहरा कोट के उठे हुए कालर और माथे पर झुकी हुई टोपी की आड़ में छुपा हुआ था।

"सो तो नहीं रही थीं आप?" समोइलोव ने पूछा। इस प्रश्न के अतिरिक्त उसने और कोई अभिवादन का शब्द न कहा। सदैव के विपरीत उसके स्वर में चिन्ता और उदासी थी।

"नहीं, सोयी नहीं थी!" माँ ने उत्तर दिया और उत्सुकता से खड़ी उन्हें देखती रही।

समोइलोव के साथी ने टोपी उतारकर अपना छोटा-सा गठीला हाथ आगे बढ़ा दिया। उसकी साँस में खरखराहट थी।

"क्यों माँ, हमें पहचाना नहीं?" उसने ऐसे पूछा मानो बहुत पुराना मित्र हो।

"अरे, तुम हो?" पेलागेया निलोवना ने ख़ुश होकर कहा। "येगोर इवानोविच?"

"हाँ, हाँ, वही!" उसने पादरी जैसे लम्बे बालोंवाला अपना बड़ा-सा सिर झुकाकर उत्तर दिया। उसके चेहरे पर एक मुस्कराहट खेल रही थी और माँ को देखकर उसकी छोटी-छोटी भूरी आँखों में प्यार की एक चमक आ गयी। वह देखने में बिल्कुल समोवार लगता था - गोल-मटोल, छोटा-सा, मोटी-सी गर्दन और छोटी-छोटी बाँहें। उसका चेहरा चमक रहा था और वह ज़ोर-ज़ोर से साँसें ले रहा था। उसके सीने की गहराई में कोई चीज़ खरखराहट पैदा कर रही थी।

"तुम ज़रा उस कमरे में चले जाओ, मैं कपड़े पहन लूँ," माँ ने कहा।

"हमें तुमसे कुछ पूछना है," समोइलोव ने नज़रें झुकाकर माँ की तरफ़ देखते हुए उत्सुकता से कहा।

येगोर इवानोविच दूसरे कमरे में जाकर वहाँ से बोलने लगा।

"अम्मा, आज सुबह निकोलाई इवानोविच, जिससे आप परिचित हैं, जेल से छोड़ दिया गया..." उसने कहना आरम्भ किया।

"अच्छा, मुझे नहीं मालूम था कि वह जेल में था," माँ बीच में बोल उठी।

"दो महीने ग्यारह दिन जेल में रहा। वहाँ उक्रइनी से उसकी मुलाक़ात हुई थी, उसने सलाम कहलाया है और पावेल ने भी। और उसने कहलाया है कि आप चिन्ता न करें। उसने कहा है कि आप इस बात को जान लें कि उसके रास्ते पर चलनेवालों के लिए जेल हमेशा ही आराम करने की जगह होती है। हमारे हाकिमों ने बहुत सोच-समझकर इस बात का इन्तज़ाम किया है। अच्छा, अम्मा, अब मैं काम की बात करूँगा। मालूम है कल कितने लोग पकड़े गये थे?"

"क्यों, क्या पावेल के अलावा भी कोई पकड़ा गया था?" माँ ने आश्चर्य से पूछा।

"वह उनचासवाँ आदमी था," येगोर इवानोविच ने शान्त भाव से कहा। "और कारख़ाने के मालिक शायद एक दर्जन आदमियों को और पकड़वाने के फेर में हैं। जैसे, यही महानुभाव जो तुम्हारे सामने हैं..."

"हाँ, मैं भी!" समोइलोव ने मुँह लटकाकर कहा।

न जाने क्यों पेलागेया निलोवना को ऐसा लगा कि उसे साँस लेने में अब अधिक सुविधा हो रही है।

"कम से कम वह वहाँ अकेला तो नहीं है," उसके मस्तिष्क में यह विचार बिजली की तरह कौंध गया।

कपड़े पहनकर वह अपने अतिथियों के पास आयी और उनकी तरफ़ देखकर प्रसन्नता से मुस्करायी।

"मैं समझती हूँ कि जब इतने लोगों को पकड़कर ले गये हैं तो ज़्यादा दिन नहीं रखेंगे..."

"सो तो नहीं रखेंगे!" येगोर इवानोविच ने कहा। "और अगर हम उनका यह बना-बनाया खेल बिगाड़ दें तब तो वे दुम दबाकर भाग खड़े होंगे। देखो बात यह है : अगर हमने फ़ैक्टरी में पर्चे बाँटने बन्द कर दिये तो पुलिसवाले इस बात का फ़ायदा उठायेंगे और पावेल तथा दूसरे उन भले साथियों के ख़िलाफ़ इस्तेमाल करेंगे, जो इस वक़्त जेल की यातना झेल रहे हैं..."

"वह कैसे?" माँ ने भयभीत होकर पूछा।

"बहुत सीधी बात है यह तो!" येगोर इवानोविच ने शान्त भाव से उत्तर दिया। "कभी-कभी पुलिसवाले भी अपनी अक्ल से काम लेते हैं। आप ख़ुद ही ग़ौर करें : पावेल जब बाहर था तब अखबार और परचे बँटते थे; पावेल जेल चला गया – अखबार और पर्चे बँटना बन्द हो गये। बस, इसका साफ़ मतलब यह है

कि अखबार और पर्चे वही बँटवाता था, है कि नहीं? और बस वे सभी को खाना शुरू कर देंगे। पुलिसवालों को यही मजा आता है कि वे लोगों को पूरी तरह नोच खायें, हड्डियाँ तक बाक़ी न बचें!"

"मैं समझ रही हूँ, समझ रही हूँ!" माँ ने उदास स्वर में कहा। मगर बेटा, हम कर ही क्या सकते हैं?"

"सत्यानाश हो उनका! उन्होंने लगभग सभी लोगों को पकड़ लिया है!.." रसोई से समोइलोव की आवाज़ आयी। "अब हमें केवल अपने लक्ष्य के लिए ही नहीं बल्कि अपने साथियों को बचाने के लिए भी अपना काम करते रहना है।"

"और हमारे पास काम करने वाला कोई है नहीं," येगोर ने हल्के से मुस्कराकर कहा। "हमारे पास बहुत-सा बढ़िया मसाला छपा रखा है, सब मेरे हाथ की करामात है, मगर अब उसे फ़ैक्टरी में कैसे पहुँचाया जाये, बस यही समझ में नहीं आता।"

"अब वे फाटक पर हर एक की तलाशी लेने लगे हैं," समाइलोव ने कहा।

माँ ताड़ गयी कि वे उससे कुछ आशा कर रहे हैं।

"यह कैसे किया जा सकता है?" उसने जल्दी से पूछा।

समोइलोव दरवाज़े में आकर खड़ा हो गया :

"पेलागेया निलोवना, आप उस खोमचेवाली कोरसुनोवा को जानती हैं?"

"हाँ, क्यों?"

"उससे बात करके देखिये। शायद वह यह चीज़ें अन्दर पहुँचा दे?"

माँ ने हाथ हिलाकर इस तरकीब को रद्द कर दिया।

"अरे नहीं! उसके पेट में कोई बात नहीं पचती! उन्हें फ़ौरन मालूम हो जायेगा कि उसे वे चीज़ें मुझसे मिली थीं - इस घर से आयी थीं - अरे नहीं!"

फिर सहसा मानो किसी प्रेरणा के वश उसने कहा :

"तुम मुझे दे दो! मैं सब ठीक कर दूँगी। मैं कोई तरकीब निकाल लूँगी। मैं मारिया से कहूँगी कि वह मुझे हाथ बँटाने के लिए अपने साथ ले ले। मुझे किसी न किसी तरह पेट तो पालना है ही। मैं फ़ैक्टरी में खाने की चीज़ें बेचने ले जाया करूँगी! मैं सब कर लूँगी!"

अपने सीने पर दोनों हाथ रखकर उसने जल्दी-जल्दी उन्हें विश्वास दिलाया कि वह सब कुछ बड़े अच्छे ढंग से निबटा देगी, किसी का ध्यान भी उसकी ओर न जायेगा और अन्त में उसने भावातिरेक से कहा :

"वे लोग भी देखेंगे कि पावेल के हाथ जेल से बाहर भी पहुँच सकते हैं! हम उन्हें दिखा देंगे!"

तीनों के चेहरे चमक उठे।

"माँ, यह तो कमाल ही कर दिया आपने! काश आप जानतीं कि क्या बढ़िया बात सूझी है आपको! बस, मजा ही आ गया!" येगोर इवानोविच ने अपने दोनों हाथ रगड़ते हुए मुस्कराकर कहा।

"अगर यह तरकीब काम कर गयी, तो मैं तो बहुत ही ख़ुशी से जेल में जा बैठूँगा!" समोइलोव ने भी अपने हाथ रगड़ते हुए कहा।

"अम्मा, कोई जवाब नहीं है आपका इस दुनिया में!" येगोर इवानोविच ने भर्रायी हुई आवाज़ में चिल्लाकर कहा।

माँ मुस्करा दी। वह इस बात को अच्छी तरह समझ गयी थी कि अगर पर्चे फ़ैक्टरी में बँटते रहे तो मालिक उसके बेटे पर उनको बँटवाने का दोष नहीं लगा पायेंगे। उसने अनुभव किया कि वह इस काम को पूरा करने की क्षमता रखती है और उसका रोम-रोम हर्ष से पुलकित हो उठा।

"जब जेल में पावेल से तुम्हारी मुलाक़ात हो तो उससे कहना कि उसकी माँ बहुत ही अच्छी है," येगोर इवानोविच बोला।

"मेरी मुलाक़ात पहले होगी," समोइलोव ने हँसकर कहा।

"उससे कह देना कि जो कुछ भी करना होगा मैं करूँगी! उसे यह बता देना!"

"और अगर उन्होंने समोइलोव को जेल न भेजा तो?" येगोर इवानोविच ने पूछा।

"तो फिर क्या हो सकता है!" माँ बोली।

वे दोनों हँस पड़े और माँ भी कुछ शरमाकर, कुछ झेंपते हुए हँसने लगी।

"दूसरों के दुख को अपना दुख समझना बहुत कठिन होता है," उसने आँखें झुकाकर कहा।

"यह स्वाभाविक ही है," येगोर ने कहा। "और आप पावेल की चिन्ता न कीजियेगा, दुखी न होइयेगा। पावेल जेल से और अच्छा होकर आयेगा। वहाँ आदमी को आराम करने और पढ़ने का मौक़ा मिलता है और हमारे जैसे लोग जब तक बाहर रहते हैं तब तक उन्हें दोनों में से किसी भी बात का मौक़ा नहीं मिलता। मैं तीन बार जेल हो आया हूँ, और मैं यह तो नहीं कह सकता कि वहाँ जाकर मुझे बड़ी ख़ुशी होती थी पर तीनों ही बार मेरे दिल और दिमाग को बड़ा फ़ायदा पहुँचा।"

"तुम्हें साँस लेने में बड़ी तकलीफ होती है," माँ ने उसके सीधे-सादे चेहरे पर मित्रतापूर्ण दृष्टि डालते हुए कहा।

"उसकी भी एक ख़ास वजह है!" येगोर ने उँगली उठाकर उत्तर दिया।

"अच्छा, माँ, तो मैं समझता हूँ कि सब कुछ तय हो गया? कल हम पर्चे लाकर तुम्हें दे जायेंगे और एक बार फिर गाड़ी चल पड़ेगी, और बहुत दिनों से छाया हुआ अन्धकार छँटने लगेगा। भाषण की आजादी की जय हो और माँ के हृदय की जय हो! अच्छा, फिर मिलेंगे!"

"अच्छा तो चलते हैं," समोइलोव ने माँ से हाथ मिलाते हुए कहा। "मैं अपनी माँ से कभी यह करने को नहीं कह सकता था।"

"एक न एक दिन सब माँएँ इस बात को समझ जायेंगी," पेलागेया निलोवना ने उसका उत्साह बढ़ाने के लिए कहा।

उन लोगों के चले जाने के बाद माँ ने दरवाज़ा बन्द किया और कमरे के बीच में घुटने टेककर प्रार्थना करने बैठ गयी। बाहर बारिश हो रही थी। उसकी प्रार्थना में शब्द न थे। वह तो केवल उन लोगों की चिन्ता कर रही थी जिन्हें पावेल उसके जीवन में ले आया था। ऐसा मालूम होता था कि उसके और देव-प्रतिमाओं के बीच ये लोग चल-फिर रहे थे - ये सीधे-सादे लोग जो एक-दूसरे से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हुए भी बिल्कुल अकेले थे।

बहुत सबेरे वह मारिया कोरसुनोवा से मिलने गयी।

खोमचेवाली ने, जो हमेशा की तरह सिर से पाँव तक तेल में चुपड़ी हुई थी और जिसकी जबान कैंची की तरह चल रही थी, बड़ी सहानुभूति के साथ माँ का स्वागत किया।

"उदास हो?" उसने अपने चिकने मोटे हाथ से माँ के कन्धे पर एक धप मारते हुए पूछा। "हिम्मत न हारो! वे लोग उसे पकड़कर ले गये क्या? तो इसमें क्या हुआ? यह कोई लज्जा की बात नहीं है। एक ज़माने में लोग चोरी करने पर जेल में बन्द किये जाते थे, अब हक के लिए लड़नेवालों को जेल में बन्द कर दिया जाता है। शायद पावेल ने बस उतना ही नहीं कहा जितना उसे कहना चाहिए था, मगर उसने जो कुछ किया वह सब की भलाई के लिए था, और सब लोग इस बात को जानते हैं, तुम चिन्ता न करो! वे लोग इस बात को न भी मानें पर भले-बुरे की पहचान तो सभी को होती है। मैं तो ख़ुद तुमसे मिलने आना चाहती थी पर फुरसत ही नहीं मिली। दिन भर पकाना और बेचना, मगर देख लेना - मैं मरूँगी भिखारियों की तरह! मेरे चाहने वाले मुझे खाये जाते हैं - इसी का तो रोना है! कोई इधर नोचता है, कोई उधर नोचता है, जैसे चूहे रोटी को कुतरते हैं। जहाँ मैंने थोड़ा-बहुत पैसा बचाया कोई हरामी आकर छीन ले जाता है। औरत होना भी एक मुसीबत है! सब से गयी-बीती है वह इस धरती पर! अकेली रहे - तो बुरी, मरद करे - तो मरी!"

"मैं तुमसे कहने आयी थी कि मुझे भी अपने साथ काम करने के लिए लगा लो," पेलागेया निलोवना ने उसकी बक-बक को बीच में ही काटकर कहा।

"क्या मतलब?" मारिया ने पूछा। जब पेलागेया ने समझाया तो मारिया ने सिर हिलाया।

"ज़रूर!" मारिया ने कहा। "याद है, तुम मुझे मेरे मरद से बचाने के लिए अपने यहाँ छिपा लिया करती थीं? अब मैं तुम्हें भूख से बचाऊँगी... तुम्हारी मदद तो सबको करना चाहिए क्योंकि तुम्हारा बेटा सब की भलाई की खातिर लड़ता हुआ पकड़ा गया है। वह बहुत अच्छा है, सब लोग यही कहते हैं, और उन्हें उसके पकड़े जाने का बड़ा दुख है। विश्वास जानो, इन गिर"तारियों से मालिकों को कोई फ़ायदा होने वाला नहीं। देखो, फैक्टरी में क्या हो रहा है। बहन, बड़ा बुरा हाल है! ये मालिक समझते हैं कि अगर वे किसी की एड़ी पर काट लेंगे तो वह भागना छोड़ देगा। मगर होता यह है कि वे एक दर्जन लोगों को मारते हैं और सैकड़ों लोग उन पर झपट पड़ते हैं!"

इस वार्तालाप के फलस्वरूप दूसरे दिन दोपहर को माँ मारिया के खाने की दो टोकरियाँ लिए हुए फ़ैक्टरी गयी और वह खोमचेवाली ख़ुद बाज़ार में सौदा-सुलफ लेने चली गयी।

15

मज़दूरों ने नयी खोमचेवाली को फ़ौरन पहचान लिया।

"पेलागेया भी इस काम में शामिल हो गयीं?" वे पूछते और प्रशंसा के भाव से सिर हिलाते।

उनमें से कुछ उसे यह भी दिलासा देते कि पावेल जल्दी ही जेल से छूट जायेगा। कुछ मज़दूर डायरेक्टर को और पुलिसवालों को बुरी-बुरी गालियाँ देते और माँ को अपने हृदय में इनकी प्रतिध्वनि मिलती। कुछ लोग ऐसे भी थे जो उसे इस दुर्दशा में देखकर मन ही मन ख़ुश होते और कारख़ाने के टाइम-कीपर इसाई गोरबोव ने तो दाँत पीसकर यहाँ तक कहा कि "अगर मैं गवर्नर होता तो तुम्हारे बेटे को फाँसी पर चढ़वा देता! लोगों को उल्टी पट्टी पढ़ाने चला था!"

इस भयानक धमकी को सुनकर माँ का दम सूख गया। उसने इसाई की बात का कोई उत्तर नहीं दिया, उसने केवल उसके छोटे-से धब्बेदार चेहरे को एक नज़र घूरकर देखा और आह भरकर आँखें झुका लीं।

फ़ैक्टरी में असन्तोष फैला हुआ था। मज़दूर छोटे-छोटे गिरोहों में जमा होकर आपस में कानाफूसी करते। फोरमैन लोग हर बात की टोह लेने के फेर में इधर-उधर परेशान घूमते रहते। चारों तरफ़ गालियाँ और तिरस्कारपूर्ण हँसी सुनायी

देती।

दो पुलिसवाले समोइलोव को उसके सामने से लेकर गुजरे, वह एक हाथ जेब में डाले हुए चल रहा था और दूसरे से अपने लाल बालों को पीछे कर रहा था।

उसके पीछे लगभग सौ मज़दूर चले आ रहे थे और चिल्ला–चिल्लाकर पुलिसवालों को गालियाँ दे रहे थे और उनका मज़ाक़ उड़ा रहे थे...

"समोइलोव, हवा खाने जा रहे हो?" किसी ने चिल्लाकर कहा।

"आजकल हम लोगों की बड़ी इज्जत हो रही है!" किसी दूसरे ने कहा। "जब हम टहलने निकलते हैं तो हमारे साथ एक–दो सन्तरी कर दिये जाते हैं..." और मोटी–सी गाली दी।

"मालूम होता है कि अब चोरों को पकड़ने में कोई फ़ायदा नहीं रहा," एक लम्बे कदवाले काने मज़दूर ने आवाज़ कसी। "इसलिए अब ईमानदार लोगों को पकड़ने लगे हैं...."

"अरे, इनमें इतनी भलमनसाहत भी नहीं कि रात को गिरफ़्तार किया करें," भीड़ में से एक आवाज़ आयी। "ये हरामी तो दिन–दहाड़े यह अँधेर करते हैं!"

पुलिसवालों की त्योरियों पर बल पड़ गये और वे तेज़ी से चलने लगे, वे कोशिश कर रहे थे कि किसी बात की ओर ध्यान ही न दें और ऐसा जता रहे थे मानो उन्हें जो गालियाँ दी जा रही थीं उन्हें सुन ही न रहे हों। तीन मज़दूर लोहे का एक बड़ा सा लट्ठा लिये हुए उनके सामने आ निकले।

"अरे चिड़ीमारो, रास्ता तो दो!" उन्होंने चिल्लाकर कहा।

माँ के पास से होकर गुजरते समय समोइलोव ने सिर हिलाकर उसे सलाम किया।

"हम भी चल दिये!" उसने खीसें निकालकर कहा।

माँ ने चुपचाप झुककर उसके अभिवादन का उत्तर दिया। इन ईमानदार और समझदार नौजवानों की उसके हृदय पर बहुत गहरी छाप पड़ी थी जो जेल जाते हुए भी मुस्कराते रहते थे। माँ का हृदय एक माता के प्यार और ममता से भर उठा।

फ़ैक्टरी से वापस आकर उसने सारा दिन मारिया के साथ बिताया; वह काम में उसका हाथ बँटाती रही और उसकी बेसिर–पैर की बातें सुनती रही। उस दिन शाम को वह बहुत देर में घर लौटी जो बिल्कुल नीरस, एकान्त और निराशापूर्ण था। बड़ी देर तक वह निरुद्देश्य इधर–उधर टहलती रही, उसके मन में शान्ति नहीं थी और उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे। उसे चिन्ता भी हो रही थी क्योंकि रात होने आयी थी और येगोर इवानोविच अभी तक अपने वादे के अनुसार छपे हुए पर्चे और अखबार लेकर नहीं आया था।

शरद ऋतु की हिम के भारी–भारी सुरमई गाले पृथ्वी पर गिर रहे थे। वे बड़ी कोमलता के साथ खिड़कियों के शीशों पर चिपक जाते थे और फिर धीरे–धीरे पिघलकर नीचे फिसल जाते थे और अपना चिन्ह छोड़ जाते थे। वह अपने बेटे के बारे में सोचती रही...

दरवाज़े को किसी ने बड़ी सावधानी से खटखटाया। माँ ने जल्दी से दौड़कर कुण्डा खोल दिया। साशा अन्दर आयी। माँ ने बहुत दिन से उसे नहीं देखा था और पहली बात जिस पर उसका ध्यान गया यह थी कि वह ज़रूरत से ज़्यादा मोटी लग रही थी।

"सलाम," माँ ने कहा। उसे इस बात की ख़ुशी थी कि कोई तो आया और अब कम से कम कुछ रात उसे अकेले नहीं बितानी पड़ेगी। "मैंने बहुत दिन से तुम्हें देखा नहीं। कहीं बाहर गयी हुई थीं?"

"नहीं, मैं जेल में थी!" लड़की ने मुस्कराकर उत्तर दिया। "निकोलाई इवानोविच के साथ। याद है उसकी?"

"हाँ, हाँ!" माँ ने पुलकित स्वर में कहा। "येगोर इवानोविच ने कल मुझे बताया था कि उसे छोड़ दिया गया है, लेकिन तुम्हारा मुझे पता नहीं था... मुझे किसी ने बताया भी नहीं कि तुम कहाँ थीं..."

"कोई बात नहीं है। यह लो, येगोर इवानोविच के आने से पहले मुझे कपड़े भी बदल लेने हैं," उसने इधर–उधर नज़र डालते हुए कहा।

"तुम बिल्कुल भीग गयी हो..."

"मैं अखबार और पर्चे लेकर आयी थी..."

"लाओ, लाओ, मुझे दे दो!" माँ ने बड़ी उत्सुकता से कहा।

लड़की ने कोट के बटन खोलकर अपने शरीर को झटका और पर्चे इस तरह नीचे गिरने लगे जैसे पतझड़ में पेड़ों से पत्ते गिरते हैं। माँ उन्हें बटोरते हुए हँस पड़ी।

"मैंने जब तुम्हें देखा तो सोच में पड़ गयी कि आख़िर तुम इतनी मोटी कैसे हो गयीं... मैंने समझा शायद तुम्हारा ब्याह हो गया है और तुम पेट से हो। अरे वाह! कितने बहुत से पर्चे ले आयीं तुम। तुम पैदल तो नहीं आयी हो न?"

"नहीं, पैदल ही आयी हूँ," साशा ने उत्तर दिया। वह फिर पहले की ही तरह लम्बी और दुबली–पतली लगने लगी थी। माँ ने देखा कि उसका चेहरा बहुत उतरा हुआ था, जिसके कारण उसकी आँखें हमेशा से ज़्यादा बड़ी दिखायी देने लगी थीं और आँखों के नीचे काले घेरे पड़ गये थे।

"आख़िर तुम यह क्यों करती हो? जेल से छूटने के बाद तो तुम्हें आराम करना चाहिए!" माँ ने आह भरकर सिर हिलाते हुए कहा।

"करना ही पड़ता है," काँपते हुए लड़की ने कहा। "अच्छा मुझे पावेल मिख़ाइलोविच के बारे में बताओ – जब वह पकड़ा गया था तब क्या वह बहुत परेशान था?"

यह प्रश्न पूछते समय साशा ने माँ की तरफ़ नहीं देखा, वह सिर झुकाये काँपती हुई उँगलियों से अपने बाल ठीक करती रही।

"ज़्यादा परेशान तो नहीं था," माँ ने उत्तर दिया। "अपने दिल की हालत वह ज़ाहिर थोड़े ही होने देगा।"

"उसका जी तो अच्छा है?" लड़की ने नरमी से पूछा।

"इतनी उमर हुई कभी बीमार तो पड़ा नहीं," माँ ने उत्तर दिया। "मगर तुम तो बुरी तरह काँप रही हो! मैं अभी तुम्हारे लिए चाय और रसभरी का मुरब्बा लाये देती हूँ।"

"यह कर दो तो बड़ा अच्छा है। मगर बड़ा झँझट करना पड़ेगा – इतनी देर हो गयी है। मैं ख़ुद बना लूँगी..."

"इतना थकने के बाद?" माँ ने झिड़की के स्वर में कहा और समोवार में आग सुलगाने लगी। साशा भी रसोईघर में चली गयी और दोनों हाथ सिर के पीछे बाँधकर बेंच पर बैठ गयी।

"जेल आदमी को ढीला तो कर ही देती है," वह बोली। "उफ, वह मनहूस ख़ाली बैठै रहना, इससे बुरा और कुछ नहीं हो सकता! पिंजरे में जानवर की तरह बन्द रहना और मन ही मन कुढ़ते रहना कि बाहर कितना काम करने को पड़ा है!"

"इस सबका फल तुम्हें कौन देगा?" माँ ने पूछा और फिर आह भरकर स्वयं ही अपने प्रश्न को उत्तर दिया :

"ईश्वर के सिवा और कोई नही! लेकिन मेरा ख़याल है कि तुम तो उसमें भी विश्वास नहीं रखतीं?"

"नहीं!" लड़की ने सिर हिलाकर संक्षेप में उत्तर दिया।

"मगर मैं तुम्हारी बात पर विश्वास नहीं करती!" माँ ने आवेश में कहा और फिर अपने दामन से हाथों की कालिख पोंछते हुए वह दृढ़ विश्वास के साथ बोली, "तुम अपनी आस्था को भी नहीं समझतीं। अगर तुम्हें ईश्वर में विश्वास न होता तो तुम ऐसा जीवन कैसे बिता सकतीं?"

सहसा बरसाती में किसी के पैर पटकने और धीरे से बुड़बुड़ाने की आवाज़ आयी। माँ चौंक पड़ी और लड़की जल्दी से उछलकर खड़ी हो गयी।

"दरवाज़ा न खोलना," उसने चुपके से कहा। "अगर पुलिसवाले हों तो साफ़ कह देना कि तुम मुझे नहीं जानतीं! कह देना कि मैं अँधेरे में रास्ता भूल

गयी थी और तुम्हारे दरवाज़े पर बेहोश होकर गिर पड़ी थी। तुमने अन्दर लाकर जब मेरे कपड़े उतारे तो ये पर्चे मिले, समझीं?"

"हाय मेरी बच्ची! मैं यह क्यों कह दूँगी?" माँ ने बहुत व्यथित होकर पूछा।

"ज़रा ठहरो!" साशा ने दरवाज़े पर कान लगाकर कहा। "शायद येगोर हो..."

येगोर ही था; वह बिल्कुल भीगा हुआ था और थकान के कारण हाँफ रहा था।

"समोवार गरम है, यह बड़ा अच्छा है! अम्मा, समोवार को देखकर जितनी ख़ुशी होती है उतनी और किसी चीज़ को देखकर नहीं होती! अच्छा, साशा, तुम यहाँ पहले ही पहुँच गयीं?"

धीरे-धीरे अपना भारी कोट उतारते समय भी वह लगातार बोलता ही रहा। पूरे रसोईघर में उसके साँस लेने की खरखराहट सुनायी दे रही थी।

"अम्मा, हाकिमों को यह ज़रा-सी लड़की तो फूटी आँखों नहीं सुहाती! एक बार जब जेलर ने इसका अपमान किया था तो इसने भूख हड़ताल कर दी थी और उससे माफ़ी मँगवा कर ही हड़ताल ख़त्म की थी। आठ दिन तक इसने कुछ नहीं खाया, बस मरते-मरते बची। इसके बारे में क्या ख़याल है? क्या पेट है मेरा भी?"

वह अपनी हास्यास्पद तोंद थामे हुए दूसरे कमरे में चला गया; अपने पीछे दरवाज़ा बन्द करने के बाद भी वह लगातार बोलता ही रहा।

"सचमुच आठ दिन तक तुमने कुछ नहीं खाया था?" माँ ने आश्चर्य से पूछा।

"उससे माफ़ी मँगवाने के लिए मुझे कुछ तो करना ही था!" साशा ने उत्तर दिया; वह अभी तक ठण्ड से काँप रही थी। लड़की की इस कठोरता और उसके निश्चिन्त भाव में माँ को तिरस्कार का एक पुट मिला।

"क्या लड़की है!.." उसने सोचा और फिर ज़ोर से बोली, "अगर मर जातीं तो?"

"इसके सिवा कोई चारा ही नहीं था," लड़की ने नरमी से कहा। "मगर उसे माफ़ी माँगनी पड़ी। लोगों को इस तरह किसी की कमज़ोरी का फ़ायदा तो नहीं उठाने दिया जा सकता।"

"हूँ!..." माँ ने धीरे से कहा। "सब मरद यही करते हैं - ज़िन्दगी-भर हम औरतों की कमज़ोरी का फ़ायदा उठाते हैं..."

"लो, मैं तो अपना बोझ उतार आया," येगोर ने दरवाज़ा खोलते हुए कहा। "समोवार गरम हो गया? लाओ, मैं अन्दर पहुँचा दूँ..."

वह समोवार उठाकर दूसरे कमरे में ले जाते हुए बोला :

"मेरे पापा दिन-भर में कम से कम बीस गिलास चाय पीते थे, जिसकी बदौलत तिहत्तर बरस की उमर तक उन्होंने शान्ति के साथ स्वस्थ जीवन बिताया; उनका वजन तीन मन से भी ज़्यादा था और वह अपने मरने तक वोस्क्रेसेंस्कोये गाँव में नायब पादरी के पद पर काम करते रहे..."

"क्या तुम पादरी इवान के बेटे हो?" माँ ने चौंककर पूछा।

"जी हाँ। आप मेरे माननीय पिताजी को जानती थीं?"

"मेरा भी घर वोस्क्रेसेंस्कोये में ही था!.."

"मेरे गाँव में? किसकी बेटी हैं आप?"

"तुम्हारे ही पड़ोसी थे! सेरेगिन परिवार को जानते हो न?"

"आप लंगड़े निल की बेटी हैं? अरे, उन्हें तो मैं अच्छी तरह जानता हूँ। न जाने कितनी बार वह मेरे कान ऐंठ चुके हैं..."

वे दोनों एक-दूसरे के सामने खड़े हँस रहे थे और एक-दूसरे से हज़ारों प्रश्न कर रहे थे। चाय बनाते हुए साशा मुस्करा रही थी, गिलास की खनक सुनकर माँ सहसा किसी दूसरे जगत से फिर अपने जगत में लौट आयी।

"माफ़ करना, मैं तो सब भूल गयी थी! अपने गाँव के किसी आदमी से मिलकर कितनी ख़ुशी होती है!.."

"माफ़ी तो मुझे माँगना चाहिए कि मैंने बिना पूछे हर चीज़ ऐसे हथिया ली जैसे मेरा ही घर हो। लेकिन अब दस बज गये हैं और मुझे बहुत दूर जाना है।"

"तुम कहाँ जा रही हो? शहर?" माँ ने आश्चर्य से पूछा।

"हाँ।"

"लेकिन आख़िर क्यों? इतना अँधेरा है और पानी पड़ रहा है, फिर तुम थकी हुई भी हो! रात यहीं रह जाओ! येगोर इवानोविच रसोई में सो जायेगा और हम दोनों यहाँ सो जायेंगी..."

"नहीं, मुझे जाना ही पड़ेगा!" लड़की ने शान्त भाव से उत्तर दिया।

"माँ, परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि लड़की को जाना ही पड़ेगा। लोग यहाँ इसे जानते हैं और अगर कल दिन में यहाँ सड़क पर किसी ने देख लिया तो बुरा होगा।"

"लेकिन वह जायेगी कैसे? बिल्कुल अकेली?..."

"बिल्कुल अकेली," येगोर ने धीरे से हँसकर कहा।

लड़की ने अपने लिए गिलास में चाय बनायी, और रोटी के टुकड़े पर नमक छिड़ककर खाने लगी; वह विचारमग्न होकर माँ को कनखियों से देख रही थी।

"तुम और नताशा अकेले कैसे चली जाती हो? मैं तो कभी न जा पाऊँ! मुझे तो डर लगता है!" पेलागेया निलोवना ने कहा।

"डर तो इन्हें भी लगता है!" येगोर बोला। "क्यों, लगता है कि नहीं, साशा?"

"लगता क्यों नहीं है!" लड़की ने उत्तर दिया।

माँ ने कनखियों से उसे और येगोर को देखा।

"तुम लोग, तुम लोग भी कितने... कठोर हो!" वह बोली।

चाय पीकर साशा ने चुपचाप येगोर से हाथ मिलाया और रसोई में चली गयी। माँ भी उसके पीछे-पीछे गयी।

"अगर पावेल मिख़ाइलोविच से भेंट हो तो मेरा सलाम कहियेगा," साशा ने कहा। "भूलियेगा नहीं!"

दरवाज़े के कुण्डे पर हाथ रखकर वह सहसा पीछे मुड़कर बोली :

"माँ, तुम्हें चूम लूँ?"

माँ ने चुपचाप उसे सीने से लगा लिया और बड़ी ममता के साथ उसे चूमा।

"धन्यवाद!" लड़की ने सिर हिलाकर कहा और बाहर चली गयी।

कमरे में वापस आकर माँ ने बड़ी चिन्ता के साथ खिड़की के बाहर देखा। अन्धकार में बर्फ़ के नम गाले गिर रहे थे।

"प्रोज़ोरोव-परिवार की याद है?" येगोर ने पूछा।

वह टाँगें फैलाये बैठा बड़े ज़ोर से अपनी चाय फूँक-फूँककर पी रहा था। उसका लाल चेहरा पसीने से भीगा हुआ था और उस पर सन्तुष्टि का भाव था।

"हाँ, याद है!" माँ ने कुछ सोचते हुए कहा और मेज का सहारा लेकर बैठ गयी। वह बैठी हुई उदास नेत्रों से येगोर को देख रही थी।

"च:-च:! बेचारी साशा! वह शहर कैसे पहुँच पायेगी?"

"हाँ, थक जायेगी!" येगोर ने सहमति प्रकट की। "जेल में रहने से उसे कोई फ़ायदा नहीं हुआ। वह पहले ज़्यादा तन्दुरुस्त थी... एक बात और है, उसका लालन-पालन इस तरह हुआ है कि वह ज़्यादा कठोर जीवन नहीं बिता सकती. .. सुना है कि उसके दोनों फेफड़े ख़राब हो गये हैं।"

"वह है कौन?" माँ ने बड़े कोमल भाव से पूछा।

"ज़मींदार की बेटी है। उसका बाप बड़ा सूअर है, उसने ख़ुद ही यह बताया था। तुम्हें मालूम है, माँ, वे दोनों शादी करना चाहते हैं?"

"कौन?"

"वह और पावेल... लेकिन तुम तो जानती ही हो यह बननेवाली बात नहीं। जब वह बाहर होता है तो यह जेल में होती है और जब यह बाहर आती है तो

वह जेल चला जाता है!"

"मुझे पता नहीं था," माँ ने कुछ रुककर कहा। "पावेल अपने बारे में कभी बात ही नहीं करता..."

यह सुनकर माँ को उस लड़की पर और भी तरस आने लगा और वह अनायास ही अपने अतिथि पर बरस पड़ी :

"तुम उसे घर तक क्यों नहीं पहुँचा आये?" माँ ने कहा।

"ऐसा करना ठीक नहीं था!" उसने धीरे से उत्तर दिया। "मुझे यहाँ बस्ती में बहुत–सा काम करना है – मुझे सबेरे ही उठकर इधर–उधर भागना–दौड़ना है और मेरे जैसे आदमी के लिए, जिसका दम हर वक़्त फूलता रहता है यह कोई आसान काम नहीं है..."

"अच्छी लड़की है," माँ ने कहा। उसके विचार अभी तक उसी बात में उलझे हुए थे जो येगोर ने उसे अभी बतायी थी। वह यह सोचकर दुखी हो रही थी कि यह बात उसे अपने बेटे से न मालूम होकर एक अजनबी से मालूम हुई थी, इसलिए उसकी त्योरियों पर बल आ गये और वह अपने होंठ काटने लगी।

"सो तो है!" येगोर ने सहमति में सिर हिलाया। "मैं जानता हूँ कि तुम्हें उस पर बड़ा तरस आ रहा है। पर इससे कोई फ़ायदा नहीं! अगर तुम हम सब विद्रोहियों के लिए दुखी होने लगीं तो तुम्हारा दिल किसी दिन जवाब दे जायेगा। सच पूछो तो हममें से किसी का भी जीवन आराम का जीवन नहीं है। हमारा एक साथी अभी निर्वासन काटकर लौटा है। जिस समय वह निज्नी–नोवगोरोद पहुँचा उस समय उसकी बीवी और बच्चा स्मोलेंस्क में उसकी राह देख रहे थे, मगर जब वह स्मोलेंस्क पहुँचा उस समय तक वे मास्को की जेल में बन्द किये जा चुके थे। अब उसकी बीवी की साइबेरिया जाने की बारी है। मेरी भी बीवी थी – बहुत ही अच्छी औरत थी। पाँच साल तक ऐसी ज़िन्दगी बिताने के बाद उसने क़ब्र की राह ली..."

एक घूँट में चाय ख़त्म करके वह अपनी रामकहानी सुनाता रहा। उसने जेलों में और निर्वासन में जो वर्ष बिताये थे उसके बारे में माँ को बताया। उसने माँ को अपनी विभिन्न विपदाओं के बारे में, जेलों में पीटे जाने और साइबेरिया में भूखों मरने के बारे में बताया। माँ उसे ध्यान से देख रही थी और जिस शान्त सरल भाव से वह अपने विपदाओं और यातनाओं से परिपूर्ण जीवन की कहानी का वर्णन कर रहा था उस पर माँ को आश्चर्य हो रहा था...

"लेकिन अब कुछ काम की भी बातें करें!"

उसका स्वर बदल गया और उसकी मुद्रा अधिक गम्भीर हो गयी। वह माँ से पूछने लगा कि उसने फ़ैक्टरी में पर्चे वग़ैरह ले जाने के लिए क्या तरकीब

सोची है और माँ को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि उसे छोटी से छोटी बात के बारे में भी कितनी जानकारी थी।

जब इस विषय पर कोई बात करने को नहीं रह गयी तो वे फिर अपने गाँव के बारे में बातें करने लगे। येगोर तो हँसी–मज़ाक़ कर रहा था पर माँ विचारों में खोयी हुई अतीत में विचर रही थी और उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि उसके पिछले जीवन और उस दलदल में एक विचित्र समानता थी जहाँ छोटे–छोटे फर वृक्ष और सफ़ेद वृक्ष और काँपते हुए एस्पेन वृक्ष उगे हुए थे। बर्च वृक्ष धीरे–धीरे बढ़ते थे और पाँच साल बाद उस गन्दी मिट्टी में पनपने के बाद गिरकर सड़ जाते थे। उसने अपनी कल्पना में यह चित्र देखा और उसके हृदय में करुणा का सागर उमड़ आया। इसके बाद उसने अपनी कल्पना में एक नौजवान लड़की की आकृति देखी, जिसकी मुद्रा अत्यन्त कठोर थी। बर्फ़ के भीगे–भीगे गाले गिर रहे थे और वह थकी हुई अकेली बढ़ती जा रही थी... और माँ का बेटा जेल में था। कौन जाने वह सोया न हो और लेटे–लेटे कुछ सोच रहा हो... लेकिन उसके बारे में नहीं, अपनी माँ के बारे में नहीं। अब कोई और भी था जो उसे माँ से भी ज़्यादा प्रिय था। कष्टदायक विचार बिखरे हुए बादलों की तरह आये और उसकी आत्मा पर अन्धकार बनकर छा गये...

"माँ, तुम थक गयी हो! जाओ, अब सो जाओ," येगोर ने मुस्कराकर कहा।

उसने येगोर से रात–भर के लिए विदा ली और चुपचाप रसोई में चली गयी। उसका हृदय तीव्र कटुता से भरा हुआ था।

दूसरे दिन सुबह नाश्ता करते समय येगोर ने पूछा :

"अगर उन लोगों ने तुम्हें पकड़ लिया और पूछा कि नास्तिकता का प्रचार करने वाले ये पर्चे तुम्हें कहाँ से मिले तो तुम क्या कहोगी?"

"मैं कह दूँगी 'कहीं से मिले तुम्हें क्या?' " माँ ने उत्तर दिया।

"वे तुम्हारी इस बात को मानेंगे नहीं," येगोर ने आपत्ति की। "वे अच्छी तरह जानते हैं कि उनका इस बात से बहुत गहरा सम्बन्ध है। वे इतनी आसानी से तुम्हारा पीछा नहीं छोड़ेंगे और लगातार तुमसे पूछते ही रहेंगे।"

"मगर मैं उन्हें बताऊँगी ही नहीं!"

"वे तुम्हें जेल में डाल देंगे!"

"तो क्या हुआ! ईश्वर की कृपा से मैं कम से कम इसके योग्य तो हूँ!" माँ ने आह भरकर उत्तर दिया। "मेरी किसे ज़रूरत है? किसी को भी नहीं। और मैंने सुना है कि वे मार–पीट नहीं करेगे..."

"हुँ!" येगोर ने माँ की ओर ध्यान से देखते हुए कहा। "नहीं, मारे–पीटेंगे तो नहीं। मगर भले लोगों को ख़ुद ही उनसे बचकर रहना चाहिए।"

"तुमसे तो यह सीखना मुमकिन नहीं!" माँ ने धीरे से मुस्कराकर कहा।

येगोर बिना कोई उत्तर दिये कमरे में टहलने लगा। कुछ देर बाद वह माँ के पास आकर बोला :

"माँ, बड़ा कठिन है यह! मैं जानता हूँ कि तुम्हें कितना दुख होता है!"

"दुख किसे नहीं होता?" माँ ने हाथ हिलाकर कहा। "मुमकिन है जो लोग इन बातों को समझते हैं उन्हें इतना कष्ट न होता हो। लेकिन धीरे-धीरे मैं भी समझने लगी हूँ कि भले लोग क्या करने का प्रयत्न कर रहे हैं..."

"माँ अगर तुम इतना समझती हो तो तुम्हारी ज़रूरत सबको है – सबको!" उसने बड़े निष्कपट भाव से कहा।

माँ कनखियों से उसकी तरफ़ देखकर मुस्करा दी।

दोपहर को वह फ़ैक्टरी जाने को तैयार हुई उसने पर्चे अपने कपड़ों में इतनी अच्छी तरह छुपा लिये थे कि उसे देखकर येगोर ने सन्तोष के भाव से चटकारी ली।

"जेर गुत!" – जैसेकि सभी शरीफ़ जर्मन बीयर की एक बड़ी बाल्टी ख़ाली करने के बाद कहते हैं। पर्चों की वजह से तुम बिल्कुल भी नहीं बदली हो, माँ – तुम वही पहले जैसी नेक अधेड़ उम्र की औरत मालूम होती हो, लम्बी और कुछ थोड़ी-सी मोटी। मेरी कामना है कि तुमने जिस काम में हाथ लगाया है उसमे सभी देवी-देवताओं की कृपादृष्टि तुम्हारे साथ हो!..."

आधे घण्टे बाद वह शान्त भाव से और दृढ़ विश्वास के साथ फ़ैक्टरी के फाटक पर खड़ी हुई थी; वह अपनी टोकरियों के बोझ से दबी जा रही थी। दो सन्तरी बड़ी सख़्ती से यार्ड में जाने वाले हर व्यक्ति की तलाशी ले रहे थे और जवाब में वे लोग, जिनकी तलाशी ली जाती थी, उन्हें गालियाँ देते थे और दूसरे मज़दूर उन पर फब्तियाँ कसते। एक तरफ़ एक पुलिसवाला और एक दूसरा लम्बी टाँगोंवाला आदमी खड़ा था, जिसका चेहरा लाला था और आँखें तीर की तरह तेज़ थीं। माँ ने बहंगी का डण्डा एक कन्धे से दूसरे कन्धे पर रख लिया और आँखें बचाकर उस लम्बी टाँगोंवाले आदमी को देखने लगी क्योंकि वह समझ गयी थी कि वह जासूस है।

"अरे कमबख्तो, हमारी जेबों को क्या देखते हो, हमारे दिमागों की तलाशी लो!" घुँघराले बालोंवाले एक लम्बे मज़दूर ने सन्तरियों से कहा जो उसके कपड़ों की तलाशी ले रहे थे।

"तुम्हारे सिर में जूँओं के अलावा और है क्या?" एक सन्तरी ने उत्तर दिया।

"तो फिर हमारी जान छोड़ो, जूँओं को पकड़ो!" उस मज़दूर ने उत्तर दिया। जासूस ने तीर की तरह उस पर एक नज़र डाली और झुँझलाकर उपेक्षा के भाव

से ज़मीन पर थूका।

"मुझे तो चला जाने दो!" माँ ने कहा। "देखते नहीं बोझ के मारे मेरी तो कमर टूटी जा रही है!"

"जाओ-जाओ!" सन्तरी झुँझलाकर चिल्लाया। "तुझे भी कुछ कहे बिना चैन नहीं पड़ता, क्यों?.."

अपनी जगह पर पहुँचकर माँ ने टोकरियाँ ज़मीन पर रख दीं और माथे का पसीना पोंछकर चारों तरफ़ देखने लगी।

गूसेव नाम के दो भाई, जो मिस्तरी थे, उसके पास आये।

"समोसे हैं?" बड़े भाई वासीली ने त्योरियाँ चढ़ाकर पूछा।

"कल लाऊँगी!" माँ ने उत्तर दिया।

यह संकेत-वाक्य था। दोनों भाइयों के चेहरे चमक उठे।

"बाप रे!" इवान ख़ुश होकर चिल्लाया।

वासीली नीचे बैठकर टोकरी में झाँकने लगा और उसी समय पर्चों का एक बण्डल उसके कोट के अन्दर पहुँच गया।

"इवान, हम लोग घर नहीं जायेंगे," उसने ऊँचे स्वर में कहा। "हम यहीं खाने के लिए कुछ ख़रीद लेंगे!" यह कहते हुए उसने एक और बण्डल अपने ऊँचे बूटों के अन्दर खोंस लिया। "इस नयी खोमचेवाली का भी भला करना चाहिए..."

"ज़रूर, ज़रूर!" इवान ने हँसकर कहा।

माँ ने बड़ी सर्तकता के साथ चारों ओर कनखियों से देखा।

"शोरबा! गरमागरम सेंवइयाँ!" माँ आवाज़ लगाने लगी।

चुपके से पर्चों के बण्डल निकाल-निकालकर वह दोनों भाइयों को देती रही। हर बार जब वह पर्चों का एक बण्डल उनको सौंपती उस पुलिस अफ़सर का पीला चेहरा उसके मस्तिष्क में जलती हुई माचिस की सलाई की तरह चमक उठता और वह बड़े गर्व के साथ अपने मन में कहती :

"लो, यह लो! और यह लो! और यह लो!"

मज़दूर प्याले हाथ में लिए हुए आ रहे थे। जब भी कोई निकट आता, इवान गूसेव ज़ोर से हँस पड़ता और माँ चुपचाप उसे पर्चे देना बन्द करके अपनी सेंवइयों की ओर ध्यान देने लगती।

"पेलागेया निलोवना, तुम बहुत तेज़ हो!" दोनों भाई यह कहकर हँस पड़े।

"पेट के मारे उसे वह सब करना पड़ता है!" पास ही खड़े हुए कोयला झोंकनेवाले एक मज़दूर ने उदास स्वर में कहा। "हरामियों ने उसकी रोटी का सहारा उससे छीन लिया! लाना, मुझे तीन कोपेक की सेंवइयाँ तो देना। माँ, तुम

चिन्ता न करना, तुम्हारा काम किसी न किसी तरह चलता ही रहेगा!"

"तुम्हारा बहुत-बहुत धन्यवाद, तुम लोगों की इन्हीं बातों का तो सहारा है!" माँ ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

"हमदर्दी के दो शब्द कहने में हमारा कुछ लगता है भला," उसने वहाँ से चलते हुए बुदबुदाकर कहा।

"गरमागरम शोरबा! सेंवइयाँ! दाल!.." माँ आवाज़ लगाने लगी।

वह सोच रही थी कि किस तरह वह बेटे को पर्चे बाँटने के अपने प्रथम अनुभव के बारे में बतायेगी, पर उसके मस्तिष्क के पीछे उस पुलिस अफ़सर का चिन्तित और क्रुद्ध पीला चेहरा घूम रहा था। भय से व्याकुल होकर उसकी काली मूँछें फड़क रही थीं और उसके धनुषाकार होंठों के नीचे से उसके भिंचे हुए सफ़ेद दाँत चमक रहे थे। माँ के हृदय में उल्लास चिड़ियों की तरह चहचहा रहा था। उसने बड़े व्यंग के भाव से भवें तान लीं और अपना सामान बेचते हुए मन ही मन उस अफ़सर से कहती रही : "लो, यह लो!..."

16

उस दिन शाम को चाय पीते समय उसने बाहर कीचड़ में घोड़ों की टापों की छपछपाहट और फिर एक परिचित स्वर सुना। वह उछलकर खड़ी हो गयी और तेज़ी से रसोई को पार करके दरवाज़े पर पहुँच गयी। बरसाती में किसी के तेज़ क़दमों की आहट सुनायी दी। उसकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया; उसने पाँव से धक्का देकर दरवाज़ा खोला और पाखे का सहारा लेकर खड़ी हो गयी।

"सलाम, माँ!" परिचित स्वर सुनायी दिया और किसी ने अपनी पतली-पतली लम्बी बाँहें उसके गले में डाल दीं।

अन्द्रेई को देखकर पहले तो उसे निराशा हुई और फिर हर्ष ये दोनों भावनाएँ मिलकर एक महान सर्वव्यापी भावना बन गयीं और माँ मानो स्नेह की धारा में बह चली; इस प्रबल प्रवाह में एक लहर ने उसे बहुत ऊपर उठा दिया और माँ ने अपना सिर अन्द्रेई के कन्धे पर रख दिया। उसने माँ को अपनी काँपती हुई बाहों में कसकर समेट लिया; माँ चुपके-चुपके रो रही थी और वह उसके बालों पर हाथ फेर रहा था और ऐसे स्वर में बोल रहा था जो माँ के कानों में संगीत की तरह सुनायी पड़ रहा था :

"माँ, रोओ नहीं, अपना जी दुखी न करो! वे उसे भी जल्दी ही छोड़ देंगे! वे उसके ख़िलाफ़ कुछ भी साबित नहीं कर सकते; सब लोग बिल्कुल पत्थर की मूरत की तरह चुप्पी साधे हुए हैं..."

माँ के कन्धे पर हाथ रखे-रखे वह उसे दूसरे कमरे में ले गया। वह उससे

सटी हुई उसके एक-एक शब्द को इस तरह सुन रही थी जैसे प्यासे को पानी मिल जाये और गिलहरियों जैसी फुर्ती के साथ अपने आँसू पोंछती जा रही थी।

"पावेल ने सलाम कहा है। वह बिल्कुल अच्छा है और ख़ुश है, जितना कि इस दशा में आशा की जा सकती है। वहाँ आजकल बड़ी भीड़ है। उन्होंने शहर से और हमारी बस्ती से सौ से ऊपर लोगों को पकड़ा है और एक-एक कोठरी में तीन-तीन चार-चार लोगों को बन्द कर दिया है। जेल के हाकिम अच्छे लोग हैं, थके हुए हैं और पुलिसवालों ने जो काम उनके सिर थोप दिया है उससे वे उकता गये हैं। जेल के हालिम बहुत सख़्त नहीं हैं। वे कहते रहते हैं, 'आप, भले लोगो, कोई ऐसी गड़बड़ न कीजियेगा कि हम मुसीबत में फँस जायें!' वहाँ का सारा काम मजे में चल रहा है। लोग एक-दूसरे से बातें करते हैं, एक-दूसरे को किताबें देते हैं और साथ मिलकर खाते हैं। ख़ूब जेल है वह भी! पुराना और गन्दा तो ज़रूर है, पर है आराम की जगह। फ़ौजदारी जुर्मों के कैदी भी बहुत अच्छे हैं और हमारी बहुत मदद करते हैं। बुकिन को, मुझे और चार दूसरे लोगों को छोड़ दिया गया है। पावेल की बारी भी जल्दी ही आयेगी। वेसोवश्चिकोव सबसे बाद में छोड़ा जायेगा, क्योंकि वे उससे बहुत नाराज़ हैं। वह उन्हें लगातार गालियाँ देता है जिससे पुलिसवालों को तो उसकी सूरत से नफ़रत है। वे या तो उस पर मुक़दमा चलायेंगे या उसे किसी दिन मारे-पीटेंगे। पावेल हमेशा उसे मना करता रहता है। वह कहता है इस तरह गालियाँ देने से कोई फ़ायदा नहीं होगा। मगर वह यही चिल्लाता रहता है, 'मैं तो इन्हें जखम पर की पपड़ी की तरह इस धरती पर से उखाड़ फेंकूँगा!' पावेल का बरताव बहुत अच्छा है – वह दृढ़ और अटल है। मुझे विश्वास है कि उसे जल्दी ही छोड़ दिया जायेगा..."

"जल्दी!" माँ ने बड़ी कोमल मुस्काहट के साथ दुहराया। उसके हृदय को शान्ति मिली। "मुझे भी विश्वास है कि वह जल्दी ही आयेगा!"

"तब सब कुछ ठीक हो जायेगा! अच्छा, मुझे एक गिलस चाय तो पिलाओ और बताओ तुम्हारी कैसी गुजर रही है?"

उसने माँ की ओर देखा, उसका रोम-रोम मुस्करा रहा था। वह इतना नजदीकी और प्यारा था तथा उसकी गोल आँखों में स्नेह और थोड़ी उदासी की लौ भी चमक रही थी।

"अन्द्रेई, तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो!" माँ ने उसके दुबले-पतले, हास्यास्पद ढंग से बालों की काली खूँटियों से ढँके चेहरे को बड़े ध्यान से देखते हुए आह भरकर कहा।

"तुम्हारा थोड़ा-सा भी प्यार मुझे सुखी बनाने के लिए काफ़ी है," उसने कुर्सी पर झूलते हुए कहा। "मैं जानता हूँ कि तुम मुझे प्यार करती हो। तुम्हारा

हृदय इतना महान है कि तुम सबको प्यार कर सकती हो।"

"लेकिन तुम्हें मैं ख़ासतौर पर प्यार करती हूँ," माँ ने अपनी बात पर ज़ोर देकर कहा। "अगर तुम्हारी माँ होती तो तुम्हारा जैसा बेटा होने के कारण सब लोग उससे ईर्ष्या करते..."

उक्रइनी अपना सिर हिलाकर ज़ोर-ज़ोर से दोनों हाथों से उसे मलने लगा।

"कहीं न कहीं मेरी माँ है तो ज़रूर!" उसका स्वर मन्द था।

"जानते हो आज मैंने किया क्या!" माँ ने प्रसन्न होकर कहा और बड़े उत्साह के साथ बताने लगी कि किस प्रकार वह पर्चे लेकर फ़ैक्टरी में गयी थी; अपने उत्साह में वह क़िस्से को कुछ बढ़ा-चढ़ाकर कह रही थी।

पहले तो अन्द्रेई की आँखें विस्मय से फैल गयीं, फिर वह ठहाका मारकर हँस पड़ा।

"ओहो!" वह ख़ुशी से चिल्लाया। "यह कोई ऐसी-वैसी बात नहीं है! यह हमारी बहुत बड़ी सहायता है! पावेल कितना ख़ुश होगा। यह तो बहुत ही शानदार काम किया तुमने, माँ – पावेल के लिए और सब के लिए!"

उसका पूरा शरीर झूम रहा था। उसने अपनी उँगलियाँ चिटकायीं और विचारों में खोया हुआ सीटी बजाने लगा। उसका चेहरा हर्ष से खिला हुआ था और माँ को अपनी भावनाओं में इस हर्ष और उल्लास की पूरी प्रतिध्वनि मिल रही थी।

"मेरे प्यारे अन्द्रेई," माँ ने कहा। मानो उसके हृदय के द्वार खुल गये और शब्दों की एक प्रबल धारा, जिसमें शान्त उल्लास का कलकल स्वर और आभा थी, प्रवाहित हो चली। "जब मैं अपने जीवन के बारे में सोचती हूँ... हे भगवान, कृपानिधान! मैं किस बात के लिए जीती थी? ख़ून-पसीना एक करना, और ऊपर से मार खाना... अपने पति के अलावा कुछ भी देखा-जाना नहीं, भय के अलावा इस जीवन में कुछ जाना नहीं! मुझे तो यह भी मालूम नहीं हुआ कि पावेल कब बड़ा हो गया और जब तक मेरे पति ज़िन्दा रहे तब तक तो मुझे यह भी मालूम नहीं हुआ कि मैं उसे प्यार भी करती हूँ कि नहीं। मेरे सारे विचार और सारी चिन्ताएँ एक ही बात के बारे में थीं – किसी तरह अपने उस निर्दयी जानवर को ठूँस-ठूँसकर खिलाना, वह जो कहे वह चटपट कर देना ताकि वह ग़ुस्सा होकर मुझे मारे नहीं – कि वह जीवन में एक बार तो मुझ पर तरस खाये! मगर मुझे तो याद नहीं पड़ता कि उसे कभी मुझ पर तरस आया हो। वह मुझे इस तरह मारता था जैसे अपनी पत्नी को नहीं, बल्कि उन तमाम लोगों को मार रहा हो जिनसे उसे कोई भी शिकायत थी। बीस बरस तक मैंने इस तरह जीवन बिताया। मैं बिल्कुल ही भूल गयी हूँ कि ब्याह से पहले मेरा जीवन क्या था! जब भी मैं

सोचने का प्रयत्न करती हूँ मुझे एक शून्य दिखायी देता है। येगोर इवानोविच यहाँ आया था, हम दोनों एक ही गाँव के रहने वाले हैं। उसने बहुत सी चीज़ों के बारे में बातें कीं लेकिन मैं क्या बात करती? मुझे अपने घर की याद है, और मुझे लोगों की याद है लेकिन इसकी मुझे ज़रा भी याद नहीं कि वे कैसे रहते थे, क्या कहते थे और उनका क्या हुआ। मुझे बस एक ज्वाला की याद है। दो ज्वालाओं की। ऐसा मालूम पड़ता है कि कोड़े मार–मारकर मेरे शरीर से हर चीज़ निचोड़ ली गयी है और मेरी आत्मा को अन्धा और बहरा करके बन्द कर दिया गया है...”

वह साँस लेने के लिए बार–बार मुँह खोलने लगी जैसे कोई मछली पानी में से निकाल ली गयी हो।

“जब मेरे पति का देहान्त हो गया,” वह आगे झुककर और अपनी आवाज़ धीमी करके कहती रही, “तब मैंने अपने बेटे की ओर ध्यान देना शुरू किया मगर तब तक वह इस काम में पड़ चुका था। मुझे दुख हुआ और उस पर बड़ा तरस आया। अगर उसे कुछ हो गया तो मैं कैसे ज़िन्दा रहूँगी? मैंने क्या–क्या मुसीबतें नहीं उठायीं! जब मैं उसके भविष्य के बारे में सोचती थी तो मेरा कलेजा फटने लगता था...”

वह एक क्षण के लिए रुकी फिर अपना सिर हिलाकर उसने बड़े अर्थपूर्ण ढंग से कहा :

“यह निरे प्रेम की बात नहीं है, हमारे औरतों के प्रेम की। हम औरतें तो केवल उस चीज़ से प्रेम करती हैं जिसकी हमें अपने लिए ज़रूरत होती है। लेकिन जब मैं तुम्हें देखती हूँ, तुम अपनी माँ के लिए इतना दुखी होते हो – वह तुम्हारे लिए क्या है? और वे तमाम लोग जो दूसरों के लिए इतनी मुसीबतें उठाते हैं... जेल जाते हैं, साइबेरिया भेज दिये जाते हैं... मर जाते हैं.. नौजवान लड़कियाँ रात में इतनी दूर तक कीचड़ में, पानी और बर्फ़ में अकेली चली जाती हैं – शहर से हमारे घर तक एकाध कोस चलकर आना! आख़िर किसलिए? वे यह सब क्यों करती हैं? क्योंकि उनके हृदय में एक महान, पवित्र प्रेम है। और उनमें विश्वास है – एक गहरा विश्वास है, अन्द्रेई! लेकिन जहाँ तक मेरा सवाल है – मैं इस तरह प्रेम नहीं कर सकती! मैं केवल उस चीज़ से प्रेम कर सकती हूँ जो मेरी अपनी है, जो मेरे हृदय के निकट है।”

“नहीं, माँ, ऐसा नहीं है,” उक्रइनी ने बड़े ज़ोर से अपने सिर, गालों और आँखों को मलते हुए कहा, जैसीकि उसकी आदत थी। “हर आदमी उसी चीज़ से प्यार करता है जिसका उससे निकट का सम्बन्ध होता है, लेकिन अगर आदमी का दिल बड़ा हो तो दूर की चीज़ें भी पास आ जाती हैं। तुम इसीलिए बहुत बड़े–बड़े काम कर सकती हो कि तुम्हारे हृदय में एक माँ का महान प्रेम है।”

"ईश्वर मुझे इतनी शक्ति दे!" माँ ने मन्द स्वर में कहा। "मैं सोचती हूँ कि यह जीने का एक अच्छा रास्ता है! अन्द्रेई, अब मैं तुम्हें शायद पावेल से भी ज़्यादा प्यार करती हूँ। वह अपने में ही खोया-खोया रहता है... अब तुम ही देखो, वह साशा से ब्याह करना चाहता है, पर उसने मुझे, अपनी माँ को, इसकी कभी भनक भी नहीं दी..."

"माँ, यह सच नहीं है," उक्रइनी ने आपत्ति करते हुए कहा। "मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि यह सच नहीं है। वह उसे प्यार करता है और वह भी उसे प्यार करती है - यह सच है। लेकिन उन दोनों की शादी कभी नहीं होगी! वह शादी करना चाहती है, पर पावेल नहीं चाहता..."

"अच्छा," माँ ने कुछ सोचते हुए कहा, उसकी उदास आँखें उक्रइनी के चेहरे पर जमी हुई थीं। "तो यह बात है - लोग अपनी ख़ुशी को भी ठुकरा देते हैं।"

"पावेल जैसे लोग बिरले ही होते हैं!" उक्रइनी ने स्वर में एक कोमलता आ गयी। "वह अपने इरादे का पक्का है..."

"और अब वह जेल में बैठा है!" माँ ने कुछ सोचते हुए कहा। "इस बात को सोचकर ही मेरा हृदय काँप जाता है - लेकिन इतना डरने की क्या बात है! जीवन एक चीज़ है और मेरे भय बिल्कुल ही दूसरी चीज़ हैं। अब मुझे सभी की चिन्ता है। और मेरा हृदय भी बिल्कुल बदल गया है क्योंकि मेरी आत्मा ने मेरे हृदय की आँखें खोल दी हैं और इन आँखों से जब वह बाहर देखता है तो उदास हो जाता है, पर फिर भी ख़ुश रहता है। बहुत-सी चीज़ें ऐसी हैं जो मेरी समझ में नहीं आतीं और मुझे बड़ा दुख होता है कि तुम भगवान में विश्वास नहीं करते! लेकिन मैं इसमें क्या कर सकती हूँ? मैं देखती हूँ कि तुम सब के सब बहुत अच्छे हो। तुम सब ने सारी जनता की भलाई की खातिर अपने लिए एक कठोर जीवन पसन्द किया है, सत्य के लिए कठिनाइयों से भरा जीवन अपनाया है। और अब मैं तुम्हारे सत्य को समझने लगी हूँ : जब तक अमीर लोग हैं तब तक आम लोगों को कभी कुछ नहीं मिल सकता - न कोई ख़ुशी, न कोई न्याय - कुछ भी नहीं! अब जब से मैं तुम लोगों के बीच रहने लगी हूँ, कभी-कभी रात को मैं बीते दिनों के बारे में सोचती हूँ; मैं सोचती हूँ कि मेरी जवानी की शक्ति को जूतों तले रौंद डाला गया, मेरे नौजवान हृदय को मुट्ठी में मसल डाला गया, मुझे अपने आप पर तरस आता है और मुझे बड़ा दुख होता है! लेकिन अब जीवन मेरे लिए ज़्यादा आसान हो गया है। धीरे-धीरे मैं अपने असली रूप को देखने लगी हूँ... "

उक्रइनी उठा और कमरे में इधर से उधर टहलने लगा; वह प्रयत्न कर रहा

था कि किसी प्रकार की आवाज़ न होने पाये। वह दुबला-पतला लम्बा-सा आदमी विचारों में डूबा हुआ था।

"तुमने कितने ढंग से यह बात कही है!" उसने धीरे से कहा। "कितने अच्छे ढंग से! केर्च में एक नौजवान यहूदी रहता था जो कविताएँ लिखता था। एक बार उसने लिखा :

"हत्या कर डाली है जिन निर्दोषों की
उन्हें सत्य की शक्ति पुनः जीवन देगी!.."

"वह तो वहीं केर्च में पुलिस के हाथों मारा गया, लेकिन यह बात इतनी महत्त्व की नहीं है। उसने सच्चाई को समझा और आम जनता में उस सच्चाई के बीज बोये। तुम भी उन्हीं 'निर्दोषों' में से एक हो..."

"लेकिन अब मेरी जबान बन्द नहीं है," माँ कहती रही। "अब मैं बोलती हूँ और जब मैं अपने ही शब्दों को सुनती हूँ तो मुझे अपने कानों पर विश्वास नहीं होता। जीवन-भर मुझे बस एक चिन्ता रही – किसी तरह एक दिन और कट जाये, क्या करूँ कि किसी का ध्यान मेरी ओर न जाये, कि कोई मुझे हाथ न लगाये। लेकिन अब मैं दूसरे लोगों के बारे में सोचती रहती हूँ। यह हो सकता है कि मैं तुम लोगों के ध्येय को न समझती हूँ, लेकिन तुम सब लोगों से मुझे प्यार है, मेरे हृदय में तुम सब लोगों का दर्द है और मैं चाहती हूँ कि तुम सब लोग सुखी रहो। और ख़ासतौर पर तुम, अन्द्रेई!.."

वह माँ के पास आ गया।

"बहुत-बहुत धन्यवाद!" उसने कहा और माँ का हाथ अपने हाथों में लेकर स्नेह से दबाया और फिर जल्दी से दूसरी तरफ़ चला गया। अपनी भावनाओं के बोझ से दबी हुई माँ धीरे-धीरे चुपचाप प्याले धोती रही; वह अपने हृदय में छिपे हुए उल्लास के बारे में सोच रही थी।

"माँ, तुम वेसोवश्चिकोव के प्रति भी थोड़ा-सा प्यार दिखाया करो," उक्रइनी ने इधर-उधर टहलते हुए कहा। "उसका बाप जेल में है, वह निकम्मा शराबी! निकोलाई खिड़की में से उसे देखते ही गालियाँ बकने लगता है। यह बड़ी बुरी बात है! निकोलाई का स्वभाव बहुत उदार है, वह कुत्तों से और चूहों से और दुनिया भर के जानवरों से प्यार करता है, मगर आदमियों से उसे नफ़रत है! तुम ही देखो, आदमी किस दशा को पहुँच जाता है!"

"माँ रही नहीं... बाप चोर और शराबी है..." माँ ने विचारमग्न होकर कहा।

जब अन्द्रेई सोने गया तो माँ ने चुपके से उस पर हाथ के संकेत से सलीब का निशान बनाया और आधे घण्टे बाद बहुत मन्द स्वर में पूछा :

"सो गये, अन्द्रेई?"

"नहीं तो, क्यों?"
"अच्छा, सो जाओ!"
"धन्यवाद, माँ। धन्यवाद," उसने कृतज्ञता के साथ कहा।

17

दूसरे दिन जब माँ फ़ैक्टरी के फाटक पर पहुँची तो सन्तरियों ने उसे रोक लिया और उसकी टोकरियाँ नीचे रखवाकर उसकी अच्छी तरह तलाशी ली।

जिस समय वे बड़ी बदतमीजी से उसके कपड़ों की तलाशी ले रहे थे, माँ ने प्रतिरोध करते हुए कहा :

"मेरी तो सारी चीज़ें ठण्डी पड़ जायेंगी!"

"चुप रह!" सन्तरी ने डाँटकर कहा।

दूसरे सन्तरी ने माँ के कन्धे को हल्के से धक्का देकर कहा :

"मैं कहता हूँ कि चहारदीवारी के ऊपर से फेंके होंगे।"

फ़ैक्टरी के यार्ड में माँ के पहुँचने पर सबसे पहले बूढ़ा सिजोव उसके पास आया।

"सुना तुमने, माँ?" उसने चारों तरफ़ नज़र दौड़ाकर चुपके से पूछा।

"क्या?"

"वे पर्चे! फिर बाँटे गये! हर तरफ़ ये पर्चे बिखरे हुए हैं, रोटी पर नमक की तरह। लाख तलाशी लें, लोगों को लाख पकड़ें, क्या होता है? उन्होंने मेरे भतीजे माजिन को जेल में बन्द कर दिया, मगर क्या फ़ायदा हुआ? तुम्हारे बेटे को भी पकड़ ले गये, मगर अब सब लोग जान गये हैं कि उसमें उसका हाथ नहीं था।"

उसने अपनी दाढ़ी पकड़कर प्रश्न-भरी दृष्टि से माँ को देखा :

"तुम कभी मेरे घर क्यों नहीं आतीं? अकेले जी घबराता होगा..."

माँ ने उसे धन्यवाद दिया और आवाज़ लगा-लगाकर अपनी चीज़ें बेचने लगी। उसने देखा कि फ़ैक्टरी में असाधारण चहल-पहल है। सब लोग उत्तेजित थे। लोग झुण्ड बाँधकर जमा होते और फिर तितर-बितर हो जाते। वे भाग-भागकर एक वर्कशाप से दूसरी वर्कशॉप में जाते। माँ को धुएँ और कालिख से भरे वहाँ के वातावरण में किसी वीरतापूर्ण और साहसमय बात का आभास मिलता था। थोड़ी-थोड़ी देर बाद व्यंगपूर्ण बातें और प्रोत्साहन देने वाले नारे सुनायी देते थे। बूढ़े मज़दूर चुपके-चुपके मुस्करा रहे थे। कारख़ाने के हाकिम चिन्तित मुद्रा में उसके सामने से गुजरते थे। पुलिसवाले इधर-उधर भाग रहे थे और जब मज़दूरों की टोलियाँ उन्हें देखतीं तो वे या तो तितर-बितर हो जातीं या बातें करना बन्द

कर देतीं और उनके क्रुद्ध तथा झुँझलाये हुए चेहरों को घूरने लगतीं।

मज़दूरों के चेहरों पर ताज़गी थी। माँ ने कुछ दूर पर लम्बे कदवाले बड़े गूसेव को देखा; उसका छोटा भाई, जो हर दम हँसता रहता था, उसके पीछे-पीछे जा रहा था।

बढ़ईगोरी की वर्कशॉप का फोरमैन ववीलोव और टाइम-कीपर इसाई धीरे-धीरे चलते हुए माँ के सामने से गुजरे। बित्ते-भर का वह नाटा टाइम-कीपर फोरमैन का तना हुआ और गुस्से से फैला हुआ चेहरा देखने के लिए गर्दन ऊपर उठाये अपनी छिदरी दाढ़ी को झटके देकर बातें करता हुआ चला जा रहा था :

"इवान इवानोविच, इन लोगों ने मज़ाक़ समझ रखा है। इन लोगों को इसमे मजा आता है, मगर जैसाकि डायरेक्टर साहब कह रहे थे, यह राज्य के लिए तबाही है। यहाँ निलाई से काम नहीं चलेगा, जब तक बिल्कुल हल नहीं चलवा दिया जायेगा तब तक कुछ नहीं होने का..."

ववीलोव पीठ के पीछे दोनों हाथ कसकर बाँधे हुए चल रहा था...

"हरामजादे, जो चाहें छापें!" उसने ऊँचे स्वर में कहा। "मगर मेरे ख़िलाफ़ अगर एक बात भी लिखी तो ख़ैर नहीं है!"

वासीली गूसेव माँ के पास आया।

"माँ, सोचता हूँ आज फिर तुमसे ही खाना ख़रीद लूँ। तुम्हारा खाना अच्छा होता है!" उसने कहा और फिर अपनी आवाज़ धीमी करके आँखें सिकोड़कर बोला :

"तीर निशाने पर बिल्कुल ठीक बैठा... माँ, कमाल हो गया!"

माँ ने बड़े स्नेह से सिर हिलाया। उसे यह देखकर बड़ी ख़ुशी हुई कि यह आदमी जो बस्ती-भर में सबसे ज़्यादा चलता पुर्ज़ा माना जाता था, इतने सम्मान के साथ उसे सम्बोधित कर रहा था। फ़ैक्टरी की हलचल को देखकर भी उसे बड़ी ख़ुशी थी और वह सोच रही थी :

"अगर मैं न होती..."

तीन मज़दूर उससे थोड़ी दूर पर आकर खड़े हो गये।

"कहीं भी नहीं मिला..." उनमें से एक ने खेद-भरे स्वर में धीरे से कहा।

"मालूम तो होता कि उसमें क्या था। मैं पढ़ना तो नहीं जानता मगर यह बात साफ़ है कि तीर निशाने पर बैठा," दूसरा बोला।

"आओ चलो, ब्वायलर रूम में चलें..." तीसरे ने चारों तरफ़ नज़र डालकर कहा।

गूसेव ने माँ की तरफ़ देखकर आँख मारी।

"देखा क्या हो रहा है?" उसने कहा।

पेलागेया निलोवना बहुत खुश-खुश घर लौटी।

"लोगों को अफसोस है कि वे अनपढ़ हैं!" उसने अन्द्रेई से कहा। "जब मैं लड़की थी तो पढ़ना जानती थी, पर अब भूल गयी..."

"सीख क्यों नहीं लेतीं?" उक्रइनी से सुझाव दिया।

"इस उमर में? हँसी उड़वाने के लिए?"

मगर अन्द्रेई ने अल्मारी पर से एक किताब उतारी और मुखपृष्ठ पर छपे हुए एक अक्षर पर उँगली रखते हुए पूछा :

"यह क्या है?"

"र," माँ ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

"और यह?"

"आ..."

माँ कुछ झेंप रही थी, उसे शरम आ रही थी। उसे ऐसा लग रहा था कि अन्द्रेई मन ही मन उस पर हँस रहा है, और माँ उससे नज़रें बचाने का प्रयत्न कर रही थी। पर अन्द्रेई के स्वर में कोमलता और मृदुता थी, और उसका चेहरा गम्भीर था।

"अन्द्रेई, क्या तुम सचमुच मुझे पढ़ाने की सोच रहे हो?" उसने अनायास ही धीरे से हँसकर पूछा।

"क्यों नहीं?" उसने उत्तर दिया। "अगर तुम पहले पढ़ना जानती थीं तो जल्दी ही सीख जाओगी। कहते हैं न कि कोशिश करने में क्या हर्ज है!"

"लेकिन एक और कहावत भी तो है : मूरत को देखने से तो आदमी साधु-सन्त नहीं हो जाता।"

"हुँ!" उक्रइनी ने सिर हिलाकर कहा। "कहावतें तो बहुत हैं। जैसे, जो जितना कम जानता है वह उतनी ही सुख की नींद सोता है। लेकिन इस तरह तो पेट सोचता है ताकि इन कहावतों को सहारा लेकर वह आत्मा को आसानी से सन्तुष्ट रख सके। यह कौन-सा अक्षर है?"

"ल," माँ ने कहा।

"ठीक। और यह?"

माँ अपनी आँखों पर ज़ोर देकर और माथे पर बल डाले एकाग्रचित्त होकर भूले हुए अक्षरों को पहचानने का प्रयत्न कर रही थी। शीघ्र ही उसकी आँखें थक गयीं। शुरू में तो थकन के कारण और बाद में निराशा के कारण उसके आँसू टपकने लगे।

"पढ़ना सीख रही हूँ!" उसने रुआँसे स्वर में कहा। "चालीस बरस की हुई अब अ-आ-इ-ई सीख रही हूँ!"

"रोओ नहीं!" उक्रइनी ने तसल्ली देते हुए कहा। "तुमको अपनी पसन्द का जीवन तो नसीब नहीं हुआ, पर इतना तो तुम जानती ही हो कि वह कितना कष्टमय जीवन रहा है! हज़ारों लोग ऐसे हैं जो अगर चाहें तो बेहतर ज़िन्दगी बिता सकते हैं लेकिन वे जंगलियों जैसी ज़िन्दगी बिताते रहते हैं और उसी में मगन रहते हैं! आज कमाया और खाया, कल फिर कमाया और खाया और इसी तरह ज़िन्दगी के दिन बीतते जाते हैं – बस कमाना और खाना। इसमें आख़िर इतने मगन रहने की क्या बात है? थोड़े-थोड़े समय बाद वे बच्चे पैदा करते रहते हैं, जो कुछ दिन तो उनका जी बहलाते हैं पर थोड़े ही दिन बाद जब वे ज़रूरत से ज़्यादा खाने को माँगने लगते हैं तो उनके माँ-बाप ग़ुस्सा होते हैं और उन्हें गाली देते और कोसते हैं : 'अरे कमबख्त छोकरो, किसी तरह जल्दी से बड़े भी हो जाओ, काम करके कुछ तुम भी तो कमाओ!' वे चाहते तो यही हैं कि अपने बच्चों को पालतू जानवर बना लें मगर बड़े होते ही ये बच्चे अपना पेट पालने के लिए काम करने लगते हैं – और अपने जीवन को रबर के टुकड़े की तरह खींचते जाते हैं। सच्चे इन्सान तो वह होते हैं जो मनुष्य के विचारों को मुक्त करने के लिए अपना जीवन अर्पित कर देते हैं। इस समय तुम भी अपनी शक्ति-भर यही कर रही हो।"

"मैं?" माँ ने तुच्छता के भाव से कहा। "मैं क्या कर सकती हूँ?"

"यह न कहो। हम लोग तो वर्षा के पानी की तरह हैं जिसकी एक-एक बूँद बीजों को सींचती है। और जब तुम पढ़ने लगोगी..."

वह धीरे से हँसकर चुप हो गया और उठकर इधर-उधर टहलने लगा।

"तुम्हें तो बस थोड़ा-सा ही सीखना है!... थोड़े दिन में पावेल लौट आयेगा और तब – ओहो!"

"अरे अन्द्रेई!" माँ ने कहा। "जब तक आदमी जवान रहता है तब तक हर बात आसान लगती है। लेकिन जब बूढ़ा होने लगता है – तब दुनिया-भर की चिन्ताएँ उसे घेर लेती हैं। उसकी ताकत कम होती जाती है और अकल तो रह ही नहीं जाती..."

18

उस दिन शाम को जब उक्रइनी बाहर गया हुआ था माँ लैम्प जलाकर मोजा बुनने लगी। पर शीघ्र ही उठकर थोड़ी देर तक वह कमरे में निरुद्देश्य सी घूमती रही, फिर रसोई में जाकर उसने बाहर का दरवाज़ा बन्द किया और भवें चढ़ाती हुई कमरे में लौटी। खिड़की पर पर्दा गिराकर उसने अल्मारी में से एक किताब निकाली, फिर मेज पर बैठ गयी। उसने और सभी ओर नज़र दौड़ाकर किताब पर

ध्यान केन्द्रित किया। उसके होंठ हिलने लगे। बाहर से ज़रा-सी भी आवाज़ आती तो वह चौंक पड़ती और किताब को दोनों हाथों से ढँककर कान लगाकर सुनने लगती। थोड़ी देर बाद वह फिर आँखें खोलती और मूँदती हुई कुछ बुदबुदाने लगती।

" 'ल' से लट्टू; 'ब' से बकरी..."

किसी ने दरवाज़ा खटखटाया; माँ चौंककर खड़ी हो गयी और जल्दी से किताब फिर अल्मारी में रख दी।

"कौन है?" उसने भयातुर स्वर में पूछा।

"मैं हूँ..."

रीबिन दाढ़ी पर हाथ फेरता हुआ अन्दर आया।

"पहले तो कभी नहीं पूछती थीं 'कौन है'," उसने कहा। "अकेली ही हो? मैंने सोचा था कि शायद उक्रइनी होगा। आज उसे देखा था... जेल जाने से उसे कोई नुकसान तो हुआ नहीं।"

वह बैठ गया और माँ को सम्बोधित करके बोला :

"मैं तुमसे कुछ बातें करना चाहता हूँ..."

उसने माँ को बड़ी अर्थपूर्ण और रहस्य-भरी दृष्टि से देखा जिससे माँ के हृदय में एक अस्पष्ट-सा भय उत्पन्न हुआ।

"हर चीज़ के लिए पैसे की ज़रूरत होती है!" उसने अपनी भारी आवाज़ में कहना शुरू किया। "पैदा होने के लिए पैसे की ज़रूरत होती है, मरने के लिए पैसे की ज़रूरत होती है। किताबों और पर्चों के लिए भी पैसों की ज़रूरत होती है। भला तुम जानती हो इन किताबों के लिए पैसे कहाँ से आते हैं?"

"नहीं, मैं तो नहीं जानती," माँ ने इस सवाल में कुछ ख़तरनाक चीज़ महसूस करते हुए धीरे से उत्तर दिया।

"मेरी भी समझ में नहीं आता। और दूसरा सवाल है कि इन्हें लिखता कौन है?"

"पढ़े-लिखे लोग..."

"अमीर लोग!" रीबिन ने कहा और उसका दाढ़ीवाला चेहरा कुछ तनावपूर्ण और लाल हो गया। "दूसरे शब्दों में अमीर लोग ये किताबें लिखकर हम लोगों तक पहुँचाते हैं। लेकिन ये किताबें अमीरों के ख़िलाफ़ लिखी होती हैं। तुम्हीं मुझे बताओ कि इसमें क्या तुक है कि वे आम लोगों को अपने ख़िलाफ़ भड़काने के लिए अपना ही पैसा ख़र्च करें, बोलो?"

माँ ने आँखें झपकाते हुए भयभीत होकर ऊँची आवाज़ में पूछा :

"तुम्हारा क्या विचार है?"

"अहा!" रीबिन ने कुर्सी पर भालू की तरह हिलते–डुलते हुए कहा। "यही तो बात है! मेरे मन में भी जैसे ही यह विचार आया, हर चीज़ पर जैसे ओस पड़ गयी।"

"तुम्हें कुछ पता लगा है?"

"धोखा!" रीबिन ने उत्तर दिया। "मैं समझता हूँ हमें धोखा दिया गया है। मेरे पास कोई सबूत तो नहीं है मगर यह है धोखा। सरासर धोखा है! तुम्हारे ये अमीर लोग बड़े चालाक हैं। मैं तो सच बात का पता लगाने के फेर में रहता हूँ। अब मैं सच्चाई को समझने लगा हूँ और अब मैं इन अमीरों का साथ हरगिज नहीं दूँगा। जब भी उनका जी चाहेगा वे अपना रास्ता बनाने के लिए मुझे गिराकर पुल की तरह इस्तेमाल करने से भी नहीं हिचकिचायेंगे..."

उसके शब्द माँ के हृदय को एक शिकंजे की तरह कसते जा रहे थे।

"हे भगवान!" माँ ने व्यथित स्वर में कहा। "क्या यह हो सकता है कि पावेल इस बात को समझता नहीं? और वे सब लोग भी जो..."

उसकी आँखों के आगे येगोर, निकोलाई इवानोविच और साशा के गम्भीर चेहरे घूम गये जिनसे लगन और ईमानदारी टपकती थी। उसका दिल धड़कने लगा।

"नहीं, नहीं!" उसने सिर हिलाकर कहा। "मैं विश्वास नहीं कर सकती! वे लोग ईमानदार हैं!"

"क्या मतलब है तुम्हारा?" रीबिन ने विचारमग्न होकर पूछा।

"वे सब के सब... उनमें से एक–एक, मैं देख चुकी हूँ!"

"माँ, तुम ठीक जगह पर नहीं देख रही हो। और आगे देखने की कोशिश करो!" रीबिन ने सिर झुकाकर कहा। "वे लोग जो हमारे साथ आये हैं – मुमकिन है वे ख़ुद ही कुछ न जानते हों। वे यह विश्वास करते हैं कि ऐसा होना चाहिए। लेकिन मुमकिन है कि उनके पीछे दूसरे लोगों का हाथ हो – ऐसे लोगों का जिन्हें केवल अपने स्वार्थ का ध्यान रहता है? बिना किसी कारण के तो कोई आदमी अपना दुश्मन नहीं हो जाता..."

फिर उसने एक किसान के अड़ियल विश्वास के साथ कहा :

"अमीरों से हमें कभी कोई फ़ायदा नहीं हो सकता!"

"तो तुम क्या करने की सोच रहे हो?" माँ ने पूछा; उसे फिर शंकाओं ने आ घेरा था।

"मैं?" रीबिन ने नज़र उठाकर उसे देखा और फिर कुछ देर रुककर कहा, "हमें अमीरों से दूर रहना चाहिए, मैं तो यही कहता हूँ।"

वह फिर चिन्तामग्न होकर चुप हो गया।

“मैं चाहता था कि मैं भी अपने साथियों के कन्धे से कन्धा मिलाकर उनके साथ आगे बढ़ूँ। मैं इस काम के लिए बिल्कुल ठीक हूँ। मैं जानता हूँ कि लोगों से क्या कहना चाहिए। पर अब मैं जा रहा हूँ। मेरा विश्वास टूट गया है इसलिए मुझे अलग ही हो जाना पड़ेगा।”

उसने सिर झुका लिया और विचारों में डूब गया।

“मैं अकेला गाँवों और देहातों में जाऊँगा और लोगों में जागृति पैदा करूँगा। उन्हें अब ख़ुद ही कुछ करना होगा। एक बार जहाँ वे समझ गये, वे कोई रास्ता ढूँढ़ निकालेंगे। उन्हें समझाना मेरा काम है। वे केवल अपने ही से उम्मीद लगा सकते हैं; उनका अपना दिमाग ही उनके काम आ सकता है!”

माँ को इस आदमी पर तरस भी आ रहा था और उसकी तरफ़ से डर भी लग रहा था। और वही आदमी जो अब तक उसे बुरा लग रहा था, अब न जाने क्यों उसे बहुत प्यारा लगने लगा।

“वे तुम्हें पकड़ लेंगे...” माँ ने धीमे स्वर में कहा।

रीबिन ने माँ की तरफ़ देखा।

“पकड़ तो लेंगे, लेकिन जब वे मुझे छोड़ेंगे मैं फिर अपना काम शुरू कर दूँगा...”

“किसान ख़ुद तुम्हें पकड़कर बाँध देंगे। वे तुम्हें जेल में डलवा देंगे...”

“मैं सजा काटकर बाहर आ जाऊँगा और फिर अपना काम शुरू कर दूँगा। जहाँ तक किसानों का सवाल है वे मुझे एक बार बाँधेंगे, दो बार बाँधेंगे, फिर वे ख़ुद ही समझने लगेंगे कि मुझे बाँधने से अच्छा है कि वे मेरी बात सुनें। मैं कहूँगा : ‘मेरी बात न मानो, मगर सुन तो लो,’ और अगर वे सुनेंगे तो मानेंगे भी!”

वह धीरे-धीरे एक-एक शब्द को तौल-तौलकर बोल रहा था।

“इधर कुछ दिनों में मैंने बहुत कुछ पढ़ा है और दो-एक बातें सीखी भी हैं...”

“मिख़ाइलो इवानोविच, तुम अपने आप को इस तरह मिटा दोगे!” माँ ने बहुत उदास स्वर में सिर हिलाते हुए कहा।

वह अन्दर को धँसी हुई काली आँखों से माँ को घूरता रहा, मानो कुछ पूछ रहा हो, मानो कुछ उत्तर पाने की आशा कर रहा हो। उसका गठा हुआ शरीर आगे की ओर झुका हुआ था, अपने हाथों से वह कुर्सी का तख़्ता मज़बूती से पकड़े हुए था और उसकी काली दाढ़ी के घेरे में उसके साँवले चेहरे का रंग फीका-सा नज़र आ रहा था।

“याद है ईसा मसीह ने बीज के बारे में क्या कहा था? दुबारा पैदा होने

के लिए उसे मरना पड़ता है। मगर मैं इतनी जल्दी मरने वाला नहीं। मैं बड़ा खुर्राट हूँ!"

वह अपनी कुर्सी पर कसमसाया और धीरे-धीरे उठ खड़ा हुआ।

"चलकर कुछ देर भटियारख़ाने में बैठता हूँ। उक्रइनी के आने की तो कोई उम्मीद दिखायी नहीं देती। फिर वही पुराना काम कर रहा है?"

"हाँ," माँ ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

"अच्छी बात है। आये तो कह देना कि मैं आया था..."

वे धीरे-धीरे एक-दूसरे के साथ रसोई में गये। वे बिना एक-दूसरे की तरफ़ देखे बातें कर रहे थे।

"अच्छा, तो मैं चलता हूँ।"

"अच्छी बात है। तुम फ़ैक्टरी में कब नोटिस दे रहे हो?"

"नोटिस तो मैंने दे दिया है।"

"जा कब रहे हो?"

"कल। बहुत सबेरे ही चला जाऊँगा। अच्छा, सलाम!"

अनमने भाव से लड़खड़ाता हुआ रीबिन झुककर दरवाज़े से बाहर बरामदे में निकल गया। एक क्षण तक माँ खड़ी उसके भारी क़दमों की चाप सुनती रही और उसके हृदय में जो शंकाएँ उठ रही थीं उन पर विचार करती रही। फिर वह चुपचाप मुड़ी और दूसरे कमरे में जाकर उसने खिड़की पर से पर्दा हटा दिया। बाहर अन्धकार छाया हुआ था।

"रात में ही तो जीती हूँ!" माँ सोचने लगी।

उसे उस गम्भीर किसान पर तरस आ रहा था – कितना हट्टा-कट्टा और बलवान था वह।

अन्द्रेई घर लौटा तो बहुत ख़ुश था।

माँ ने उसे रीबिन के बारे में बताया।

"जाकर उसे गाँवों में 'न्याय-न्याय' चिल्लाने दो और लोगों में जागृति पैदा करने दो," अन्द्रेई ने कहा। "हमारे साथ उसका चलना मुश्किल ही था। उसके दिमाग में किसानों के विचार कूट-कूटकर भरे हैं। हमारे विचारों के लिए उसके दिमाग में जगह ही नहीं है..."

"वह अमीरों की बातें कर रहा था। वह जो कुछ कह रहा था उसमें कुछ सच्चाई ज़रूर है," माँ ने बड़ी सर्तकता से कहा। "सावधान रहना कहीं वे तुम लोगों को बेवक़ूफ़ न बनायें!"

"तुम उसके कारण परेशान हो?" उक्रइनी हँस पड़ा। "हाँ, माँ – पैसा! काश हमारे पास पैसा होता! हम लोग अभी तक दूसरों के पैसे से काम चला रहे

हैं। जैसे निकोलाई इवानोविच को महीने में पचहत्तर रूबल मिलते हैं, उसमें से वह पचास हमें दे देता है। यही हाल दूसरों का है। कभी-कभी यूनिवर्सिटी के छात्र, जिन्हें ख़ुद भरपेट खाने को नहीं मिलता एक-एक कोपेक चन्दा करके हमें कुछ पैसे भेज देते हैं। अमीर लोग भी हर तरह के होते हैं। कुछ साथ छोड़ देते हैं, कुछ धोखा दे जाते हैं, लेकिन उनमें जो सबसे अच्छे होते हैं वे पूरी तरह हमारे साथ आ जाते हैं..."

उसने ज़ोर से ताली बजायी और दृढ़ विश्वास के साथ कहता रहा :

"हमारी अन्तिम विजय का दिन तो अभी दूर है, बहुत दूर, फिर भी अब की मई दिवस हम छोटे-छोटे पैमाने पर ज़रूर मनायेंगे। माँ, तुम देखना, हम किस शान से यह दिन मनायेंगे!"

रीबिन ने माँ के हृदय में जो शंकाएँ उत्पन्न कर दी थीं वे अन्द्रेई के उत्साह से दूर हो गयीं। उक्रइनी अपने बालों में हाथ फेरता हुआ और फ़र्श की तरफ़ घूरता हुआ इधर-उधर टहलता रहा।

"कभी-कभी हृदय भावनाओं से इतना भर जाता है कि असह्य हो जाता है! जहाँ भी जाओ हर आदमी अपना साथी नज़र आता है। सब के सीनों में वही ज्वाला धधकती रहती है; सब बड़े नेक, उदार और प्रसन्नचित्त मालूम होते हैं। एक-दूसरे को समझने के लिए कुछ कहने की भी ज़रूरत नहीं पड़ती... सब लोग मिलकर एक बहुत बड़ी मण्डली का रूप धारण कर लेते हैं जिसमें हर आदमी का हृदय अपना गीत गाता है। और ये सब गीत छोटी-छोटी धाराओं की तरह आकर एक नदी में मिल जाते हैं, और फिर यह नदी उन्मुक्त प्रवाह के साथ चौड़ी होती हुई नये जीवन के उल्लासमय सागर से जा मिलती है।"

इस भय से कि उसके विचारों की श्रृँखला और वाणी का प्रवाह कहीं भंग न हो जाये, माँ बिल्कुल निश्चल बैठी थी। माँ जितने ध्यान से उसकी बात सुनती थी उतने ध्यान से किसी और की बात नहीं सुनती थी; वह दूसरों की अपेक्षा ज़्यादा सीधे-सादे ढंग से बोलता था और उसके शब्द जाकर सीधे हृदय पर लगते थे। पावेल कभी भविष्य के बारे में बातें नहीं करता था। पर उक्रइनी तो आंशिक रूप से हमेशा भविष्य में ही रहता था; जब वह बोलता तो वह पृथ्वी की समस्त जनता के भावी महापर्व का उल्लेख करता। और भविष्य की यही कल्पना थी जिसने माँ के जीवन को और उसके बेटे तथा उसके बेटे के सभी साथियों के काम को सार्थकता प्रदान कर दी थी।

"फिर सहसा कल्पना का यह संसार चकनाचूर हो जाता है," उक्रइनी सिर हिला-हिलाकर कहता रहा, "और चारों तरफ़ हर चीज़ नीरस और गन्दी दिखायी देने लगती है, हर आदमी झुँझलाया और थका हुआ दिखायी देता है..."

उसके स्वर में उदासी थी :

"लोगों पर भरोसा नहीं करना चाहिए। मैं जानता हूँ उसमें तकलीफ होती है, लेकिन उनसे डरना ज़रूर चाहिए और मैं तो कहूँगा कि – कि उनसे घृणा भी करनी चाहिए! हर आदमी के दो रूप होते हैं। हम पूरे मनुष्य को प्यार करना चाहते हैं, पर यह कैसे हो सकता है? हम पर जंगली जानवरों की तरह हमला करने, हमारी जीवित आत्मा को न देखने और हमारा मानवीय रूप नष्ट कर देने के लिए हम किसी को कैसे माफ़ कर सकते हैं? इसे नहीं माफ़ किया जा सकता! अपने तईं तो आदमी कुछ भी बरदाश्त कर सकता है। लेकिन उन्हें यह तो नहीं समझने दिया जा सकता कि हम उनकी इस हरकत को पसन्द करते हैं; हम अपनी पीठ तो उनके आगे नहीं कर सकते कि वे उस पर दूसरे लोगों को मारने के लिए अभ्यास करें।"

अन्द्रेई की आँखों में जैसे शीतल ज्वाला धधक रही थी, वह दृढ़ निश्चय के भाव से अपना सिर झुकाये हुए बड़े विश्वास के साथ बोल रहा था :

"यदि किसी चीज़ से मुझे स्वयं हानि न भी पहुँचे तब भी मुझे किसी गलती को माफ़ करने का अधिकार नहीं है। इस पृथ्वी पर मैं ही तो अकेला नहीं हूँ। आज अगर कोई मुझे आघात पहुँचाये तो मुमकिन है मैं उसे हँसकर टाल दूँ, क्योंकि सम्भव है कि उसका महत्त्व इतना न हो कि उसकी ओर ध्यान भी दिया जाये; पर मुझ पर अपनी ताकत आजमा चुकने के बाद सम्भव है कल वह किसी दूसरे को धौंस में लाने की कोशिश करे। हम हर आदमी को एक ही दृष्टि से नहीं देख सकते; हमें बड़े शान्त भाव से चुनना और पसन्द करना पड़ता है : यह आदमी हमारे ढंग का है, यह नहीं है। यह बड़ी सुखकर बात नहीं है, क्यों है न? लेकिन यह सच बात है!"

न जाने क्यों माँ को साशा का विचार आया और फिर उस अफ़सर का।

"बग़ैर छने हुए आटे से तुम कैसी रोटी की आशा कर सकते हो?" माँ ने आह भरकर कहा।

"यही तो सारी मुसीबत है!" उक्रइनी ने ज़ोर देकर कहा।

"हाँ!" माँ बोली। उसकी स्मृति में उसके पति का चित्र उभर आया, इतना भारी और इतना नीरस, जैसे कोई चट्टान जिस पर काई उगी हो। वह कल्पना करने लगी कि अगर उक्रइनी नताशा से ब्याह कर ले और पावेल साशा से तो कैसा रहे।

"पर ऐसा क्यों है?" विषय के प्रति जोश में आकर उक्रइनी ने पूछा। "उसे समझना तो बिल्कुल उतनी ही आसान बात है जैसे अपनी नाक के अस्तित्व को देखना। इस सब का कारण यह है कि सब लोग एक ही स्तर पर नहीं हैं। हमें

उन सब को एक स्तर पर लाना होगा। मनुष्य ने अपनी बुद्धि से जितनी चीज़ों की कल्पना की है और अपने हाथों से जो कुछ बनाया है, उसे सब में बाँटना होगा! हमें चाहिए कि हम लोगों को भय और ईर्ष्या का गुलाम, लोभ और मूर्खता का बन्दी न बनायें!..."

इसके बाद उन दोनों के बीच इस तरह की बातें कई बार हुईं।

उक्रइनी को फ़ैक्टरी में फिर काम मिल गया और वह अपनी सारी मज़दूरी लाकर माँ को देने लगा। माँ उससे यह पैसे उतनी ही आसानी से स्वीकार कर लेती थी, जैसे पावेल से।

कभी-कभी अन्द्रेई उससे कहता :

"माँ, थोड़ा सा पढ़ोगी?" और उसकी आँखें चमक उठतीं।

माँ हँस पड़ती और दृढ़तापूर्वक इंकार कर देती। अन्द्रेई की आँखों की वह चमक उसे बुरी लगती थी।

"अगर तुम इसे ऐसी ही मज़ाक़ की बात समझते हो तो क्यों परेशान होते हो!" वह अपने मन में सोचती।

लेकिन अब वह अक्सर उससे किसी न किसी शब्द के अर्थ बताने को कहती, पर पूछते समय वह दूसरी तरफ़ देखती रहती और उसके स्वर से ऐसा प्रतीत होता कि जैसे उसे कोई दिलचस्पी न हो। अन्द्रेई समझ गया कि वह छुप-छुपकर अपने आप पढ़ती है और उसकी उस चुप्पी को समझकर उसने उससे पढ़ने को कहना बन्द कर दिया।

"अन्द्रेई, मेरी आँखें कमज़ोर होती जा रही हैं। मुझे ऐनक की ज़रूरत है," एक दिन माँ ने उससे कहा।

"यह हुई काम की बात!" उसने उत्तर दिया। "इतवार को मैं तुम्हें लेकर डॉक्टर के पास शहर चलूँगा, वहाँ ऐनक ले देंगे..."

19

तीन बार वह पावेल से मिलने की इजाजत लेने गयी और पके बालों, लाल-लाल गालों और बहुत बड़ी नाकवाले, बूढ़े राजनीतिक पुलिस-जनरल ने तीनों बार बड़ी नरमी से इंकार कर दिया।

"माँ, तुम्हें कम से कम एक हफ़्ते और इन्तज़ार करना पड़ेगा। हफ़्ते भर बाद देखेंगे, अभी तो बिल्कुल नामुमकिन है..."

वह बिल्कुल गोल-मटोल था और उसे देखकर माँ को पके हुए आलूबुखारे की याद आ जाती थी जिस पर बहुत दिन तक पड़े रहने के कारण फफूँदी जम गयी हो। वह हर वक़्त एक तेज़, पीली दँतखुदनी से अपने दाँत खोदता रहता था;

उसकी छोटी-छोटी कंजी आँखों में उदार मुस्कराहट खेलती रहती थी और उसके स्वर में हमेशा शिष्टता और मित्रता का भाव रहता था।

"वह बहुत शिष्ट है," माँ ने उक्रइनी को बताया। "हर दम मुस्कराता रहता है।"

"इसमें तो मुझे सन्देह नहीं!" उक्रइनी ने उत्तर दिया। "नेक तो वे सभी होते हैं – बड़ी नरमी से पेश आना और मुस्कराते रहना। उनसे कहा जाता है : 'यह आदमी बड़ा होशियार और ईमानदार है, बस ज़रा ख़तरनाक है। अगर बुरा न मानो तो इसे फाँसी पर लटका देना!' और वे मुस्कराकर उसे फाँसी पर लटका देते हैं और उसके बाद भी मुस्कराते ही रहते हैं।"

"जो हमारे घर की तलाशी लेने आया था, वह तो ऐसा नहीं था," माँ ने कहा। "सूरत से ही पाजी मालूम होता था...."

"आदमी तो उनमें कोई भी नहीं होता – वे सब बस हथौड़े होते हैं जिन्हें सिर पर मारने के लिए इस्तेमाल किया जाता है, ताकि हम अपने होश खो बैठें। वे हमारे जैसे लोगों को छील-छालकर बराबर करने के औज़ार होते हैं ताकि हमें ज़्यादा आसानी से काबू में किया जा सके। उन्हें ख़ुद छील-छालकर उनके हाकिमों के लिए सुविधाजनक रूप में ढाल दिया जाता है। वे बिना सोचे और बिना सवाल किये अपने हाकिमों की इच्छा पूरी कर देते हैं।"

आख़िरकार माँ को पावेल से मिलने की इजाजत मिल गयी। एक दिन इतवार को उसने अपने आपको जेलख़ाने के दफ़्तर के एक कोने में बड़े विनीत भाव से बैठा हुआ पाया। उस छोटी-सी, गन्दी और नीची छतवाली कोठरी में और भी कई लोग कैदियों से मिलने की प्रतीक्षा में बैठे थे। स्पष्टत: वे यहाँ पहली बार नहीं आये थे क्योंकि वे एक-दूसरे को जानते थे और वे बहुत चुपके-चुपके पुरानी पिटी हुई बातें कर रहे थे; ऐसा मालूम होता था कि ये बातें मकड़ी के जाले की तरह उनसे चिपक गयी हैं।

"सुना तुमने?" एक मोटी-सी औरत ने कहा; उसके गाल लटक आये थे और उसकी गोद में एक सफरी थैला रखा हुआ था। "आज बहुत सबेरे प्रार्थना के समय गिरजाघर की गान-मण्डली के नेता ने एक गानेवाले लड़के का कान फोड़ डाला..."

"ये गानेवाले लड़के सब बदमाश हैं!" एक अधेड़ उम्र के सज्जन ने जो पेंशनया"ता अफ़सर की वर्दी पहने हुए थे, अपना मत प्रकट किया।

एक नाटे कद का गंजा आदमी जिसकी टाँगें छोटी-छोटी, बाँहें लम्बी और ठोड़ी बाहर को निकली हुई थी, बौखलाया हुआ दफ़्तर में इधर से उधर टहल

रहा था और भर्राये हुए उत्तेजित स्वर में लगातार बके जा रहा था :

"क़ीमतें बढ़ती जा रही हैं, इसीलिए तो लोग उल्टी-सीधी हरकतें करते हैं। घटिया किस्म का गोश्त चौदह कोपेक पौंड मिलता है और रोटी का दाम फिर ढाई हो गया है..."

कभी-कभी कैदी वहाँ आते थे; अपनी भूरी वर्दी और चमड़े के भारी जूतों में वे सब एक जैसे ही दिखायी देते थे। उस अँधेरे से कमरे में घुसते ही वे आँखें मिचमिचाने लगते थे। उनमें से एक के पैरों में तो बेड़ियाँ भी पड़ी थीं।

जेल के वातावरण में एक विचित्र शान्ति थी और हर काम बड़े ही सुगम ढंग से होता था। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो ये सब लोग बहुत दिनों से इसके आदी हो चुके थे और उन्होंने अपने आपको भाग्य के सहारे छोड़ दिया था। कुछ लोग बड़े धैर्य के साथ अपनी सजा काट रहे थे; कुछ लोग शिथिल भाव से पहरा दे रहे थे; और कुछ दूसरे लोग शिथिल नियमितता के साथ बंदियों से मिलने आते थे; माँ का हृदय अधीर होकर काँप उठा। वह अपने चारों ओर की हर चीज़ को बड़े विस्मय से देख रही थी; उसे उस वातावरण की बोझिल सादगी पर आश्चर्य हो रहा था।

उसके पास नाटे कद की एक बुढ़िया बैठी थी जिसका चेहरा सूखा हुआ था पर आँखों में युवावस्था की चमक थी। वह अपनी पतली-सी गर्दन घुमा-घुमाकर सब की बातें सुन रही थी, और जब भी वह किसी को देखती उसकी आँखों में एक स्फूर्तिमय चमक आ जाती।

"तुम किससे मिलने आयी हो?" पेलागेया निलोवना ने धीरे से पूछा।

"मेरा बेटा है। यूनिवर्सिटी में पढ़ता था," बुढ़िया ने उच्च स्वर में उत्तर दिया। "और तुम?"

"मेरा भी बेटा है। मज़दूर है।"

"क्या नाम है?"

"व्लासोव।"

"कभी सुना नहीं उसके बारे में। बहुत दिन से है यहाँ?"

"सात हफ़्ते होने आये..."

"ओह, मेरा बेटा तो कोई दस महीने से है," बुढ़िया ने कहा; उसके स्वर में गर्व की झलक थी।

"हाँ, हाँ!" वह गंजा बूढ़ा बके जा रहा था। "किसी को सबर ही नहीं है... हर आदमी ग़ुस्सा होता है, हर आदमी चिल्लाता है, और क़ीमतें बढ़ती जाती हैं। और इसी हिसाब से आदमी की कदर कम होती जाती है। मगर इस सबको

रोकने के लिए कोई आवाज़ नहीं उठाता।"

"तुम बिल्कुल ठीक कहते हो!" अफ़सर ने कहा। "अब तो हद हो गयी है! अब तो किसी ऐसे आदमी की ज़रूरत है जो सख़्त आवाज़ से इन्हें हुकुम दे कि यह बकवास बन्द करें। इसी की ज़रूरत है। सख़्ती से कहने की..."

सब लोग इस बातचीत में हिस्सा लेने लगे, और बहस में गरमी आ गयी। हर आदमी जीवन के बारे में अपनी राय देने को उत्सुक था, पर वे सब दबी हुई आवाज़ में बोल रहे थे और माँ उनकी बातों से सहमत नहीं थी। घर पर बातें दूसरे ढंग की होती थीं, ज़्यादा साफ़, ज़्यादा सीधी-सादी और अधिक ऊँचे स्वर में भी।

चौकोर लाल दाढ़ीवाले मोटे से जेलर ने उसका नाम पुकारा, सिर से पाँव तक उसे देखा और "मेरे साथ आओ!" कहकर लँगड़ाता हुआ बाहर चल दिया।

चलते-चलते माँ की इच्छा हुई कि पीछे से एक धक्का दे ताकि वह जल्दी-जल्दी चले।

पावेल एक छोटी-सी कोठरी में खड़ा था; वह अपना हाथ बाहर निकाले मुस्करा रहा था। माँ ने धीरे से हँसकर उसका हाथ पकड़ लिया और जल्दी-जल्दी अपनी आँखें झपकाने लगी।

"सलाम... सलाम..." उसने कहा; उसे कुछ और कहने के लिए शब्द नहीं मिल रहे थे।

"माँ, शान्त हो जाओ!" पावेल ने कसकर उसका हाथ पकड़ते हुए उत्तर दिया।

"मैं शान्त हूँ।"

"माँ है न!..." जेलर ने आह भरकर कहा। "हाँ, तुम लोग एक-दूसरे से और ज़रा दूर खड़े हो, कुछ फासला छोड़कर," उसने कहा और ज़ोर से जम्हाई ली।

पावेल ने माँ से उसके स्वास्थ्य के बारे में और घर का हाल-चाल पूछा। माँ और प्रश्नों की आशा कर रही थी और इसी आशा से अपने बेटे की आँखों में आँखें डालकर देख रही थी, पर उसकी आशाओं पर पानी फिर गया। पावेल हमेशा की ही तरह गम्भीर था, कुछ पीला ज़रूर पड़ गया था और ऐसा लगता था कि उसकी आँखें पहले से कुछ बड़ी हो गयी हैं।

"साशा तुम्हें बहुत पूछती थी," माँ ने कहा।

पावेल की पलकें काँप गयीं, उसके मुख पर कोमलता आ गयी और वह मुस्करा दिया। माँ के हृदय में एक टीस-सी उठी।

"क्या ये लोग तुम्हें जल्दी ही छोड़ देंगे?" माँ ने व्यथा और झुँझलाहट के साथ पूछा। "आख़िर तुम्हें बन्द क्यों कर रखा है? पर्चे तो फ़ैक्टरी में फिर बाँटे

गये..."

पावेल की आँखें चमक उठीं।

"सच?" उसने जल्दी से पूछा।

"इन सब चीज़ों के बारे में बातें करना मना है," जेलर ने अलसाये हुए स्वर में कहा। "तुम लोग सिर्फ़ घरेलू बातें कर सकते हो..."

"क्या यह घरेलू बात नहीं है?" माँ ने प्रतिरोध किया।

"इसका जवाब तो मैं नहीं दे सकता। लेकिन इसकी मनाही है," जेलर ने उदासीनता से उत्तर दिया।

"अच्छी बात है, बताओ घर का क्या हाल है?" पावेल ने कहा। "क्या किया तुमने इतने दिन में?"

"अरे, मैं वह सब सामान लेकर फ़ैक्टरी जाती हूँ," माँ ने कहा; उसकी आँखों में एक शरारत-भरी चमक थी। कुछ देर रुककर उसने फिर मुस्कराकर कहना आरम्भ किया :

"बस, गोभी का शोरबा, दाल, तुम तो जानते हो वही चीज़ें, जो मारिया पकाती है, और... और... वही सब चीज़ें..."

पावेल समझ गया। उसने अपने बालों में हाथ फेरा और हँसी दबाने के कारण उसकी मुखाकृति विचित्र-सी हो गयी।

"चलो, अच्छा है कुछ काम तो मिल गया तुम्हें। अकेले तो नहीं बैठना पड़ता है!" पावेल ने बड़े प्यार से कहा; माँ ने उसे ऐसे स्वर में बोलते पहले कभी नहीं सुना था।

"जब पर्चे बँटे तो उन्होंने मेरी भी तलाशी ली," माँ ने किंचित गर्व के साथ सूचना दी।

"फिर वही बात!" जेलर ने नाराज़ होकर कहा। "कह दिया मैंने कि इसकी मनाही है! जेल में आदमी को इसीलिए बन्द किया जाता है कि उसे यह न मालूम होने पाये कि बाहर क्या हो रहा है, और तुम हो कि मानती ही नहीं! तुम्हें यह तो समझना ही चाहिए कि किन-किन बातों की मनाही है।"

"रहने दो, माँ!" पावेल ने कहा। "मत्वेई इवानोविच बड़े नेक आदमी है, उन्हें नाराज़ करने से कोई फ़ायदा नहीं। हम लोगों की बड़ी दोस्ती है। इत्तफाक की बात है कि आज तुम्हारी भेंट के समय इनकी ड्यूटी है। आम तौर पर तो नायब जेलर होता है।"

"वक़्त हो गया!" जेलर ने अपनी घड़ी की तरफ़ देखते हुए कहा।

"अच्छा, माँ, बहुत-बहुत धन्यवाद!" पावेल ने कहा। "तुम फिकर न करना। मुझे जल्दी ही छोड़ दिया जायेगा..."

पावेल ने बड़े प्यार से माँ को गले लगाया और उसे चूम लिया; प्रसन्नता के मारे भाव-विह्वल होकर माँ रोने लगी।

"बस चलो!" जेलर ने कहा और उसे साथ लेकर बरामदे में आगे बढ़ा। "रो नहीं, उसे छोड़ देंगे! सब को छोड़ देंगे... अब यहाँ बहुत ज़्यादा लोग हो गये हैं..."

घर पहुँचकर माँ ने उक्रइनी को सब कुछ बताया; उसके मुख पर मुस्कान खेल रही थी और उसकी भवें फड़क रही थीं।

"मैंने बड़ी तरकीब से उसे बता दिया। वह समझ गया। वह ज़रूर समझ गया होगा!" माँ ने आह भरकर कहा। "नहीं तो वह कभी इतना प्यार न दिखाता। उसने ऐसा आज तक कभी नहीं किया।"

"तुम भी अजीब हो!" उक्रइनी ने हँसकर कहा। "लोगों को दुनिया-भर की चीज़ों की ज़रूरत रहती है, मगर माँ प्यार के सिवा और कुछ नहीं चाहती..."

"मगर, अन्द्रेई, उन लोगों को देखते तुम!" माँ ने सहसा पुलकित स्वर में कहा। "कितने आदी हो जाते हैं वे! उनके बच्चे उनसे छीनकर जेलों में बन्द कर दिये जाते हैं और उनके व्यवहार से पता भी नहीं चलता कि कुछ हुआ भी है! वहाँ आते हैं, बैठकर इन्तज़ार करते हैं और ख़बरों पर चर्चा करते हैं। जब पढ़े-लिखे लोग इस तरह इन बातों के आदी हो जाते हैं तो हम अनपढ़ लोगों से तुम क्या आशा करते हो?"

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं," उक्रइनी ने अपने विशिष्ट व्यंग के भाव से उत्तर दिया। "आख़िरकार क़ानून की मार जितनी सख़्त हम लोगों पर पड़ती है उतनी उन पर नहीं पड़ती और फिर क़ानून हमारे मुकाबले में काम भी उन्हीं के ज़्यादा आता है। इसलिए अगर कभी-कभी उनके सिर पर भी क़ानून का एकाध वार हो जाता है तो वे नाक-भौंह सिकोड़ते हैं पर ज़्यादा नहीं। दूसरे के डण्डे के मुकाबले अपने डण्डे की मार खाना ज़्यादा आसान होता है..."

20

एक रात जब माँ मेज के पास बैठी मोजा बुन रही थी और उक्रइनी उसे प्राचीन रोम के दास-विद्रोह के बारे में पढ़कर सुना रहा था, किसी ने ज़ोर से दरवाज़ा खटखटाया और जब उक्रइनी ने दरवाज़ा खोला तो वेसोवश्चिकोव बगल में गठरी दबाये हुए अन्दर आया। वह अपनी टोपी सिर पर पीछे की ओर सरकाये हुए था और उसके पैर घुटनों तक कीचड़ में सने हुए थे।

"मैं इधर से जा रहा था, देखा कि रोशनी हो रही है, सोचा मिलता चलूँ। जेल से आ रहा हूँ!" उसने विचित्र स्वर में घोषणा की। पेलागेया निलोवना का

हाथ अपने हाथ में लेकर उसने बड़े तपाक से हाथ मिलाया।

"पावेल ने सलाम कहा है..." उसने कहा।

वह कुछ अटपटे ढंग से बैठ गया और उसने कमरे पर उदायी और शंका से भरी हुई दृष्टि डाली।

माँ को वह अच्छा नहीं लगता था। उसके चौकोर घुटे हुए सिर और छोटी-छोटी आँखों में उसे कुछ ऐसी बात दिखायी देती थी जिससे उसे भय लगता था। पर आज उसे देखकर माँ को ख़ुशी हुई और उससे बातें करते समय वह बड़े प्यार से मुस्कराती रही।

"कितने दुबले हो गये हो तुम! अन्द्रेई, इसे थोड़ी-सी चाय पिला दें..."

"मैं तो समोवार गरम कर ही रहा हूँ!" उक्रइनी ने रसोई में से आवाज़ दी।

"अच्छा, तो पावेल कैसा है? तुम्हारे अलावा किसी और को भी छोड़ा है?"

निकोलाई ने अपना सिर झुका लिया।

"पावेल तो वहाँ धीरज के साथ इन्तज़ार कर रहा है! मेरे अलावा और किसी को नहीं छोड़ा है," उसने आँखें उठाकर माँ के चेहरे की तरफ़ देखा और दाँत दबाकर धीरे-धीरे बोला, "मैंने उनसे कहा : 'बस मैं बहुत भुगत चुका, मुझे छोड़ दो!... नहीं छोड़ोगे तो मैं एकाध का ख़ून कर दूँगा और ख़ुद भी मर जाऊँगा।' इसलिए उन्होंने मुझे छोड़ दिया।"

"आह!" माँ ने कहा, उसे एक आघात-सा पहुँचा। निकोलाई की कुछ-कुछ मुँदी हुई तेज़ आँखों से मिलते ही माँ की आँखें अनायास ही झपक गयीं।

"फ़्योदोर माजिन कैसा है?" उक्रइनी ने रसोई में से चिल्लाकर पूछा। "अब भी कविताएँ लिखता है क्या?"

"हाँ! मेरी समझ में नहीं आता यह रोग!" निकोलाई ने सिर को झटका देते हुए कहा। "आख़िर वह अपने को समझता क्या है? कोई मैना है कि पिंजरे में बन्द किया और गाने लगी! लेकिन एक बात मेरी समझ में आती है : मैं घर जाना नहीं चाहता..."

"घर जाकर करोगे भी क्या?" माँ ने विचारमग्न होकर कहा। "ख़ाली घर, न चूल्हा, न चक्की, हर चीज़ बेजान, सर्दी में ठिठुरी हुई..."

वह कुछ भी न बोला, बस दबी-दबी नज़र से माँ को देखता रहा। आख़िरकार उसने जेब से सिगरेट का पैकेट निकालकर एक सिगरेट जलायी और अपने चेहरे के सामने विलीन होते धुएँ पर नज़र टिकाये हुए झुँझलाए हुए कुत्ते की तरह खीसें निकाल दीं।

"हाँ, मैं समझता हूँ हर चीज़ बेजान ही होगी," उसने कहा। "फ़र्श पर सर्दी से अकड़े हुए तिलचट्टे होंगे। सर्दी में ठिठुरे हुए चूहे भी होंगे। पेलागेया निलोवना,

क्या रात-भर के लिए मुझे अपने यहाँ रहने दोगी?" उसने माँ की ओर देखे बिना भर्रायी हुई आवाज़ में पूछा।

"क्यों नहीं, ज़रूर!" माँ ने जल्दी से उत्तर दिया। न जाने क्यों उसकी उपस्थिति उसे अखर रही थी।

"आजकल बच्चों को अपने माँ-बाप तक पर शरम आती है..."

"क्या मतलब?" माँ ने चौंककर पूछा।

उसने कनखियों से माँ को देखा और फिर आँखें मूँद लीं जिसके कारण उसका चेचक के दागों से भरा हुआ चेहरा सूरदासों जैसा लगने लगा।

"मैं कहता हूँ कि बच्चों को अपने माँ-बाप पर शरम आती है!" उसने आह भरकर फिर कहा। "पावेल को तुम पर कभी शरम नहीं आती, मगर मुझे अपने बाप पर शरम आती है। मैं अब कभी उसके घर में क़दम नहीं रखूँगा। मेरा न कोई बाप है न कोई घर! अगर मैं पुलिस की हिरासत में न होता तो साइबेरिया चला जाता और वहाँ के निर्वासितों को छुड़ा देता – उन्हें भगाने में मदद देता..."

माँ का संवेदनशील हृदय समझ गया कि उसे बड़ी व्यथा है पर माँ को उससे कोई सहानुभूति नहीं थी।

"अगर तुम ऐसा समझते हो... तो तुम्हें चले जाना चाहिए!" माँ ने केवल इस विचार से कहा कि कहीं उसके कुछ न कहने पर वह बुरा न मान जाये।

अन्द्रेई रसोई में से आया।

"क्या बात कर रहे थे?" उसने हँसकर पूछा।

"मैं जाकर कुछ खाने का प्रबन्ध करती हूँ," माँ ने उठते हुए कहा।

निकोलाई कुछ देर तक बड़े ध्यान से उक्रइनी को देखता रहा फिर सहसा बोला :

"मैं समझता हूँ कि कुछ लोगों को जान से मार देना चाहिए!"

"अरे! मगर क्यों?" उक्रइनी ने पूछा।

"ताकि उनसे छुटकारा मिले..."

लम्बा और दुबला-पतला उक्रइनी कमरे के बीच में जेब में हाथ डाले अपनी एड़ियों के बल खड़ा झूम रहा था और निकोलाई को घूर रहा था, जो सिगरेट के धुएँ के बादलों में घिरा हुआ कुर्सी पर जमकर बैठा हुआ था। उसके चेहरे पर कहीं-कहीं लाली के धब्बे थे।

"उस ईसाई गोरबोव का तो मैं सिर फोड़ ही दूँगा, तुम देख लेना!"

"क्यों?"

"वह चुगलखोर और भेदिया है। मेरे बाप को जिन लोगों ने तबाह किया है उनमें वह भी है, उन्होंने बाप को बिल्कुल मालिकों का पिट्‌ठू बना दिया है,"

वेसोवश्चिकोव ने अन्द्रेई की तरफ़ देखते हुए कहा; उसके चेहरे पर गम्भीरता और विद्वेष का भाव था।

"तो यह बात है!" उक्रइनी बोला। "मगर कोई तुम्हें इस बात के लिए दोषी नहीं ठहरायेगा। सिर्फ़ बेवक़ूफ़!..."

"समझदार और बेवक़ूफ़ सब एक जैसे ही हैं!" निकोलाई अपनी बात पर अड़ा रहा। "अपने को और पावेल को ही देख लो। तुम दोनों समझदार हो, लेकिन क्या मैं भी तुम्हारी नज़र में वैसा ही हूँ जैसा फ़्योदोर माजिन या समोइलोव या जैसे तुम दोनों एक-दूसरे के लिए हो! देखो, झूठ न बोलना। ख़ैर, तुम्हारी बात का यकीन तो मैं यों भी नहीं करूँगा... तुम सब लोग मुझे दूर रखते हो, मुझसे खुलकर मिलते नहीं..."

"निकोलाई, तुम्हारी आत्मा रोगी है!" उक्रइनी ने उसके बगल में बैठते हुए बड़े कोमल भाव से धीमे स्वर में कहा।

"मेरी आत्मा तो रोगी है ही, पर तुम्हारी भी रोगी है.... अन्तर बस इतना है कि तुम समझते हो कि तुम्हारी आत्मा का रोग हमारी आत्मा के रोग से ऊँचे दर्जे का है। मैं यही कह सकता हूँ कि हम सब एक-दूसरे के साथ कुत्ते के पिल्लों जैसा बर्ताव करते हैं। करते हैं कि नहीं? बोलो!"

वह अपनी पैनी दृष्टि अन्द्रेई के चेहरे पर गड़ाये दाँत खोले उसके उत्तर की प्रतीक्षा करता रहा। चेचक के दागों से भरे हुए उसके चेहरे का भाव नहीं बदला, पर उसके मोटे-मोटे होंठ यों फड़कने लगे मानो किसी गर्म चीज़ से जल गये हों।

"मैं कुछ नहीं कह सकता!" उक्रइनी ने वेसोवश्चिकोव के द्वेषपूर्ण तेवर देखकर उदास भाव से मुस्कराते हुए उत्तर दिया। "मैं जानता हूँ कि जब किसी आदमी के दिल के सब घाव हरे हो गये हों उस समय उससे बहस करने से उसे कष्ट होता है। भाई, मैं इस बात को जानता हूँ!"

"मुझसे बहस करना बेकार है – मैं बहस कर ही नहीं सकता," निकोलाई ने आँखें झुकाकर अस्फुट स्वर में कहा।

"ऐसा मालूम होता है," उक्रइनी ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, "कि हममें से हर एक अलग-अलग अपने काँटेदार रास्ते पर चलता रहा है और अपनी-अपनी मुसीबत की घड़ी में हममें से हर एक तुम्हारी तरह व्यथा से तड़प उठा है..."

"तुम मुझे क्या समझा रहे हो!" वेसोवश्चिकोव ने धीरे-धीरे कहा। "मेरी आत्मा खूँखार भेड़िये की तरह हुँकार रही है!..."

"मैं तुम्हें कुछ समझाना नहीं चाहता! लेकिन मैं इतना जानता हूँ कि यह लहर गुजर जायेगी। मुमकिन है पूरी तरह नहीं, लेकिन फिर भी गुजर जायेगी।"

वह धीरे से हँसा और निकोलोई के कन्धे पर हाथ मारकर कहता रहा।

"यह बच्चों की बीमारी की तरह है, जैसे खसरा होती है। यह रोग हममें से हर एक को कभी न कभी होता ज़रूर है। जो लोग मज़बूत होते हैं, उन पर असर कम होता है, जो कमज़ोर होते हैं उन पर असर ज़्यादा होता है। यह रोग ठीक उसी घड़ी हमें आ दबोचता है जब हम अपने आपको पहचानना शुरू करते हैं, पर तब तक न तो हमने जीवन को ही पूरी तरह देखा होता है और न उसमें अपना स्थान ही पहचाना होता है। उस समय हमें ऐसा मालूम होता है कि मानो हम दुनिया की सबसे बड़ी नियामत हैं और हर आदमी हमारे ही पीछे पड़ा है। मगर कुछ समय बाद हम समझने लगते हैं कि दूसरों के सीने में जो आत्मा है वह भी हमारी आत्मा से कमज़ोर नहीं है, और जब हम यह समझने लगते हैं तो ज़्यादा आसानी हो जाती है। तब हमें शरम आती है कि हम नक्कारख़ाने में अपनी तूती की आवाज़ लेकर क्यों गये, किसने सुना होगा उसे वहाँ? लेकिन फिर हमें पता लगता है कि नहीं, हमारी तूती की आवाज़ पूरे संगीत में एक अच्छा योगदान है, यह बात अलग है कि अगर हम अकेले हों तो बड़े-बड़े लोग हमें मक्खी की तरह कुचल डालते हैं। समझ में आया, मैं क्या कहने की कोशिश कर रहा हूँ?"

"शायद," निकोलाई ने सिर हिलाकर कहा। "लेकिन मैं... मैं किसी बात पर यकीन नहीं करता!"

उक्रइनी हँसकर उछलकर खड़ा हो गया और बहुत ज़ोर-ज़ोर से पाँव पटकता हुआ इधर-उधर टहलने लगा।

"मैं भी एक ज़माने में नहीं करता था, काठ के उल्लू!"

"काठ का उल्लू क्यों हूँ मैं?"

"क्योंकि तुम्हारी सूरत बताती है।"

सहसा निकोलाई मुँह फाड़कर ज़ोर से हँसने लगा।

"क्यों, क्या बात है?" उक्रइनी ने उसके सामने रुककर विस्मय से पूछा।

"मैं सोच रहा था कि वह भी कितना बेवक़ूफ़ होगा जो तुम्हारा दिल दुखाये," निकोलाई ने उत्तर दिया।

"कोई मेरा दिल क्यों दुखाने लगा?" उक्रइनी ने अपने कन्धे बिचकाकर कहा।

"यह तो मैं नहीं जानता," वेसोवश्चिकोव ने विनोदपूर्वक मुस्कराकर कहा। "मेरा तो मतलब बस यह था कि अगर कोई कभी तुम्हारा दिल दुखाये तो उसे बहुत बुरा लगता होगा।"

"अच्छा, यह बात है!" उक्रइनी हँस दिया।

"अन्द्रेई!" माँ ने रसोई में से पुकारा।

अन्द्रेई बाहर चला गया।

कमरे में अकेले बैठे-बैठे वेसोवश्चिकोव ने चारों तरफ़ नज़र दौड़ायी, फिर एक टाँग फैलाकर, जिस पर वह चमड़ौदा बूट पहने था, बड़े ध्यान से उसे देखा और अपनी मोटी-मोटी पिंडलियों को टटोलकर देखने लगा। फिर अपना मोटा-सा हाथ उठाकर उसने अपनी हथेली और छोटी-छोटी उँगलियों का निरीक्षण किया, जिन पर पीले-पीले बाल उगे हुए थे। झुँझलाहट के साथ हाथ हिलाकर वह उठ खड़ा हुआ।

जब अन्द्रेई समोवार लेकर कमरे में आया उस समय निकोलाई आईने के सामने खड़ा हुआ था।

"बहुत दिन बाद मैंने अपना यह चौखटा देखा..." उसने कहा और फिर मुँह टेढ़ा करके मुस्कराते हुए बोला, "क्या चौखटा पाया है!"

"तुम्हें क्या फिकर है?" अन्द्रेई ने कौतूहल से उसकी ओर देखते हुए पूछा।

"साशा कहती है कि आदमी के चेहरे में उसकी आत्मा प्रतिबिम्बित होती है।"

"सब बकवास है!" उक्रइनी ने चिल्लाकर कहा। "उसकी खुद की नाक कंटिया की तरह और गालों की हड्डियाँ चाकू के फाल जैसी हैं पर उसकी आत्मा सितारे के तरह चमकदार है!"

"निकोलाई ने कनखियों से उसकी तरफ़ देखा और खीसें निकाल दीं। वे चाय पीने बैठ गये।

निकोलाई ने एक बड़ा-सा आलू उठाया और रोटी के टुकड़े पर नमक छिड़ककर धीरे-धीरे चबा-चबाकर खाने लगा, जैसे बैल जुगाली करता है।

"यहाँ का क्या हाल-चाल है?" उसने मुँह में कौर भरे-भरे ही पूछा।

जब अन्द्रेई उसे इस बात का सुखद विवरण दे चुका कि वे कारख़ाने में किस तरह प्रचार कर रहे थे, तो वह फिर उदास हो गया।

"बहुत समय लग रहा है, बहुत ज़्यादा! हमें और तेज़ी से काम करना चाहिए..."

उसे देखकर माँ के हृदय में उसके प्रति एक विद्वेष की भावना जागृत हुई

"ज़िन्दगी कोई घोड़ा तो है नहीं कि उसे चाबुक से मार-मारकर आगे बढ़ाया जा सके!" अन्द्रेई बोला।

निकोलाई अपनी बात पर अड़ा रहकर सिर हिलाता रहा।

"बहुत समय लग रहा है! मैं इतना इन्तज़ार नहीं कर सकता! मैं क्या करूँ?"

उक्रइनी के चेहरे को घूरते हुए उसने अपनी लाचारी प्रकट की और उत्तर

की प्रतीक्षा करने लगा।

"हम सबको पढ़ना और दूसरों को पढ़ाना है, यह काम है हमारा!" अन्द्रेई ने सिर झुकाकर कहा।

"आख़िर हम लड़ना कब शुरू करेंगे?" वेसोवश्चिकोव ने पूछा।

"यह तो मैं नहीं जानता कि हम लड़ना कब शुरू करेंगे, पर इतना मैं ज़रूर जानता हूँ कि उससे पहले ही वे कई बार हमें मार-मारकर हमारे शरीर में भूसा भर देंगे," उक्रइनी ने हँस-हँसकर उत्तर दिया। "जहाँ तक मेरी समझ में आता है अपने हाथों में हथियार लेने से पहले हमें अपने दिमागों को लैस करना पड़ेगा...."

निकोलाई ने फिर खाना शुरू कर दिया और माँ आँखें बचाकर उसके चौड़े-चकले चेहरे को देखने लगी; वह उसके चेहरे में कोई ऐसी चीज़ ढूँढ़ रही थी जो उसके हृदय से इस लम्ब-तगड़े बलिष्ठ शरीर वाले व्यक्ति के प्रति विद्वेष की भावना दूर कर दे।

उसकी छोटी-छोटी आँखों की काँटों की तरह चुभती हुई पैनी दृष्टि माँ पर पड़ी और माँ की भवें फड़कने लगीं। अन्द्रेई बेचैन था – वह सहसा हँस-हँसकर बातें करने लगता और फिर यकायक सीटी बजाने लगता।

माँ को ऐसा लगा कि वह जानती है कि उसे क्या बात चिन्तित कर रही है। निकोलाई अपने ही विचारों में खोया हुआ बैठा था और अन्द्रेई जो कुछ कहता था उसका वह बहुत अनमनेपन से रूखा-सा जवाब देता था।

उस छोटे-से कमरे में माँ और अन्द्रेई दोनों का दम घुटने लगा; वहाँ का वातावरण दोनों के लिए असह्य हो उठा। बारी-बारी से कभी माँ और कभी अन्द्रेई आँखें बचाकर अपने अतिथि की ओर देखते।

आख़िरकार निकोलाई उठ खड़ा हुआ और बोला :

"मैं तो अब सोऊँगा। वहाँ जेल में बैठे-बैठे तो मैं पागल हो गया; फिर यकायक एक दिन उन्होंने मुझे छोड़ दिया और मैं चला आया। मैं बहुत थक गया हूँ।"

सिर झुकाकर वह रसोई में गया और थोड़ी देर तक कुछ इधर-उधर चलने-फिरने के बाद मानो मर ही गया। माँ ने कान लगाकर सुना, पर कोई आवाज़ सुनायी न दी।

"वह बड़ी भयानक बातें सोच रहा है..." माँ ने अन्द्रेई से चुपके से कहा।

"बड़ा विकट आदमी है!" उक्रइनी ने सिर हिलाकर कहा। "मगर ठीक हो जायेगा! एक ज़माने में मैं भी ऐसा ही था। हृदय में ज्योति जगने से पहले बहुत धुआँ उठता है। माँ, जाओ सो जाओ; मैं थोड़ी देर पढ़ूँगा।"

वह एक कोने में चली गयी, जहाँ सूती कपड़े के पर्दों के पीछे एक चारपाई पड़ी हुई थी और बड़ी देर तक अन्द्रेई उसके आहें भरकर प्रार्थना करने की आवाज़ सुनता रहा। जल्दी-जल्दी अपनी किताब के पन्ने उलटता हुआ वह उत्तेजना से अपने माथे पर हाथ फेरता, लम्बी-लम्बी उँगलियों से मूँछे ऐंठता और पाँव रगड़ता रहा। घड़ी टिक-टिक कर रही थी। हवा पेड़ों में सांय-सांय कर रही थी।

"हे भगवान!" माँ एक क्षीण स्वर सुनायी दिया। "दुनिया में जितने लोग हैं सब मुसीबत के मारे हैं। न जाने सुखी कौन है?"

"सुखी लोग भी हैं, माँ!" अन्द्रेई ने उत्तर दिया। "जल्दी ही सुखी लोग बहुत हो जायेंगे, बहुत ज़्यादा!"

21

नित्य नयी घटनाओं के क्रम के रूप में जीवन जल्दी-जल्दी बीतता रहा। प्रतिदिन कोई न कोई नयी बात होती, पर माँ अब इन घटनाओं से आतंकित नहीं होती थी। उसके घर में अनजाने लोगों का आना-जाना बढ़ गया, जो रात को आकर चुपके-चुपके अन्द्रई से बातें करते; फिर वे अपने-अपने कोट का कालर खड़ा करके और आँखों पर अपनी टोपी झुकाकर दबे पाँव चुपचाप अँधेरे में विलीन हो जाते। माँ को उनमें से हर एक के हृदय में दबी हुई उत्तेजना का आभास था। ऐसा मालूम होता था कि उनमें से हर एक गाना और हँसना चाहता था, पर उनके पास इसके लिए समय नहीं था। वे हमेशा जल्दी में रहते थे। उनमें से कुछ गम्भीर और व्यंगपूर्ण थे; कुछ ऐसे थे जो मस्त रहते थे और उनके चेहरों पर युवावस्था का उल्लास चमकता था; कुछ ऐसे भी थे जो शान्त और विचारशील थे। माँ ने देखा कि उन सब में विश्वास और लगन थी और यद्यपि वे एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न थे पर ऐसा लगता था कि उन सब के चेहरे मिलकर एक ही चेहरे में बदल गये थे जो एम्माउस की ओर जाते समय ईसा मसीह के चेहरे से मिलता-जुलता था : दुबला-पतला चेहरा, उस पर शान्त दृढ़ता का भाव, काली-काली स्वच्छ आँखें, जिनकी दृष्टि में कोमलता भी थी और साथ ही कठोरता भी।

माँ ने उन्हें गिना और अपनी कल्पना में उसने पावेल को उसके शत्रुओं की नज़रों से बचाने के लिए उसके चारों तरफ़ एक भीड़ एकत्रित की।

एक दिन शहर से घुँघराले बालोंवाली एक चंचल लड़की अन्द्रेई के लिए एक बण्डल लेकर आयी। जाते हुए उसने पीछे घूमकर अपने चमकते हुए पुलकित नेत्रों से माँ को देखा।

"अच्छा, कामरेड, सलाम!" उसने कहा।

"सलाम," माँ ने अपनी मुस्कराहट को रोकते हुए कहा।

लड़की को बाहर छोड़ आने के बाद वह जाकर खिड़की पर खड़ी हो गयी और अपनी इस कामरेड को छोटे-छोटे फुर्तीले क़दमों से सड़क पर जाते हुए देखकर मुस्कराती रही; वह वसन्त के फूल की तरह निर्मल और तितली की तरह चंचल थी।

"कामरेड!" जब लड़की आँख से ओझल हो गयी तो माँ ने बुदबुदाकर कहा। "मेरी प्यारी बच्ची! भगवान करे तुम्हें कोई ऐसा सच्चा जीवन-साथी मिल जाये जो उम्र-भर तुम्हारा साथ दे सके!"

शहर से आनेवाले इन लोगों में कोई ऐसी बात थी जो बच्चों से बहुत मिलती-जुलती थी जिस पर माँ मन ही मन बड़े गर्व से मुस्कराती थी। पर उनका अटल विश्वास उसके हृदय को छू लेता था और उसे एक सुखद आश्चर्य भी होता था; दिन-प्रतिदिन उनकी लगन उसके लिए अधिकाधिक स्पष्ट होती गयी, न्याय की विजय के बारे में उनके स्वप्न उसके हृदय को गरमाते थे और उसमें पुलक भी भरते थे, पर न जाने क्यों जब भी वह उनकी बातें सुनती वह उदास होकर आह भरती। उनकी बेहद सादगी और अपने सुख की हर बात के प्रति उनकी सराहनीय उदासीनता उसे विशेष रूप से प्रभावित करती थी।

जीवन के बारे में वे जो कुछ कहते थे उसमें से बहुत कुछ वह समझने लगी थी; उसे ऐसा लगता था कि उन्होंने मनुष्य की विपदा के वास्तविक स्रोत का पता लगा लिया है और वह उनकी अधिकांश धारणाओं को स्वीकार करने लगी थी। पर अपने हृदय की गहराई से उसे यह विश्वास नहीं था कि वे जीवन को नये ढंग से ढालने में सफल होंगे या समस्य श्रमिक जनता को उस ज्योति के चारों ओर एकत्रित कर सकेंगे जो उन्होंने जगायी थी। हर आदमी को इस बात की चिन्ता थी कि आज वह अपना पेट कैसे भरे; कोई भी इसे कल पर उठा रखने को तैयार नहीं था! बहुत थोड़े-से लोग उस लम्बे और दुर्गम पथ पर चलने को तैयार होंगे; बहुत कम लोगों के पास वह दृष्टि होगी कि वे इस पथ के अन्त में आनेवाले मानव के बन्धुत्व के राज्य की भव्य कल्पना कर सकें। इसीलिए वह इन सब नेक लोगों को उनकी दाढ़ियों और प्रौढ़ चेहरों के बावजूद, जो बहुधा थकन से मुरझाये रहते थे, अपने बच्चों की तरह समझती थी।

"बेचारे, मेरे प्यारे बच्चे!" वह सोचती और सिर हिला देती।

पर उनमें से हर एक ईमानदार, गम्भीर और बुद्धिसंगत जीवन व्यतीत कर रहा था। वे दूसरों की भलाई की बातें करते थे और जो कुछ वे स्वयं जानते थे उसे दूसरों को बताने के लिए कोई कोशिश उठा न रखते थे। वह इस बात को

समझने लगी थी कि इस जीवन के संकटों के बावजूद लोग उससे प्यार क्यों करते थे और एक आह भरकर वह स्वयं अपने बीते हुए जीवन के अन्धकारमय संकरे मार्ग पर दृष्टि डालती। धीरे-धीरे उसके हृदय में यह शान्त चेतना जागृत हुई कि इस नये जीवन के लिए उसका भी महत्त्व है। पहले वह समझती थी कि किसी को उसकी ज़रूरत नहीं है पर अब वह इस बात को स्पष्ट रूप से देखने लगी थी कि अनेक लोगों को उसकी ज़रूरत थी और यह एक नया और सुखद आभास था, एक ऐसा आभास जिसकी बदौलत वह अपना मस्तक गर्व से ऊँचा करके चल सकती थी..

वह नियमित रूप से पर्चे लेकर फ़ैक्टरी में जाती। इसे वह अपना कर्तव्य समझने लगी थी। पुलिसवाले उसे वहाँ देखने के आदी हो चुके थे और वे उसकी ओर कोई ध्यान नहीं देते थे। कई बार उन्होंने उसकी तलाशी भी ली, पर हर बार पर्चे बँटने के दूसरे दिन। जब उसके पास कुछ भी न होता तब वह जानबूझकर सन्तरियों और जासूसों के मन में शंका उत्पन्न करती; वे उसे पकड़कर उसकी तलाशी लेते और वह बिगड़ती हुई इस अपमान पर बनावटी रोष प्रकट करती। उन्हें बेवक़ूफ़ बनाने के बाद वह अपनी सूझबूझ पर गर्व से फूली हुई वहाँ से चल देती। उसे इस मज़ाक़ में बड़ा आनन्द आता था।

वेसोवश्चिकोव को फ़ैक्टरी में दुबारा काम पर नहीं रखा गया। उसे एक लकड़ी की टाल पर लकड़ी के कुन्दे, तख़्ते और ईंधन ढोने का काम मिल गया। माँ प्राय: हर दिन उसे अपना बोझ ढोकर ले जाते देखती। पहले तो दो काले मरियल घोड़े दिखायी देते जिनके पाँव बोझ खींचने के परिश्रम से काँपते रहते थे; थकन के मारे उनके सिर डोलते रहते थे और वे अपनी नीरस व्यथित आँखें झपकाते रहते थे; उनके पीछे गीली लकड़ी का खड़बड़ करता हुआ बड़ा-सा लट्ठा या तख़्तों का ढेर होता था जिनके हिलने-डुलने से बड़ी खड़बड़ होती थी। रासें ढीली छोड़े हुए निकोलाई घोड़ों के साथ-साथ चलता रहता था। मैला शरीर, फटे कपड़े, भारी जूते, टोपी सिर पर पीछे की ओर सरकी हुई... वह इतना बेडौल और भद्दा दिखायी देता था जैसे ज़मीन में से किसी पेड़ का ठूँठ उखाड़ लिया गया हो। चलते समय उसकी आँखें ज़मीन पर गड़ी रहती थीं और उसका सिर भी ऊपर-नीचे डोलता रहता था। उसके घोड़े सामने से आती हुई गाड़ियों या लोगों से अन्धों की तरह टकरा जाते थे। लोग झुँझलाकर निकोलाई पर चिल्लाते और भिड़ों के झुण्ड की तरह चारों तरफ़ से उस पर गालियों की बौछार होने लगती। वह न तो कभी जवाब देता और न सिर उठाकर ऊपर देखता ही, बस कर्कश स्वर में सीटी बजाता रहता और अपने घोड़ों से कहता रहता, “चल बे, चल!”

जब कभी अन्द्रेई किसी विदेशी अखबार की नवीनतम प्रति या कोई पर्चा

पढ़ने के लिए अपने साथियों को जमा करता तो निकोलाई भी आकर एक कोने में बैठ जाता और एक–दो घण्टे तक चुपचाप सुनता रहता। पढ़ना समाप्त करके वे नौजवान गरमागरम बहस करते, जिसमें वेसोवश्चिकोव कभी हिस्सा न लेता। लेकिन सब लोगों के चले जाने के बाद भी वह बैठा रहता और अकेले में अन्द्रेई से बातें करता।

“सबसे ज़्यादा दोष किसका है?” वह मुँह लटकाकर पूछता।

“दोष तो उस आदमी का है जिसने सबसे पहले यह कहा होगा कि ‘यह मेरा है!’ वह आदमी तो कई हज़ार बरस पहले मर चुका है, इसलिए उस पर गुस्सा करने से कोई फ़ायदा नहीं,” अन्द्रेई मज़ाक़ में उत्तर देता पर उसकी आँखों में एक बैचैनी रहती।

“और अमीर लोग? और वे जो उनको सहारा देते हैं?”

उक्रइनी सिर पर हाथ रख लेता और अपनी मूँछें नोचता हुआ सीधे–सादे शब्द चुन–चुनकर जीवन और लोगों के बारे में वह सब कुछ उसे बताने का प्रयत्न करता जो वह जानता था। उसकी राय में दोष सभी लोगों का था, पर इससे निकोलाई को सन्तोष न होता। अपने मोटे–मोटे होंठ भींचकर वह सिर हिलाकर इंकार करता रहता और कहता कि बात यों नहीं है। आख़िरकार वह उठकर चला जाता, उदास और असन्तुष्ट।

“दोष किसी का तो होगा ही,” एक दिन उसने कहा, “और वे लोग यहीं हैं! हमें बड़ी निर्ममता के साथ अपने सारे जीवन को जंगली घास के खेत की तरह जोत डालना पड़ेगा!”

“एक दिन टाइम–कीपर इसाई भी तुम्हारे बारे में यही कह रहा था!” माँ ने उसे याद दिलाया।

“इसाई?” वेसोवश्चिकोव ने कुछ देर रुककर पूछा।

“हाँ! वह बड़ा ख़तरनाक आदमी है! हर जगह चोरों की तरह घूमता रहता है और लोगों से न जाने क्या–क्या पूछता रहता है। वह यहाँ भी आने लगा है और खिड़की में से झाँकता है...”

“खिड़की में से झाँकता है?” निकोलाई ने दुहराया।

माँ चारपाई पर लेटी हुई थी, इसलिए वह उसकी सूरत तो नहीं देख सकती थी पर जब उक्रइनी ने जल्दी से कहा, “अगर उसे कोई और काम नहीं है तो आकर झाँकने दो, हमारा क्या लेता है...,” तब माँ को आभास हुआ कि उसने कितनी मूर्खता की बात कही थी।

“यह बात नहीं है!” निकोलाई बोला। “वह उन लोगों में से है जिनका दोष है!”

"क्या दोष है उसका?" उक्रइनी ने तड़ से पूछा। "यही न कि वह बेवक़ूफ़ है?"

वेसोवश्चिकोव बिना कोई उत्तर दिये बाहर चला गया।

उक्रइनी थका-थका-सा धीरे-धीरे कमरे में टहलने लगा; उसकी लम्बी-लम्बी मकड़े जैसी टाँगों के घिसटने की आवाज़ आ रही थी। उसने हमेशा की तरह अपने जूते उतार दिये थे ताकि पेलागेया निलोवना की नींद में विघ्न न पड़े। पर माँ सो नहीं रही थी।

"मुझे उससे डर लगता है!" निकोलाई के चले जाने के बाद माँ ने चिन्तित स्वर में कहा।

"हूँ!.." उक्रइनी ने उनींदे स्वर में कहा। "वह बड़ा झक्की है। माँ, उसके सामने अब कभी इसाई की बात न करना। इसाई सचमुच जासूस है।"

"इसमें हैरानी की बात भी क्या है?" माँ ने उत्तर दिया। "उसका तो धर्म-पिता भी राजनीतिक पुलिस में था।"

"मुमकिन है निकोलाई उसे किसी दिन पीट दे," उक्रइनी ने कुछ बेचैनी के साथ कहा। "देखा तुमने कि शासन करने वाले इन सभ्य लोगों ने आम लोगों में क्या भावनाएँ पैदा कर दी हैं? जब निकोलाई जैसे लोग यह समझने लगेंगे कि उसने साथ कैसा अन्याय किया गया है और उनका धीरज अपनी सीमा को पहुँच जायेगा तब क्या होगा? पृथ्वी और आकाश पर ख़ून की नदियाँ बह जायेंगी..."

"अन्द्रेई, कितना भयानक होगा!" माँ ने भयभीत स्वर में चुपके से कहा।

"लेकिन अगर कोई मक्खी न खाये तो कै क्यों हो!" अन्द्रेई ने एक मिनट रुककर कहा। "मगर मालिकों के अत्याचार से आम लोगों ने जो आँसुओं के सागर बहाये हैं, उनसे इन मालिकों के ख़ून की एक-एक बूँद पानी हो जायेगी..."

वह धीरे से हँसा और फिर बोला :

"इस बात से दिल को ख़ुशी नहीं होती मगर यह सच बात है!"

22

एक दिन इतवार को माँ बाज़ार से कुछ सौदा लेकर घर लौटी और दरवाज़ा खोलते ही चौखट पर ख़ुशी के मारे मूर्तिवत् खड़ी रह गयी। अन्दर के कमरे से पावेल की भारी आवाज़ आ रही थी।

"लो वह आ गयी!" उक्रइनी ने चिल्लाकर कहा।

माँ ने पावेल को जल्दी से मुड़ते देखा। पावेल का चेहरा चमक उठा, जिससे माँ को बड़ा ढाढ़स बँधा।

"आ गये तुम!" उसने लड़खड़ाती हुई आवाज़ से कहा और बैठ गयी। बेटे

के इस प्रकार अचानक आ जाने की ख़ुशी से उसके हाथ-पाँव फूल गये थे।

पावेल उसकी तरफ़ झुका; उसके होंठ काँप रहे थे और उसकी आँखों की कोर में आँसू झलक रहे थे। एक क्षण तक वह कुछ नहीं बोला और माँ भी चुपचाप बैठी उसे एकटक निहारती रही।

उक्रइनी उन्हें अकेला छोड़कर धीरे-धीरे सीटी बजाता हुआ बाहर मैदान में चला गया।

"माँ, धन्यवाद!" पावेल ने अपनी काँपती हुई उँगलियों से उसका हाथ दबाते हुए मन्द स्वर में कहा। "मेरी प्यारी माँ, बहुत-बहुत धन्यवाद!"

पावेल के चेहरे पर वह भाव और उसके स्वर में वह कोमलता देखकर माँ इतनी गद्गद हो उठी कि वह अपने बेटे के सिर पर हाथ फेरने लगी और इस बात का प्रयत्न करने लगी कि उसके हृदय का तीव्र स्पन्दन किसी प्रकार शान्त हो जाये।

"कमाल करते हो, धन्यवाद किस बात का?" वह बोली।

"हमारे इस बड़े काम में हाथ बँटाने के लिए धन्यवाद!" पावेल ने फिर कहा। "बहुत कम लोगों को यह ख़ुशी नसीब होती है कि वे कह सकें कि उनकी और उनकी माँ की आत्माएँ एक जैसी हैं!"

माँ चुप थी। वह बड़ी उत्सुकता से उसका एक-एक शब्द सुन रही थी और सामने खड़े हुए अपने बेटे को प्रशंसा की दृष्टि से निहार रही थी। कितना अच्छा, कितना प्यारा था वह!

"माँ, मुझे मालूम है कि तुम्हें कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा। बहुत-सी बातें तो ऐसी भी होंगी जो तुम्हें अच्छी न लगती होंगी। और मैं सोचता था कि तुम हम लोगों को कभी स्वीकार न करोगी, हमारे विचारों को तुम कभी अपना न सकोगी और तुम चुपचाप सब कुछ सहती रहोगी जैसे तुम जीवनभर हर बात सहन करती आयी हो। मुझे यह सोचकर बड़ा दुख होता था!..."

"अन्द्रेई ने मुझे बहुत-सी बातें समझने में मदद दी!" माँ ने कहा।

"उसने बताया मुझे तुम्हारे बारे में!" पावेल ने हँसकर कहा।

"येगोर ने भी। वह और मैं एक ही गाँव के हैं। अन्द्रेई तो मुझे लिखना-पढ़ना भी सिखाना चाहता था।"

"और तुम्हें शरम आती थी और इसलिए तुम छुप-छुपकर अपने आप पढ़ने लगीं?"

"अच्छा, तो वह यह जान गया!" माँ ने चौंककर कहा। हर्षातिरेक से विह्वल होकर माँ ने कहा, "उसे अन्दर बुला लें! वह जान-बूझकर बाहर चला गया कि हम लोगों की बातों में बाधा न पड़े। उसकी अपनी माँ तो है नहीं..."

“अन्द्रेई!..” पावेल ने बरसाती का दरवाज़ा खोलकर पुकारा। “कहाँ हो?”

“यहाँ हूँ। ज़रा लकड़ी चीरता हूँ।”

“अन्दर आ जाओ!”

वह फ़ौरन अन्दर नहीं आया और जब रसोई में उसने प्रवेश किया तो वह घर की बातें करने लगा।

“मैं निकोलाई से कहूँगा कि कुछ लकड़ी लाकर डाल दे। बहुत कम रह गयी है। माँ, ज़रा अपने पावेल को तो देखा। मालूम होता है कि विद्रोहियों को सजा देने के बजाय हाकिम उन्हें खिला-पिलाकर मोटा करते रहे हैं...”

माँ हँस दी। उस पर अब तक हर्ष का नशा छाया हुआ था और उसके हृदय में मीठा-मीठा स्पन्दन हो रहा था, पर व्यवहारकुशलता और औचित्य के विचार से वह चाहती थी कि उसका बेटा फिर हमेशा की तरह शान्त हो जाये। हर चीज़ अत्यन्त भव्य थी और वह चाहती थी कि उसके जीवन की यह पहली ख़ुशी उसके हृदय में हमेशा ऐसी ही प्रबल और सजीव बनी रहे जैसीकि उस क्षण थी। इस भय से कि कहीं वह कम न हो जाये वह उठी कि इस ख़ुशी को पिंजरे में बन्द कर ले। उसकी दशा बिल्कुल उस बहेलिये जैसी थी जिसने अचानक अनजाने में कोई नायाब चिड़िया पकड़ ली हो।

“आओ, खाना खा लें! पावेल, तुम खाकर तो आये नहीं होगे?” उसने इधर-उधर के कामों में व्यस्त होकर कहा।

“नहीं, कल ही जेलर ने बता दिया था कि मुझे छोड़ देने का फ़ैसला कर लिया गया है, इसलिए मैं कुछ खा-पी न सका...”

“बाहर निकलते ही सबसे पहले जिस आदमी से मेरी मुलाक़ात हुई वह बूढ़ा सिजोव था,” पावेल कहता रहा। “मुझे देखकर वह सड़क पार करके मुझसे मिलने आया। मैंने उससे कह दिया कि वह होशियार रहे क्योंकि आजकल मैं ख़तरनाक आदमी हूँ – मुझ पर पुलिस की नज़र है। उसने कहा कि कोई परवाह नहीं है और मुझसे अपने भतीजे के बारे में दुनिया भर की बातें पूछता रहा। उसने पूछा कि फ़्योदोर जेल में ठीक से तो रहता है। मैंने जवाब दिया, ‘जेल में कोई ठीक से कैसे रह सकता है?’ वह बोला, ‘ख़ैर, मैं समझता हूँ कम से कम अपने साथियों के साथ विश्वासघात तो नहीं करता होगा?’ जब मैंने उसे बताया कि फ़्योदोर भला आदमी है, ईमानदार और होशियार है तो उसने दाढ़ी पर हाथ फेरकर बड़े गर्व से कहा, ‘हमारे सिजोव-परिवार में कोई ख़राब आदमी नहीं है!’ ”

“बूढ़ा बहुत समझदार है!” उक्रइनी ने अपना सिर हिलाते हुए कहा। “मुझसे कई बार उसकी बात हुई है – अच्छा आदमी है। फ़्योदोर को जल्दी छोड़ देंगे?”

“मेरा तो ख़याल है कि सभी को छोड़ देंगे! इसाई जो कुछ कहता है उसके

अलावा उनके ख़िलाफ़ कोई सबूत तो हैं नहीं और इसाई की बात का क्या भरोसा?"

माँ इधर-उधर आ-जा रही थी, पर उसकी नज़र पावेल पर ही जमी हुई थी। अन्द्रेई अपने हाथ पीछे बाँधे खिड़की के पास खड़ा पावेल की बातें सुन रहा था। पावेल कमरे में टहल रहा था। पावेल ने दाढ़ी बढ़ा ली थी; उसके गालों पर बहुत कोमल घुँघराले बालों के छल्ले बन गये थे जिससे उसके चेहरे के सांवले रंग में कुछ कमी आ गयी थी।

"बैठ जाओ!" माँ ने खाना रखते हुए कहा।

भोजन करते समय अन्द्रेई ने पावेल को रीबिन के बारे में बताया। जब वह अपनी बात पूरी कर चुका तो पावेल ने खेद प्रकट करते हुए कहा :

"अगर मैं घर पर होता तो उसे कभी न जाने देता! वह आख़िर अपने साथ क्या लेकर गया है? कुछ उलझे हुए विचार और बहुत-सी कटु भावनाएँ।"

"ख़ैर, लेकिन जब आदमी चालीस बरस का हो चुका हो और उसने अपना यह सारा जीवन अपनी जंगली रीछों जैसी आत्मा से लड़ने में बिताया हो, तो उसे बदलना आसान नहीं होता...." उक्रइनी ने हँसकर कहा।

इसके बाद उनमें ऐसी बहस छिड़ गयी जिसके अधिकांश शब्द माँ की समझ के बाहर थे। भोजन समाप्त हो चुका था पर वे दोनों एक-दूसरे पर भारी-भरकम शब्दों की बौछार करते रहे। कभी-कभी वे सीधे-सादे शब्दों में भी बातें करते।

"हमें तो अपने ही रास्ते पर बढ़ते जाना है, एक क़दम भी पीछे नहीं हटना है," पावेल ने दृढ़तापूर्वक कहा।

"और जाकर करोड़ों ऐसे लोगों से टकरा जाना है जो हमें अपना दुश्मन समझें, क्यों?.."

उनकी बहस सुनकर माँ की समझ में यह आया कि पावेल किसानों को पसन्द नहीं करता था और उक्रइनी उनका पक्ष लेता था और यह सिद्ध करने का प्रयत्न करता था कि किसानों को भी यह समझाना है कि कौन-सा रास्ता ठीक है। अन्द्रेई की बात माँ की समझ में ज़्यादा अच्छी तरह आती थी और उसे ऐसा लगता था कि वही ठीक बात कहता है, पर हर बार जब वह पावेल से कुछ कहता तो वह चिन्तित और सतर्क हो जाती और यह निश्चित करने के लिए दम साधकर अपने बेटे के उत्तर की प्रतीक्षा करती कि कहीं वह अन्द्रेई की बात पर नाराज़ तो नहीं हो गया? पर वे एक-दूसरे की बात का बुरा माने बिना एक-दूसरे पर चिल्लाते रहे।

"ऐसा ही है न, पावेल?" वह कभी-कभी अपने बेटे से पूछती।

"हाँ, ऐसा ही है!" वह मुस्कराकर उत्तर देता।

"हुजूर," उक्रइनी ने मित्रतापूर्ण व्यंग से कहा, "आपने खाया तो ख़ूब है, मगर उसे अच्छी तरह चबाया नहीं। आपके गले में अभी तक कुछ अटका हुआ है। उसे नीचे उतार लीजिये!"

"बको नहीं!" पावेल बोला।

"मुझे तो मातमी दावत का मजा आ रहा है!..."

माँ धीरे से मुस्करा दी और अपना सिर हिलाती रही।

23

वसन्त ऋतु आयी। बर्फ़ पिघली और नीचे की कीचड़ और गन्दगी सब ऊपर आ गयी। दिन प्रतिदिन कीचड़ बढ़ती गयी; बस्ती बहुत गन्दी और अस्त-व्यस्त मालूम हो रही थी। दिन में छतों से पानी टपकता था और घरों की मटमैली दीवारों से पसीने की तरह नमी रिसती थी परन्तु रात को श्वेत हिमकण अब भी चमकते थे। सूरज अब आकाश पर अधिक देर तक चमकता था और दलदल की तरफ़ बहकर जाते हुए जल-स्रोतों की कलकल ध्वनि साफ़ सुनायी देती थी।

मई दिवस का उत्सव मनाने की तैयारियाँ आरम्भ हो गयी थीं।

फ़ैक्टरी और बस्ती भर में इस उत्सव के महत्त्व को समझाने के लिए पर्चे बाँटे गये। वे लड़के भी जिन पर प्रचार का प्रभाव नहीं पड़ा था इस पर्चों को पढ़कर कहते थे :

"हमें भी तैयारी करनी पड़ेगी!"

"अब वक़्त आ गया है!" वेसोवश्चिकोव ने उदासीनता के साथ मुस्कराते हुए कहा। "आँख-मिचौली बहुत खेल चुके हम लोग!"

फ़्योदोर माजिन का उत्साह फूटा पड़ रहा था। वह बहुत दुबला हो गया था और अपनी गतिविधियों तथा बोलचाल की बेचैनी के कारण पिंजरे में बन्द चकोर सा मालूम होता था। याकोव सोमोव हर दम उसके साथ रहता था, उस लड़के की उम्र को देखते हुए वह बहुत गम्भीर था। याकोव को अब शहर में नौकरी मिल गयी थी। समोइलोव (जिसके बाल जेल में रहते-रहते और भी लाल हो गये लगते थे), वासीली गूसेव, बुकिन, द्रागुनोव और कुछ दूसरे लोगों का कहना था कि उन्हें हथियार लेकर प्रदर्शन करना चाहिए, मगर पावेल, उक्रइनी, सोमोव और कुछ दूसरे लोगों ने इस पर आपत्ति की।

येगोर ने, जो हमेशा की ही तरह थका-थका, हाँपता हुआ और पसीने में तर था, उनके तर्कों को मज़ाक़ में उड़ा दिया :

"यह तो सच है, साथियो, कि मौजूदा समाज की व्यवस्था को बदलने की हमारी कोशिशें बहुत ही सराहनीय हैं, लेकिन अपनी सफलता का दिन निकट लाने के लिए मैं इसे ज़रूरी समझता हूँ कि अपने लिए एक जोड़ा नये जूते ख़रीद लूँ!" यह कहकर उसने अपने गीले और फटे हुए जूतों की तरफ़ संकेत किया। "मेरे रबड़ के जूतों की भी अब ऐसी हालत हो गयी है कि उनकी मरम्मत नहीं हो सकती, और रोज़ मेरे पाँव भीग जाते हैं। इस पुरानी व्यवस्था की खुलेआम धज्जियाँ उड़ाने से पहले धरती की कोख में जा बसने का मेरा इरादा नहीं है, इसलिए मैं कामरेड समोइलोव के इस सुझाव को नहीं मानता कि हम हथियार लेकर जुलूस निकालें। इसके बजाय मैं अपना सुझाव रखता हूँ कि मुझे एक जोड़े नये जूते दिलवा दिये जायें। क्योंकि मुझे पूरा विश्वास है कि ऐसा करने से समाजवाद की विजय का दिन निकट लाने में कहीं ज़्यादा मदद मिलेगी, जितनी कि अच्छी मार-धाड़ से भी नहीं मिल सकती!.."

ऐसी ही लच्छेदार भाषा में उसने मज़दूरों को बताया कि दूसरे देशों के लोग अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए किस प्रकार संघर्ष कर रहे थे। माँ को उसके भाषण सुनने में बड़ा आनन्द आता था, और उनका उस पर बड़ा विचित्र प्रभाव पड़ता था : उसे ऐसा लगता था कि जनता के सबसे कट्टर शत्रु, वे लोग जो उसे सबसे ज़्यादा धोखा देते थे और उसके साथ सबसे अधिक निर्दयता का बरताव करते थे, मोटे लाल-मुँहवाले छोटे-छोटे लोग थे, कमीने, लालची, चालाक और क्रूर जब उनके देश का शासक उन पर शिकंजा कसता था तब वे आम जनता को उससे लड़ा देते थे और जब जनता अपने शासक का तख़्ता उलट देती थी, तब यही छोटे-मोटे लोग धोखेबाजी से सत्ता अपने हाथ में ले लेते थे और जनता को फिर उसके गन्दे झोपड़ों में ढँकेल देते थे और यदि वह विरोध करती थी तो वे सैकड़ों-हज़ारों लोगों को जान से मार देते थे।

एक दिन माँ ने पूरा साहस बटोरकर येगोर को बताया कि उसके भाषण सुनकर उसकी कल्पना में क्या चित्र बनता था।

"क्या यह ठीक है, येगोर इवानोविच?" उसने अटपटी मुस्कराहट के साथ पूछा।

वह आँखें नचाकर हँसने लगा और साँस लेने में कठिनाई होने के कारण अपना सीना मलने लगा।

"माँ, बिल्कुल यही बात है! तुमने इतिहास की दुखती हुई रग पकड़ ली है! कहीं-कहीं थोड़ा-बहुत आडम्बर है, पृष्ठभूमि में कल्पना ने ज़रा-बहुत बारीक जाल बुन दिया है, पर तथ्य सब अपनी ठीक जगह पर हैं! यही छोटे-छोटे मोटी तोंदवाले लोग सबसे बड़े पापी हैं और यही सबसे ज़हरीली जोंकें हैं जो जनता

का ख़ून चूस रही हैं। फीसीसियों ने इन्हें 'बुर्जुआ' का नाम ठीक ही दिया था... इस बात को याद रखना, माँ... बुर-जुआ, क्योंकि वे बिल्कुल 'जुए' के समान हैं; जिन-जिन लोगों के भोलेपन का वे फ़ायदा उठा सकते हैं उन पर वे वार करते हैं और उनका ख़ून चूसते हैं...."

"तुम्हारा मतलब है कि यह सब कुछ पैसेवाले करते हैं? माँ ने पूछा।

"हाँ। यह उनका दुर्भाग्य है कि वे पैसेवाले हैं। अगर बच्चे के खाने में तांबा मिलाते रहो तो उसकी हड्डियों की बाढ़ मारी जाती है और बच्चा बौना रह जाता है, लेकिन जब किसी आदमी को सोने का ज़हर दिया जाता है, तो उसकी आत्मा बौनी रह जाती है - छोटी और गन्दी और बेजान, रबर की उन गेंदों की तरह जो बच्चे पाँच-पाँच कोपेक की ख़रीदते हैं..."

एक दिन येगोर की बातें करते समय पावेल ने कहा :

"अन्द्रेई, बात यह है कि जो लोग सबसे ज़्यादा मज़ाक़ करते हैं वे ही बहुधा सबसे ज़्यादा मुसीबत में भी होते हैं..."

उत्तर देने से पहले उक्रइनी एक क्षण के लिए रुका और उसने अपनी आँखें सिकोड़ लीं :

"अगर तुम्हारा कहना ठीक है तब तो सारे रूस को हँसते-हँसते बेदम हो जाना चाहिए..."

नताशा आती। वह भी जेल में थी, पर वह दूसरे शहर में थी। जेल में रहने के कारण उसमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। माँ ने देखा कि उसके आते ही उक्रइनी में जैसे नयी जान आ जाती थी और जितनी देर वह रहती वह सब से मज़ाक़ करता और सब की हँसी उड़ाता और उसे हँसाता रहता। पर जब नताशा चली जाती, वह उदास धुनों पर सीटी बजाने लगता और निराश भाव से पाँव घसीटता हुआ कमरे में टहलने लगता।

साशा भी अक्सर थोड़ी देर के लिए आती। वह हमेशा जल्दी में रहती थी, और उसकी त्योरियों पर बल पड़े रहते थे और न जाने क्यों उसमें दिन-प्रतिदिन अधिक रुखाई आती जा रही थी और वह बोलने भी कम लगी थी।

एक बार जब पावेल उसे दरवाज़े तक छोड़ने गया और जाते हुए दरवाज़ा बन्द करना भूल गया तो माँ ने उन्हें जल्दी-जल्दी ये बातें करते सुना :

"क्या झण्डा लेकर तुम चलोगे?" लड़की ने पूछा।

"हाँ।"

"क्या यह तय हो गया है?"

"हाँ, यह सम्मान मुझे ही दिया गया है।"

"तो फिर जेल जाने का इरादा है?!"

पावेल ने कोई उत्तर न दिया।

"क्या ऐसा नहीं कर सकते कि..." साशा ने कहना आरम्भ किया पर कहते-कहते रुक गयी।

"क्या?"

"किसी और को यह काम सौंप दो..."

"नहीं!" पावेल ने दृढ़ता से उत्तर दिया।

"सोच लो, तुम्हारा इतना असर है, सब लोग तुम्हें चाहते हैं!.. तुम्हें और अन्द्रेई को लोग सबसे ज़्यादा चाहते हैं। ज़रा सोचो तो तुम यहाँ कितना काम कर सकते हो! लेकिन अगर तुम झण्डा लेकर चले तो तुम्हें निर्वासित कर दिया जायेगा, बहुत दिन के लिए बहुत दूर भेज दिया जायेगा!"

माँ ने देखा कि लड़की के स्वर में भय और उदासी की चिर-परिचित भावनाएँ थीं। साशा के शब्द उसके हृदय पर बर्फ़ के पानी की बूँदों की तरह लग रहे थे।

"मैंने फ़ैसला कर लिया है!" पावेल ने कहा। "अब कोई भी मेरा यह फ़ैसला बदलवा नहीं सकता।"

"अगर मैं कहूँ तब भी नहीं?"

पावेल के स्वर में सहसा तेज़ी और रुखाई आ गयी।

"तुम्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। नहीं कहना चाहिए तुम्हें ऐसा!"

"मैं भी आख़िर इन्सान हूँ," साशा ने धीरे से कहा।

"सो भी अच्छी इन्सान हो!" पावेल ने भी वैसे ही धीरे से उत्तर दिया, पर ऐसा मालूम हुआ कि जैसे उसका गला रुँधा जा रहा है। "मुझे प्रिय हो तुम। और इसलिए... इसीलिए तुम्हें ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए..."

"अच्छा, तो मैं चलती हूँ!" लड़की ने कहा।

उसकी एड़ियों की खट-खट से माँ समझ गयी कि वह भागकर वहाँ से चली गयी थी। पावेल उसके पीछे-पीछे बाग में गया।

माँ का हृदय भय से संकुचित हो उठा। उसकी समझ में ठीक से नहीं आया कि वे क्या बातें कर रहे थे, पर वह इतना ज़रूर समझ गयी कि उस पर कोई बहुत बड़ी मुसीबत आने वाली है।

"आख़िर वह क्या करने की तैयारी कर रहा है?" उसने सोचा।

पावेल अन्द्रेई के साथ वापस आया।

"ओह, इसाई, इसाई! हम लोग उसका क्या करें? उक्रइनी ने सिर हिलाते हुए कहा।

"हम लोग उससे साफ़-साफ़ कह दें कि वह यह हरकत छोड़ दे!" पावेल

ने भवें चढ़ाकर कहा।

"पावेल, तुम क्या करने जा रहे हो?" माँ ने सिर झुकाकर पूछा।

"कब? अभी?"

"नहीं.... पहली मई को।"

"ओह!" पावेल ने अपना स्वर मन्द करते हुए कहा। "मैं झण्डा लेकर जुलूस के आगे-आगे चलूँगा। शायद इस पर म ुझे फिर जेल भेज दिया जाये।"

माँ की आँखें तिलमिला उठीं और उसका मुँह सूख गया। पावेल उसका हाथ अपने हाथ में लेकर थपकने लगा।

"मुझे यह करना ही पड़ेगा। माँ, समझने की कोशिश करो!"

"मैंने तो कुछ नहीं कहा," माँ ने धीरे से अपना सिर ऊपर उठाते हुए उत्तर दिया। पर जब उसकी आँखें पावेल की दृढ़ संकल्प से चमकती हुई आँखों से चार हुईं तो उसका धीरज टूट गया।

पावेल ने आह भरकर उसका हाथ छोड़ दिया।

"तुम्हें दुखी होने के बजाय इस बात की ख़ुशी होनी चाहिए," पावेल ने माँ को झिड़कते हुए कहा। "आख़िर कब हमारे यहाँ ऐसी माँएँ होंगी जो हँसते-हँसते अपने बेटों को मरने के लिए भेज दें?.."

"हुँह!" उक्रइनी ने अस्फुट स्वर में कहा। "बड़े आये सूरमा!.."

"मैंने तो कुछ नहीं कहा, भला कहा है कुछ?" माँ ने फिर वही बात दुहरायी। "मैं तुम्हारी राह में नहीं आती। पर अपने जी को कैसे समझाऊँ – मैं माँ हूँ..."

पावेल वहाँ से हट गया और उसकी बात माँ के हृदय में डंक की तरह लगी।

"एक प्रेम ऐसा भी होता है जो मनुष्य के पैरों की जंजीर बन जाता है..." पावेल ने कहा।

"ऐसा न कहो, पावेल!" माँ ने कहा। वह भय से काँप गयी कि कहीं वह कोई और ऐसी बात न कह दे जिससे उसके दिल को चोट लगे। "मैं समझती हूँ – तुम्हारे सामने इसके अलावा कोई दूसरा रास्ता ही नहीं है... अपने साथियों की खातिर..."

"उनकी खातिर नहीं, अपनी खातिर," पावेल ने कहा।

अन्द्रेई आकर दरवाज़े पर खड़ा हो गया। दरवाज़ा बहुत नीचा था इसलिए वह बड़े विचित्र ढंग से घुटने झुकाये एक कन्धा चौखटे से लगाकर खड़ा था; उसका सिर और दूसरा कन्धा आगे की तरफ़ झुका हुआ था।

"हुजूर, अगर आप इस बात को यहीं ख़त्म कर दें तो कोई हर्ज नहीं होगा!" उसने अपनी बड़ी-बड़ी आँखें पावेल के चेहरे पर गड़ाकर व्यंग से कहा। वहाँ खड़ा हुआ वह ऐसा लग रहा था जैसे चट्टान की दरार में कोई छिपकली हो।

माँ की आँखों में आँसू छलक आये।

"अरे, मैं तो भूल ही गयी..." उसने अस्फुट स्वर में कहा और जल्दी से दरवाज़े से बाहर निकल गयी कि कहीं उसका बेटा उसे रोते न देख ले।

बाहर पहुँचते ही वह दुबककर एक कोने में खड़ी हो गयी और चुपके-चुपके सिसकियाँ लेने लगी। उसकी शक्ति क्षीण होती जा रही थी, मानो उसके आँसुओं के साथ उसके हृदय का रक्त भी बह रहा हो।

अधखुले दरवाज़े से उसने उन दोनों को धीमे स्वर में बहस करते सुना।

"आख़िर तुम चाहते क्या हो? माँ को दुख पहुँचाकर क्या तुम्हें ख़ुशी होती है?" उक्रइनी ने पूछा।

"तुम्हें यह कहने का कोई अधिकार नहीं है!" पावेल ने चिल्लाकर कहा।

"तब फिर मैं दोस्त किस काम का, अगर मैं आँखें मूँद लूँ और तुम्हें बेवक़ूफ़ी की हरकतें करने दूँ! तुम्हें आख़िर यह कहने की ज़रूरत ही क्या थी? देखते नहीं, उस पर क्या बीत रही है?"

"आदमी को अपना दिल कड़ा रखना चाहिए और 'हाँ' या 'ना' कहने से डरना नहीं चाहिए!"

"उससे?"

"हर आदमी से! मैं न ऐसा प्रेम चाहता हूँ, न ऐसी दोस्ती, जो पैरों में बेड़ियाँ डाल दे, आगे बढ़ने से रोक दे..."

"बड़े सूरमा बने फिरते हो! जाओ, मुँह धोकर आओ! साशा से कहना यह बात। तुम उसी से..."

"मैं उससे भी कह चुका हूँ!.."

"इसी ढंग से? झूठ बोलते हो! तुमने उससे बड़ी नरमी, बड़े प्यार से यह बात कही होगी। मैंने सुना नहीं, फिर भी जानता हूँ। लेकिन तुम्हें अपनी माँ के आगे शेखी जो बघारनी थी... अगर तुम सच पूछो तो तुम्हारी इस सारी अकड़ में ज़रा भी दम नहीं है!"

पेलागेया निलोवना ने जल्दी से अपने आँसू पोंछ डाले। इस डर से कि कहीं उक्रइनी पावेल को नाराज़ करने वाली कोई ऐसी-वैसी बात न कह बैठे वह जल्दी से दरवाज़ा खोलकर रसोई में आ गयी।

"ब-र्र-र्र! कितनी सर्दी है!" उसने ऊँचे स्वर में कहा; उसका स्वर भय और व्यथा के कारण काँप रहा था। "कौन कहेगा कि बसन्त आ गया है..."

वह बिना किसी उद्देश्य के चीज़ें इधर से उधर धरती–उठाती रही कि दूसरे कमरे से आने वाली आवाज़ें सुनायी न दें।

"हर चीज़ बदल गयी है," वह और भी ऊँचे स्वर में कहती रही। "लोगों का मिजाज गरम होता जा रहा है, और मौसम ठण्डा होता जा रहा है। हमेशा तो अब तक काफ़ी गर्मी हो जाती थी – सूरज निकल आता था और आकाश स्वच्छ हो जाता था..."

दूसरे कमरे से आवाज़ें आनी बन्द हो गयीं। माँ रसोई के बीच में खड़ी कान लगाये सुनती रही।

"सुना तुमने?" उक्रइनी ने मन्द स्वर में कहा। "अरे भले आदमी, तुम्हें इसे समझना चाहिए! तुमसे बड़ी आत्मा है उसकी..."

"चाय पिओगे?" माँ ने काँपते हुए स्वर में पूछा, और अपने स्वर के इस कम्पन का असली कारण छुपाने के लिए जल्दी से बोली :

"हे भगवान्, मैं तो सर्दी में अकड़ गयी!"

पावेल धीरे–धीरे माँ के पास गया। वह सिर झुकाये हुए था और उसके होंठों पर अपराधियों जैसी मुस्काहट खेल रही थी।

"माँ, मुझे माफ़ कर दो! मैं अभी बिल्कुल बच्चा हूँ – बिल्कुल बेवक़ूफ़ हूँ..."

"छोड़ो इस बात को!" माँ ने उसका सिर अपने सीने से लगा लिया और फूट–फूटकर रोने लगी। "बस, अब कुछ न कहना! भगवान जानता है, तुम्हारी ज़िन्दगी तुम्हारी अपनी है, जो चाहो करो। मगर मेरे दिल को न दुखाओ! क्या कोई माँ अपने बच्चे से प्यार करना छोड़ सकती है? प्यार के बिना वह ज़िन्दा ही नहीं रह सकती... मैं तुम सब को प्यार करती हूँ! तुम सब मुझे प्यारे हो और तुम सब प्यार करने लायक हो! अगर मैं न करूँगी तो कौन तुम्हें प्यार करेगा?... तुम चले जाओगे – और दूसरे लोग पीछे–पीछे जायेंगे – अपना सब कुछ त्यागकर... आह, पावेल!"

उसके हृदय में महान विचारों की ज्वाला धधक रही थी। उसके हृदय में एक दुखद उल्लास हिलोरें ले रहा था, जिसे वह शब्दों से व्यक्त नहीं कर सकती थी और अपनी इस अकथनीय व्यथा से पीड़ित होकर उसने अपने बेटे को तीव्र वेदना से जलती हुई आँखों से देखा।

"ठीक है, माँ! मुझे माफ़ कर दो, अब सब कुछ मेरी समझ में आ गया है! और मैं अब से इसे कभी नहीं भूलूँगा, मैं कसम खाकर कहता हूँ!" उसने मुस्कराकर मुँह फेर लिया; वह ख़ुश भी था और लज्जित भी।

"अन्द्रेई!" माँ ने विनय–भरे कोमल स्वर में कहा, "उसे इस तरह डाँटा न

करो! वैसे तुम बड़े तो ज़रूर हो..."

उक्रइनी माँ की ओर मुड़े बिना जहाँ का तहाँ खड़ा रहकर विचित्र और हास्यास्पद ढंग से गुर्रा उठा :

"ऊ-ऊ-फ! मैं उसे डांटूँगा ही नहीं, पिटाई भी करूँगा!"

माँ उसके पास चली गयी और अपना हाथ फैलाकर बोली :

"तुम कितने अच्छे हो..."

वह तेज़ी से पीछे मुड़ा और माँ के सामने से होता हुआ रसोईघर में चला गया। वह अपने दोनों हाथ पीठ के पीछे किये बैलों की तरह सिर झुकाये चल रहा था। माँ ने उसे भयानक उपहास के स्वर में बोलते हुए सुना :

"हट जाओ, पावेल, नहीं तो मैं तुम्हारा सिर काट लूँगा! माँ, मेरी बात को सच न समझ लेना, मैं मज़ाक़ कर रहा हूँ! हटो, मैं समोवार गरम करता हूँ। अरे वाह, क्या बढ़िया कोयला है – पूरी तरह भीगा हुआ!"

वह चुप हो गया। जिस समय माँ ने रसोईघर में प्रवेश किया वह फ़र्श पर बैठा समोवार में आग सुलगा रहा था।

"डरो नहीं, मैं उसका कुछ नहीं बिगाड़ूँगा!" उसने सिर ऊपर उठाकर देखे बिना ही कहा। "मेरा दिल तो उबले हुए शलजम की तरह नरम है! और मुझे... ए सूरमा, तुम अपने कान बन्द कर लो... मुझे तो वह बहुत अच्छा लगता है। मगर जो वास्कट वह पहने हुए है वह मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है। बात यह है कि उसने तो मानो नयी वास्कट ख़रीदी है और समझता है कि वह बहुत ख़ूबसूरत है, इसलिए वह अपनी तोंद फुलाये सारे शहर में घूमता है और सब को रोक-रोककर बताता है, 'देखो तो मेरे पास कितनी अच्छी वास्कट है!' ठीक है, वास्कट अच्छी है, मगर सब पर उसका रोब क्यों झाड़ो? यों ही क्या कम परेशानियाँ हैं!"

"कब तक बुड़बुड़ाते रहोगे?" पावेल ने धीरे से हँसकर कहा। "ख़ूब ख़बर ले चुके, अब बस करो!"

उक्रइनी समोवार के दोनों तरफ़ टाँगें फैलाकर बैठ गया और नीचे बैठे-बैठे ही नज़रें उठाकर उसने उसकी तरफ़ देखा। माँ दरवाज़े के चौखट पर खड़ी बड़े प्यार से उसकी गुद्दी को निहार रही थी। उसने अपनी दोनों बाँहें कसकर अपने शरीर को मरोड़ा और माँ और बेटे की तरफ़ देखा; उसकी आँखें सहसा लाल हो गयीं।

"बहुत भले लोग हो तुम दोनों!" उसने आँखें झपकाते हुए कहा।

पावेल ने झुककर उसका हाथ पकड़ लिया।

"देखो झटका न देना," उक्रइनी ने कहा, "नहीं तो मैं गिर जाऊँगा..."

"शरमाते क्यों हो?" माँ ने उदासी से कहा। "एक-दूसरे को चूम क्यों नहीं लेते, सीने से क्यों नहीं लगा लेते..."

"चाहते हो?" पावेल ने पूछा।

"हाँ!" उक्रइनी ने उठते हुए कहा।

उन्होंने ज़ोर से एक-दूसरे को चिपटा लिया – दो शरीर थे, पर दोनों में मित्रता की ज्योति से जगमगाती हुई एक ही आत्मा थी। माँ के गालों पर आँसू बहने लगे, पर इस बार ये हर्ष के आँसू थे।

"औरतों को रोना अच्छा लगता है," माँ ने शरमाकर आँसू पोंछते हुए कहा। "सुख में भी रोती हैं और दुख में भी रोती हैं!..."

उक्रइनी ने धीरे से पावेल को ढँकेलकर अलग कर दिया।

"बस!" उसने भी अपनी आँखें पोंछते हुए कहा। "बहुत देर गुलछर्रे उड़ा लिये, अब हलाल होने का वक़्त आ गया। लानत है तुम्हारे इन कोयलों पर! मेरी तो फूँकते-फूँकते आँखें सूज गयीं..."

"इन आँसुओं में ऐसी शरमाने की क्या बात है," पावेल ने खिड़की के पास जाकर बैठते हुए धीरे से कहा।

माँ भी जाकर उसके बगल में बैठ गयी। उसके हृदय में एक नया साहस भर गया था जिसके कारण वह अपनी उदासी के बावजूद शान्त और सन्तुष्ट थी।

"माँ, तुम बैठी रहो, मैं चाय का सामान लिये आता हूँ!" उक्रइनी ने कमरे से बाहर जाते हुए कहा। "रो-रोकर तुमने अपना जी इतना हल्कान कर लिया है, अब तुम थोड़ी देर आराम कर लो..."

उसकी पाटदार आवाज़ गूँजती हुई उनके पास तक पहुँची।

"अभी हमें जीवन का एक शानदार अनुभव हुआ है; प्यार-भरे मानव जीवन को हमने देखा है!" वह बोला।

"हाँ!" पावेल ने कनखियों से माँ की तरफ़ देखते हुए कहा।

"और इसने हर चीज़ को बदल दिया है!" माँ ने कहा। "हमारी विपदा भी अब पहले से भिन्न है और हमारा हर्ष भी..."

"होना भी यही चाहिए!" उक्रइनी ने कहा। "क्योंकि, मेरी प्यारी माँ, एक नये हृदय का जन्म हो रहा है। मनुष्य आगे बढ़ रहा है; वह सारी दुनिया में ज्ञान की ज्योति फैला रहा है और आगे बढ़ते हुए कह रहा है : 'सारे देशों के रहने वालो, एक परिवार में संगठित हो जाओ!' और उसकी इस ललकार के उत्तर में सारे सबल हृदय मिलकर एक विशाल हृदय का रूप धारण कर रहे हैं, जो चाँदी के बड़े से घण्टे की तरह मज़बूत और सुरीला है..."

माँ ने कसकर अपने होंठ भींच लिये कि वे काँपें नहीं और अपनी आँखें

बन्द कर लीं कि आँसू बाहर न निकलने पायें।

पावेल ने अपना हाथ उठाया, मानो कुछ कहने जा रहा हो पर माँ ने उसे अपने पास खींच लिया।

"उसे टोको नहीं..." माँ ने चुपके से कहा।

उक्रइनी आकर दरवाज़े में खड़ा हो गया। "लोग अभी और बहुत मुसीबतें उठायेंगे, अभी और भी बहुत ख़ून बहाया जायेगा; पर मेरे सीने और मेरे दिमाग में जो कुछ छुपा हुआ है उसकी क़ीमत चुकाने के लिए मेरी सारी मुसीबतें और मेरा सारा ख़ून भी काफ़ी नहीं है... मैं एक जगमगाते हुए सितारे की तरह रोशनी से भरपूर हूँ। मैं सब कुछ बरदाश्त कर सकता हूँ, कुछ भी सह सकता हूँ, क्योंकि मेरे हृदय में एक असीम उल्लास है, जिसे कोई भी चीज़ और कोई भी आदमी मुझसे कभी नहीं छीन सकता! और यही उल्लास मेरी शक्ति है!"

वे आधी रात तक बैठे चाय पीते रहे और बहुत घुल-मिलकर जीवन और लोगों और भविष्य के बारे में बातें करते रहे।

जब कभी माँ को कोई विचार साफ़ समझ में आ जाता, तो वह आह भरकर उसमें अपनी अतीत की कोई कटु और अरुचिकर स्मृति को ढूँढ़ती ताकि वह इस विचार से सहारा देने वाले पत्थर का काम ले सके।

उनकी बातचीत की गर्मी से माँ के सारे भय दूर हो गये; उसे बिल्कुल वैसा ही आभास हुआ जैसाकि बहुत दिन पहले उस दिन हुआ था जब उसके पिता ने उससे सख़्ती से कहा था :

"मुँह बनाने की कोई ज़रूरत नहीं है! अगर कोई ऐसा बेवक़ूफ़ फँस गया है जो तेरे साथ शादी करना चाहता है तो मौक़ा हाथ से न जाने दे। तेरी जैसी सारी मुर्गियों का ब्याह होता है और उनके बच्चे होते हैं जिनसे उन्हें मुसीबत के अलावा और कुछ नहीं मिलता! तू भी औरों जैसी है, फरक क्या है?"

इसके बाद उसने अपने सामने अन्धकारमय निर्जन विस्तार में जाता हुआ वह चक्करदार मार्ग देखा था जिस पर निराशा के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। और अनिवार्य रूप से इसी पथ पर अग्रसर होने के विचार ने उसके हृदय में एक अन्धी शान्ति की भावना जागृत कर दी थी। इस समय भी यही हाल था। परन्तु ज्यों ही उसे भावी नयी विपदाओं का आभास होता वह जलकर किसी अज्ञात व्यक्ति से कहती :

"ले, और ले!"

इससे उसके व्यथित हृदय को, जिसमें तने हुए तार की तरह गुँजन और कम्पन होता रहता था, शान्ति मिलती।

पर उसके मन में निरन्तर यह क्षीण आशा बनी रहती कि वे उसका सब

कुछ छीनकर नहीं ले जायेंगे – सब कुछ नहीं ले जायेंगे! कुछ न कुछ तो छोड़ ही जायेंगे...

24

दूसरे दिन बहुत सबेरे, जब पावेल और अन्द्रेई को फ़ैक्टरी गये अभी बहुत देर नहीं हुई थी, कोरसुनोवा ने खिड़की पर खटखटाया।

"किसी ने इसाई का ख़ून कर दिया!" उसने चिल्लाकर कहा। "आओ चलो, देखें चलकर!"

माँ चौंक पड़ी और उसके मस्तिष्क में हत्यारे का नाम बिजली की तरह कौंध गया।

"किसने किया होगा?" माँ ने कन्धे पर शाल डालते हुए पूछा।

"क्या तुम समझती हो कि जिसने मारा है वह वहाँ इसाई के पास अभी तक बैठा है? उसका काम तमाम करते ही वह भाग भी गया।"

सड़क पर जाते हुए मारिया ने कहा :

"अब यह मालूम करने के लिए कि वह किसने किया है नये सिरे से तलाशियाँ ली जायेंगी। यह अच्छा हुआ कि तुम्हारे यहाँ के सब लोग कल रात घर पर ही थे। मैं इसकी गवाही दूँगी। मैं आधी रात के बाद लौटी थी और मैंने तुम्हारी खिड़की में झाँककर देखा था। तुम सब लोग मेज के पास बैठे थे..."

"हाय भगवान, मारिया! उन लोगों पर किसी को शक हो ही कैसे सकता है?" माँ ने भयभीत होकर कहा।

"अच्छा, किसने मारा होगा उसे? तुम्हारे ही लोगों के साथ का कोई होगा," कोरसुनोवा ने पूरे विश्वास के साथ कहा। "सभी जानते हैं कि वह उनके ख़िलाफ़ जासूसी करता था..."

माँ हाथ सीने पर रखकर खड़ी हो गयी; उसकी साँस नहीं समा रही थी।

"क्या बात है? तुम डरो नहीं, उसके साथ जो कुछ किया गया वह उसी के लायक था! जल्दी चलो, नहीं तो उसे वहाँ से हटा दिया जायेगा!..."

वेसोवश्चिकोव के बारे में माँ का सन्देह उसे इस तरह रोक रहा था जैसे किसी ने उसे कसकर पकड़ रखा हो।

"उसने तो हद ही कर दी!" माँ ने सोचा।

फ़ैक्टरी से थोड़ी ही दूर पर, जहाँ एक जला हुआ मकान था, लोगों की भीड़ जमा थी, जैसे भिड़ों का छत्ता हो; वे अधजली लकड़ी को पैरों तले रौंद रहे थे और राख को कुरेद रहे थे। उनमें बहुत–सी औरतें थीं और बच्चे तो और भी ज़्यादा थे। दुकानदार, भटियारख़ाने के नौकर, पुलिसवाले सभी वहाँ मौजूद थे

और राजनीतिक पुलिसवाला पेतलिन भी हाजिर था। वह झबरी–सी सफ़ेद दाढ़ीवाला लम्बे कद का बूढ़ा आदमी था और उसका सीना तमगों के ढँका हुआ था।

इसाई एक अधजले लकड़ी के कुन्दे के सहारे आधा बैठा हुआ और आधा ज़मीन पर लेटा हुआ था। उसका नंगा सिर उसके दाहिने कन्धे पर झुका हुआ था। उसका दाहिना हाथ पतलून की जेब में था और बायें हाथ की उँगलियाँ भुरभुरी मिट्टी में धंसी हुई थीं।

माँ ने उसके चेहरे को ध्यान से देखा। उसकी एक ज्योतिहीन आँख फैली हुई टाँगों के बीच में पड़ी हुई टोपी को घूर रही थी; उसका मुँह आधा खुला था और नीचे को लटक आया था मानो उसे किसी बात पर आश्चर्य हो रहा हो और उसकी लाल दाढ़ी एक तरफ़ को मुड़ गयी थी। उसका दुबला–पतला शरीर और उसकी नुकीली खोपड़ी और उसका चुसा झाँइयोंदार चेहरा हमेशा से ज़्यादा छोटा मालूम हो रहा था, मौत के कारण हर चीज़ सिकुड़ गयी थी। माँ ने हाथ से अपने सीने पर सलीब का निशान बनाया और एक लम्बी आह भरी। जब तक वह जीवित था तब तक वह उससे घृणा करती थी, पर अब उसे उस पर तरस आ रहा था।

“ख़ून कहीं नहीं है!” किसी ने दबे स्वर में कहा। “घूँसे से मारा होगा...”

“इसने अपनी मौत का सामान तो ख़ुद ही कर लिया था, नीच दगाबाज कहीं का...” किसी और ने जलकर कहा।

राजनीतिक पुलिसवाला फ़ौरन सतर्क होकर औरतों को धक्का देता हुआ आगे बढ़ा।

“कौन बकबक कर रहा है?” उसने डपटकर कहा।

लोगों ने उसके लिए रास्ता छोड़ दिया। कुछ लोग तो जल्दी–जल्दी वहाँ से खिसक गये; एक आदमी व्यंगपूर्वक हँसा।

माँ घर चली गयी।

“उसके मरने का किसी को दुख नहीं है!” उसने अपने मन में सोचा।

अपनी कल्पना में उसने निकोलाई का गठा हुआ शरीर देखा। वह उसे कठोर भावहीन आँखों से देख रहा था; उसका दाहिना हाथ इस तरह झूल रहा था, जैसे अभी–अभी उसमें चोट लग गयी हो...

ज्यों ही उसका बेटा और अन्द्रेई घर आये उसने उनसे इसके बारे में पूछा।

“क्या कोई गिरफ़्तार किया गया है?”

“सुना तो नहीं!” उक्रइनी ने उत्तर दिया।

माँ समझ गयी कि वे दोनों बहुत हतोत्साह थे।

"क्या किसी ने निकोलाई का नाम लिया है?" माँ ने चुपके से पूछा।

"नहीं," उसके बेटे ने उत्तर दिया; उसकी आँखों में कठोरता थी और उसका स्वर अर्थपूर्ण था। "और मैं तो नहीं समझता कि उस पर किसी को शक भी है। वह तो बाहर गया हुआ है। वह तो कल दोपहर ही नदी की तरफ़ चला गया था और अभी तक लौटकर नहीं आया है। मैंने उसके बारे में पूछा था..."

"भगवान की कृपा है!" माँ ने सन्तोष की साँस लेकर कहा। "भगवान की कृपा है!"

उक्रइनी ने कनखियों से उसकी तरफ़ देखा और सिर झुका लिया।

"वह वहाँ ऐसे पड़ा है जैसे उसकी समझ में न आ रहा हो कि माज़रा क्या है," माँ ने कुछ विचारमग्न होकर कहा। "और किसी को न उस पर तरस आता है और न कोई उसके साथ हमदर्दी ही करता है। इतना तुच्छ कि जैसे कोई महत्त्व ही नहीं है उसका। जैसे कोई चीज़ काटकर वहाँ डाल दी गयी हो..."

खाते-खाते पावेल ने सहसा अपना चम्मच नीचे रख दिया।

"मेरी तो समझ में नहीं आता!" उसने चिल्लाकर कहा।

"क्या?" उक्रइनी ने पूछा।

"हम अपने खाने के लिए जानवरों को मारते हैं, यह भी बहुत बुरी बात है। और अगर कोई जंगली जानवर ख़तरनाक होता है तो हमें उसे भी मारना पड़ता है। अगर कोई आदमी जानवर बन जाये और अपने साथियों को अपना शिकार बनाये तो उसे तो मैं ख़ुद भी मार दूँगा। मगर उस जैसे कमबख़्त की जान लेना - आख़िर किसी ने उसे मारने के लिए हाथ कैसे उठाया?..."

उक्रइनी ने अपने कन्धे झटक दिये।

"वह भी तो जंगली जानवर से कम ख़तरनाक नहीं था," वह बोला। "केवल एक बूँद ख़ून चूसने पर हम मच्छर को मसलकर रख देते हैं!"

"यह तो ठीक है! मगर मेरा मतलब यह नहीं है... मेरा मतलब है कि बड़ा ही घिनौना काम है!"

"और चारा ही क्या है?" अन्द्रेई ने फिर कन्धा बिचकाकर उत्तर दिया।

"क्या तुम ऐसे आदमी की हत्या कर सकते हो?" पावेल ने कुछ देर बाद पूछा।

उक्रइनी थोड़ी देर तो अपनी बड़ी-बड़ी आँखें उस पर जमाये रहा, फिर उसने जल्दी से कनखियों से माँ की तरफ़ देखा।

"अपने साथियों और अपने लक्ष्य के लिए मैं कुछ भी कर सकता हूँ!" उसने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया। "मैं तो अपने बेटे तक की जान ले सकता हूँ!..."

"ओह अन्द्रेई!" माँ ने मन्द स्वर में कहा।

"कोई और चारा ही नहीं है, माँ!" वह मुस्कराकर बोला, "ज़िन्दगी ऐसी ही है!..."

"तुम ठीक कहते हो," पावेल ने कहा, "ज़िन्दगी ऐसी ही है..."

सहसा अन्द्रेई बहुत उत्तेजित होकर उछलकर खड़ा हो गया, जैसे किसी आन्तरिक शक्ति ने उसे उत्प्रेरित किया हो।

"हम कर ही क्या सकते हैं?" उसने अपने हाथ हिलाते हुए चिल्लाकर कहा। "हम दूसरों से नफ़रत करने पर मजबूर हैं, ताकि एक दिन ऐसा आये जब हम सबसे प्यार कर सकें। हमें हर उस आदमी को मिटा देना है जो प्रगति के रास्ते में रुकावट बनकर आता हो, जो धन के लोभ में, अपने लिए सम्मान और सुरक्षा ख़रीदने के लिए दूसरों को बेच देता हो। अगर कोई लालची, कमीना ईमानदार लोगों के रास्ते में रुकावट बनकर आता है, उसके साथ विश्वासघात करने के लिए मौक़े की ताक में रहता है, और मैं अगर उसे नष्ट न कर दूँ तो मैं ख़ुद उस जैसा विश्वासघाती हूँगा। तुम कहते हो मुझे इसका कोई अधिकार नहीं है? लेकिन हमारे वे मालिक – उन्हें फ़ौज और जल्लाद रखने का अधिकार है, चकले और जेलख़ाने बनाने का अधिकार है, वे लोगों को देश-निकाले में भेजने के लिए जगहें बना सकते हैं; अपने आराम और बचाव के लिए गन्दे से गन्दा हथकण्डा इस्तेमाल कर सकते हैं? अगर कभी-कभी मजबूर होकर मुझे उनका डण्डा अपने हाथ में लेना पड़ता है तो क्या यह मेरा कसूर है? मैं तो बिना किसी संकोच के उसे इस्तेमाल करूँगा। अगर वे हमें हज़ारों की संख्या में मार सकते हैं तो मुझे भी अधिकार है कि मैं अपना हाथ उठाकर किसी एक का सिर तोड़ दूँ, वह सिर जो दूसरों के मुकाबले में मेरे ज़्यादा नजदीक आ गया हो और जो दूसरों के मुकाबले में मेरे ध्येय के लिए ज़्यादा ख़तरनाक हो। ज़िन्दगी है ही ऐसी। मगर मैं ऐसी ज़िन्दगी के ख़िलाफ़ हूँ; मैं नहीं चाहता कि वह ऐसी ही बनी रहे। मैं जानता हूँ कि उनका ख़ून बहाने से कभी कुछ होने वाला नहीं है!.. सत्य तो तब पैदा होता है जब हमारा ख़ून धरती पर बरसात के पानी की तरह फैल जाता है। उनका ख़ून तो सूख जाता है। मैं इस बात को जानता हूँ। लेकिन मैं इस पाप का बोझ अपने सिर पर लेने को तैयार हूँ। अगर मैं समझूँगा कि किसी को जान से मार देना ज़रूरी है तो मैं वह भी करूँगा! याद रखना मैं सिर्फ़ अपनी बात कर रहा हूँ। मेरा पाप मेरे साथ मर जायेगा। भविष्य पर उसका कोई कलंक बाक़ी नहीं रहेगा। इससे मेरे अलावा और किसी पर कलंक नहीं आयेगा, किसी पर भी नहीं!"

वह कमरे में इधर-उधर टहलता रहा और इस तरह हाथ हिलाता रहा मानो

किसी चीज़ को काट रहा हो, अपने आपको उससे छुड़ा रहा हो। माँ दुखी और आतंकित होकर उसे देखती रही; उसे ऐसा लगा कि जैसे अन्द्रेई के अन्दर कोई चीज़ टूट गयी हो और उसे पीड़ा हो रही हो। हत्या के भयानक विचार अब उसके मस्तिष्क से दूर हो गये थे : "यदि वेसोवश्चिकोव ने यह हत्या नहीं की थी तो यह पावेल के किसी दूसरे साथी का काम नहीं हो सकता था," माँ ने सोचा। पावेल सिर झुकाये उक्रइनी का यह अविराम भाषण सुन रहा था :

"कभी-कभी आगे बढ़ते रहने के लिए अपनी मर्जी के ख़िलाफ़ भी काम करना पड़ता है। हमें सब कुछ कुर्बान करने को तैयार होना चाहिए। अपना दिल तक! ध्येय के लिए जान देना तो आसान है। इससे भी ज़्यादा कुछ देने की ज़रूरत है – ऐसी चीज़ जो अपनी जान से भी ज़्यादा प्यारी हो। और इस चीज़ को देकर हम उस सत्य को और मज़बूत बनाते हैं जिसके लिए हम लड़ रहे हैं, वह सत्य जो हमें दुनिया में सबसे अधिक प्रिय है!.."

कमरे के बीच में पहुँचकर वह रुक गया – उसका रंग पीला पड़ गया था, उसकी आँखें आधी मुन्दी हुई थीं और वह एक हाथ ऊपर उठाये हुए था जैसे कोई दृढ़ प्रतिज्ञा कर रहा हो :

"मैं जानता हूँ कि वह समय आयेगा जब लोग एक-दूसरे को देख-देखकर खुश होंगे, जब हर आदमी दूसरे सभी लोगों के लिए एक चमकदार सितारे की तरह होगा! पृथ्वी पर स्वतन्त्र मनुष्यों का वास होगा, जो अपनी स्वतन्त्रता में महान होंगे। सबके हृदय निष्कपट होंगे और किसी के भी हृदय में लेशमात्र ईर्ष्या या कुत्सा नहीं होगी। जीवन मानव की महान सेवा का रूप धारण कर लेगा और मानव श्रेष्ठ और गौरवान्वित हो जायेगा, क्योंकि जो लोग स्वन्तत्र होते हैं उनके लिए हर चीज़ लभ्य होती है! तब लोग सुन्दरता के लिए सच्चाई और स्वतन्त्रता का जीवन बितायेंगे और सबसे अच्छा उन्हीं लोगों को समझा जायेगा जिनका हृदय पूरे विश्व को अपने अन्दर समा लेने और उससे प्यार करने की सबसे अधिक क्षमता रखता होगा, जो सबसे अधिक उन्मुक्त होंगे क्योंकि उन्हीं में श्रेष्ठतम सौन्दर्य होता है! वे महान लोग होंगे, नये जीवन के लोग होंगे..."

वह एक क्षण के लिए रुका और फिर अपनी शक्ति बटोरकर ऐसे स्वर में बोला जो उसकी आत्मा की गहराई से आता हुआ प्रतीत होता था :

"और ऐसे जीवन के लिए मैं कुछ भी करने को तैयार हूँ..."

उसके चेहरे पर भावावेश की एक लहर दौड़ गयी और आँसू की बड़ी-बड़ी बूँदें उसके गालों पर ढलकने लगीं।

पावेल का चेहरा फक हो गया और वह सिर उठाकर फटी-फटी आँखों से अन्द्रेई को देखता रहा। माँ चौंक पड़ी जैसे उसने कोई भयानक स्वप्न देखा हो

और कोई दुराशंका उसके हृदय में बढ़ती जा रही हो।

"बात क्या है, अन्द्रेई?" पावेल ने मन्द स्वर में पूछा।

उक्रइनी ने सिर हिलाया और तनकर सीधा खड़ा हो गया और माँ की आँखों में आँखें डालकर देखने लगा।

"मैंने अपनी आँखों से देखा था... मैं सब कुछ जानता हूँ..."

माँ ने लपककर उसके दोनों हाथ पकड़ लिये। उसने अपना दाहिना हाथ छुड़ाने का प्रयत्न भी किया पर माँ ने नहीं छोड़ा।

"मेरे बच्चे, धीमे बोलो! मेरे लाल.." उसने फुसफुसाकर कहा।

"ठहरो!" उक्रइनी ने भर्रायी हुई आवाज़ में कहा। "मैं तुम्हें बताता हूँ कि क्या हुआ था..."

"नहीं, रहने दो!" माँ ने आँसू-भरी आँखों से उसे घूरते हुए कहा। "नहीं, अन्द्रेई, रहने दो..."

पावेल धीरे-धीरे उसके पास आ गया। उसका रंग पीला पड़ गया था और उसकी आँखें भी सजल थीं।

"माँ को डर है कि तुमने किया होगा..." उसने धीरे से हँसकर कहा।

"मुझे यह डर तो नहीं है! मैं इस बात पर यकीन नहीं करती! अगर मैं अपनी आँखों से भी देखती तब भी यकीन न करती!"

"ठहरो!" उक्रइनी ने गर्दन झटककर अपने हाथ छुड़ाने का प्रयत्न करते हुए कहा। "मैंने तो नहीं किया, मगर मैं रोक ज़रूर सकता था..."

"चुप रहो, अन्द्रेई!" पावेल ने कहा।

पावेल ने अपने दोस्त का हाथ अपने हाथ में ले लिया और दूसरा हाथ उसके कन्धे पर रख दिया, मानो उसके लम्बे-चौड़े शरीर को काँपने से रोकने का प्रयत्न कर रहा हो।

"पावेल, तुम तो जानते हो कि मैं नहीं चाहता था कि ऐसा हो," अन्द्रेई ने व्यथित स्वर में कहा। "हुआ यह कि जब तुम मुझे नुक्कड़ पर द्रागुनोव के साथ छोड़कर चले गये, तो उसके थोड़ी देर बाद इसाई उधर आया और तिरस्कार से हम लोगों को खड़ा देखता रहा... द्रागुनोव ने कहा, 'देखते हो इसे? रात-भर यह मेरा पीछा करता रहा। मैं तो इसे मारे बिना नहीं छोड़ूँगा।' यह कहकर वह चला गया, मैं समझा घर जा रहा है... और इसाई मेरे पास आ गया..."

उक्रइनी ने एक गहरी साँस ली।

"उस समय उसने मेरा जैसा अपमान किया वैसा पहले किसी ने भी नहीं किया था, कुत्ता कहीं का!"

माँ ने चुपचाप उसे ले जाकर मेज के पास बिठा दिया और स्वयं उसके

पास कन्धे से कन्धा सटाकर बैठ गयी। पावेल खड़ा रहा और खिन्न होकर अपनी दाढ़ी के बाल नोचता रहा।

"उसने मुझे बताया कि पुलिसवालों को हम सबके नाम मालूम हैं, हम सभी के नाम राजनीतिक पुलिस की सूची में हैं और हम लोग मई दिवस से फ़ौरन पहले गिरफ़्तार कर लिये जायेंगे। मैंने कोई जवाब नहीं दिया, हँसकर उसकी बात टाल दी मगर अन्दर ही अन्दर मैं खौल रहा था। फिर उसने मुझसे कहा कि 'तुम बहुत होशियार आदमी हो, बड़े दुख की बात है कि इस गलत राह पर लग गये हो; अच्छा होता कि तुम..."

अन्द्रेई सहसा रुक गया और बायें हाथ से अपना मुँह पोंछने लगा। उसकी आँखों में एक शुष्क-सी चमक थी।

"मैं समझ गया!" पावेल ने कहा।

"उसने मुझसे कहा कि क़ानून की खिदमत करना ज़्यादा अच्छा होगा। क्यों क्या ख़याल है?" उक्रइनी ने अपना मुक्का हिलाते हुए दाँत पीसकर कहा। "क़ानून... भगवान उसे गारत करे! इससे तो अच्छा यह था कि वह मेरे मुँह पर तमाचा मार देता... तब मैं भी इतना बुरा न मानता और उसके लिए भी अच्छा रहता। मैं इसे बरदाश्त नहीं कर सकता था कि वह मेरी आत्मा पर थूके और फिर उसका वह बदबूदार थूक!"

अन्द्रेई ने झटका देकर अपना हाथ पावेल के हाथ से छुड़ा लिया और घृणा से भरे हुए मन्द स्वर में कहता गया :

"मैंने उसके मुँह पर एक तमाचा रसीद किया और वहाँ से चल दिया। मैंने पीछे से द्रागुनोव को मन्द स्वर में कहते सुना, 'अब फँसे हो मेरे पँजे में!' वह वहीं नुक्कड़ पर ही कहीं छुपा खड़ा होगा..."

उक्रइनी कुछ देर के लिए रुका, फिर बोला :

"मैंने पीछे मुड़कर नहीं देखा, लेकिन मुझे ऐसा लगा कि मैंने घूँसे की आवाज़ सुनी... लेकिन मैं अपने रास्ते पर धीरे-धीरे बढ़ता चला गया, मानो मेंढँक पर पैर पड़ गया हो। फ़ैक्टरी में जब मैं काम कर रहा था, लोग चिल्लाते हुए आये, 'किसी ने इसाई को मार डाला!' मुझे यकीन नहीं आया। लेकिन मेरी बाँह में दर्द होने लगा, इतनी बुरी तरह कि मैं काम भी नहीं कर सकता था। असल में दर्द नहीं हो रहा था, ऐसा मालूम होता था कि जैसे हाथ में जान ही न रह गयी हो..."

उसने चुपके से अपने हाथ पर नज़र डाली।

"मैं समझता हूँ कि ज़िन्दगी-भर अब मैं वह कलंक न मिटा सकूँगा..."

"तुम्हारा दिल साफ़ है तो और बातों से कुछ नहीं होता!" माँ ने कोमल स्वर में कहा।

"मैं इसका दोष अपने को नहीं देता – बिल्कुल नहीं!" उक्रइनी ने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया। "बस मुझे कुछ बुरा-बुरा-सा लगता है। मुझे इस झगड़े में पड़ना ही नहीं चाहिए था।"

"तुम्हारी बात ही मेरी समझ में नहीं आती," पावेल ने कन्धा बिचकाकर कहा। "तुमने तो उसे मारा नहीं, और अगर मारा भी होता तो..."

"देखो, भाई – अगर तुम्हें मालूम हो कि कोई आदमी मारा जा रहा है और तुम उसे न रोको..."

"मेरी समझ में नहीं आती तुम्हारी बात..." पावेल अपनी बात पर अड़ा रहा। "मेरी मतलब है कि कुछ-कुछ समझ में तो आती है, मगर मेरे दिल पर इसका कोई असर नहीं होता।"

सीटी बजी। उक्रइनी कुछ देर उसका आदेशपूर्ण आवाहन सुनता रहा, फिर सिर पीछे की तरफ़ झटककर बोला :

"मैं तो अब काम पर नहीं जाता...."

"मैं भी नहीं जाता," पावेल ने कहा।

"मैं तो नहाने जा रहा हूँ," अन्द्रेई ने धीरे से हँसकर कहा और अपने कपड़े सम्भालने लगा। जिस समय वह घर से निकला वह बहुत उदास था।

माँ सहानुभूति-भरी दृष्टि से उसे जाते हुए देखती रही।

"पावेल, तुम जो चाहो कहो!" उसने कहा। "मैं तो यह जानती हूँ कि किसी की हत्या करना पाप है मगर मैं किसी को दोष नहीं देती। मुझे इसाई का दुख है, वह तो किसी गिनती में नहीं था। जब मैंने उसे आज देखा तो मुझे याद आया कि उसने तुम्हें फाँसी पर लटकवा देने की धमकी दी थी, पर इस कारण न तो मुझे उससे घृणा ही हुई और न इस बात की ख़ुशी ही हुई कि वह मर गया। मुझे बस उस पर तरस आया। लेकिन अब – अब तो मुझे उस पर तरस भी नहीं आता।"

वह चुप हो गयी और अपने विचारों में खो गयी; कुछ देर बाद उसने विस्मय से मुस्कराकर कहा :

"बेटे पावेल, सुना भी मैंने क्या कहा?.."

स्पष्ट ही उसने माँ की बात नहीं सुनी थी, क्योंकि उसने आँखें झुकाये कमरे में टहलते हुए उदास भाव से उत्तर दिया :

"यह है हमारी ज़िन्दगी! देखती हो लोगों को किस तरह एक-दूसरे का दुश्मन बना दिया गया है? मर्जी न होते हुए भी लोग किसी को मार देते हैं। और जिसे मारते हैं वह कौन होता है? कोई बेचारा मजबूर, जिसे ख़ुद भी हमसे ज़्यादा अधिकार नहीं होते। वह तो हमसे भी ज़्यादा अभागा होता है, क्योंकि वह बेवक़ूफ़

भी होता है। पुलिस, राजनीतिक पुलिस और जासूस सब हमारे दुश्मन हैं। लेकिन वे सब हमारे ही जैसे लोग हैं, जिनका ख़ून हमारी ही तरह चूस लिया जाता है और जिन्हें हमारी ही तरह तिरस्कार से देखा जाता है। हम सब एक जैसे हैं! लेकिन हमारे मालिकों ने लोगों को एक-दूसरे का दुश्मन बना दिया है, उन्हें भय और दुनिया-भर की खुराफात से अन्धा बना दिया है, उनके हाथ-पाँव बाँध दिये हैं, निचोड़-निचोड़कर उनका ख़ून चूस लिया है, और वे उन्हें एक-दूसरे को मारने और कुचल देने पर मजबूर करते हैं। उन्होंने लोगों को बन्दूक, डण्डा और पत्थर बना दिया है, और कहते हैं, 'यही राज्यसत्ता है!..' "

वह माँ के पास चला गया।

"माँ, यह अपराध है! लाखों लोगों को इस तरह बेरहमी से मार डालना, मनुष्य की आत्मा को कुचल देना... समझ में आता है तुम्हारी? ये लोग आत्मा के हत्यारे हैं। तुम उनमें और हमसें अन्तर देखती हो? जब हम किसी को मारते हैं तो वह घृणा, लज्जा और कष्ट की बात होती है – सबसे बढ़कर घृणा की! लेकिन वे पलक झपकाये बिना, बेरहमी के साथ, किसी सेकोच के बिना हज़ारों लोगों को जान से मार देते हैं और बिल्कुल सन्तुष्ट रहते हैं! लोगों को इस तरह कुचलकर रख देने का उनके पास बस एक बहाना यह है कि वे अपने सोने-चाँदी, अपनी हुँडियों और उन तमाम मनहूस चीज़ों की रक्षा करना चाहते हैं जिनकी सहायता से वे हमें गुलाम बनाते हैं। ज़रा सोचो – जब वे लोगों को जान से मारते हैं और उनकी आत्माओं को कुचलकर रख देते हैं तो वे अपनी जान बचाने के लिए नहीं, बल्कि अपनी जायदाद बचाने के लिए ऐसा करते हैं! उन चीज़ों को बचाने के लिए जो मनुष्य के अन्दर नहीं बल्कि मनुष्य से बाहर होती हैं..."

माँ के दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर वह उन पर झुका और बोला :

"अगर तुम यह अनुभव कर पातीं कि यह सब कुछ कितना नीच और अपमानजनक है, तो तुम उस सत्य को समझ जातीं जिसके लिए हम लड़ रहे हैं, तुम समझ जातीं कि हमारा सत्य कितना अच्छा और महान है!.."

माँ भाव-विह्वल होकर उठी और उसकी इच्छा हुई कि उसके हृदय में जो आग सुलग रही है वह उसके बेटे के हृदय की ज्वाला का रूप धारण कर ले।

"ठहरो, पावेल!" उसने बड़ी कठिनाई से अस्फुट स्वर में कहा। "थोड़ा ठहरो! मैं भी अनुभव करने लगी हूँ!.."

25

कोई ज़ोर-ज़ोर से क़दम रखता हुआ बरसाती में आया और माँ-बेटे दोनों

एक–दूसरे को आश्चर्य से देखने लगे।

दरवाज़ा धीरे से खुला और रीबिन अन्दर आया।

"लो मैं आ गया!" उसने सिर उठाकर मुस्कराते हुए कहा। "नारद मुनि की तरह, अपनी धुन का पक्का, कभी यहाँ जाना, कभी वहाँ जाना, हर बात में अपनी टाँग अड़ाना!.."

वह रस्सी के बने हुए सैन्डिल, फर की झबरी टोपी और भेड़ की खाल का कोट पहने था जिस पर जगह–जगह तारकोल लिपा हुआ था। उसकी पेटी में एक जोड़ा काले दस्ताने खुँसे हुए थे।

"तुम हो कैसे? तो पावेल, उन लोगों ने तुम्हें छोड़ दिया? चलो अच्छा है। पेलागेया निलोवना, तुम्हारी कैसी गुजर रही है?" वह खुलकर मुस्करा दिया और उसके सफ़ेद दाँत झलक उठे। उसका स्वर अधिक कोमल और उसकी दाढ़ी और घनी हो गयी थी।

माँ उसे देखकर बहुत ख़ुश हुई और उसने आगे बढ़कर उसका बड़ा–सा काला हाथ कसकर पकड़ लिया।

"सच कहती हूँ!" उसने तारकोल की तेज़ प्रीतिकर गन्ध में एक गहरी साँस लेते हुए कहा : "बहुत ख़ुश हूँ मैं तुम्हें देखकर!"

"तुम हो असली किसान!" पावेल ने रीबिन को घूरते हुए मुस्कराकर कहा।

आगन्तुक ने धीरे–धीरे अपने कपड़े उतारे।

"हाँ, मैं फिर किसान बन गया। तुम लोग दिन–ब–दिन शरीफ़ बनते जा रहे हो और मैं दूसरी तरफ़ बढ़ता जा रहा हूँ!"

वह कमरे में इधर–उधर टहल–टहलकर हर चीज़ को ग़ौर से देख रहा था और अपनी क़मीज़ को लगातार नीचे खींच रहा था।

"किताबों के अलावा और कोई चीज़ तो यहाँ नयी है नहीं। हुँ:! ख़ैर, यह बताओ क्या ख़बरें हैं यहाँ की?"

वह दोनों हाथों से अपने घुटने पकड़कर टाँगें फैलाकर बैठ गया। वह अपनी काली–काली आँखों से पावेल के चेहरे को इस तरह देख रहा था जैसे कुछ ढूँढ़ रहा हो और उत्तर की प्रतीक्षा में बैठा मुस्करा रहा था।

"काम आगे बढ़ रहा है!" पावेल ने कहा।

"हम तो ज़मीन जोतते हैं फिर बीज बोते हैं और फसल तैयार होने का इन्तज़ार करते हैं; तब हम शराब खींचते हैं और बाक़ी साल सोते हैं – क्यों यही चक्कर है न, दोस्तो?" रीबिन ने हँसकर कहा।

"तुम्हारा काम कैसा चल रहा है, मिख़ाइलो इवानोविच?" पावेल ने उसके सामने बैठते हुए कहा।

"ठीक ही चल रहा है। येगिलदेयेवो में रहता हूँ – नाम सुना है कभी? येगिलदेयेवो! अच्छा-ख़ासा क़स्बा है। साल में दो मेले लगते हैं। दो हज़ार से ऊपर आबादी है। लोग ग़ुस्सैल हैं! उनके पास अपनी ज़मीन तो है नहीं – लगान पर लेते हैं। और ज़मीन भी कुछ ख़ास अच्छी नहीं है। मैं भी वहाँ के एक ख़ून चूसने वाले के यहाँ काम करता हूँ। वहाँ ये ख़ून चूसने वाले ऐसे ही हैं जैसे सड़ती हुई लाश में कीड़े बिलबिलाते हैं। कोयले को जलाकर तारकोल निकालते हैं। आमदनी तो यहाँ की चौथाई होती है, मगर काम दुगना करना पड़ता है। हुँः! हम सात आदमी काम करते हैं उसके यहाँ, उस जल्लाद के यहाँ। सब भले लोग हैं, नौजवान हैं, मेरे अलावा सब वहीं के रहने वाले हैं और सब पढ़ना-लिखना जानते हैं। उनमें येफ़ीम नाम का एक लड़का है, जो इतने गरम मिजाज का है कि समझ में नहीं आता कि उसे कैसे रास्ते पर लाऊँ!"

"तो तुम क्या उनसे बहस करते हो?" पावेल ने उत्सुकता से पूछा।

"यह तो तुम अच्छी तरह जानते हो कि मैं अपनी जुबान बन्द नहीं रख सकता। मैं तुम्हारे सब पर्चे अपने साथ ले गया था – कुल चौन्तीस थे। लेकिन मैं ज़्यादातर बाइबिल से ही काम लेता हूँ। बाइबिल में मसाला मिलता है। मोटी किताब है, जो कुछ उसमें लिखा है उसे कोई हिला नहीं सकता। पादरियों की सबसे ऊँची परिषद ने ही इस किताब को छापा है, इसलिए इस किताब पर आदमी एतबार कर सकता है!"

वह हँस दिया और पावेल की तरफ़ देखकर उसने आँख मारी।

"लेकिन इतने से काम नहीं चलता। मैं तुमसे कुछ और किताबें लेने आया हूँ। हम दो आदमी आये हैं; येफ़ीम को भी साथ लाया हूँ। हम लोगों को यहाँ तारकोल लेकर भेजा गया था; मैंने सोचा ज़रा-सा रास्ता बदलकर तुमसे मिलने चलूँ। येफ़ीम के आने से पहले मुझे किताबें दे दो। उसे ज़्यादा नहीं मालूम होना चाहिए..."

माँ रीबिन को बड़े ध्यान से देख रही थी; उसने अनुभव किया कि रीबिन के केवल कपड़े ही पहले से भिन्न नहीं थे; उसके बरताव में अब इतना रोबदाब नहीं रह गया था, उसकी नज़रों में ज़्यादा चालाकी आ गयी थी और उसकी आँखों में अब वह पहले जैसी सादगी नहीं रह गयी थी।

"माँ," पावेल ने कहा, "तुम जाकर किताबें ले आओगी? वहाँ जाना, वे लोग जानते हैं कौन-सी किताबें देनी हैं। उनसे कह देना देहात भेजनी हैं।"

"अच्छी बात है," माँ बोली। "पानी गरम हो जाये, बस मैं जाती हूँ।"

"पेलागेया निलोवना, तुम भी इस चक्कर में फँस गयीं?" रीबिन ने हँसकर कहा। "हुँः, वहाँ बहुत-से लोग किताबें पढ़ना चाहते हैं। यह सब काम वहाँ के

एक मास्टर का है; है तो वह पादरी का बेटा मगर लोग कहते हैं कि भला आदमी है। एक औरत भी है पढ़ानेवाली, वहाँ से चार-पाँच मील पर रहती है। दोनों में से कोई भी ग़ैर-क़ानूनी किताबें नहीं इस्तेमाल करता है। नौकरी छूट जाने से डरते हैं। मगर मुझे तो वही ग़ैर-क़ानूनी किताबें चाहिए - जिनमें ख़ूब मिर्च-मसाला होता है... मेरी दी हुई किताबें अगर दारोगा साहब या पादरी के हाथ लगीं तो उनका शक उन दो मास्टरों को छोड़कर और किसी पर जा ही नहीं सकता। इस बीच में मैं छिप जाऊँगा और फिर मौक़े की ताक में रहूँगा।"

वह खीसें निकालकर हँसने लगा, अपनी इस चालाकी पर उसे बहुत ख़ुशी हो रही थी।

"अहा!" माँ ने सोचा। "लगते तो हो शेर, मगर हो लोमड़ी..."

"अगर उन्हें उन मास्टरों पर शक हुआ कि वे ग़ैर-क़ानूनी किताबें बाँटते हैं, तो क्या वे उन्हें जेल भेज देंगे?" पावेल ने पूछा।

"ज़रूर भेज देंगे," रीबिन ने उत्तर दिया। "मगर इससे क्या होता है?"

"मगर कसूर तो तुम्हारा होगा, उनका नहीं। जेल जाना चाहिए तुम्हें..."

"तुम भी अजीब आदमी हो!" रीबिन ने हँसते हुए अपने घुटने पर ज़ोर से हाथ मारकर कहा। "मुझ पर किसी को शक होगा ही नहीं। किसानों का इन सब चीज़ों से क्या मतलब? किताबों का काम तो पढ़े-लिखे शरीफ़ लोगों का है, और वही उनके लिए जवाबदेह हैं..."

माँ को ऐसा लगा कि पावेल की समझ में रीबिन की बात आ नहीं रही है। माँ ने देखा कि उसके बेटे की आँखें सिकुड़ गयी हैं जिसका मतलब था कि उसे ग़ुस्सा आ रहा है।

"मिख़ाइलो इवानोविच काम तो ख़ुद करना चाहता है मगर उसकी जिम्मेदारी दूसरों पर डालना चाहता है..." माँ ने सतर्कता और दबी जबान से कहा।

"यही बात है!" रीबिन ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहा। "फिलहाल।"

"अच्छा, माँ," पावेल ने रुखाई से कहा, "मान लो हमारा कोई आदमी, जैसे अन्द्रेई को ही ले लो, कोई काम करके मुझे आगे कर दे और ख़ुद पीछे छिप जाये और मुझे जेल भेज दिया जाये, तो तुम्हें कैसा लगेगा?"

माँ एकदम चौंक पड़ी और अपने बेटे को आश्चर्य से देखने लगी।

"कोई आदमी अपने साथी को ऐसा धोखा कैसे दे सकता है?" उसने अपना सिर हिलाते हुए पूछा।

"हूँ-ऊ!" रीबिन ने अपनी आवाज़ चींचते हुए कहा। "पावेल, मैं समझ गया तुम क्या कहना चाहते हो!" यह कहकर उसने माँ की तरफ़ व्यंग से देखते हुए आँख मारी।

“माँ, यह बड़ा टेढ़ा मामला है,” उसने कहा और फिर पावेल की तरफ़ मुड़कर वह उपदेशकों के स्वर में बोला :

“भाई, तुम बिल्कुल बच्चों की तरह सोचते हो! खुफिया काम करने चले हो तो फिर ईमानदार बने रहने की फिकर नहीं कर सकते। तुम ही सोचो : सबसे पहले तो वह आदमी जेल में बन्द किया जायेगा, जिसके पास किताब पकड़ी जायेगी। मास्टरों की बारी तो बाद में आयेगी। यह तो है पहली बात; दूसरी बात यह कि माना वह मास्टर और मास्टरनी सिर्फ़ क़ानूनी किताबें ही इस्तेमाल करते हैं मगर बात तो वह भी वही सिखाते हैं। बस ल“जों का हेर–फेर है – उनके ल“जों में कम सच्चाई है। सब बातों का निचोड़ यह है कि वे भी वही बात कहते हैं जो मैं कहता हूँ, लेकिन वे गली से होकर जाते हैं और मैं बड़ी सड़क पर सीधा चलता हूँ। मालिकों की नज़र में कुसूर हम दोनों ही का है, है कि नहीं? तीसरी बात यह कि, भाई, मुझे उनकी रत्ती भर भी परवाह नहीं है! पैदल फ़ौज और घुड़सवारों में कभी दोस्ती नहीं हो सकती। मुमकिन है कि मैं किसी किसान के साथ ऐसा न करूँ। लेकिन उनके साथ – उनमें एक पादरी का बेटा है और दूसरी एक अमीर ज़मींदार की बेटी – आख़िर वे लोगों को क्यों भड़काते हैं? यह मुझ जैसे किसान का काम नहीं है कि उनके मन का हाल मालूम करूँ। मैं यह जानता हूँ कि मैं क्या कर रहा हूँ मगर मुझे इसका कुछ भी पता नहीं है कि वे क्या चाहते हैं। हज़ारों साल तक ये पैसेवाले लोग वही करते रहे, जिसकी उनसे उम्मीद थी : हम किसानों की खाल खींचते रहे। अब यकायक न जाने क्यों वे सोकर जागे हैं और अपने ही हाथों से किसानों की आँखों पर बँधी हुई पट्टी खोल रहे हैं। मैं उन लोगों में से नहीं हूँ जो परियों के क़िस्सों पर यकीन करते हैं और यह भी बिल्कुल परियों का क़िस्सा है। मेरे और इन पैसेवाले लोगों के बीच ज़मीन–आसमान का अन्तर है। जाड़े में कभी–कभी तुमने देखा होगा कि घोड़े पर सवार होकर खेतों को पार करते हुए यकायक सड़क के पार बहुत दूर आगे कोई चीज़ चमक जाती है। वह क्या चीज़ होती है? भेड़िया या लोमड़ी या कुत्ता? बता नहीं सकते। हमारे उसके बीच फासला बहुत होता है।”

माँ ने कनखियों से अपने बेटे को देखा। वह बहुत उदास था।

रीबिन बड़े निश्चिन्त भाव से पावेल को देख रहा था और अपनी दाढ़ी में उँगलियाँ फेर रहा था; उसकी आँखों में एक अशुभसूचक चमक थी।

“भलमनसाहत का ख़याल रखने का वक़्त ही कहाँ है,” वह कहता रहा। “ज़िन्दगी बहुत कठिन है। कुत्तों का झुण्ड और भेड़ों का रेवड़ एक ही चीज़ नहीं होते – हर कुत्ता अलग ही भूँकता है...”

“ऐसे भी पैसेवाले लोग होते हैं जो आम लोगों की खातिर अपनी जान तक

दे देते हैं," माँ ने कहा; वह कुछ चिर-परिचित लोगों के बारे में सोच रही थी। "सारी उमर जेलों में काट देते हैं..."

"उनकी बात ही निराली होती है!" रीबिन ने उत्तर दिया। "किसान अमीर होकर पैसेवाले बन जाते हैं और पैसेवाले ग़रीब होकर गिरते-गिरते किसान बन जाते हैं। मजबूरी किसी को भी सन्त बना सकती है। पावेल, तुम्हें याद है तुमने यह बात मुझे किस तरह समझायी थी? आदमी क्या सोचता है, इसका फ़ैसला इस बात से होता है कि वह कैसी ज़िन्दगी बसर करता है। असल बात तो यही है। अगर मज़दूर कहता है 'हाँ', तो उसका मालिक कहता है 'नहीं', अगर मज़दूर कहता है 'नहीं', तो उसका मालिक कहता है 'हाँ'! यह उनका स्वभाव है। बस किसान और ज़मींदार में भी यही फर्क है। अगर किसान को भर-पेट खाने को मिलने लगे तो उसे देखकर ज़मींदार का जी जलता है। ख़ैर, हरामजादे तो हर वर्ग के लोगों में होते हैं, मैं हर किसान का पक्ष नहीं लेता..."

वह उठकर खड़ा हो गया, देखने में मज़बूत और भयानक, उसकी दाढ़ी इस तरह हिल रही थी मानो उसने अपने दाँत कसकर भींच रखे हों।

"पाँच साल तक मैं कारख़ाने-कारख़ाने भटकता रहा – बिल्कुल भूल ही गया कि गाँव क्या होता है," वह नीची आवाज़ में कहता गया। "आख़िरकार जब मैं देहात वापस गया तो मुझे मालूम हुआ कि अब मैं उस तरह नहीं रह सकता! समझे? रह ही नहीं सकता! यहाँ रहते हुए तुम्हें मालूम ही नहीं होता कि क्या अन्याय हो रहा है। वहाँ भूख लोगों के साथ उनकी परछाईं की तरह लगी रहती है और खाना मिलने की कोई आशा नहीं होती, बिल्कुल नहीं! भूख लोगों की आत्मा को खा जाती है, उनके चेहरे पर से इंसानियत का नामो-निशान तक मिटा देती है। वे ज़िन्दा नहीं रहते; वे तो बस उमर-भर मुफलिस रहते हैं : सरकारी हाकिम उन्हें गिद्धों की तरह ताकते रहते हैं कि कहीं वे कुछ ज़्यादा न पा जायें। अगर कभी वे किसी किसान के पास कोई चीज़ देखते हैं तो उसके मुँह पर एक थप्पड़ रसीद करके उससे छीन लेते हैं..."

रीबिन ने इधर-उधर नज़र दौड़ायी, फिर मेज के सहारे पावेल की तरफ़ झुककर बोला :

"फिर उस ज़िन्दगी में पहुँचकर मेरा जी न जाने क्यों उचाट होने लगा। मैंने सोचा कि मैं यह बरदाश्त नहीं कर सकूँगा। तब मैंने अपने मन में कहा : 'तुम्हें जी कड़ा करके सब कुछ बरदाश्त करना होगा! तुम उन्हें पेट भर रोटी न दिला सको मगर कुछ न कुछ खिचड़ी तो पका ही सकते हो!' और यह सोचकर मैं वहीं टिक गया। मेरे दिल में जो शिकायतें थीं उनसे मेरा दिल फटा जा रहा था। शिकायतें तो अभी तक मेरे दिल में बनी हुई हैं, जैसे कोई खंजर चुभा हुआ हो।"

धीरे-धीरे वह पावेल के पास गया और उसके कन्धे पर हाथ रखकर खड़ा हो गया। उसके माथे पर पसीने की बूँदें चमक रही थीं और उसका हाथ काँप रहा था।

"मुझे तुम्हारी मदद चाहिए! मुझे किताबें दो, ऐसी किताबें जिन्हें पढ़कर आदमी फिर चैन से न बैठ सके। मैं चाहता हूँ उनकी खोपड़ी के अन्दर एक साही बिठा दी जाये जो अपने तेज़ काँटों से उनके दिमाग को हमेशा कुरेदती रहे! जो शहरवाले लोग तुम्हारे लिए किताबें लिखते हैं उनसे कह दो कि गाँव के लिए भी किताबें लिखा करें। इस तरह लिखें कि एक-एक ल"ज में अंगारे भर दें ताकि लोग किसी उद्देश्य के लिये मरना सीखें!"

वह हाथ उठाकर एक-एक शब्द को अलग-अलग और साफ़-साफ़ बोल रहा था :

"मौत से मौत ही निपट सकती है! दूसरे शब्दों में लोगों को ज़िन्दा करने के लिए हमें मरना होगा। हममें से हज़ारों लोगों को इसलिए अपनी जान देनी पड़ेगी कि पृथ्वी पर रहने वाले करोड़ों लोग ज़िन्दा रह सकें! असली बात यही है। दूसरों को ज़िन्दा करने के लिए मरना आसान है। बस अगर लोग उठ खड़े हों!"

माँ समोवार लेकर अन्दर आयी और रीबिन को उसने कनखियों से देखा। उसे ऐसा लग रहा था कि वह उसके शब्दों के बोझ और शक्ति से दबी जा रही है। उसमें कोई ऐसी बात थी जो उसे अपने पति की याद दिलाती थी। उसका पति भी इसी तरह दाँत निकालकर और आस्तीनें चढ़ाकर बातें करता था। और वह भी गुस्से में इसी तरह बेचैन हो उठता था। वह बेचैन तो ज़रूर होता था पर इस बेचैनी को शब्दों में व्यक्त नहीं करता था, जबकि यह आदमी अपनी भावनाओं को व्यक्त भी करता था। इसीलिए वह कम भयानक लगता था।

"हमें यह ज़रूर करना चाहिए!" पावेल ने सिर हिलाते हुए कहा। "तुम हमें ख़बरें भेजो, हम तुम्हारे लिए अखबार छापेंगे..."

माँ ने मुस्कराकर अपने बेटे को देखा और सिर हिलाने लगी। फिर एक शब्द भी कहे बिना वह कपड़े बदलकर घर के बाहर चली गयी।

"अच्छी बात है! हम तुम्हें मसाला भेजेंगे। इतनी आसान जबान में लिखना बुद्धू भी समझ जायें!" रीबिन ने ऊँचे स्वर में कहा।

रसोई का दरवाज़ा खुला और कोई अन्दर आया।

"येफ़ीम है!" रीबिन ने रसोई में झाँकते हुए कहा। "यहाँ आ जाओ, येफ़ीम! यह पावेल है। मैंने तुम्हें बताया था न इसके बारे में।"

पावेल के सामने एक लम्बा-सा भूरे बालों और चौड़े-चकले चेहरेवाला लड़का भेड़ की खाल का छोटा-सा कोट पहने अपनी टोपी हाथ में लिये खड़ा

था और भवें नीची किये उसे देख रहा था। देखने में वह बहुत बलिष्ठ लगता था।

"आपसे मिलकर बड़ी ख़ुशी हुई!" उसने भारी आवाज़ में कहा और हाथ मिला चुकने के बाद अपने खड़े बालों में उँगलियाँ फेरने लगा। कमरे में चारों तरफ़ नज़र दौड़ाते हुए उसकी निगाह किताबों पर पड़ी और वह धीरे-धीरे उनकी तरफ़ बढ़ा।

"पड़ गयी नज़र!" रीबिन ने पावेल को आँख मारते हुए कहा। येफ़ीम मुड़ा, उसने रीबिन की ओर देखा और फिर किताबों का निरीक्षण करने लगा।

"कितनी बहुत-सी किताबें हैं!" उसने पुलकित होकर कहा। "तुम्हें तो इन्हें पढ़ने का भी समय न मिलता होगा। अगर तुम गाँव में रहते होते तो तुम्हें इसके लिए ज़्यादा वक़्त मिलता..."

"मगर पढ़ने को जी कम चाहता, क्यों?" पावेल ने प्रश्न किया।

"अरे नहीं, जी भी बहुत चाहता है!" लड़के ने अपनी ठोड़ी थपथपाते हुए कहा। "लोग अपनी अकल इस्तेमाल करने लगे हैं। 'भूगर्भशास्त्र' - यह क्या होता है?"

पावेल ने उसे समझाया।

"यह हमारे काम की नहीं!" लड़के ने किताब अल्मारी में वापस रखते हुए कहा।

"किसान को इससे कोई मतलब नहीं कि पृथ्वी कैसे बनी," रीबिन ने ज़ोर से निश्वास छोड़ते हुए कहा। "उसे तो इसमें दिलचस्पी होती है कि ज़मीन को टुकड़े-टुकड़े करके बाँटा कैसे गया? ज़मींदारों ने उसकी आँखों में धूल झोंककर उसकी ज़मीन कैसे हथिया ली? उसे क्या फरक पड़ता है कि ज़मीन घूमती है या एक जगह टिकी रहती है? जब तक किसान को ज़मीन से अपनी रोटी मिलती है तब तक चाहे वह रस्सी से लटकी हो या कील से कहीं जड़ी हो, उसकी बला से!"

" 'दास-प्रथा का इतिहास'," येफ़ीम ने एक किताब का नाम पढ़ा। "क्या यह हम लोगों के बारे में है?"

"नहीं, लेकिन भूदास-प्रथा के बारे में भी है," पावेल ने उसे एक दूसरी किताब देते हुए कहा। येफ़ीम ने किताब लेकर उसे उलट-पुलटकर देखा।

"यह तो पुराने ज़माने की बात है!" उसने किताब को नीचे रखते हुए उदासीन भाव से कहा।

"क्या तुम्हारे पास अपनी ज़मीन है?" पावेल ने पूछा।

"है क्यों नहीं। मेरे और मेरे दो भाइयों के पास मिलाकर कोई पाँच हेक्टर

ज़मीन है। मगर सब रेतीली है। बरतन माँजने के लिए तो अच्छी है, पर खेती के काम की नहीं है!.."

वह एक क्षण के लिए रुका।

"मगर ज़मीन तो मैंने छोड़ दी है। उसका फ़ायदा ही क्या? खाने को मिलता नहीं उससे, बेकार में आदमी बँधा रहता है। मैं तो चार साल से दूसरों के खेतों पर मज़दूरी करता हूँ। अब की जाड़े में फ़ौज में भरती होना है। मगर मिख़ाइलो चाचा कहते हैं कि हाजिर ही न हो। वह कहते हैं कि आजकल सिपाहियों को आम जनता को मारने के लिए भेजा जाता है। मगर मैं सोचता हूँ कि मैं भरती हो ही जाऊँगा। स्तेपान राजिन* और पुगाचोव** के ज़माने में भी तो सिपाही आम लोगों को ही मारते थे। अब वक़्त आ गया है कि इस सारे क़िस्से को ख़त्म ही कर दिया जाये, तुम्हारा क्या ख़याल है?" उसने पावेल की तरफ़ देखकर पूछा।

"हाँ, वक़्त तो आ गया है!" पावेल ने मुस्कराकर उत्तर दिया। "मगर यह इतना आसान नहीं है! हमें यह मालूम होना चाहिए कि सिपाहियों से क्या कहा जाये और कैसे कहा जाये..."

"हम सीख लेंगे!" येफ़ीम बोला।

"अगर अफ़सरों को पता लग गया तो तुम्हें वे गोली मार देंगे!" पावेल ने येफ़ीम को उत्सुकता भरी दृष्टि से देखते हुए कहा।

"उनसे ज़्यादा दया की उम्मीद तो की भी नहीं जा सकती!" लड़के ने शान्त भाव से अपनी सहमति प्रकट की और फिर किताबें देखने लगा।

"येफ़ीम, चाय पी लो," रीबिन ने कहा। "हमें जल्दी जाना है!"

"अच्छा! क्या क्रान्ति और उपद्रव एक ही चीज़ होते हैं?"

इतने में अन्द्रेई अन्दर आया। नहाने के बाद वह लाल हो गया था और हमाम की भाप की गरमी अब तक उसमें बाक़ी थी। उसके चेहरे पर उदासी छायी हुई थी। उसने कुछ कहे बिना येफ़ीम से हाथ मिलाया और रीबिन के पास बैठकर उसे सिर से पाँव तक देखा और तनिक मुस्कराया।

"तुम ख़ुश नज़र नहीं आ रहे, ऐसा क्यों?" रीबिन ने उसके घुटने पर हाथ मारते हुए पूछा।

"ऐसे ही," उक्रइनी ने जवाब दिया।

"यह भी मज़दूर है?" येफ़ीम ने अन्द्रेई की ओर सिर से संकेत करते हुए पूछा।

---

* स्तेपान राज़िन – भूदास प्रथा के ख़िलाफ़ 1670–71 के किसान युद्ध के नेता – स.

** पुगाचीव – भूदास प्रथा के ख़िलाफ़ 1773–75 के किसान युद्ध के नेता – स.

"हाँ," अन्द्रेई ने कहा। "तो क्या हुआ?"

"इसने पहले कभी कारख़ाने के मज़दूर नहीं देखे हैं," रीबिन ने समझाते हुए कहा। "इसलिए इसे वे दूसरे लोगों से अलग मालूम होते हैं..."

"हम दूसरों से अलग किस तरह हैं?" पावेल ने पूछा।

"तुम लोगों की हड्डियाँ ज़्यादा उभरी हुई होती हैं," येफ़ीम ने अन्द्रेई को बड़े ध्यान से देखने के बाद कहा। "किसान की हड्डियाँ गोलाई लिए हुए होती हैं..."

"किसान अपने पाँवों पर खड़ा भी ज़्यादा मज़बूती से रहता है," रीबिन ने ज़ोर देते हुए कहा। "उसे अपने पाँव तले की ज़मीन का आभास रहता है, वह उसकी अपनी भले ही न हो। वह उसे, ज़मीन को, महसूस करता है! मगर कारख़ाने का मज़दूर चिड़िया की तरह होता है : न अपनी कोई ज़मीन, न अपना घर – आज यहाँ, कल वहाँ! औरत भी उसे एक जगह बाँधकर नहीं रख सकती। ज्यों ही कुछ गड़बड़ होता है वह उसे छोड़ देता है और उससे बेहतर की तलाश में निकल पड़ता है। मगर किसान चीज़ों से नाता तोड़े बिना ही उन्हें सुधारने की कोशिश करता है। लो, तुम्हारी माँ वापस आ गयीं!"

"मुझे अपनी एक किताब पढ़ने को दोगे?" येफ़ीम ने पावेल के निकट आकर कहा।

"दूँगा क्यों नहीं!" पावेल ने कहा।

लड़के की आँखों में उत्सुकता की चमक आ गयी।

"मैं वापस लौटा दूँगा!" उसने जल्दी से पावेल को आश्वासन दिया। "हमारे यहाँ से लोग तारकोल लेकर इधर आते रहते हैं, उन्हीं के हाथ भेज दूँगा।"

"अब चलें," रीबिन ने कहा; वह भेड़ की खाल का कोट पहनकर तैयार हो गया था और पेटी कस रहा था।

"इसे पढ़ने में मजा आयेगा!" येफ़ीम ने किताब ऊपर उठाकर बत्तीसी खोलकर मुस्कराते हुए कहा।

जब वे चले गये तो पावेल बड़े उत्साह के साथ अन्द्रेई की तरफ़ मुड़ा।

"क्या ख़याल है तुम्हारा इनके बारे में?.." उसने पूछा।

"हूँ-ऊँ-ऊँ!" उक्रइनी ने आवाज़ खींची। "तूफान के बादल हैं..."

"मिख़ाइलो?" माँ बोली। "मालूम होता है जैसे उसने कारख़ाने में कभी काम ही नहीं किया। बिल्कुल किसान हो गया! सो भी कैसा भयानक!"

"बड़ा बुरा हुआ कि जब वे लोग आये थे तब तुम यहाँ नहीं थे," पावेल ने अन्द्रेई से कहा जो मेज के किनारे बैठा हुआ अपने चाय के गिलास को घूर रहा था। "तुम हमेशा इंसानियत से भरे हुए दिल की बातें करते रहते हो; इन दोनों

के दिलों में झाँककर देखते! रीबिन को देखकर तो मैं दंग रह गया; मैं उससे बहस भी न कर सका। उसे इन्सानों पर कोई विश्वास है ही नहीं और वह उनकी कोई कदर नहीं करता! माँ ठीक ही कहती थीं कि उसमें कोई बड़ी भयानक बात है!.."

"यह तो मैंने भी देखा!" उक्रइनी ने उचाट स्वर में कहा। "शासकों ने लोगों के दिमागों को ज़हरीला बना दिया है! जब जनता जाग उठेगी तब वह हर चीज़ को ढा देगी। उसे तो बस साफ़ ज़मीन चाहिए; अगर वह साफ़ नहीं होगी तो जनता उसे साफ़ कर देगी। वह हर चीज़ को जड़ से उखाड़ फेंकेगी!"

वह बहुत धीरे-धीरे बोल रहा था और यह स्पष्ट था कि वह किसी और ही बात के बारे में सोच रहा था। माँ ने हाथ आगे बढ़ाकर उससे बड़े प्यार से कहा :

"अन्द्रेई, अपना जी शान्त करो!"

"माँ, ज़रा ठहरो!" उसने शान्त भाव से बड़े प्यार के साथ कहा। फिर वह सहसा भड़क उठा और मेज पर मुक्का मारकर बोला :

"पावेल, यह सच बात है! एक बार जहाँ किसान अपने पाँव पर खड़ा हो गया वह ज़मीन को बिल्कुल साफ़ कर देगा! वह हर चीज़ को जला देगा, जैसे ताऊन के बाद चीज़ें जलायी जाती हैं, और उसने जो मुसीबतें सही हैं उनका एक-एक निशान मिटा देगा..."

"और फिर वह हमारी राह रोककर खड़ा हो जायेगा!" पावेल ने बहुत धीमे से अपना मत प्रकट किया।

"यह तो हमारा काम है कि हम ऐसा न करने दें! यह तो हमें देखना है कि उसे काबू में रखें! उससे जितने निकट हम लोग हैं उतना कोई और नहीं है। वह हम पर विश्वास करेगा और हमारे पीछे-पीछे चलेगा!"

"रीबिन ने मुझसे गाँव के लिए एक अखबार निकालने को कहा है!" पावेल ने कहा।

"इसी की तो ज़रूरत है!"

"बुरा हुआ कि मैंने उससे बहस नहीं की," पावेल ने धीरे से हँसकर कहा।

"अभी वक़्त है!" उक्रइनी ने बालों में उँगली फेरते हुए शान्त भाव से कहा। "अपनी धुन छेड़े रहो और जिन लोगों के पाँव ज़मीन में गड़े नहीं हैं वे तुम्हारी धुन पर ज़रूर नाचेंगे। रीबिन ठीक ही कहता था कि हम अपने पाँव के नीचे की ज़मीन महसूस नहीं करते और हमें करनी भी नहीं चाहिए क्योंकि इसी ज़मीन को तो हिलाकर रख देना हमारा काम है। हम एक बार इसे हिलायेंगे तो लोग इससे अलग हो जायेंगे; और जब हम इसे दुबारा हिलायेंगे तो वे आजाद हो जायेंगे।"

"अन्द्रेई, तुम्हें हर चीज़ बहुत आसान मालूम होती है!" माँ ने मुस्कराते हुए कहा।

"आसान तो है ही!" उक्रइनी ने कहा। "उतनी ही आसान जितनी ज़िन्दगी है!"

कुछ देर बाद वह बोला :

"मैं ज़रा बाहर खेतों में टहलने जा रहा हूँ..."

"नहाकर? हवा चल रही है, सर्दी लग जायेगी!" माँ ने उसे सचेत करते हुए कहा।

"मुझे हवा की ज़रूरत भी है!" उसने उत्तर दिया।

"सर्दी न खा जाना!" पावेल ने बड़े प्यार से कहा। "मेरे ख़याल से तो तुम सो लो तो अच्छा है।"

"नहीं, मैं जा रहा हूँ!"

उसने कपड़े पहने और कुछ कहे बिना ही चला गया...

"वह बहुत दुखी है!" माँ ने आह भरकर कहा।

"मालूम होता है उस बात के बाद से तुम उससे और भी ज़्यादा प्यार करने लगी हो," पावेल ने कहा, "मुझे बड़ी ख़ुशी है इस बात की!"

माँ ने आश्चर्य से देखा।

"सच? मुझे तो मालूम नहीं हुआ! मैं उसे इतना प्यार करती हूँ कि बता नहीं सकती!"

"माँ, तुम्हारा हृदय बहुत उदार है!" पावेल ने कोमल स्वर में कहा।

"मैं तो यही चाहती हूँ कि मैं तुम्हारे और तुम्हारे दोस्तों के किसी काम आ सकूँ! काश, मैं यह कर सकती!..."

"घबराओ नहीं, सीख जाओगी!.."

"घबराऊँ नहीं, यही मैं कर नहीं पाती!" उसने धीरे से हँसकर कहा।

"माँ, छोड़ो भी इन बातों को! मगर एक बात याद रखना – मैं तुम्हारा बहुत–बहुत एहसान मानता हूँ!"

वह रसोई में चली गयी कि पावेल कहीं उसके आँसू न देख ले।

उक्रइनी बहुत देर से घर लौटा और आते ही लेट गया।

"कम से कम छः–सात मील चला हूँगा..." उसने कहा।

"कुछ फ़ायदा हुआ?" पावेल ने पूछा।

"छोड़ो भी इस बात को, मैं तो सोता हूँ!"

इसके बाद वह एक शब्द भी न बोला।

कुछ देर बाद वेसोवश्चिकोव अन्दर आया – फटेहाल, गन्दा और हमेशा की

तरह भन्नाया हुआ।

"कुछ सुना तुमने कि इसाई को किसने मारा था?" उसने बड़े भद्दे ढंग से टहलते हुए पावेल से पूछा।

"नहीं तो!" पावेल ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

"आख़िर ऐसा आदमी भी सामने आ ही गया, जिसे यह काम करते हुए घिन नहीं आयी। मैं तो ख़ुद ही उसे मारने के फेर में था। बुरा हुआ कि मेरे हाथों नहीं मरा; इस काम के लिए मुझसे अच्छा कोई आदमी था ही नहीं!"

"निकोलाई, ऐसी बातें मत कहो!" पावेल ने मित्रता के भाव से कहा।

"बिल्कुल ठीक कहते हो तुम!" माँ ने बड़े प्यार से कहा। "जब आदमी का कलेजा मोम जैसा मुलायम हो तो फिर वह शेर की तरह गरजे क्यों? आख़िर क्यों?"

आज रात निकोलाई को देखकर वह ख़ुश थी। उसका चेचक के दागों से भरा हुआ चेहरा भी उसे ज़्यादा आकर्षक मालूम हो रहा था।

"मैं तो बस इसी काम के लिए ठीक हूँ!" निकोलाई ने अपने कन्धे बिचकाते हुए कहा। "मैं सोचता रहता हूँ कि मैं क्या काम कर सकता हूँ? कुछ भी नहीं! इन सब कामों में लोगों से बातें करनी पड़ती हैं और मुझे बातें करना भी नहीं आता! मैं देखता हूँ कि दुनिया में क्या हो रहा है, मैं देखता हूँ कि लोगों के साथ कैसा अन्याय होता है पर मैं उसे बयान नहीं कर सकता! मैं बिल्कुल जंगली हूँ, बात तक करनी नहीं आती।"

वह पावेल के पास चला गया और आँखें झुकाये मेज में उँगलियाँ गड़ाता रहा और फिर उसने बच्चों जैसे विनीत स्वर में कहा जो उसके हमेशा के स्वर से बिल्कुल भिन्न था :

"दोस्तो, मुझे कोई मुश्किल काम दो! मैं इस तरह ज़िन्दा नहीं रह सकता! तुम सब लोग अपने-अपने काम में फँसे हो और मैं देखता हूँ कि काम किस तरह दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है लेकिन मैं कुछ नहीं कर रहा हूँ! बस लकड़ी के कुन्दे और तख़्ते ढोता रहता हूँ। कोई भी तो चीज़ नहीं है जिसके लिए मैं ज़िन्दा रहूँ। मुझे कोई कठिन काम दो!"

पावेल ने हाथ बढ़ाकर उसे अपनी तरफ़ खींच लिया।

"काम देंगे तुम्हें!.." उसने कहा।

ओट के पीछे से उक्रइनी की आवाज़ आयी :

"मैं तुम्हें टाइप बिठाने का काम सिखा दूँगा, निकोलाई कहो कैसा है यह काम?"

निकोलाई उसके पास चला गया।

“अगर तुम इतना कर दो तो मैं... मैं तुम्हें अपना चाकू भेंट कर दूँगा...” उसने कहा।

“भाड़ में जाये तुम्हारा चाकू!” उक्रइनी ने ठट्ठा मारकर हँसते हुए ऊँचे स्वर में कहा।

“बड़ा अच्छा चाकू है!” निकोलाई अपनी बात पर अड़ा रहा। पावेल भी हँसने लगा।

“मुझ पर हँस रहे हो?” निकोलाई ने कमरे के बीचोंबीच रुककर पूछा।

“और किस पर हँस रहे हैं!” उक्रइनी ने उछलकर चारपाई से उठते हुए कहा। “बात सुनो, आओ, बाहर टहलने चलें, आज चाँद भी निकला है। चलते हो?”

“अच्छी बात है!” पावेल ने कहा।

“मैं भी चलता हूँ!” निकोलाई ने कहा। “मुझे उक्रइनी की हँसी बहुत पसन्द है...”

“और मुझे तुम्हारा भेंट देने का वादा करना बहुत अच्छा लगता है!” उक्रइनी ने खिसियाकर हँसते हुए कहा।

वह कपड़े पहनने के लिए रसोईघर में चला गया।

“कोई गरम कपड़ा पहन लेना...” माँ ने आग्रह किया।

जब वे तीनों चले गये तो माँ थोड़ी देर तक खिड़की पर खड़ी उन्हें देखती रही और फिर देव-प्रतिमा की ओर मुड़ी।

“हे भगवान, उन पर दया करना, उनकी रक्षा करना!...” उसने बुदबुदाकर कहा।

26

दिन इतनी जल्दी बीतते गये कि माँ को मई दिवस के आगमन के बारे में सोचने का भी मौक़ा न मिला। लेकिन दिन-भर के कामकाज के बाद रात को जब वह थककर बिस्तर पर लेटती तो उसके दिल में एक हल्की-हल्की पीड़ा होती।

“वह दिन जल्दी आ जाता तो अच्छा था...” वह सोचती रहती।

बहुत सबेरे ही फैक्टरी की सीटी बजती और उसका बेटा और अन्द्रेई जल्दी-जल्दी कुछ नाश्ता करके चल देते और दर्जनों काम उसे सौंप जाते। दिन-भर वह पिंजरे में बन्द गिलहरी की तरह इधर-उधर भागती-दौड़ती रहती,

खाना पकाती, उनके पोस्टरों के लिए लेई और लाल रोशनाई तैयार करती, अनजाने लोगों से बातें करती जो बड़े रहस्यमय ढंग से आकर पावेल के लिए सन्देश छोड़ जाते और उतने ही रहस्यमय ढंग से ग़ायब हो जाते और अपनी कुछ उत्तेजना माँ को भी दे जाते।

प्राय: हर रात को बाड़ों, यहाँ तक कि थाने के दरवाज़ों पर भी, मज़दूरों से मई दिवस के समारोह में भाग लेने का आग्रह करने वाले पोस्टर लगाये जाते और रोज़ फ़ैक्टरी में पर्चे बाँटे जाते। सुबह से उठकर पुलिसवाले मज़दूरों की बस्तियों का चक्कर लगाते और इन पोस्टरों को नोचते और खुरचकर बाड़ें साफ़ करते हुए गन्दी-गन्दी गालियाँ बकते। परन्तु दोपहर में खाने के समय नये पर्चे न जाने कहाँ से हवा के साथ उड़ते हुए लोगों के पैरों के पास आ गिरते। शहर से राजनीतिक पुलिस के आदमी भेजे गये और वे हर नुक्कड़ पर खड़े होकर खाने की छुट्टी के समय फ़ैक्टरी से आने वाले और फ़ैक्टरी में जाने वाले हर मज़दूर के चेहरे को ग़ौर से देखते। परिस्थिति पर काबू पाने में पुलिस की असमर्थता पर सभी मन ही मन ख़ुश थे। वृद्ध मज़दूर भी मुस्कराते थे :

"क्या कर रहे हैं, देखा!" वे कहते।

हर जगह मज़दूरों के झुण्ड इन पर्चों पर गरमागरम बहस करते हुए देखे जाते। हर तरफ़ काफ़ी हलचल थी और इस साल वसन्त ऋतु का जीवन लोगों को कुछ अधिक रोचक प्रतीत हुआ, क्योंकि अब की उसमें कुछ नयी बात थी। कुछ लोग हमेशा से ज़्यादा ग़ुस्सा थे और विद्रोहियों को खरी-खरी गालियाँ सुनाते थे। दूसरों के हृदय में एक अस्पष्ट सी आशा और भय समाया हुआ था। कुछ ऐसे भी थे, यद्यति इनकी संख्या थोड़ी ही थी, जिन्हें इस बात पर गर्व था कि उन्होंने ही लोगों में जागृति पैदा की थी।

पावेल और अन्द्रेई तो शायद ही कभी सोते हों। चेहरे का रंग पीला, आवाज़ भर्रायी हुई और थककर चूर, वे पौ फटे घर लौटते। माँ जानती थी कि वे जंगल में जाकर मीटिंगें करते थे। वह यह भी जानती थी कि घुड़सवार पुलिस रात को बस्ती के आस-पास के गाँवों में गश्त लगाती थी और हर जगह राजनीतिक पुलिस के आदमी तैनात थे जो कुछ मज़दूरों को पकड़कर उनकी तलाशी लेते, कहीं लोगों को इकट्ठा देखते तो उन्हें तितर-बितर कर देते और कभी-कभी कुछ लोगों को गिरफ़्तार भी करते। माँ समझती थी कि उसके बेटे और अन्द्रेई को किसी भी समय गिरफ़्तार कर लिये जाने का ख़तरा था और वह तो शायद चाहती भी यही थी, क्योंकि वह सोचती थी कि उनके लिए यही अच्छा होगा।

न जाने क्यों टाइम-कीपर की हत्या की बात दबा दी गयी। दो दिन तक स्थानीय पुलिस ने तहकीकात की लेकिन कोई दर्जन भर लोगों से सवाल-जवाब

करने के बाद उन्होंने मामले को टाल दिया।

एक दिन मारिया कोरसुनोवा ने, जिसकी पुलिस के साथ भी उतनी ही दोस्ती थी जितनी दूसरे लोगों के साथ, माँ को अपने शब्दों में पुलिस की राय बतायी।

"कातिल का पता लगने की बहुत कम उम्मीद है!" उसने कहा। "उस दिन सुबह कम से कम सौ लोग इसाई से मिले होंगे और उनमें से कम से कम नब्बे ऐसे रहे होंगे जिन्हें उसे मारकर बहुत ख़ुशी होती। सात बरस से वह लोगों को इसी के लिए उकसा रहा था..."

उक्रइनी में बहुत परिवर्तन आ गया था। उसका चेहरा बहुत दुबला और लम्बा हो गया था, उसके पपोटे सूज आये थे, जिसके कारण उसकी बड़ी-बड़ी आँखें आधी ढँक गयी थीं। उसके नथुनों से लेकर मुँह के कोनों तक हल्की-हल्की गहरी लकीरें पड़ गयी थीं। वह आये दिन की छोटी-मोटी बातों के बारे में बहुत कम बात करता था; अब ऐसा बहुधा होने लगा था कि वह बहुत उत्साह में आकर किसी दूसरे ही जगत में पहुँच जाता और सुनने वालों को भविष्य के बारे में अपनी कल्पना का वर्णन देकर रोमांचित करता – ऐसे भविष्य की कल्पना जिसमें न्याय और आजादी की विजय होगी।

इसाई के कत्ल की बात शीघ्र ही सब लोग भूल गये।

"वे इन्सानों की तो रत्ती-भर भी परवाह नहीं करते, उन लोगों की भी नहीं, जिन्हें वे हमारे ख़िलाफ़ इस्तेमाल करते है," अन्द्रेई ने एक सूखी मुस्कराहट के साथ कहा। "और उन्हें अपने भाड़े के टट्टुओं के मर जाने का कोई अफसोस भी नहीं होता। उन्हें तो बस अपने ख़र्च किये हुए पैसे का दुख होता है..."

"अन्द्रेई, बस बहुत हो चुकीं ऐसी बातें!" पावेल ने सख़्ती से कहा।

"जो कुछ सड़ा-गला था वह पहली ही ठेस में ढेर हो गया, बस और कुछ नहीं!" माँ ने कहा।

"यह तो ठीक है, मगर इससे बहुत ख़ुशी नहीं होती!" उक्रइनी ने उदास होकर उत्तर दिया।

वह यह बात अक्सर कहा करता था और जब भी वह यह कहता उसके शब्द एक व्यापक अर्थ धारण कर लेते थे जिसमें कटु व्यंग छुपा होता था...

...आख़िरकार पहली मई का वह दिन भी आ गया, जिसकी इतने दिनों से प्रतीक्षा थी।

सीटी हमेशा की तरह आज भी उतने ही आदेशपूर्ण स्वर में बजी। माँ ने रात-भर पलक नहीं झपकायी थी, वह झटपट चारपाई से उठी और उसने समोवार में आग सुलगा दी; समोवार उसने रात को ही तैयार कर लिया था। हमेशा की

तरह आज भी वह लड़कों के कमरे का दरवाज़ा खटखटाने जा ही रही थी कि कुछ सोचकर रुक गयी और एक हाथ गाल पर रखकर खिड़की के पास इस तरह बैठ गयी मानो उसके दाँत में दर्द हो रहा हो।

हल्के नीले रंग के आकाश पर गुलाबी और सफ़ेद बादलों का एक झुण्ड मंडला रहा था मानो फ़ैक्टरी की भाप की सी–सी से भयभीत होकर बड़ी–बड़ी चिड़ियों का एक झुण्ड उड़ा जा रहा हो। माँ खोयी–खोयी नज़रों से बादलों को देखती रही। उसका सिर भारी हो रहा था और रात भर न सोने के कारण उसकी आँखें जल रही थीं। उसके हृदय में एक विचित्र शान्ति थी। उसके मस्तिष्क में बहुत छोटी–छोटी साधारण बातों के विचार आ रहे थे...

"मैंने समोवार बहुत जल्दी गरम कर दिया; पानी बेकार खौलता रहेगा... वे दोनों इतने थके हैं, आज सुबह तो उन्हें थोड़ी देर ज़्यादा सो लेने दिया जाये..."

प्रातःकाल के सूर्य की एक किरण आकर खिड़की पर खेलने लगी; उसकी चमक में बड़ा उल्लास था। माँ ने अपना हाथ फैला दिया और जब सूर्य की उष्णता–भरी चमकदार किरणें उस पर पड़ीं तो उसने दूसरे हाथ से उसे थपथपाया और विचारों में डूबी हुई मुस्कराने लगी। थोड़ी देर बाद वह उठी और समोवार से चुपचाप नली निकाल ली। फिर उसने मुँह–हाथ धोया और प्रार्थना करने लगी; वह बड़ी श्रद्धा से बार–बार अपने सीने पर सलीब का निशान बनाती थी और यद्यपि उसके होंठ हिल रहे थे पर उनसे कोई शब्द नहीं निकल रहा था। उसके चेहरे पर चमक आ गयी, उसकी दाहिनी भौंह फड़कने लगी...

दूसरी सीटी न तो इतने ज़ोर से ही बजी और न उसमें वह आदेश ही था; उसकी मोटी नम आवाज़ में एक हल्का–सा कम्पन था और माँ को ऐसा लगा कि वह हमेशा से ज़्यादा देर तक बजती रही।

दूसरे कमरे से उक्रइनी की गूँजती हुई साफ़ आवाज़ सुनायी दी :

"सुनते हो, पावेल?"

फ़र्श पर किसी के नंगे पैरों के चलने की आहट सुनायी दी और दोनों लड़कों में से एक ने भरपूर जम्हाई ली...

"समोवार गरम है!" माँ ने पुकारकर कहा।

"अभी उठते हैं!" पावेल ने पुलकित स्वर में उत्तर दिया।

"सूरज निकल रहा है!" उक्रइनी ने कहा। "और आसमान पर बादल भी हैं। आज अगर बादल न होते क्या नुकसान था..."

वह नींद में झूमता हुआ अस्त–व्यस्त दशा में रसोई में आया, पर वह बहुत मगन था।

"माँ, सलाम! रात नींद कैसी आयी?"

माँ उठकर उसके पास चली गयी।

"अन्द्रेई, तुम उसके साथ-साथ चलना!" उसने चुपके से कहा।

"बेशक!" उक्रइनी ने भी बहुत ही धीमे स्वर में कहा। "माँ, तुम विश्वास रखो कि जब तक हम लोग साथ हैं हम एक-दूसरे के कन्धे से कन्धा मिलाकर ही चलेंगे!"

"तुम दोनों वहाँ क्या खुसुर-फुसुर कर रहे हो?" पावेल ने पूछा।

"कोई ख़ास बात नहीं है, पावेल!"

"माँ कह रही थी कि मैं आज अच्छी तरह मुँह साफ़ कर लूँ। आज सारी लड़कियों की नज़रें मुझ पर ही जमी रहेंगी!" उक्रइनी ने ड्योढ़ी में मुँह-हाथ धोने के लिए जाते हुए कहा।

" 'उठ जाग, ओ भूखे बन्दी!' " पावेल गुनगुनाने लगा।

जैसे-जैसे दिन चढ़ता गया मौसम अच्छा होता गया और हवा बादलों को उड़ा ले गयी। मेज पर नाश्ता लगाते समय माँ बराबर अपना सिर हिला रही थी; वह मन ही मन सोच रही थी कितनी अजीब बात है कि अभी सुबह तो ये लोग हँसी-मज़ाक़ कर रहे हैं, लेकिन कोई नहीं जानता कि आगे चलकर दिन में क्या होने वाला है। और न जाने क्यों उसका हृदय भी शान्त और एक विचित्र पुलक से भरा हुआ था।

वे देर तक चाय पीते रहे, ताकि समय जल्दी-जल्दी बीत जाये। पावेल हमेशा की तरह धीरे-धीरे बहुत सोच-सोचकर अपने गिलास में शक्कर मिलाता रहा और उसने बड़ी सावधानी से अपनी रोटी पर नमक छिड़का कि कहीं पर नमक कम या ज़्यादा न होने पाये। हमेशा की तरह आज भी उसने डबल रोटी का सिरेवाला टुकड़ा लिया था, उसे यही पसन्द था। उक्रइनी मेज के नीचे अपने पाँव इधर-उधर खिसका रहा था, (वह कभी आराम से एक जगह अपने पाँव रख ही नहीं सकता था) और चाय में प्रतिबिम्बित होकर दीवार और छत पर खेलती हुई सूर्य की किरणों को देख रहा था।

"जब मैं कोई दस बरस का था तब मैंने एक बार सोचा कि मैं सूरज को गिलास में बन्द कर लूँगा," उसने कहा। "बस, मैं एक गिलास लेकर चुपके-चुपके एक जगह गया जहाँ पर धूप का एक छोटा-सा धब्बा था और मैंने झटपट गिलास उलटकर उस जगह पर दे मारा। मेरा हाथ कट गया और मार पड़ी सो अलग। मार खाकर मैं अहाते में गया और वहाँ मैंने पानी के एक गढ़े में सूरज की परछाईं देखी। मैंने जी भरकर उस परछाईं को पैरों से कुचला। मेरे कपड़े कीचड़ से गन्दे हो गये और मुझे फिर मार पड़ी... अपनी खिसियाहट मिटाने के लिए मैं जीभ निकालकर सूरज को मुँह चिढ़ाने लगा और चिल्ला-चिल्लाकर

कहने लगा, 'मुझे चोट ही नहीं लगी, ललमुँहे शैतान! मुझे चोट ही नहीं लगी!' न जाने क्यों इसके बाद मैं अपनी सारी पीड़ा भूल गया।"

"तुमने सूरज को ललमुँहा क्यों कहा?" पावेल ने हँसकर पूछा।

"हमारे घर के सामने गली के पार बड़े-से लाल मुँहवाला एक लोहार रहता था जिसकी दाढ़ी भी लाल रंग की थी। वह बहुत मस्त और नेक आदमी था, और मुझे ऐसा लगता था कि सूरज भी उसी जैसा है..."

जब माँ से और न रहा गया तो वह बोली :

"तुम लोग इसकी बातें क्यों नहीं करते कि तुम आज जुलूस कैसे निकालोगे?"

"जिन बातों के बारे में फ़ैसला हो चुका है उनके बारे में और बातें करने से बहुत गड़बड़ होगी!" उक्रइनी ने बड़ी नरमी से कहा। "मान लो अगर हम सब लोग गिरफ़्तार कर लिये गये तो, माँ, निकोलाई इवानोविच आकर बतायेगा कि तुम्हें क्या करना है।"

"अच्छी बात है!" माँ ने आह भरकर कहा।

"अगर हम लोग टहलने चलें तो कैसा रहे?" पावेल ने इस तरह कहा मानो वह किसी दूसरे ही जगत में विचर रहा हो।

"अभी घर ही पर रहो तो अच्छा है!" अन्द्रेई ने उत्तर दिया। "पुलिस को पहले से लालच दिलाने से क्या फ़ायदा? यों ही वे तुम्हें अच्छी तरह जानते हैं!"

फ़्योदोर माजिन भागा हुआ अन्दर आया। उसका चेहरा चमक रहा था और गाल तमतमाये हुए थे। उसके उल्लासपूर्ण उत्साह ने उनकी प्रतीक्षा के तनाव को भंग कर दिया।

"सिलसिला शुरू हो गया!" उसने कहा। "लोगों में हलचल पैदा हो गयी है! वे तनी हुई सूरतें बनाये सड़कों पर आ रहे हैं। वेसोवश्चिकोव और वासीली गूसेव और समोइलोव फ़ैक्टरी के फाटक पर खड़े भाषण दे रहे हैं। बहुत से मज़दूर घर लौट गये हैं! आओ चलो! वक़्त हो गया है! दस बज गये हैं!..."

"मैं आता हूँ," पावेल ने दृढ़ निश्चय के साथ कहा।

"देख लेना खाने की छुट्टी के बाद सारे मज़दूर बाहर निकल आयेंगे!" फ़्योदोर ने भागकर जाते हुए कहा।

"इसे तो एक पल चैन नहीं है, जैसे हवा में मोमबत्ती की लौ बराबर काँपती रहती है!" माँ ने कहा। यह कहकर वह उठी और कपड़े बदलने के लिए रसोई में चली गयी।

"माँ, कहाँ जा रही हो तुम?" अन्द्रेई ने पूछा।

"तुम लोगों के साथ!" उसने उत्तर दिया।

अन्द्रेई ने अपनी मूँछों के बाल नोचते हुए कनखियों से पावेल की तरफ़ देखा। पावेल अपने बालों में उँगलियाँ फेरता हुआ माँ के पास गया।

"माँ, मैं तुम्हें रोकने के लिए कुछ नहीं कहूँगा, और... तुम भी मुझसे कुछ न कहना! ठीक है न?"

"अच्छी बात है, अच्छी बात है। भगवान तुम्हें सुखी रखे!" उसने अस्फुट स्वर में कहा।

27

बाहर निकलकर जब उसने वातावरण में उत्तेजना और उत्सुकता से भरी हुई आवाज़ों की गूँज सुनी और जब उसने लोगों को झुण्ड बाँधकर अपने घरों के फाटकों और खिड़कियों से उसके बेटे और अन्द्रेई को कौतूहल-भरी दृष्टि से देखता हुआ पाया, तो उसकी आँखों के सामने हरे और भूरे रंग की आकृतियों का एक धुँधला-सा चित्र घूम गया।

लोगों ने उसके बेटे और अन्द्रेई को सलाम किया; आज उनके शब्दों में एक विशेष महत्त्व था। लोग मन्द स्वर में जो टीका-टिप्पणी कर रहे थे उसके केवल कुछ ही अंश उसके कानों में पड़ रहे थे :

"वह देखो, यही दोनों नेता हैं..."

"हमें क्या मालूम कि नेता कौन है..."

"मैं किसी को नुकसान पहुँचाने के लिए नहीं कह रहा हूँ!..."

किसी ने अपने घर के बाहरवाले आँगन से झुँझलाकर चिल्लाते हुए कहा :

"पुलिस पकड़ ले जायेगी, उनका नामो-निशान तक नहीं रह जायेगा!"

"एक बार तो पकड़ ले गयी थी!"

ऊपर खिड़की में से कोई स्त्री चिल्लायी :

"सोच-समझकर क़दम उठाना! याद रखना, तुम्हें अपने परिवार का पेट पालना है!"

वे लंगड़े जोसीमोव के घर के सामने से गुजरे। फ़ैक्टरी में काम करते समय उसकी टाँगें कट गयी थीं और उसे फ़ैक्टरी से पेंशन मिलती थी।

"पावेल!" उसने खिड़की में से सिर निकालकर पुकारा। "बदमाश, अब की बार तेरी गर्दन तोड़ दी जायेगी! तुझे अपने किये की सजा मिल जायेगी!"

माँ काँप गयी और ठिठककर खड़ी हो गयी। उसके अंग-अंग में क्रोध की लहर दौड़ गयी। नज़रें ऊपर उठाकर माँ ने उसे लंगड़े के चेहरे को देखा जिस पर खा-खाकर चर्बी छा गयी थी और लंगड़े ने एक गाली देकर अपना सिर अन्दर कर लिया। माँ ने अपने क़दम तेज़ किये और अपने बेटे के पास पहुँचकर बिल्कुल उसके पीछे-पीछे चलने लगी, इस भय से कि कहीं पिछड़ न जाये।

ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे पावेल और अन्द्रेई किसी बात की ओर ध्यान ही न दे रहे हों और उनके गुजरते समय लोग जो बातें कहते थे उनका उन्हें कोई ज्ञान ही न हो। वे बड़े शान्त भाव से चले जा रहे थे, उन्हें कोई जल्दी नहीं थी। रास्ते में एक बार मिरोनोव ने उन्हें रोका; वह अधेड़ उम्र का बहुत विनम्र आदमी था और उसके गम्भीर स्वभाव और ईमानदारी के कारण सब लोग उसकी इज्जत करते थे।

"क्यों दनीलो इवानोविच, तो तुम भी आज काम पर नहीं गये?" पावेल ने कहा।

"मेरे घर बच्चा होने वाला है। और फिर ऐसे दिन किसे चैन पड़ता है!" वह साथियों को लगातार घूरता रहा और उसने दबी आवाज़ में पूछा :

"सुना है कि तुम लोग आज डायरेक्टर को बड़ी मुसीबत में फँसाने का इरादा कर रहे हो – कुछ खिड़कियाँ-विड़कियाँ तोड़ने की बात है, क्यों?"

"हम कोई पिये हुए हैं क्या?" पावेल ने कहा।

"हम तो बस झण्डे लेकर सड़क पर जुलूस निकालेंगे और कुछ गीत गायेंगे," उक्रइनी ने कहा। "हमारे गाने सुनना, उनमें हमारी सारी बातें कह दी गयी हैं!"

"मैं जानता हूँ कि तुम लोग किन बातों के लिए लड़ रहे हो," मिरोनोव ने विचारमग्न होकर कहा। "मैं तुम्हारे अखबार पढ़ता हूँ। अच्छा, पेलागेया निलोवना!" उसने विस्मित होकर कहा; माँ को देखकर उसकी चतुराई-भरी आँखों में चमक आ गयी। "तुम भी बगावत में शामिल हो गयीं?"

"मरने से पहले एक बार तो न्याय का साथ दे लूँ!"

"ठीक है, ठीक है!" मिरोनोव ने कहा। "मालूम होता है कि वे ठीक ही कहते थे कि तुम ही फ़ैक्टरी में वह ग़ैर-क़ानूनी पर्चे लाती थीं।"

"किसने कहा यह?" पावेल ने पूछा।

"हुँ:, सुना है मैंने! अच्छा मैं चलता हूँ। सँभलकर चलना, अपने को काबू में रखना!"

माँ चुपके-चुपके मुस्करा दी। वह ख़ुश थी कि लोग उसके बारे में ऐसी बात कहते थे।

"माँ, तुम भी जेल भेज दी जाओगी!" पावेल ने हँसकर कहा।

सूरज चढ़ता जा रहा था और वसन्त ऋतु के उस सुखद दिन की ताज़गी में अपनी रश्मियाँ उँडेल रहा था। बादलों की गति मन्द पड़ गयी और उनकी परछाईं हल्की हो गयी; अब सूरज की किरणें उनमें से छन-छनकर आ रही थीं। बादल मन्द गति से सड़क और घरों की छतों पर मँडराते हुए लोगों को छाया प्रदान

कर रहे थे; उनकी परछाइयाँ मानो बस्ती को बुहार रही थीं, घरों पर से धूल और लोगों के चेहरों पर से उकताहट सब पोंछे दे रही थीं। हर चीज़ में एक नयी पुलक थी। स्वरों का गुँजन तेज़ होता गया और धीरे-धीरे मशीनों की गड़गड़ाहट इस आवाज़ में डूबकर रह गयी।

एक बार फिर खिड़कियों और आँगनों से शब्द वायु की लहरों पर उड़ते और रेंगते हुए माँ के कानों तक पहुँचे – इन शब्दों में द्वेष और आतंक, शंका और उल्लास सभी कुछ तो था। परन्तु अब उसमें कुछ बातों का खण्डन करने, कुछ बातों को समझाने, अपनी कृतज्ञता प्रकट करने और उस दिन के विचित्र वैविध्यपूर्ण जीवन में सक्रिय रूप से भाग लेने की एक उमंग पैदा हो गयी थी।

एक संकरी-सी गली में लगभग सौ लोगों की भीड़ जमा हो गयी थी और उनके बीच से वेसोवश्चिकोव की आवाज़ आ रही थी।

"वे गन्ने के रस की तरह हमारा ख़ून निचोड़ लेते हैं!" उसके ये भोंड़े शब्द लोगों के सिरों पर हथौड़े की तरह प्रहार कर रहे थे।

"यही तो करते हैं!" एक साथ कई स्वर सुनायी दिये।

"लड़का अपना ज़ोर लगा रहा है!" उक्रइनी ने कहा। "मैं जाकर उसकी मदद करता हूँ!.."

जब तक पावेल उसे रोके रहा वह अपने दुबले-पतले और लचकीले शरीर से भीड़ को चीरता हुआ आगे पहुँच गया जैसे पेंच कार्क को चीरता चला जाता है।

"साथियो!" उसने अपनी सुरीली आवाज़ में चिल्लाकर कहा। "लोग कहते हैं कि इस पृथ्वी पर भाँति-भाँति के लोग रहते हैं – यहूदी और जर्मन, अंग्रेज और तातार। मगर मैं इस बात को नहीं मानता! इस पृथ्वी पर बस दो तरह के लोग रहते हैं, दो ऐसी तरह के लोग जिनका एक-दूसरे से कोई मेल नहीं हो सकता – अमीर और ग़रीब! लोगों का पहनावा अलग होता है, उनकी बोली अलग होती है, मगर जब हम देखते हैं कि फ़्रांसीसी, जर्मन और अंग्रेज पैसेवाले वहाँ के मज़दूरों के साथ कैसा बरताव करते हैं तब हमारी समझ में आता है कि हम मज़दूरों के लिए वे सब बदमाश हैं, उनका सत्यानास हो!"

भीड़ में कोई हँसा।

"और दूसरी तरफ़ अगर हम ग़ौर से देखें तो हमें मालूम होगा कि मज़दूर चाहे फ़्रांसीसी हों या तातार या तुर्क, सब वैसी ही कुत्तों जैसी ज़िन्दगी बसर करते हैं जैसीकि हम रूसी मज़दूर!"

गली में और लोग आते गये; वे पंजों के बल खड़े होकर अपनी गर्दनें तानकर देखते, पर बोलते कुछ भी नहीं।

अन्द्रेई का स्वर ऊँचा होता गया।

"दूसरे देशों के मज़दूरों ने इस सीधी-सी बात को समझ लिया है और आज, मई दिवस के दिन..."

"पुलिस!" कोई चिल्लाया।

चार पुलिसवाले घोड़े दौड़ाते हुए सीधे गली में घुसे और अपने चाबुक फटकारते हुए चिल्लाये :

"चलो यहाँ से, क्या भीड़ लगा रखी है!"

लोगों ने नाक-भौं सिकोड़कर उन्हें देखा और अनमने भाव से घोड़ों के लिए रास्ता छोड़ने लगे। कुछ लोग चहारदीवारियों पर चढ़ गये।

"ये अपने को बहुत बहादुर सिपाही समझते हैं मगर हैं बिल्कुल सुअर!" किसी ने निडरता से चिल्लाकर कहा।

उक्रइनी गली के बीच में वहीं खड़ा रहा और दो घोड़े अपनी गर्दनें ताने उसकी तरफ़ झपटे। वह एक तरफ़ को हट गया और उसी क्षण माँ उसका हाथ पकड़कर उसे अपने साथ खींच लायी।

"तुमने कहा था कि तुम पावेल के साथ रहोगे," माँ ने बुड़बुड़ाते हुए कहा, "और यहाँ आते ही अकेले मुसीबत के मुँह में घुस गये!"

"माफ़ कर दो, माँ!" उक्रइनी ने मुस्कराकर कहा।

पेलागेया निलोवना एक अजीब थकन अनुभव कर रही थी जैसे उसकी हड्डी-हड्डी टूटी जा रही हो, उसे ऐसा लग रहा था कि यह थकन उसके शरीर में कहीं बहुत गहराई से निकलकर ऊपर आ रही है; उसका सिर घूम रहा था और बारी-बारी से वह कभी ख़ुश होती थी और कभी उदास। वह मना रही थी कि किसी तरह खाने की छुट्टी की सीटी बजे।

लोग चौक के पासवाले गिरजाघर की तरफ़ आ रहे थे। लगभग पाँच सौ नौजवान और बच्चे गिरजाघर के मैदान में जमा होकर शोर मचा रहे थे। जन-समुदास हिलोरें ले रहा था। लोग गर्दन तानकर दूर पर कुछ देखने का प्रयत्न कर रहे थे; वे बड़ी अधीरता से किसी बात की प्रतीक्षा कर रहे थे। वातारण में बिजली-सी दौड़ गयी थी। कुछ लोगों की समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या करें, कुछ दूसरे लोग सीना तानकर चल रहे थे। औरतें अपने कोमल स्वर में मर्दों से अनुनय-विनय कर रही थीं और वे झुँझलाकर उनसे मुँह फेरकर चले जाते थे। कभी-कभी कोई दबी आवाज़ में गाली भी देता। भाँति-भाँति के लोगों की उस भीड़ में से विद्रोह की एक हल्की सी गूँज उठी।

"मीत्या" किसी औरत ने काँपते हुए स्वर में कहा, "अपने हाल पर रहम खाओ!.."

"जाने दो मुझे!" करारा जवाब सुनायी दिया।

सिजोव के रोबदार स्वर में कोई उत्तेजना नहीं थी और उसकी बातें सब को मान्य थीं :

"हमें इन नौजवानों का साथ नहीं छोड़ना चाहिए!" वह कह रहा था। "इनमें हमसे ज़्यादा समझ है, और हिम्मत भी! दलदल के लिए पैसोंवाले झगड़े में हमारे लिए कौन लड़ा था? यही लोग थे! और हमें इस बात को भूलना नहीं चाहिए। उन्हें इसी बात के लिए जेल में बन्द किया गया और फ़ायदा उठाया हम लोगों ने!.."

सीटी बजी और सारा कोलाहल ध्वनि के इस विकराल प्रवाह में डूब गया। भीड़ सिहर उठी। जो लोग बैठे थे वे उठ खड़े हुए और एक क्षण के लिए हर आदमी शान्त और सतर्क हो गया; कुछ के तो चेहरे भी पीले पड़ गये।

"साथियो!" पावेल का गूँजता हुआ दृढ़ स्वर सुनायी दिया। माँ की आँखों में गर्म आँसू छलक आये और सहसा उसमें मानो नयी शक्ति का संचार हुआ। एक झटके के साथ वह जल्दी से अपने बेटे के पीछे जाकर खड़ी हो गयी। लोग उसके बेटे के चारों ओर इसी तरह खड़े थे जैसे चुम्बक के चारों ओर लोहे के टुकड़े।

माँ ने अपने बेटे के चेहरे की ओर देखा; उसे केवल उसकी गर्व और साहस से भरी चमकती हुई आँखें दिखायी दीं...

"साथियो! हमने फ़ैसला किया है कि आज हम खुले आम यह बता दें कि हम कौन हैं और अपना झण्डा ऊँचा करें, जो न्याय, इन्साफ़ और आजादी का झण्डा है!"

एक लम्बा-सा सफ़ेद बांस हवा में एक क्षण के लिए उठा और फिर नीचे आकर भीड़ को दो हिस्सों में बाँटता हुआ कहीं खो गया; एक क्षण बाद ही मज़दूर वर्ग का झण्डा ऊँचा हुआ और उत्सुकता से ऊपर उठी हुई आँखें एक बड़ी-सी लाल चिड़िया की तरह फहराते हुए उस झण्डे को देखने लगीं।

पावेल ने अपना हाथ उठाया और झण्डा हिलने लगा; दर्जनों हाथों ने लपककर झण्डे के चिकने सफ़ेद बांस को थाम लिया; उनमें माँ का भी हाथ था।

"मज़दूर वर्ग ज़िन्दाबाद!" पावेल ने नारा लगाया।

सैकड़ों लोगों का कण्ठ-निनाद इसके उत्तर में गूँज उठा।

"सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी ज़िन्दाबाद! साथियो, यह हमारी पार्टी है, हमारे विचार इसी की देन हैं!"

जन-समुदाय उमड़ा पड़ रहा था। जो लोग इस झण्डे के महत्त्व को समझते

थे वे आगे बढ़कर उसके निकट पहुँचने का प्रयत्न कर रहे थे; माजिन, समोइलोव और दोनों गूसेव-बन्धु पावेल के पास पहुँच गये। निकोलाई सिर झुकाये भीड़ को चीरता हुआ आगे बढ़ रहा था; माँ को ऐसा लगा कि कुछ दूसरे नौजवान, जिनकी आँखों में चमक थी, जिन्हें वह पहचानती भी नहीं थी, उसे एक तरफ़ को ठेले दे रहे थे...

"दुनिया के मज़दूर ज़िन्दाबाद!" पावेल ने फिर नारा लगाया। हज़ारों कण्ठों ने एक साथ आत्मा को आन्दोलित कर देने वाले जय-घोष से इसका उत्तर दिया जो उनके उल्लास और उनकी शक्ति के बढ़ते हुए तूफान का परिचायक था।

माँ ने निकोलाई और एक किसी दूसरे आदमी का हाथ पकड़ लिया; आँसुओं से उसका गला रुँधा हुआ था, पर वह रोयी नहीं। उसके पाँव काँप रहे थे और उसने काँपते होंठों से बुदबुदाकर कहा :

"मेरे बच्चे..."

निकोलाई के चेचकरू चेहरे पर एक मुस्कराहट दौड़ गयी। उसने झण्डे की तरफ़ एकटक देखते हुए अस्फुट स्वर में कुछ कहा और उसकी तरफ़ अपना हाथ बढ़ा दिया। अचानक उसने माँ के गले में बाँह डालकर उसे चूम लिया और हँस पड़ा।

"साथियो!" उक्रइनी ने बोलना आरम्भ किया। उसकी कोमल आवाज़ भीड़ की आवाज़ पर छा गयी। "हमने एक नये ईश्वर के नाम पर धर्मयुद्ध छेड़ा है! यह ईश्वर ज्ञान और समझ-बूझ, भलाई और सच्चाई का देव है! हमारा लक्ष्य बहुत दूर है, पर हमारा कांटेदार रास्ता हमारे सामने है! अगर किसी को सत्य की विजय पर विश्वास न हो, अगर किसी में इसके लिए अपनी जान देने की हिम्मत न हो, अगर किसी को अपनी ताकत पर भरोसा न हो और वह मुसीबतें उठाने से डरता हो तो वह हमारे साथ न चले! हमें सिर्फ़ ऐसे लोगों की ज़रूरत है जिन्हें हमारी विजय में विश्वास हो! जो लोग हमारे लक्ष्य को न समझते हों वे हमारे साथ न चलें, नहीं तो वे बेकार मुसीबत में फँसेंगे। साथियो, कतार बना लो! आजाद लोगों का त्योहार ज़िन्दाबाद! मई दिवस ज़िन्दाबाद!"

भीड़ बढ़ती गयी। पावेल ने झण्डा उठा लिया और जब वह उसे लेकर आगे बढ़ा तो झण्डा लहराने लगा; वह सूर्य के प्रकाश में चमक रहा था और उसकी लहरों में एक मुस्काराहट अँगड़ाइयाँ ले रही थी...

फ़्योदोर माजिन ने गाना शुरू किया :

"ये सौ बरस के बन्धन..."

दर्जनों और स्वरों का मन्द प्रबल प्रवाह उस स्वर में मिल गया :

"हम आज करेंगे भंग!.."

माँ माजिन के पीछे चल रही थी; उसके होंठों पर एक हर्ष-भरी मुस्कराहट खेल रही थी, फ़्योदोर के सिर के ऊपर से वह झण्डे और अपने बेटे को देख सकने के लिए आँखों पर ज़ोर दे रही थी। उसके चारों ओर हर्ष-भरे चेहरे और हर रंग की आँखें थीं और उसका बेटा और अन्द्रेई उसके आगे-आगे चल रहे थे। वह उन दोनों के गाने की आवाज़ सुन रही थी, अन्द्रेई की सुरीली आवाज़, पावेल की भारी आवाज़ सुन रही थी, अन्द्रेई की सुरीली आवाज़ पावेल की भारी आवाज़ में मिलकर एक हो गयी थी :

"उठ जाग, ओ भूखे बन्दी,
अब खींचो लाल तलवार!.."

लोग भाग-भागकर झण्डे की तरफ़ आ रहे थे। भागते हुए वे चिल्लाते जा रहे थे पर उनके चिल्लाने की आवाज़ गीत की आवाज़ में डूबी जा रही थी - उसी गाने की आवाज़ में जिसे घर पर दूसरे गानों की अपेक्षा धीमे स्वर में गाया जाता था। यहाँ सड़क पर वह गीत बिना किसी रोकटोक के गूँज रहा था और उसमें बहुत ज़ोर पैदा हो गया था। उस गीत में अदम्य साहस की गूँज थी और जहाँ उसमें लोगों का भविष्य की ओर जाने वाले लम्बे मार्ग को अपनाने का आवाहन किया गया था वहाँ यह भी स्पष्ट रूप से कह दिया था कि वह मार्ग कितना कठिन होगा। उसकी अखण्ड ज्योति ने हर उस चीज़ के अंधाकार को निगल लिया था जो अपना महत्त्व खो चुकी थी, परम्परागत भावनाओं के सारे कचरे को साफ़ कर दिया था और नूतन के प्रति जो भय था उसे इस ज्योति ने जलाकर राख कर दिया था...

सहसा एक भयभीत और खिला हुआ चेहरा माँ के बगल में दिखायी दिया और ऊँचा, करुण स्वर सुनायी पड़ा :

"मीत्या, कहाँ जा रहा है?"

"जाने दो उसे," माँ ने बग़ैर रुके हुए कहा। "उसकी चिन्ता न करो! शुरू में मुझे भी डर लगता था। मेरा बेटा तो सबसे आगे है - वह जो झण्डा लिये है!"

"नादानो, तुम कहाँ जा रहे हो? आगे सिपाही खड़े हैं!"

उस औरत ने जो लम्बे कद की और बिल्कुल सूखी हुई थी, सहसा आने खपच्ची जैसे हाथ से माँ को पकड़ लिया :

"और, देखो, गा भी तो क्या ख़ूब रहे हैं!" उसने चिल्लाकर कहा। "और मेरा मीत्या भी गा रहा है।"

"डरो नहीं!" माँ ने समझाते हुए कहा। "उनका ध्येय बहुत पवित्र है... ज़रा सोचो – यदि लोगों ने ईश्वर के लिए अपने प्राणों की बलि न दी होती तो ईसा मसीह का कोई नाम भी न जानता!"

यह विचार सहसा माँ के मस्तिष्क में बिजली की तरह कौंध गया और इस सीधे-सादे स्पष्ट सत्य ने उसे पूरी तरह अपने वश में कर लिया। माँ ने उस औरत पर नज़र डाली जो अब तक उसका हाथ पकड़े हुए थी।

"यदि लोगों ने ईश्वर के लिए अपने प्राणों की आहुति न दी होती तो ईसा मसीह का कोई नाम भी न जानता," उसने एक विस्मय-भरी मुस्कराहट के साथ ये शब्द दुहराये।

सिजोव उसके बगल में आ गया।

"आज तो खुलकर सामने आ गया, है न?" उसने टोपी उतारकर गीत की ताल पर उसे हिलाते हुए कहा। "गाना भी बना लिया। और माँ, गाना भी कैसा, बढ़िया है, ठीक है न?"

"ज़रूरत जवानों की है ज़ार को
तू भरती करा अपने लाल को..."

"उन्हें किसी का भी डर नहीं है!" सिजोव ने कहा। "और मेरा बेटा बेचारा अपनी क़ब्र में..."

माँ का दिल तेज़ी से धड़कने लगा, इसलिए वह पीछे रह गयी। शीघ्र ही वह धक्के खाकर एक तरफ़ को हट गयी और एक चहारदीवारी से जा लगी; लोगों की भीड़ एक लहर की तरह उसके पास से गुजर गयी। बहुत से लोग थे और उसे इसी बात की ख़ुशी थी।

"उठ जाग, ओ भूखे बन्दी!.."

ऐसा मालूम होता था कि पीतल के एक बड़े-से भोंपू में से गीत निकलकर हवा में गूँज रहा है, लोगों में जागृति पैदा कर रहा है; कुछ लोगों को लड़ने के लिए तत्पर कर रहा है और कुछ दूसरे लोगों में एक तीव्र उत्सुकता, किसी नये सुख की एक अस्पष्ट सी भावना उत्पन्न कर रहा है; कहीं उसने क्षीण आशाएँ जागृत कीं तो कहीं बरसों से घुटते हुए क्रोध की ज्वाला भड़का दी। सब की आँखें उसी ओर देख रही थीं जहाँ आगे लाल झण्डा हवा में लहरा रहा था।

"देखो वे आ रहे हैं!" किसी ने आवेश में गरजकर कहा। "शाबाश, नौजवानो!"

और चूँकि उस व्यक्ति के हृदय में कोई इतनी तीव्र भावना भरी हुई थी

जिसे वह शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता था इसलिए उसने एक मोटी-सी गाली दी। परन्तु दास-प्रवृत्तिवाली कुत्सा, अन्धी और मनहूस कुत्सा भी उस साँप की फुफकार की भाँति सुनायी दे रही थी जो सूर्य के प्रकाश से भाग रहा हो।

"नास्तिक कहीं के!" एक आदमी ने खिड़की से अपना मुक्का तानकर दिखाते हुए चीख़कर कहा।

"महाराजाधिराज के ख़िलाफ़ बगावत, सम्राट के ख़िलाफ़ बगावत? विद्रोह?" किसी दूसरे आदमी की तेज़ आवाज़ सुनायी दी।

नर-नारियों के विशाल जन-समुदाय में, जो एक प्रबल प्रवाह की तरह आगे बढ़ रहा था, माँ ने चिन्ताग्रस्त चेहरे देखे। गीत से प्रेरित होकर जन-समुदाय ज्वालामुखी के लावा की तरह आगे बढ़ता जा रहा था; ऐसा प्रतीत होता था कि गीत के प्रवाह में हर चीज़ बही जा रही है, अपने सम्पर्क मात्र की शक्ति से वह मार्ग प्रशस्त करता जा रहा था। माँ ने बहुत दूर आगे लाल झण्डे को देखा और उसकी कल्पना में अपने बेटे की आकृति घूम गयी – कांसे का ढला हुआ-सा उसका ललाट और दृढ़ विश्वास की ज्योति से चमकती हुई उसकी आँखें।

माँ जुलूस में सबसे पीछे रह गयी थी; वह अब ऐसे लोगों के बीच में थी जो बड़े निश्चिन्त भाव से चल रहे थे और चारों ओर इस बेपरवाही से देख रहे थे मानो वे कोई ऐसा नाटक देख रहे हों जिसका अन्त उन्हें पहले से ही मालूम हो। वे आवेशरहित स्वर में, पर दृढ़ विश्वास के साथ बातें कर रहे थे :

"एक टुकड़ी स्कूल में तैनात है और दूसरी फ़ैक्टरी में..."

"गवर्नर साहब आ गये हैं..."

"सच?"

"मैंने अपनी आँखों से देखा है – अभी तो आये हैं!"

"तो हम लोगों से डर गये!" सन्तोष की साँस लेते हुए उसने एक गाली दी। "ज़रा सोचो – इतना फ़ौज-फाटा और गवर्नर साहब ख़ुद!"

"ओह, मेरे लाड़लो!" माँ सोच रही थी।

परन्तु यहाँ जो शब्द वह सुन रही थी वे उसे उत्साहरहित और निष्प्राण प्रतीत हुए। उसने इन लोगों से आगे निकल जाने के लिए अपने क़दम तेज़ किये; उनसे आगे निकल जाना कोई मुश्किल नहीं था क्योंकि वे बहुत धीरे-धीरे शिथिल चाल से चल रहे थे।

सहसा ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे जुलूस का अगला भाग किसी चीज़ से टकराया और एक भयभीत गर्जन के साथ पूरा जन-समुदाय पीछे हटने लगा। गीत भी एक बार काँप गया, परन्तु फिर वह पहले से भी ऊँचे स्वर में और तेज़ लय के साथ गूँज उठा। थोड़ी देर बाद गीत मन्द पड़ने लगा। एक-एक करके लोग

गाना बन्द करते जा रहे थे। अलग-अलग कुछ आवाज़ें सुनायी दे रही थीं जो गीत को फिर पहले जैसा ग़ौरव प्रदान करने का प्रयत्न कर रही थीं :

"उठ जाग, ओ भूखे बन्दी,
अब खींचो लाल तलवार!.."

परन्तु अब इस प्रयास में सब का बल, सब की एकबद्ध आस्था शामिल नहीं थी। अब उनके स्वरों में आतंक की प्रतिध्वनि थी।

चूँकि माँ को जुलूस का अगला हिस्सा नहीं दिखायी दे रहा था और उसे मालूम नहीं था कि क्या हुआ था, इसलिए वह भीड़ को चीरती हुई आगे बढ़ने लगी। आगे बढ़ते हुए वह पीछे हटनेवालों से बार-बार टकरा जाती थी; कुछ लोगों की त्योरियों पर बल थे, कुछ सिर झुकाये हुए थे, कुछ अन्य लोग खिसियायी हुई हँसी हँस रहे थे और कुछ ऐसे भी थे जो व्यंगपूर्वक सीटी बजा रहे थे। माँ ने उनके चेहरों को ध्यान से देखा; उसकी आँखों में जिज्ञासा, निवेदन, विनय सभी कुछ ही था...

"साथियो!" पावेल का स्वर सुनायी दिया। "सिपाही भी हमारे जैसे ही लोग हैं। वे हम पर हाथ नहीं उठायेंगे। और वे उठायें भी क्यों? बस इसलिए कि हम ऐसे सत्य की बात करते हैं जिसे हर आदमी को जानना चाहिए? उन्हें भी इस सत्य की बात को सुनना चाहिए। वे अभी इस बात को नहीं समझते पर जल्द ही वह समय आयेगा जब वे हत्या और लूट के झण्डे के नीचे हमारा विरोध करने के बजाय आजादी के झण्डे के नीचे हमारे कन्धे से कन्धा मिलाकर चलेंगे। और उनमें इस सत्य की समय-बूझ जल्दी पैदा करने के लिए हमें आगे बढ़ते रहना चाहिए। आगे बढ़ो, साथियो! एक क़दम भी पीछे न हटो!"

पावेल के स्वर में दृढ़ता थी। उसके शब्दों में उत्साह की गूँज थी और उसका स्वर स्पष्ट था, फिर भी भीड़ तितर-बितर हो रही थी, एक-एक करके लोग जुलूस से बाहर निकलकर या तो घरों में घुस रहे थे या चहारदीवारियों का सहारा लेकर खड़े होते जा रहे थे। जुलूस अब आगे से पतला और पीछे चौड़ा हो गया था; सबसे आगे पावेल था जिसके सिर के ऊपर मज़दूरों का लाल झण्डा लहरा रहा था। या शायद यह कहना अधिक उचित होगा कि जुलूस उड़ने को तैयार पंख फैलाये हुए एक काले पक्षी के समान था और पावेल उसके शीर्षस्थान पर था...

28

सड़क के सिरे पर माँ ने बिल्कुल एक जैसे लगने वाले व्यक्तियों की भूरी–सी दीवार खड़ी देखी। उन्होंने चौक में प्रवेश करने का मार्ग रोक रखा था। हर आदमी के कन्धे पर संगीन की क्रूर चमक थी। उस निःशब्द, निश्चल दीवार की ओर से एक सर्द झोंका आया और मज़दूरों पर छा गया, माँ का हृदय काँप उठा।

माँ भीड़ को चीरती हुई आगे बढ़ती जा रही थी, वह उस स्थान पर पहुँचना चाहती थी जहाँ झण्डे के गिर्द उसके जाने–पहचाने लोग कुछ अनजान लोगों के साथ एकत्रित थे; उसके मित्र इन्हीं अनजान लोगों की सहायता ले रहे थे। वह एक लम्बे–से आदमी से सटी हुई खड़ी थी, जिसका सिर घुटा हुआ था और एक आँख नहीं थी। इसलिए माँ को देखने के लिए उसे आदमी गर्दन आधी घुमानी पड़ी।

"क्या बात है? तुम कौन हो?.." उसने पूछा।

"मैं पावेल व्लासोव की माँ हूँ!" माँ ने कहा; उसे इस बात का पूरा आभास था कि उसके पैर काँप रहे हैं और लाख रोकने पर भी उसका निचला होंठ फड़क रहा है।

"ओहो!" काने ने कहा।

"साथियो!" पावेल कह रहा था। "मरते दम तक हमें आगे बढ़ते रहना है। हमारे लिए और कोई रास्ता नहीं है!"

लोग शान्त हो गये और उनकी उत्सुकता बढ़ गयी। झण्डा ऊँचा उठकर एक क्षण को डगमगाया और फिर लोगों के सिरों पर से होता हुआ धीरे–धीरे सिपाहियों की उस भूरी दीवार की तरफ़ बढ़ा। माँ काँप उठी और उसने एक आह भरकर अपनी आँखें बन्द कर लीं : चार आदमी – पावेल, अन्द्रेई, समोइलोव और माजिन – बाक़ी भीड़ से आगे बढ़ गये थे।

फ़्योदोर माजिन का स्पष्ट स्वर हवा की लहरों पर गूँज उठा :

"बलिदान तुम्हारा उच्च महान..."

और मन्द स्वर में एक गहरी आह की तरह गीत की दूसरी पंक्ति सुनायी दी।

"युद्ध अनोखा... दे दी जान..."

फ़्योदोर की आवाज़ एक ज्योतिर्मय पथ प्रशस्त करती हुई गूँज रही थी; उसके स्वर में विश्वास था और इसी विश्वास की वह घोषणा कर रहा था :

"जो कुछ था सर्वस्व लुटाया..."

उसके साथियों ने दूसरी पंक्ति उसके साथ दुहरायी :

"आजादी के लिए चुकाया..."

"अच्छा!" किसी ने एक तरफ़ से फब्ती कसी। "सुअर के बच्चे, मातम कर रहे हैं!.."

"इसका मुँह तोड़ दो!" किसी ने क्रुद्ध होकर कहा।

माँ ने सीने पर हाथ रखकर चारों ओर नज़र दौड़ायी। उसने देखा कि जो भीड़ पूरी सड़क पर खचाखच भरी हुई थी, उन झण्डेवाले चार लोगों को आगे बढ़ता देखकर स्वयं आगे बढ़ने से हिचकिचा रही थी। केवल कुछ दर्जन लोग उनके साथ गये पर हर क़दम पर कोई न कोई पीछे रुक जाता था मानो सड़क की पटरी पर आग बिछी हो जिससे उनके तलवे जल रहे हों।

"मरण-दिवस हिंसा का होगा..."

फ़्योदोर भविष्य की घोषणा कर रहा था...

"मनुज नींद से जागा होगा!.."

उसके उत्तर में कई दृढ़ स्वरों ने मिलकर चेतावनी दी।

परन्तु गाने के साथ ही लोग भयभीत होकर कुछ कानाफूसी भी कर रहे थे।

"अब हुकुम मिलने ही वाला है..."

और उनका भय ठीक निकला; आगे से एक कर्कश स्वर सुनायी दिया :

"बन्दूकें तान लो!"

फौलाद की संगीनें आगे बढ़ते हुए झण्डे के मुकाबले पर आ गयीं; ऐसा प्रतीत होता था कि संगीनें झण्डे पर तिरस्कार से हँस रही हैं।

"आगे बढ़ो!"

"लो, वे आ रहे हैं!" काने ने अपने हाथ दोनों जेबों में डालते हुए कहा और एक तरफ़ को हट गया।

माँ एकटक देखती रही। सिपाही पूरी सड़क को घेरकर आगे बढ़े; मानो एक भूरी लहर उठी हो; यह लहर क्रूर निश्चय के साथ आगे बढ़ रही थी और उसके शिखर पर संगीनों की रुपहली चमक थी। जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाती हुई माँ अपने बेटे के और निकट जा पहुँची और उसने देखा कि अन्द्रेई अपने

लम्बे–चौड़े शरीर की आड़ में पावेल को छुपा लेने के लिए उसके सामने आ गया था।

“कामरेड, अपनी जगह वापस लौट जाओ!” पावेल ने कड़ककर कहा।

अन्द्रेई गर्दन ताने दोनों हाथ पीठ के पीछे किये गा रहा था। पावेल ने उसे कन्धे से ठेलते हुए एक बार फिर चिल्लाकर कहा :

“पीछे हटो! तुम्हें ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं है! झण्डा सबसे आगे रहेगा!”

“यहाँ से हट जाओ!” एक दुबले–पतले नाटे से अफ़सर ने तलवार चमकाते हुए बारीक आवाज़ में आज्ञा दी। वह अपनी टाँगों को सीधा तानकर घुटने मोड़े बिना चल रहा था और ज़मीन पर पैर बहुत पटककर रखता था। माँ की नज़र उन चमकते फ़ौजी बूटों पर पड़ी।

उसके एक तरफ़ कुछ पीछे एक लम्बा–सा आदमी चल रहा था जिसका सिर घुटा हुआ था और घनी–घनी सफ़ेद मुँछें थीं। वह लाल अस्तरवाला लम्बा–सा भूरा कोट पहने था और उसके पतलून पर बगल की तरफ़ चौड़ी–चौड़ी पीली पट्टी लगी हुई थी। उक्रइनी की तरह वह भी अपने हाथ पीठ के पीछे किये चल रहा था। उसकी आँखें पावेल पर जमी हुई थीं और उसकी घनी भवें तनी हुई थीं।

माँ की आँखों के सामने जो कुछ था उसे वह एक नज़र में नहीं समेट पा रही थी। उसके हृदय में एक करुण चीत्कार हर साँस के साथ बाहर फूट निकलने की धमकी दे रहा था; इस दबे हुए चीत्कार के कारण उसका दम घुटा जा रहा था, पर अपना सीना थामकर वह इस चीत्कार को रोके रही। लोगों ने उसे धक्का दिया और वह लड़खड़ाते हुए क़दमों से बिना कुछ सोचे लगभग चेतनाविहीन आगे बढ़ती रही। उसे ऐसा लग रहा था कि जैसे–जैसे वह क्रूर लहर आगे बढ़ती आ रही थी, उसके पीछे की भीड़ छंटती जा रही थी।

जो लोग लाल झण्डा लिये हुए थे उनके और भूरी वर्दियों वाले लोगों की ठोस लहर के बीच फासला कम होता जा रहा था। माँ को अब सिपाहियों की सामूहिक आकृति दिखायी दे रही थी – एक विकृत चेहरे को ठोंक–पीटकर गन्दे पीले रंग की कतार का रूप दे दिया गया था, जो सड़क के आर–पार फैली हुई थी और जिसमें इधर–उधर विभिन्न रंगों की आँखें लगी हुई थी। इस कतार के सामने संगीनों की क्रूर नोकें चमक रही थीं, जो जुलूस में चलनेवालों के सीनों को अपना निशाना बनाये हुए थीं। उन्हें छुए बिना ही फौलाद की ये संगीनें उन्हें एक–एक करके काटे दे रही थीं। भीड़ छँटती जा रही थी।

माँ ने अपने पीछे लोगों के भागने की आवाज़ सुनी, लोग उत्तेजित स्वर में

चिल्ला रहे थे :

"भागो, भागो!.."

"व्लासोव, भाग आओ!.."

"पावेल, पीछे हट आओ!"

"पावेल, झण्डा नीचे झुका लो!" वेसोवश्चिकोव ने गम्भीर स्वर में कहा। "मुझे दे दो, मैं छुपा दूँगा!"

उसने बढ़कर झण्डे का बांस पकड़ लिया और झण्डा पीछे को झुक गया।

"छोड़ दो!" पावेल ने चिल्लाकर कहा।

निकालाई ने जल्दी से अपना हाथ खींच लिया मानो जल गया हो। गीत बन्द हो गया। लोग रुक गये और पावेल के गिर्द एक ठोस दीवार का घेरा बनाकर खड़े हो गये, पर वह आगे बढ़ता ही रहा। सहसा अप्रत्याशित रूप से घोर निस्तब्धता छा गयी, मानो एक अदृश्य बादल ने आकाश से उतरकर सब लोगों को ढँक लिया हो।

कोई बीस आदमी झण्डे को घेरे खड़े थे – बीस से ज़्यादा न रहे होंगे – पर वे अटल खड़े थे। अपनी चिन्ता और उनसे कुछ कहने की एक अस्पष्ट–सी इच्छा के वश माँ उनकी ओर खिंची जा रही थी...

"लेफ़्टिनेण्ट, छीन लो इनके काथ से!" उस लम्बे–से बूढ़े आदमी से झण्डे की ओर इशारा करके कहा।

उस नाटे अफ़सर ने पावेल की तरफ़ झपटकर झण्डा पकड़ लिया।

"छोड़ दो!" वह चिल्लाया।

"हाथ हटा लो!" पावेल ने भी ऊँचे स्वर में कहा।

झण्डा हवा में डगमगाया, पहले दाहिनी ओर झुका, फिर बायीं ओर और फिर सीधा खड़ा हो गया। वह नाटा अफ़सर उछलकर पीछे हटा और ज़मीन पर बैठ गया। निकोलाई अपना मुक्का हिलाता तेज़ी से झपटता हुआ माँ के सामने से गुज़रा।

"गिरफ़्तार कर लो इन्हें!" बूढ़ा पाँव पटककर चिल्लाया।

कई सिपाही आगे बढ़े। एक ने अपनी बन्दूक का कुन्दा घुमाया। झण्डा काँपकर आगे गिरा और सिपाहियों के भूरे रंग के समूह में खो गया।

"हाय, मेरा लाल!" किसी का करुण क्रन्दन सुनायी दिया।

माँ एक घायल पशु की तरह चिल्ला उठी। उसके उत्तर में सिपाहियों के बीच से पावेल का स्पष्ट स्वर सुनायी दिया :

"विदा, माँ! विदा, मेरी प्यारी माँ..."

माँ के मस्तिष्क में केवल दो विचार आये : "वह ज़िन्दा है! उसने मुझे

याद किया!"

"विदा, माँ!" उक्रइनी का स्वर सुनायी दिया।

वह उन्हें एक बार देख पाने के लिए पँजों के बल खड़ी हो गयी। सिपाहियों के सिर से ऊपर उसे अन्द्रेई की सूरत दिखायी दी। वह मुस्करा रहा था और सिर झुकाकर उसे सलाम कर रहा था।

"आह, मेरे बच्चो... अन्द्रेई!.. पावेल!.." माँ ने चिल्लाते हुए कहा।

"विदा, साथियो!" उन्होंने सिपाहियों के बीच से चिल्लाकर कहा।

एक छिन्न-विच्छिन्न प्रतिध्वनि ने, जिसमें कई स्वर सम्मिलित थे, उनका उत्तर दिया। यह प्रतिध्वनि खिड़कियों से, कहीं ऊपर से शायद छतों पर से आ रही थी।

29

किसी ने माँ के सीने पर घूँसा मारा। धुँधली आँखों से उसने अपने सामने खड़े हुए एक नाटे-से अफ़सर का क्रोध से तमतमाया हुआ लाल चेहरा देखा।

"चल हट यहाँ से , बुढ़िया!" उसने चिल्लाकर कहा।

माँ ने उस पर एक सरसरी-सी नज़र दौड़ायी। उसके पाँवों के पास माँ ने झण्डे का बांस दो टुकड़ों में टूटा हुआ पड़ा देखा, एक सिरे पर अब तक लाल कपड़े का टुकड़ा बँधा हुआ था। माँ ने झुककर उसे उठा लिया। अफ़सर ने उसके हाथ से झण्डा छीनकर उसे एक तरफ़ ढँकेल दिया।

"मैं कहता हूँ, हट जाओ यहाँ से!" उसने पाँव पटककर चिल्लाते हुए कहा।

सिपाहियों के घेरे में से गीत की आवाज़ आयी :

"उठ जाग, ओ भूखे बन्दी..."

माँ की आँखों के आगे हर चीज़ घूम रही थी, तैर रही थी और काँप रही थी। हवा में एक भयानक गूँज थी, जैसे तार के खम्भों की भनभनाहट होती है। अफ़सर झपटकर आगे बढ़ा।

"बन्द करो यह गाना!" उसने रोष से अपनी बारीक आवाज़ में चिल्लाकर कहा। "सार्जेन्ट-मेजर क्राइनोव..."

लड़खड़ाते हुए क़दमों से माँ वहाँ तक गयी जहाँ वह टूटा हुआ बांस का टुकड़ा पड़ा था और उसे उठा लिया।

"बन्द कर दो इनके मुँह!"

गीत लड़खड़ाया, थर्राया और काँपकर बन्द हो गया। किसी ने माँ के कन्धे पर हाथ रखा और उसे पीछे घुमाकर एक धक्का दे दिया...

"चलो, चलो यहाँ से..."

"हट जाओ सड़क पर से!" अफ़सर चिल्लाया।

माँ ने कुछ दूर पर एक दूसरी भीड़ देखी। वे लोग धीरे-धीरे सड़क पर पीछे हटते हुए चिल्लाते, गालियाँ देते हुए सीटियाँ बजाते हुए घरों की चहारदीवारियों के पीछे हो जाते।

"चल यहाँ से, चुड़ैल!" एक नौजवान सिपाही ने बिल्कुल माँ के कान में चिल्लाकर कहा और उसे सड़क की पटरी पर ढँकेल दिया।

वह झण्डे का बांस टेकती हुई चल दी; उसके शरीर में बिल्कुल जान नहीं रह गयी थी। दूसरे हाथ से वह दीवारों और चहारदीवारियों का सहारा लेती हुई चल रही थी कि कहीं गिर न पड़े। लोग उससे कतराकर निकल जाते; उसके पीछे और बगल में कुछ सिपाही चल रहे थे जो लगातार यही चिल्ला रहे थे :

"चलो, हटो यहाँ से..."

माँ ने उन्हें आगे निकल जाने दिया और फिर रुककर चारों ओर उन सिपाहियों को देखा, जो चौक में घुसने का रास्ता रोके खड़े थे; चौक ख़ाली पड़ा था। उसके सामने भूरी वर्दियाँ पहने हुए जो सिपाही थे वे लोगों को पीछे ठेलते जा रहे थे...

उसका जी चाहा कि वह पीछे हट जाये पर अनायास ही वह आगे बढ़ती रही और एक पतली-सी सुनसान गली के नुक्कड़ पर पहुँचकर उसमें मुड़ गयी।

कुछ दूर चलकर वह फिर रुक गयी और एक लम्बी आह भरकर सुनने लगी। सामने कहीं से उसे भीड़ का कोलाहल सुनायी दिया।

बांस टेकती हुई वह फिर आगे बढ़ी। उसकी भवें फड़क रही थीं, वह अचानक पसीने में नहा गयी थी, उसके होंठ हिल-डुल रहे थे, वह अपना हाथ झटक रही थी और उसके मस्तिष्क में बिखरे हुए शब्द चिंगारियों की तरह चमक रहे थे; इन चिंगारियों ने बढ़ते-बढ़ते एक ज्वाला का रूप धारण कर लिया; उसकी उत्कट इच्छा हुई कि वह इन शब्दों को बाहर निकाले, इन्हें ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर कहे...

गली आगे जाकर यकायक बायीं तरफ़ मुड़ गयी और वहाँ माँ ने बहुत-से लोगों को झुण्ड बाँधकर खड़े देखा।

"भाई, संगीनों की बाड़ का मुकाबला करना कोई हँसी-मज़ाक़ नहीं होता!" किसी ने ऊँचे और दृढ़ स्वर में कहा।

"पहले कभी देखा था ऐसा? किस तरह वे लोग आगे बढ़ती हुई संगीनों के सामने सीना ताने खड़े रहे? चट्टान की तरह, बिल्कुल निडर..."

"अब समझ में आया पावेल व्लासोव क्या है!.."

"और वह उक्रइनी?"

"हाथ पीछे किये बराबर मुस्कराता रहा, बड़ा निडर है वह भी!.."

"दोस्तो!" माँ ने धक्का देकर उनके बीच में पहुँचकर चिल्लाकर कहा। उन्होंने बड़े आदर से उसके लिए रास्ता कर दिया। कोई हँस पड़ा :

"देखा, वह झण्डा ले आयी! झण्डा उसके हाथ में है!"

"चुप रहो!" किसी ने कठोर स्वर में कहा।

माँ दोनों हाथ फैलागाकर बोलने लगी :

"सुनो – भगवान के लिए मेरी बात सुनो! तुम सब भले लोग हो, मुझे बहुत प्यारे हो... आज जो कुछ हुआ उससे डरो नहीं। सब के लिए इंसाफ़ की खातिर हमारे बच्चे, हमारे कलेजे के टुकड़े मैदान में निकल आये हैं! उन्होंने तुम सब के जीवन को सुखी बनाने के लिए यह झण्डा उठाया है। वे एक नया जीवन चाहते हैं – सत्य और न्याय का जीवन... वे सब लोगों की भलाई चाहते हैं!"

माँ का कलेजा फटा जा रहा था और उसका गला सूख रहा था। उसके हृदय की गहराई से नये महान शब्द उत्पन्न हो रहे थे – ऐसे शब्द जो सबसे प्रेम करना सिखाते थे, जो उसकी जबान को चिंगारियों की तरह जलाकर उसे प्रवाह और उत्साह के साथ बोलने पर बाध्य कर रहे थे।

वह देख रही थी कि सभी लोग चुपचाप उसकी बातें सुन रहे थे और उसे ऐसा लगा कि वे कुछ सोच रहे हैं। उसके अन्दर यह इच्छा उत्पन्न हुई, और अब वह इस इच्छा को अच्छी तरह समझ रही थी, कि वह उनसे अपने बेटे और अन्द्रेई और उन तमाम लोगों का अनुसरण करने का आग्रह करे, जिन्हें उन्होंने सिपाहियों के हाथ में पड़ जाने दिया था, जिन्हें उन्होंने उनके भाग्य पर छोड़ दिया था।

अपने चारों ओर खड़े हुए लोगों पर, जो एकाग्रचित्त होकर बड़े ध्यान से उसकी बातें सुन रहे थे, एक सरसरी-सी नज़र डालकर वह कोमल शब्दों में आग्रह करती रही :

"हमारे बच्चे सुख की खोज में लड़ाई के मैदान में उतरे हैं और उन्होंने यह हम सब की खातिर किया है, उस सत्य के लिए किया है जिसके लिए ईसा मसीह ने अपने प्राण दिये थे। वे उन तमाम चीज़ों के खि़लाफ़ लड़ने के लिए मैदान में उतरे हैं जिन्हें पापी लोगों ने, झूठे और लालची लोगों ने, हमें बाँधने के लिए, हमारी आवाज़ बन्द करने के लिए, हमें कुचल देने के लिए इस्तेमाल किया है! प्यारे भाइयो, ये नौजवान हम सब की खातिर, सारी दुनिया की खातिर, हर जगह के मज़दूरों की खातिर कमर बाँधकर मैदान में आये हैं!.. उनका साथ न छोड़ो, उनकी तरफ़ से मुँह न मोड़ो, अपने बच्चों को अकेले आगे बढ़ने पर मजबूर न करो। अपनी हालत पर विचार करो... अपने बच्चों के साहस पर विश्वास

रखो, जिन्होंने सत्य की घोषणा की है और उसके लिए मुसीबतें उठा रहे हैं। उन पर भरोसा रखो!"

उसका स्वर रुँध गया और वह लड़खड़ा गयी; उसे मूर्च्छा आ रही थी। किसी ने बढ़कर उसे थाम लिया...

"सोलह आने खरी बात कर रही है!" किसी ने उत्तेजित स्वर में कहा। "सोलह आने सच! समझे!"

"देखो तो बेचारी कितनी मुसीबत उठा रही है!" किसी ने सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा।

"अरे, ख़ुद तो मुसीबतें नहीं उठा रही है, हम मूरखों को धिक्कार रही है!" किसी दूसरे ने डाँटकर कहा।

"ईसा के भक्तो!" एक औरत ने ऊँची काँपती हुई आवाज़ में कहा। "मेरा मीत्या – वह बिल्कुल साफ़ दिल का आदमी है! आख़िर उसने क्या बुराई की? यही न कि अपने साथियों के पीछे-पीछे गया, वह उन्हें प्यार करता था... यह ठीक ही कहती हैं कि हम अपने बच्चों को मुसीबत में अकेला क्यों छोड़ दें? उन्होंने कौन-सी गलती की है?"

ये शब्द सुनकर माँ काँप गयी और चुपके-चुपके रोने लगी।

"पेलागेया निलोवना, घर जाओ!" सिजोव ने कहा। "जाओ, माँ! बस, आज बहुत हो गया!"

उसका चेहरा उतरा हुआ और दाढ़ी उलझी हुई थी। सहसा वह तनकर खड़ा हो गया और उसने चारों ओर एक कठोर दृष्टि डाली।

"तुम सब लोगों को मालूम है कि मेरा बेटा मत्वेई कारख़ाने में काम करता हुआ मारा गया," उसने स्पष्ट स्वर में कहना शुरू किया। "लेकिन आज अगर वह ज़िन्दा होता तो मैं ख़ुद उसे इन लोगों के साथ भेज देता, उन लोगों के साथ जो आज पकड़े गये हैं। मैं ख़ुद उससे कहता, 'मत्वेई, तू भी जा! यही सच्चा रास्ता है, ईमानदारी का रास्ता है!"

सहसा वह बोलते-बोलते रुक गया। बाक़ी सब लोग भी चुप थे। किसी नयी और विशाल शक्ति ने उन्हें अपने वश में कर लिया था, पर अब ये लोग उससे डरते नहीं थे। सिजोव ने अपना मुक्का हवा में उठाकर हिलाया और बोला :

"मैं एक बूढ़ा आदमी तुम्हारे सामने बोल रहा हूँ। तुम सब लोग मुझे जानते हो! मैंने इस पृथ्वी पर तिरपन बरस बिताये हैं, और उनतालीस बरस से मैं यहाँ काम कर रहा हूँ। आज उन्होंने फिर मेरे भतीजे को गिरफ़्तार किया; वह बहुत अच्छा और होशियार लड़का है। वह भी व्लासोव के बगल में, ठीक झण्डे के

पास सबसे आगे चल रहा था..."

उसने अपना हाथ हिलाया और ऐसा मालूम हुआ कि जैसे उसके शरीर से कुछ जान निकल गयी हो। उसने माँ का हाथ पकड़कर कहा :

"इस औरत ने जो कुछ कहा वह सच है। हमारे बच्चे ईमानदारी और समझदारी का जीवन बिताना चाहते हैं और हमने उन्हें अकेला छोड़ दिया है – सचमुच हमने उनका कोई साथ नहीं दिया है। आओ, पेलागेया निलोवना चलें..."

"मेरे अच्छे लोगो!" माँ ने अपनी लाल आँखों से चारों तरफ़ देखते हुए कहा। "जीवन हमारे बच्चों के लिए है, सारी पृथ्वी उन्हीं की है!.."

"जाओ, पेलागेया निलोवना, घर जाओ! लो यह अपनी लाठी," सिजोव ने उसके हाथ में झण्डे का टूटा हुआ बांस देते हुए कहा।

वे उदास भाव से माँ को बड़े आदर की दृष्टि से देखते रहे और दबी जबान से सहानुभूति प्रकट करते रहे। सिजोव ने चुपचाप उसके लिए रास्ता साफ़ किया और लोग उतनी ही ख़ामोशी से इधर-उधर हट गये। किसी अज्ञात प्रेरणा के वश वे गली में उसके पीछे-पीछे चल पड़े और चलते-चलते वे एक-दूसरे से बहुत ही दबी आवाज़ में दो-चार शब्द कहते जाते थे।

अपने घर के दरवाज़े पर पहुँचकर माँ ने उनकी तरफ़ मुड़कर देखा और लाठी पर झुककर कृतज्ञता प्रकट करते हुए कोमल स्वर में कहा :

"धन्यवाद..."

और उस विचार को याद करके – उस नये विचार को जो उसके हृदय की गहराई से उत्पन्न हुआ था – उसने कहा :

"अगर लोगों ने ईश्वर के नाम पर अपने प्राणों की बलि न दी होती तो ईसा मसीहा का कोई नाम भी न जानता..."

जन-समूह चुपचाप टकटकी बाँधे उसे देखता रहा।

एक बार फिर उसने झुककर लोगों को सलाम किया और घर के अन्दर चली गयी। सिजोव भी सिर झुकाकर उसके पीछे-पीछे अन्दर चला गया।

कुछ देर तक लोग फाटक पर खड़े बातें करते रहे।

फिर वे धीरे-धीरे वहाँ से चले गये।

भाग 2

1

बाक़ी दिन माँ की आत्मा और शरीर पर घोर शिथिलता छायी रही और वह स्मृतियों के धुँधलके में खोयी रही। उसकी आँखों के सामने भूरे रंग के एक धब्बे के रूप में वह नाटा अफ़सर, पावेल का काँसे का ढला हुआ-सा चेहरा और अन्द्रेई की हँसती हुई आँखें घूमती रहीं।

वह कमरे में इधर-उधर टहलती रही, फिर जाकर खिड़की के पास बैठ गयी और बाहर सड़क पर देखती रही। थोड़ी देर बाद वह फिर उठी और माथे पर बल डाले इधर-उधर टहलती रही; ज़रा-सी भी कोई आवाज़ होती तो वह चौंक पड़ती और चारों ओर नज़रें दौड़ाती या फिर अकारण ही कुछ ढूँढ़ती रहती। उसने कई बार पानी भी पिया पर वह न तो उसकी प्यास बुझा सका, न उसके सीने के सुलगते हुए घाव और उसकी व्यथा की आग को ही। वह दिन दो टुकड़ों में विभाजित हो गया था – पहले भाग का तो अर्थ था पर दूसरे भाग का कोई अर्थ ही नहीं रह गया था; उसके सामने एक भयानक गर्त्त था और बार-बार यह प्रश्न उसके सामने आकर खड़ा हो जाता था :

"अब मैं क्या करूँ?.."

कोरसुनोवा उससे मिलने आयी। वह बहुत हाथ उठा-उठाकर चिल्लायी, रोयी और भावावेश में बह गयी, उसने पाँव पटके, धमकियाँ दीं, वादे किये, न जाने कितने सुझाव रखे, पर माँ पर इनमें से किसी का भी असर न हुआ।

"अहा! लोग जान की बाजी लगाकर मैदान में आ गये! पूरी फ़ैक्टरी कमर बाँधकर उठ खड़ी हुई! पूरी फ़ैक्टरी!" खोमचेवाली की भर्रायी हुई आवाज़ सुनायी दी।

"हाँ!" माँ ने शान्त भाव से सिर हिलाकर कहा, पर उसकी आँखें बीती हुई बातों पर जमी हुई थीं, उन सब बातों पर जो पावेल और अन्द्रेई के साथ ही लोप हो गयी थीं। वह रो भी न सकी – उसका हृदय संकुचित होकर सूख गया था। उसके होंठ भी सूख गये थे और उसके मुँह में नमी का नाम तक न था। उसके हाथ काँप रहे थे और उसकी पीठ में थोड़ी-थोड़ी देर बाद सिहरन-सी उठती थी।

उसी रात राजनीतिक पुलिस के सिपाही आये। उनके आने पर उसे कोई

विस्मय या भय नहीं हुआ। वे बहुत शोर करते हुए घर में घुसे और बहुत प्रसन्न और सन्तुष्ट दिखायी दे रहे थे। पीले चेहरेवाले अफ़सर ने खीसें निकालकर कहा :

"क्या हाल-चाल है? अगर मैं गलती नहीं करता तो यह हमारी तीसरी मुलाक़ात है?"

माँ अपने होंठों पर केवल अपनी सूखी जबान फेरकर चुप रह गयी। अफ़सर बड़ी बातें कर रहा था और उसे उपदेश देने का प्रयत्न कर रहा था। माँ समझ गयी कि उसे बातें करने में मजा आता है, पर उसकी बातों से उसे झुँझलाहट नहीं हुई; वे उस तक पहुँचीं ही नहीं। परन्तु जब उसने कहा, "इसमें कसूर आप ही का है, माँ, आप ही अपने बेटे को ईश्वर और ज़ार के प्रति उचित श्रद्धा रखना न सिखा सकीं...", तो माँ से न रहा गया और उसने दरवाज़े पर ही खड़े-खड़े उसका उत्तर दिया :

"हमारे बच्चे ही हमारे भले-बुरे को परखेंगे," उसने कहा। "जिस समय वे इतने कठिन पथ पर आगे बढ़ रहे थे उस समय हमने उनका साथ छोड़ दिया, वे हमारे इस बरताव का न्याय ख़ुद ही कर लेंगे।"

"क्या कहा?" अफ़सर ने चिल्लाकर कहा। "बोलो!"

"मैंने कहा कि हमारे बच्चे ही हमारे भले-बुरे को परखेंगे!" माँ ने आह भरकर उत्तर दिया।

अफ़सर ने क्रुद्ध होकर अस्फुट स्वर में कुछ कहा, पर उसके शब्द माँ के कानों तक नहीं पहुँचे।

तलाशी के लिए मारिया कोरसुनोवा को गवाह के रूप में लाया गया। वह पेलागेया के बगल में खड़ी थी, पर उसकी ओर देख नहीं रही थी। जब भी अफ़सर उससे कोई सवाल पूछता, वह बहुत झुककर एक ही बात दुहराती :

"हुजूर, मुझे मालूम नहीं। मैं तो जाहिल औरत ठहरी, कुछ बेच-बाचकर अपना पेट पालती हूँ। मैं तो इतनी नादान हूँ कि कुछ भी नहीं जानती..."

"बक-बक मत कर!" अफ़सर ने अपनी मूँछें ऐंठते हुए उसे डाँटा। वह फिर पहले की ही तरह झुकी पर ज्यों ही अफ़सर ने अपनी पीठ मोड़ी, वह उसे ठेंगा दिखाकर माँ के कान में बोली :

"यह ले!"

जब उसे पेलागेया की तलाशी लेने की आज्ञा दी गयी तो वह आँखें झपकाकर अफ़सर को घूरने लगी।

"मगर हुजूर, मुझे तो यह भी मालूम नहीं कि यह कैसे किया जाता है!" उसने भयभीत स्वर में कहा।

अफ़सर ने पाँव पटककर ज़ोर से उसे डपटा। मारिया ने आँखें झुका लीं।

"अच्छा, पेलागेया निलोवना, तो फिर तुम अपने बटन खोलना शुरू करो," उसने माँ से कहा।

माँ के कपड़ों पर हाथ फेरते समय उसका चेहरा लाल हो गया।

"उफ, कुत्ते कहीं के!" उसने चुपके से कहा।

"क्या कहा तुमने?" अफ़सर ने कनखियों से उस कोने की तरफ़ देखते हुए चिल्लाकर कहा जहाँ तलाशी ली जा रही थी।

"हुज़ूर, कुछ नहीं, औरतों की बातें हैं!" मारिया ने भयभीत होकर दबे स्वर में कहा।

आख़िरकार उसने माँ से कुछ काग़ज़ों पर दस्तखत करने को कहा। माँ ने अपनी टेढ़ी-मेढ़ी लिखाई में मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा :

"पेलागेया व्लासोवा, एक मज़दूर की विधवा।"

"क्या क्या लिखा है तुमने? यह क्यों लिखा?" अफ़सर ने मुँह बनाकर कहा और फिर हँसकर बोला, "जंगली कहीं की..."

वे चले गये। माँ दोनों हाथ बाँधे खिड़की के पास खड़ी थी और अपलक बाहर घूर रही थी। वह किसी ख़ास चीज़ को देख रही हो ऐसा नहीं था, उसकी भवें तनी हुई थीं और उसने अपने होंठ कसकर बन्द कर रखे थे; उसके जबड़े तो इतने कसकर भिंचे हुए थे कि शीघ्र ही उसे पीड़ा होने लगी। लैम्प में मिट्टी का तेल ख़त्म हो गया, बत्ती से चिंगारियाँ निकलने लगीं और लौ भकभकाने लगी। माँ ने लैम्प बुझा दिया और अँधेरे में खड़ी रही। अपने हृदय की व्यथा के कारण उसे साँस लेने में भी कठिनाई हो रही थी। बड़ी देर तक वह इसी तरह खड़ी रही; यहाँ तक कि उसकी आँखें और पाँव दुखने लगे। खिड़की के पास उसने मारिया की आहट और नशीली आवाज़ सुनी :

"सो गयीं, पेलागेया? बेचारी कितनी मुसीबत उठाती है! जाओ, सो जाओ!"

माँ कपड़े पहने ही लेट गयी और शीघ्र ही ऐसी गहरी नींद सो गयी मानो किसी गहरे तालाब में डूब गयी हो।

उसने स्वप्न में देखा कि वह दलदल के पार पीली रेत की एक पहाड़ी के पास से होकर शहर की तरफ़ जा रही है। उस पहाड़ी के कगार पर, जिसके नीचे गड्ढे से रेत खोदी जाती थी, पावेल खड़ा था और अन्द्रेई के मधुर स्वर में गा रहा था :

"उठ जाग, ओ भूखे बन्दी!.."

वह माथे पर हाथ रखे अपने बेटे को देखती हुई उस पहाड़ी के पास से

गुजरी। नीचे आकाश की पृष्ठभूमि में उसकी आकृति बिल्कुल साफ़ दिखायी दे रही थी। उसे अपने बेटे के पास जाने में लाज आ रही थी, क्योंकि वह गर्भवती थी, और अपनी गोद में वह एक और बच्चा लिये हुए थी। चलते-चलते वह एक ऐसे मैदान में पहुँची जहाँ कुछ बच्चे गेंद खेल रहे थे। बहुत से बच्चे थे और गेंद लाल रंग की थी। उसकी गोद का बच्चा हाथ फैलाकर गेंद के लिए मचलने लगा। माँ अपने स्तन से उसे दूध पिलाने लगी और पीछे मुड़ी, पर अब पहाड़ी पर उसे निशाना बनाकर संगीनें ताने हुए सिपाही खड़े थे। मैदान के बीच में एक गिरजा था, वह भागकर उसी की ओर चली गयी। वह एक सफ़ेद रंग का अलौकिक गिरजा था – बहुत ऊँचा और देखने में बादलों का बना हुआ मालूम होता था। कोई दफन किया जा रहा था; काले रंग का बड़ा-सा ताबूत मज़बूती से बन्द था। बड़े और छोटे पादरी अपनी-अपनी सफ़ेद पोशाकें पहने गिरजे में इधर-उधर घूम-घूमकर गा रहे थे :

"धन्य-भाग्य, ईसा का पुनर्जन्म हुआ..."

छोटे पादरी ने माँ को देखकर झुककर उसका अभिवादन किया और धूपदान घुमाते हुए मुस्करा दिया। उसके बाल गहरे लाल रंग के थे और चेहरा समोइलोव जैसा हँसमुख था। गिरजाघर की मीनार के कटावों में से सूरज की किरणें सफ़ेद रूमालों की तरह लहराती हुई अन्दर आ रही थीं। ऊपर सामूहिक गान के दोनों छज्जों में लड़के गा रहे थे :

"धन्य-भाग्य, ईसा का पुनर्जन्म हुआ..."

"गिरफ़्तार कर लो इन्हें!" पादरी गिरजाघर में पहुँचते ही साहसा रुककर चिल्लाया। उसके पादरियों वाले कपड़े ग़ायब हो गये और उसके ऊपर वाले होंठ पर एक मोटी-सी सफ़ेद मूँछ उग आयी। सब लोग भाग गये; छोटे पादरी ने भी धूपदान फेंककर उक्रइनी की तरह अपना सिर पकड़ लिया और भाग खड़ा हुआ। माँ ने अपना बच्चा भागते हुए लोगों के क़दमों में धर दिया, पर वे भयभीत आँखों से उसके नंगे शरीर को देखते हुए उससे कतराकर आगे बढ़ गये। माँ घुटने टेककर रो-रोकर उनसे कहने लगी :

"मेरे बच्चे को इस तरह न छोड़ जाओ! इस अपने साथ लेते जाओ..."

उक्रइनी अपने हाथ पीठ के पीछे किये मुस्कराता हुआ गा रहा था :

"धन्य-भाग्य, ईसा का पुनर्जन्म हुआ..."

माँ ने झुककर बच्चे को उठा लिया और तख़्तों से लदी हुई एक गाड़ी पर

उसे लिटा दिया। निकोलाई गाड़ी के बगल में धीरे-धीरे चल रहा था और हँस रहा था।

"तो उन्होंने मुझे यह कठिन काम करने को दिया!" उसने कहा।

सड़कें गन्दी थीं और लोग अपने घरों की खिड़कियों से बाहर झुककर चिल्ला रहे थे, सीटियाँ बजा रहे थे और हाथ हिला रहे थे। मौसम साफ़ था, सूरज तेज़ी से चमक रहा था और कहीं छाया का नाम भी न था।

"गाओ, माँ!" उक्रइनी ने ऊँचे स्वर में कहा। "यही ज़िन्दगी है!"

वह ख़ुद गाने लगा और अन्य सभी आवाज़ें उसके गीत की आवाज़ में डूब गयीं। वह चल पड़ा और माँ उसके पीछे-पीछे हो ली। सहसा वह ठोकर खाकर एक अथाह गर्त्त में गिर पड़ी जिसका रीतेपन का चीत्कार उसका स्वागत करने को ऊपर आता हुआ सुनायी दिया...

माँ की आँखें सहसा खुल गयीं, वह काँप रही थी। ऐसा मालूम हो रहा था कि किसी ने अपने मज़बूत पंजे में उसके दिल को पकड़ रखा है और धीरे-धीरे उसे निचोड़े ले रहा है। फैक्टरी की सीटी लगातार मज़दूरों को बुला रही थी; माँ ने आवाज़ से पहचान लिया कि वह दूसरी सीटी थी। कमरे में किताबें बिखरी हुई थीं, हर चीज़ अस्त-व्यस्त पड़ी थी और फ़र्श पर कीचड़ में सने हुए जूतों के निशान थे।

माँ उठी और मुँह-हाथ धोये और प्रार्थन किये बिना ही कमरा साफ़ करने लगी। रसोई में उसकी नज़र झण्डे के टूटे हुए बांस पर पड़ी, जिसमें अभी तक लाल कपड़े का एक टुकड़ा बँधा हुआ था। वह उसे उठाकर चूल्हे में डालने ही जा रही थी कि कुछ सोचकर रुक गयी और उसने एक आह भरकर लाल कपड़ा बांस से अलग किया और बड़ी सावधानी से उसे तह करके अपनी जेब में रख लिया। फिर उसने अपने घुटने पर रखकर बांस को तोड़ा और चूल्हे में डाल दिया। इसके बाद उसने ठण्डे पानी से फ़र्श और खिड़कियाँ धोयीं और समोवार में आग सुलगाकर कपड़े पहन लिये। यह सब कुछ कर चुकने के बाद वह रसोई की खिड़की के पास बैठ गयी और फिर वही प्रश्न उसके सामने आ खड़ा हुआ :

"अब मैं क्या करूँ?"

यह याद आते ही कि उसने अभी तक सुबह की प्रार्थना नहीं की है, वह उठकर देव-प्रतिमाओं के ताक के पास गयी पर कुछ क्षण तक उनके सामने खड़े रहने के बाद वह फिर बैठ गयी। उसका हृदय शून्य था।

चारों ओर एक विचित्र-सी निस्तब्धता थी। ऐसा मालूम होता था कि जो लोग कल इतने उत्साह से सड़कों पर चिल्ला रहे थे आज अपने घरों में छुप गये थे और उन असाधारण घटनाओं पर विचार कर रहे थे।

सहसा माँ को अपनी जवानी का एक क़िस्सा याद आया। जाउसा-इलोव-परिवार की हवेली के पुराने पार्क में एक बड़ा-सा तालाब था जिसमें कुमुदिनी के फूल खिले हुए थे। शरद ऋतु के अन्तिम दिनों की बात है कि एक दिन वह तालाब के पास से होकर गुजरी तो देखती क्या है कि तालाब के बीच में एक नाव खड़ी है। तालाब का जल शान्त और गहरे रंग का था; ऐसा मालूम होता था कि नाव तालाब के गहरे रंग के पानी के साथ, जिस पर मुरझायी हुई पत्तियों का एक उदास जाल बिछा हुआ था, गोंद से चिपका दी गयी है। इस अकेली नाव को देखकर, जिस पर न कोई आदमी था न पतवार, और जो सूखी पत्तियों के बीच गन्दले पानी में निश्चल खड़ी थी, किसी अज्ञात दुर्घटना की गहरी व्यथा का आभास होता था। बड़ी देर तक तालाब के किनारे खड़ी माँ सोचती रही कि यह नाव पानी में किसने उतारी होगी और किस उद्देश्य से? उसी दिन शाम उसे मालूम हुआ कि उस जागीर पर काम करने वाले एक नौकर की पत्नी, जो उलझे-उलझे काले बालों और तेज़ चालवाली औरत थी, तालाब में डूबकर मर गयी थी।

माँ ने अपने माथे पर हाथ फेरा और पिछले दिन की स्मृतियों के बीच अन्य विचार बहुत सकुचाते हुए उसके मस्तिष्क में आने लगे। बड़ी देर तक माँ इन्हीं स्मृतियों में खोयी हुई ठण्डी चाय के गिलास को घूरती रही और उसके हृदय में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि वह किसी सीधे-सादे बुद्धिमान आदमी से बातें करे जो उसके सारे प्रश्नों का उत्तर दे सके।

मानो उसकी इसी इच्छा को पूरा करने के लिए निकोलाई इवानोविच खाना खाने के बाद उससे मिलने आया। पर उसे देखते ही वह सहसा भयभीत हो उठी और उसके सलाम का जवाब दिये बिना ही बोली :

"क्यों आये हो? बड़ी बेवक़ूफ़ी की तुमने यहाँ आकर! अगर वे लोग तुम्हें यहाँ देख लेंगे तो तुम्हें भी पकड़ ले जायेंगे..."

उसने माँ का हाथ कसकर दबाया और अपना चश्मा ऊपर सरकाते हुए उसकी तरफ़ झुका।

"पावेल और अन्द्रेई के साथ यह तय हुआ था कि अगर वे गिरफ़्तार कर लिये गये तो दूसरे दिन मैं तुम्हें शहर पहुँचा आऊँगा," उसने जल्दी-जल्दी कहा। उसका स्वर कोमल और सहानुभूति से भरा हुआ था। "क्या यहाँ तलाशी हुई थी?"

"हाँ, उन्होंने एक-एक चीज़ की तलाशी ली। ईमान तो जैसे उनमें है ही नहीं। निर्लज्ज कहीं के!" माँ ने जलकर कहा।

"लज्जा उनमें आये कहाँ से?" निकोलाई ने कन्धे बिचकाकर कहा और

फिर वह माँ को समझाने लगा कि उसे शहर में क्यों रहना चाहिए।

माँ ने मित्रता और सहानुभूति से भरी हुई उसकी आवाज़ सुनी और धीरे से मुस्करा दी। वह उसकी दलीलें नहीं समझ रही थी पर उसे आश्चर्य हो रहा था कि उसकी बातों से उसके हृदय में उसके प्रति कितना विश्वास और ममता जागृत हो उठी थी।

"अगर पावेल की ऐसी ही मर्ज़ी थी," माँ ने कहा, "और अगर मेरे जाने से तुम्हें कोई..."

"इसकी चिन्ता न करो," उसने बात काटते हुए कहा। "मैं अकेला रहता हूँ। बस कभी-कभी मेरी बहन आ जाती है।"

"मगर मैं अपने ख़र्च का बोझ तुम्हारे ऊपर नहीं डाल सकती," माँ ने कहा।

"अगर तुम चाहो तो हम तुम्हारे लिए कोई काम ढूँढ़ देंगे," निकोलाई ने कहा।

उसके लिए काम की कल्पना अभिन्न रूप से अपने बेटे और अन्द्रेई और उनके साथियों के काम के साथ सम्बद्ध थी। वह निकोलाई के और पास आ गयी और उसकी आँखों में आँखें डालकर देखने लगी।

"सचमुच ढूँढ़ दोगे?" माँ ने पूछा।

"मेरे घर में तो कोई काम है नहीं, क्योंकि मैं तो अकेला ही हूँ..."

"मैं ऐसे घर के काम की बात नहीं कर रही थी," माँ ने धीमे स्वर में उत्तर दिया।

माँ ने एक आह भरी; उसे बड़ा दुख हुआ कि वह उसकी बात समझा नहीं। पर वह अपनी चुँधी आँखें मिचमिचाकर मुस्कराया और विचारमग्न होकर बोला :

"अगर तुम पावेल से उन किसानों का पता मालूम कर सको जिन्होंने हमसे अखबार निकालने को कहा था, तो...."

"मैं उन्हें जानती हूँ!" माँ ख़ुश होकर चिल्ला पड़ी। "मैं उनका पता लगा लूँगी और जो भी तुम कहोगे करूँगी! मुझ पर कोई ग़ैर-क़ानूनी प्रचार करने का सन्देह भी नहीं करेगा। तुम्हारा भला हो, मैं आख़िर फ़ैक्टरी में पर्चे लेकर जाती थी कि नहीं?"

सहसा उसके हृदय में यह तीव्र इच्छा जागृत हुई कि वह कन्धे पर झोला डालकर और हाथ में लाठी लेकर जंगलों और गाँवों में होती हुई सारे देश का चक्कर लगाये।

"मुझे यह काम सौंपना! मैं कहीं भी जाने को तैयार हूँ, तुम देख लेना! मैं हर सूबे की हर सड़क का रास्ता मालूम कर लूँगी। जाड़ा हो या गर्मी, मरते दम तक मैं भिक्षुणी की तरह फिरती रहूँगी। क्या मेरे लिए यह काम ठीक नहीं है?"

बेघरबारवाली भिक्षुणी के रूप में गाँव-गाँव में झोपड़ियों के दर पर जाकर ईसा मसीह के नाम पर भीख माँगने की कल्पना करते ही उसका मन उदास हो गया।

निकोलाई बड़े प्यार से उसका हाथ अपने हाथ में लेकर अपनी गर्म हथेलियों से उसे थपकने लगा। फिर वह घड़ी की तरफ़ देखकर बोला :

"बाद में बातें करेंगे!"

"अगर हमारे बच्चे, हमारे कलेजे के टुकड़े, अपनी ज़िन्दगी, अपनी आजादी सब कुछ न्योछावर कर सकते हैं, अपनी चिन्ता किये बिना अपने प्राण तक दे सकते हैं, तो मैं माँ होकर क्या कुछ नहीं कर सकती?" उसने चिल्लाकर कहा।

निकोलाई का चेहरा उतर गया।

"मैंने अब से पहले किसी के मुँह से ऐसी बातें नहीं सुनीं," उसने बड़े प्यार से माँ को एकटक देखते हुए शान्त स्वर में कहा।

"मैं क्या कह सकती हूँ?" उसने उदास भाव से अपना सिर हिला दिया और धीरे से अपने हाथ घुमाकर कहा, "मेरे सीने में जो माँ का हृदय धड़कता है उसका वर्णन करने के लिए काश मेरे पास शब्द होते..."

वह उठी, उठी नहीं बल्कि किसी प्रबल शक्ति ने उसे उठाया, और क्रोध-भरे शब्दों की एक वेगमयी धारा फूट निकली :

"तो उनमें से बहुत से लोग रो देते – नीच से नीच और निर्लज्ज से निर्लज्ज भी..."

निकोलाई भी उठ खड़ा हुआ और उसने घड़ी की तरफ़ देखा।

"तो यह तय रहा? तुम आकर मेरे साथ शहर में रहोगी?"

माँ ने सिर हिला दिया।

"कब? जल्दी से जल्दी!" निकोलाई ने कहा और फिर कोमल स्वर में बोला, "जब तक तुम आ नहीं जाओगी तब तक मुझे तुम्हारी चिन्ता लगी रहेगी।"

माँ ने उसे आश्चर्य से देखा। यह उसकी कौन होती थी? मामूली-सा काला कोट पहने हुए उस चुंधे-से आदमी की जिसकी कमर झुक चली थी, जो वहाँ खड़ा सिर झुकाये लजाता हुआ मुस्करा रहा था। उसका सारा पहनावा और वह खुद भी उसके लिए अनजाना था...

"तुम्हारे पास पैसे हैं?" उसने पूछा और फ़ौरन आँखें झुका लीं।

"नहीं!"

जल्दी से उसने जेब में हाथ डालकर अपना बटुआ निकाला और खोलकर सारे पैसे माँ के आगे कर दिये।

"लो, यह ले लो..." उसने कहा।

माँ अनायास मुस्करा दी।

"तुम्हारी तो हर बात निराली है!" माँ ने सिर हिलाते हुए कहा। "तुम्हारे लिए तो पैसे का भी कोई मोल नहीं! कुछ लोग तो इसके लिए अपनी आत्मा तक बेच देते हैं और तुम इसे मिट्टी के बराबर समझते हो। ऐसा मालूम होता है कि अपने पास पैसे रखकर तुम दुनिया पर एहसान करते हो..."

निकोलाई धीरे से हँस दिया।

"बड़ी ही गन्दी चीज़ है यह पैसा! इसे लेना भी झंझट और देना भी..."

उसने माँ का हाथ पकड़कर कसकर दबाया।

"जल्दी से जल्दी आना!" उसने एक बार फिर कहा।

फिर वह हमेशा की तरह चुपचाप चला गया।

उसे विदा करके माँ दरवाज़े पर खड़ी सोचती रही :

"कितना नेक आदमी है – पर उसने मुझ पर दया नहीं की..."

और वह यह भी न समझ सकी कि वह इस बात पर असन्तुष्ट है या उसे केवल आश्चर्य है?

2

निकोलाई के आने के चौथे दिन माँ उसके घर में रहने के लिए चली गयी। गाड़ी पर अपने दो सन्दूक लादे बस्ती से निकलकर खेतों की तरफ़ जाते हुए उसने पीछे मुड़कर देखा और सहसा उसे आभास हुआ कि वह उस जगह को हमेशा के लिए छोड़े जा रही है जहाँ उसने अपने जीवन का सबसे अँधकारमय और कठिन समय बिताया था और जहाँ उसने ज़िन्दगी की एक नयी मंजिल में प्रवेश किया था जिसमें नये सुख-दुख थे और जिसके कारण उसका समय जल्दी कट गया था।

फ़ैक्टरी की चिमनियाँ आकाश की ओर अपना सिर ऊँचा किये खड़ी थीं और फ़ैक्टरी स्वयं कालिख से ढँकी हुई पृथ्वी पर एक बड़े से लाल मकड़े की तरह दुबकी हुई थी। उसके चारों ओर मज़दूरों के एक-मंजिले मकानों की बस्तियाँ थीं। ये मटमैले और बौने मकान दलदल के बिल्कुल सिरे पर खड़े अपनी छोटी-छोटी उदास खिड़कियों में से एक-दूसरे को निरीह भाव से देख रहे थे। उनके ऊपर फ़ैक्टरी की ही तरह मैले लाल रंग का गिरजाघर अपना मस्तक ऊँचा किये खड़ा था, पर उसकी मीनार चिमनियों से नीची थी।

एक आह भरकर माँ ने अपने ब्लाउज का गले पर का बटन खोल दिया, क्योंकि उसका दम घुटा जा रहा था।

"और चला चल!" गाड़ीवाले ने घोड़े की रास झटकते हुए अस्फुट स्वर

में कहा। वह एक नाटे कद का आदमी था जिसकी उम्र के बारे में निश्चय के साथ कुछ नहीं कहा जा सकता था। उसकी टाँगें टेढ़ी-मेढ़ी थीं और सिर और चेहरे पर बहुत छिदरे-छिदरे मुरझाये हुए से बाल थे और उसकी आँखों में चमक तो थी ही नहीं। गाड़ी के साथ-साथ वह झूमता हुआ चल रहा था और ऐसा प्रतीत होता था कि दाहिने या बायें मुड़ने में उसके लिए कोई अन्तर नहीं था।

"चल, बेटा!" उसने सपाट स्वर में कहा और भारी बूटों में कसी हुई अपनी टेढ़ी टाँगों पर बड़े ज़ोर से उछला। उसके बूटों पर कीचड़ जमकर सूख गयी थी। माँ ने चारों ओर नज़र दौड़ायी। खेत भी उसके हृदय की तरह ही सूने थे...

तेज़ धूप में तपती हुई रेत की मोटी तह पर गाड़ी खींचते हुए घोड़ा एक ही ढंग से अपना सिर हिला रहा था। बाल की सरसराहट सुनायी दे रही थी, खचड़ा गाड़ी चरचरा रही थी और इन आवाज़ों के साथ-साथ गर्द भी उनके पीछे-पीछे आ रही थी...

निकोलाई इवानोविच शहर के सिरे पर एक सूनसान सड़क के किनारे रहता था। एक दो-मंजिले मकान के साथ, जो पुराना और जर्जर था, हरे रंग का एक मकान और बना दिया गया था; इसी के एक हिस्से में निकोलाई रहता था। उसके घर के सामने एक छोटा सा बाग था और तीनों कमरों की खिड़कियों में लाइलक और अकेशिया की डालें और पोपलर के अल्पवयस्क वृक्षों की रुपहली पत्तियाँ झाँककर अन्दर देखती थीं। घर के अन्दर हर चीज़ साफ़-सुथरी और वातावरण शान्त था; फ़र्श पर जालदार परछाइयाँ नाचती थीं, दीवारों के सहारे किताबों की अल्मारियाँ लगी हुई थीं जिनके ऊपर गम्भीर मुद्रावाले लोगों के चित्र टँगे हुए थे।

"यहाँ तुम्हें तकलीफ तो नहीं होगी?" निकोलाई ने माँ को एक छोटे-से कमरे में ले जाकर पूछा जिसकी एक खिड़की बाग में खुलती थी और दूसरी आँगन में, जिसमें घास उगी हुई थी। इस कमरे की दीवारों के किनारे भी किताबों की अल्मारियाँ लगी हुई थीं।

"मैं तो रसोई में रह लूँगी!" माँ ने कहा। "रसोई बहुत आरामदेह और साफ़ है..."

माँ को लगा कि ये शब्द सुनकर वह सहम-सा गया। वह झेंपते और लजाते हुए माँ को रसोईघर में रहने का विचार छोड़ देने के लिए मनाने लगा और वह राजी हो गयी। उसका चेहरा खिल उठा।

ऐसा मालूम होता था कि तीनों कमरों का कोई विशेष वातावरण था। यहाँ साँस लेना ज़्यादा आसान और सुखकर था, पर ऊँचे स्वर में बोलने में संकोच होता था कि कहीं दीवार पर से इतने ध्यान से नीचे देखते हुए लोगों के चिन्तन में बाधा न पड़े।

"पौधों में पानी देने की ज़रूरत है," माँ ने खिड़की की चौखट पर रखे हुए गमलों की मिट्टी को हाथ से टटोलकर देखते हुए कहा।

घर के मालिक ने अपराधियों की तरह कहा, "अरे हाँ, मुझे उनका शौक तो बहुत है पर उनकी देखभाल करने का समय नहीं मिलता..."

माँ ने देखा कि अपने इस आरामदेह "लैट में भी निकोलाई कुछ उकताया-सा रहता है, मानो यह घर उसका अपना न हो। वह कमरे की विभिन्न चीज़ों के पास जाकर अपने दाहिने हाथ की पतली-पतली उँगलियों से चश्मा ठीक करता और जिस चीज़ की ओर भी उसका ध्यान आकर्षित हो जाता उसे बड़ी जिज्ञासा से देखता, कभी-कभी वह कोई चीज़ उठाकर अपने चेहरे के बहुत पास ले आता मानो उसे अपनी आँखों से छूकर देखना चाहता हो। ऐसा लगता था कि माँ की तरह ही वह भी इस घर में पहली बार आया था और उसके लिए भी हर चीज़ नयी और अनजानी थी। उसे इस रूप में देखकर माँ इन कमरों में इतमीनान महसूस करने लगी। वह जहाँ जाता माँ उसके पीछे-पीछे जाती और देखती कि कौन चीज़ कहाँ रखी है और उससे उसकी दिनचर्या के बारे में पूछती। वह अपराधियों की तरह उत्तर देता – ऐसे आदमी की तरह जो यह तो जानता है कि वह उस ढंग से काम नहीं करता जैसे उसे करना चाहिए पर उसका कोई इलाज नहीं कर सकता।

माँ ने फूलों में पानी दिया और पियानो पर बिखरी हुई स्वर-लिपियों को समेटकर रख दिया। समोवार को देखते ही वह बोली :

"इसे साफ़ करना पड़ेगा..."

निकोलाई ने मैली धातु पर अपनी उँगलियाँ फेरीं और उन्हें अपनी नाक के पास लाकर उनका निरीक्षण करने लगा। माँ स्नेहपूर्वक हँस दी।

उस रात को जब माँ सोने के लिए लेटी और दिन-भर की घटनाओं पर विचार करने लगी तो उसने न जाने क्यों अपना सिर उठाकर चारों ओर नज़र दौड़ायी। वह उसके जीवन में पहला अवसर था जब उसने किसी दूसरे के घर में रात बितायी हो, पर उसे ज़रा भी घबराहट नहीं हो रही थी। उसने बड़ी ममता से निकोलाई के बारे में सोचा और उसके हृदय में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि वह उसके जीवन को सुखी बना दे, उसके प्रति ऐसा स्नेह दिखाये कि उसके जीवन में सुख-शान्ति आ जाये। उसकी भोंड़ी चाल-ढाल, उसकी हास्यजनक लाचारी, आम लोगों से उसकी भिन्नता और उसकी निर्मल आँखों का बुद्धिमत्तापूर्ण और साथ ही बच्चों जैसा भाव माँ के हृदय में घर कर गया। फिर उसका विचार अपने बेटे की ओर गया और पहली मई की घटनाएँ एक बार फिर उसकी आँखों के सामने घूम गयीं। अब उनमें एक नयी गूँज पैदा हो गयी थी और उनका एक नया

महत्त्व हो गया था। स्वयं उस दिन की तरह ही इस दिन की पीड़ा में भी कोई ख़ास बात थी। इस पीड़ा से मस्तक ज़मीन पर नहीं झुक जाता था, जैसे किसी प्रबल आघात से झुक जाता है। यह पीड़ा हृदय में बार-बार बरछी की तरह चुभती थी, जिससे धीरे-धीरे एक रोष उत्पन्न होता था और झुकी हुई कमर भी सीधी हो जाती थी।

"हमारे बच्चे लड़ाई के मैदान में उतर रहे हैं," माँ सोचने लगी। वह बाग में पत्तियों को छेड़ती हुई खुली खिड़की में से रेंगकर अन्दर आती हुई शहर की रात्रिकालीन अपरिचित ध्वनियों को सुनती रही। ये आवाज़ें कहीं बहुत दूर से आती थीं – थकी हुई और क्षीण – और कमरे में पहुँचकर चुपचाप दम तोड़ देती थीं।

दूसरे दिन सबेरे ही उसने समोवार माँजकर चाय के लिए पानी गरम किया, चुपचाप मेज पर नाश्ता लगा दिया और रसोई में बैठकर निकोलाई के उठने की प्रतीक्षा करने लगी। आख़िरकार उसने खाँसते हुए अपने कमरे का दरवाज़ा खोला, एक हाथ में वह अपना चश्मा और दूसरे में क़मीज़ का कालर पकड़े था। उन्होंने एक-दूसरे को सलाम किया और माँ ने समोवार ले जाकर दूसरे कमरे में रख दिया। वह मुँह-हाथ धो रहा था, उसने सारा पानी फ़र्श पर बिखेर दिया, अपना साबुन और दाँत माँजने का ब्रश ज़मीन पर गिरा दिया और अपने फूहड़पन पर बुड़बुड़ाता रहा।

नाश्ता करते समय उसने माँ से कहा :

"देहाती बोर्ड में मुझे एक बहुत दुखदायी काम करना पड़ता है – यह पता लगाने का काम कि हमारे किसान किस तरह तबाह हो रहे हैं..." उसने अपराधियों की तरह मुस्कराकर कहा। "काफ़ी भोजन न मिलने के कारण किसान समय से पहले ही मर जाते हैं। उनके बच्चे कमज़ोर पैदा होते हैं और जैसे शरद ऋतु में मक्खियाँ मरती हैं वैसे ही वे भी मर जाते हैं। हम यह सब जानते हैं और हम इसका कारण भी जानते हैं। इस क्रम को देखने के लिए हमें तनख्वाहें भी दी जाती हैं, पर इससे ज़्यादा और कुछ नहीं होता..."

"क्या तुम छात्रालय में पढ़ते हो?" माँ ने उससे पूछा।

"नहीं, मैं पढ़ाता हूँ। मेरे पिता व्यात्का नगर की एक फ़ैक्टरी में मैनेजर हैं, पर मैं अध्यापक बन गया। गाँव में मैंने किसानों में किताबें बाँटीं और इसके लिए मुझे जेल में बन्द कर दिया गया। सजा काट चुकने के बाद मैं एक किताबों की दुकान में सेल्समैन हो गया, पर अपनी ही लापरवाही से मैं फिर जेल में पहुँचा दिया गया और उसके बाद अर्खांगेल्स्क में निर्वासित कर दिया गया। वहाँ भी, गवर्नर मुझसे नाराज़ हो गया और मुझे श्वेत सागर के किनारे एक छोटे-से गाँव में भेज दिया गया जहाँ मैं पाँच साल तक रहा।"

धूप से भरे हुए उस प्रकाशमय कमरे में उसका स्वर निर्बाध रूप से प्रवाहित था। माँ अब तक इस तरह की न जाने कितनी कहानियाँ सुन चुकी थी, पर उसकी समझ में नहीं आता था कि जो लोग ये कहानियाँ सुनाते थे वे इतने शान्त क्यों रहते थे मानो वे किसी अनिवार्य बात का उल्लेख कर रहे हों?

"मेरी बहन आज आ रही हैं!" उसने कहा।

"ब्याह हो गया है?"

"विधवा हैं। उनके पति को साइबेरिया में निर्वासित कर दिया गया था, पर वह वहाँ से भाग आये और दो साल हुए यूरोप में तपेदिक से उनकी मृत्यु हो गयी..."

"तुम्हारी बहन तुमसे छोटी हैं?"

"छः साल बड़ी हैं। मैं उनका बड़ा आभारी हूँ। और सुनिये कि वह पियानो कैसा बजाती हैं! यह उन्हीं का है... और यहाँ की बहुत-सी चीज़ें उन्हीं की हैं, किताबें बस मेरी हैं..."

"वह कहाँ रहती हैं?"

"हर जगह!" उसने मुस्कराकर उत्तर दिया। "जहाँ कहीं भी किसी हिम्मतवाले आदमी की ज़रूरत होती है वह वहाँ पहुँच जाती हैं।"

"क्या वह भी... यही काम करती हैं?"

"हाँ, क्यों नहीं!" उसने उत्तर दिया।

शीघ्र ही वह चला गया और माँ "इस काम" के बारे में और उन लोगों के बारे में सोचने लगी जो लगातार दिन-रात इसी काम में जुटे रहते थे। उनके सामने वह अपने आपको बहुत तुच्छ समझने लगी, जैसे रात को पहाड़ के सामने आदमी अपने को बौना समझता है।

दोपहर के करीब लम्बे कद की एक ख़ूबसूरत औरत ने घण्टी बजायी; वह काले कपड़े पहने थी। जब माँ ने दरवाज़ा खोला तो उसने अपना छोटा-सा पीला सूटकेस फ़र्श पर रख दिया और बढ़कर माँ का हाथ थाम लिया।

"आप पावेल मिख़ाइलोविच की माँ हैं न?" उसने कहा।

"हाँ," माँ ने उत्तर दिया। उस औरत के अच्छे कपड़े देखकर माँ को कुछ खिसियाहट-सी हो रही थी।

"आप बिल्कुल वैसी ही निकलीं जैसा मैंने सोचा था। मेरे भाई ने मुझे लिखा था कि आप यहाँ रहने के लिए आ रही हैं!" उस औरत ने आईने के सामने खड़े होकर अपना हैट उतारते हुए कहा। "पावेल मिख़ाइलोविच के साथ मेरी बड़ी पुरानी दोस्ती है। उसने मुझे आपके बारे में बताया था।"

उसकी आवाज़ भारी थी और वह धीरे-धीरे बोलती थी, पर उसका शरीर

बहुत फुर्तीला और मज़बूत था। उसकी भूरी आँखों में जवानी की चमक थी, पर इसके विपरीत उसकी कनपटियों के पास बहुत महीन झुर्रियाँ भी थीं और उसके कोमल कानों के ऊपर सफ़ेद बाल चमकते थे।

"मुझे भूख लगी है!" उसने घोषणा की। "एक प्याला कॉफी पीना चाहती हूँ..."

"अभी बनाये देती हूँ!" माँ ने कहा। "तुमने क्या कहा कि पावेल ने तुमसे मेरी चर्चा की थी?" माँ ने अल्मारी मे से कॉफी के बर्तन निकालते हुए पूछा।

"बहुत बार..." उस औरत ने चमड़े के छोटे-से केस में से सिगरेट निकालकर जलायी और कमरे में टहलने लगी। "क्या आपको उसके बारे में बहुत डर लगता है?"

माँ कॉफी के बर्तन के नीचे स्टोव की छोटी-छोटी नीली लपटों को देखती रही और मुस्कराती रही। इस औरत को देखकर उसमें जो एक सकपकाहट आ गयी थी वह ख़ुशी की इस लहर में डूब गयी।

"तो उसने मेरे बारे में इसे बताया था, प्यारा बच्चा!" उसने अपने मन में सोचा और फिर धीरे-धीरे बोली, "हाँ, लगता तो है। मेरे लिए यह आसान नहीं है पर अगर यह बात इससे पहले हुई होती तो मेरे लिए और भी कठिन हो जाता। अब कम से कम मुझे इतना तो मालूम है कि वह अकेला नहीं है..."

माँ ने उस औरत की तरफ़ देखकर पूछा :

"नाम क्या है?"

"सोफ़िया!" उसने उत्तर दिया।

माँ उसे बड़े ध्यान से देखती रही। इस औरत में एक अजीब व्यापकता थी – अपार साहस और चंचलता।

"सबसे ज़रूरी तो यह है कि वे सभी जेल से जल्दी से जल्दी छोड़ दिये जायें," सोफ़िया ने निश्चय के साथ कहा। "बस मुक़दमा जल्दी शुरू हो जाये! ज्यों ही वे लोग उन्हें कहीं निर्वासित करेंगे, हम लोग पावेल मिख़ाइलोविच को भगाने का प्रबन्ध कर देंगे। यहाँ उसकी ज़रूरत है।"

माँ अनिश्चय के भाव से सोफ़िया को देख रही थी; सोफ़िया अपनी सिगरेट बुझाने के लिए कोई चीज़ ढूँढ़ रही थी। आख़िरकार उसने गमले की मिट्टी में सिगरेट बुझा दी।

"इसी से तो फूल ख़राब होते हैं!" माँ के मुँह से अनायास ही निकल गया।

"माफ़ कर दीजिये!" सोफ़िया ने कहा। "निकोलाई भी मुझसे हमेशा यही बात कहता है!" उसने बुझी हुई सिगरेट निकालकर खिड़की के बाहर फेंक दी।

माँ ने खिसियाकर अपराधियों की तरह उसे देखा।

"मैं ख़ुद लज्जित हूँ," माँ ने कहा। "मैंने बिना सोचे-समझे ही कह दिया था। मैं भला कैसे कह सकती हूँ कि क्या करो, क्या न करो?"

"क्यों नहीं, अगर मैं गन्दगी करूँ तो आप क्यों नहीं कह सकतीं?" सोफ़िया ने कन्धे बिचकाकर उत्तर दिया। "कॉफी तैयार हो गयी? बहुत-बहुत धन्यवाद! लेकिन एक ही प्याली क्यों? आप नहीं पियेंगी?"

सहसा उसने माँ के कन्धे पकड़कर उसे अपने पास खींच लिया और उसकी आँखों में आँखें डालकर देखने लगी।

"सच कहिये, शर्माती हैं क्या?" सोफ़िया ने पूछा।

माँ मुस्करा दी।

"अभी-अभी सिगरेटवाली बात मैंने तुमसे कही है और तुम मुझसे पूछती हो कि मैं शर्म करती हूँ क्या? मगर देखो तो," उसने अपने विस्मय को छुपाने का कोई प्रयत्न किये बिना कहा, "मैं अभी कल ही यहाँ आयी हूँ और अभी से मुझे ऐसा लगने लगा कि जैसे यह मेरा ही घर है – मुझे किसी बात से डर नहीं लगता और जो मेरे जी में आता है कह देती हूँ..."

"यही तो होना भी चाहिए!" सोफ़िया ने प्रसन्न होकर कहा।

"मेरा सिर चकराता रहता है और मुझे अपना भी होश नहीं रहता," माँ ने फिर कहना आरम्भ किया। "एक ज़माने में जब तक मैं किसी को अच्छी तरह जान नहीं जाती थी तब तक मैं अपने दिल की बात उससे खुलकर नहीं कह सकती थी। पर अब मैं हमेशा सबसे दिल खोलकर बात कहती हूँ, और ऐसी बातें कह जाती हूँ जिनकी मैं पहले स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर सकती थी..."

सोफ़िया ने दूसरी सिगरेट निकाली और अपनी भूरी आँखों की कोमल ज्योति माँ के चेहरे पर केन्द्रित कर दी।

"तुम कह रही थीं कि तुम उसे भगाने का प्रबन्ध कर लोगी। लेकिन भागकर वह रहेगा कैसे?" माँ ने पूछा और अपने हृदय से इस जटिल प्रश्न का बोझ उतार दिया।

"उसमें कोई कठिनाई नहीं होगी," सोफ़िया ने अपने लिए दूसरी प्याली कॉफी बनाते हुए कहा। "जैसे दर्जनों दूसरे भागकर आये हुए लोग रहते हैं, वैसे ही वह भी रहेगा... मैं अभी एक ऐसे आदमी से मिली थी और उसे बताकर आयी हूँ कि वह कहाँ रहेगा। उसकी भी बहुत ज़रूरत थी, उसे पाँच साल की सजा हुई थी, पर उसने निर्वासन में साढ़े तीन महीने ही बिताये थे..."

माँ कुछ देर तक उसे देखती रही, फिर मुस्करा दी।

"ऐसा मालूम होता है कि पहली मई ने मुझ पर कोई जादू कर दिया है," माँ ने सिर हिलाते हुए धीरे से कहा। "मैं अपना ठिकाना नहीं ढूँढ़ पा रही हूँ –

ऐसा लगता है कि मैं एक साथ दो रास्तों पर जा रही हूँ। कभी–कभी तो ऐसा लगता है कि मैं हर बात समझती हूँ और फिर हर चीज़ धुँधली हो जाती है। अपने आपको ही ले लो – भले घर की औरत हो, यह काम करती हो... तुम मेरे पावेल को जानती हो और उसकी तारीफ करती हो और इसके लिए मैं तुम्हारा आभार मानती हूँ..."

"आभार तो मुझे मानना चाहिए!" सोफ़िया ने हँसकर कहा।

"मैंने क्या किया है? उसे यह सब कुछ मैंने तो नहीं सिखाया!" माँ ने आह भरकर कहा।

सोफ़िया ने सिगरेट एक तश्तरी में बुझा दी और अपने सिर को इस तरह झटका कि उसके सुनहरे बालों की मोटी–मोटी लटें खुलकर कमर तक आ गयीं।

"अब जाकर मैं अपना यह सारा ताम–झाम उतार आऊँ," उसने उठकर बाहर जाते हुए कहा।

3

निकोलाई शाम को घर लौटा। खाना खाते समय सोफ़िया ने बहुत हँस–हँसकर बताया कि वह किस प्रकार निर्वासन से भागकर आये हुए एक आदमी को छुपाकर आयी थी; उसके दिल में खुफिया पुलिसवालों का इतना डर समाया हुआ था कि वह हर आदमी को सन्देह की दृष्टि से देखती थी। सोफ़िया ने यह भी बताया कि उसे भागे हुए कैदी का बरताव कितना हास्यास्पद था। माँ को उसके स्वर में शेखी की एक झलक दिखायी दी, मानो कोई मज़दूर बहुत बड़ा कारनामा करने के बाद दूसरों को उसके बारे में बता रहा हो।

इस समय सोफ़िया भूरे रंग का हल्का, चौड़ा फ़्राक पहने हुए थी। इसके कारण वह और भी लम्बी और उसकी आँखें और भी काली लग रही थीं और उसकी चाल में अधिक गम्भीरता आ गयी थी।

"सोफ़िया, तुम्हारे लिए एक काम और है," निकोलाई ने खाना खाने के बाद कहा। "मैंने तुम्हें बताया था कि हम लोगों ने किसानों के लिए एक अखबार निकालने का जिम्मा लिया था, लेकिन इतने लोगों के गिरफ़्तार हो जाने के कारण उस आदमी से कोई सम्पर्क नहीं रह गया है जो यह अखबार बाँटेगा। उसका पता लगाने में पेलागेया निलोवना ही हमारी मदद कर सकती हैं। तुम इनके साथ गाँव चली जाओ और जितनी जल्दी हो सके उसका पता मालूम कर लो।"

"अच्छी बात है!" सोफ़िया ने सिगरेट का कश लेते हुए कहा। "क्यों चलेंगे न, पेलागेया निलोवना?"

"हाँ, ज़रूर चलेंगे..."

“क्या बहुत दूर है?”

“यही कोई पचास मील होगा...”

“तो ठीक है!.. अच्छा, अब थोड़ी देर पियानो बजाऊँगी। पेलागेया निलोवना, आप थोड़ी देर मेरा संगीत बरदाश्त कर सकेंगी न?”

“मेरी चिन्ता न करो – समझ लो कि जैसे मैं यहाँ हूँ ही नहीं!” माँ ने कहा और कोच के एक कोने में दुबककर बैठ गयी। मालूम तो यह होता था कि भाई-बहन उसकी ओर कोई ध्यान ही नहीं दे रहे हैं, पर बड़ी होशियारी से वे उसे भी अपनी बातचीत में शामिल करने का प्रयत्न कर रहे थे।

“निकोलाई, यह सुनो, यह ग्रीग है। मैं आज ही अपने साथ लायी हूँ... खिड़कियाँ बन्द कर दो।”

उसने स्वरलिपि सामने खोलकर रख ली और अपने बायें हाथ से सुमधुर संगीत छेड़ दिया। पियानो के तार झँकार उठे और एक हल्की-सी आह के साथ एक दूसरा स्वर पियानो की भरपूर गूँजती हुई आवाज़ में आवाज़ मिलाकर गाने लगा। उसके दाहिने हाथ की उँगलियों के नीचे से सोने की घण्टियाँ-सी बजने की आवाज़ आने लगी; मन्द स्वरों की गहरी पृष्ठभूमि पर ये सुनहरे सुर भयातुर पक्षियों के झुण्ड की तरह फड़फड़ाते हुए इधर-उधर भाग रहे थे।

पहले तो माँ पर संगीत का कोई प्रभाव न हुआ; संगीत का प्रवाह उसके लिए केवल आवाज़ों का एक जमघट था। उस जटिल संगीत-रचना में उसके कान धुन नहीं पकड़ पा रहे थे। स्वप्निल नेत्रों से वह निकोलाई को देखती रही। वह टाँगें मोड़े कोच के दूसरे सिरे पर बैठा था। फिर माँ सोफ़िया के गम्भीर चेहरे को घूरने लगी जिसके ऊपर सुनहरे बालों का एक ताज-सा लगा हुआ था। सूरज की किरनें सोफ़िया के सिर और कन्धों को अपनी ज्योति से गरमाती हुई उसकी उँगलियों को चूमने के लिए फिसलकर पियानो के परदों पर पड़ रही थीं। संगीत बढ़ते-बढ़ते पूरे कमरे में फैल गया और न जाने कब वह माँ के हृदय में भी प्रवेश कर गया।

न जाने क्यों अतीत के अन्धकारमय गर्त्त से एक चिरविस्मृत गहरी व्यथा उठी और एक कटु स्पष्टता के साथ फिर ताजी हो गयी।

एक दिन बहुत रात गये उसका पति नशे में चूर घर लौटा था। उसकी बाँह पकड़कर उसने चारपाई से उसे फ़र्श पर घसीट लिया था और उसकी पसलियों में ठोकरें मारी थीं।

“निकल जा, कुतिया कहीं की! मैं उकता गया हूँ तुझसे!” उसने चिल्लाकर कहा था।

उसकी मार से बचने के लिए माँ ने अपने दो साल के बच्चे को उठा लिया

था और उसे सीने से लगाकर घुटने टेककर फ़र्श पर बैठ गयी थी। बच्चा उसकी गोद में हाथ-पाँव पटककर रो रहा था; उसका नंगा, भयविह्वल शरीर गरम था।

"निकल जा!" मिख़ाइल ने गरजकर कहा था।

वह उछलकर खड़ी हो गयी थी और जल्दी से रसोई में जाकर उसने कन्धों पर शलूका डाल लिया था और बच्चे को शाल में लपेटकर नंगे पैर केवल रात के कपड़े ओर शलूका पहने हुए घर से निकल गयी थी; न वह रोयी थी और न उसने फरियाद की थी। मई का महीना था, रातें ठण्डी थीं। सड़क की ठण्डी-ठण्डी मिट्टी उसके तलुओं से चिपकी जा रही थी और उसके पाँव की उँगलियों के बीच घुसी जा रही थी। उसकी गोद में बच्चा तड़प-तड़पकर रो रहा था। उसने उसे शलूके के नीचे छुपाकर कसकर अपने सीने से चिपटा लिया था और भय से व्याकुल होकर सड़क पर भागती हुई आगे बढ़ती गयी थी; चलते-चलते वह बच्चे को चुप कराने का प्रयत्न करती जा रही थी :

"आँ-आँ-आँ! आँ-आँ-आँ! आँ-आँ-आँ!"

प्रभात हुआ। इस भय और लज्जा से कि कहीं कोई उसे इस अर्धनग्न अवस्था में देख न ले वह दलदल के पास जाकर एस्पन के अल्पवयस्क वृक्षों के नीचे बैठ गयी थी। वह बड़ी देर तक वहाँ बैठी आँखें फाड़े अन्धकार में घूरती रही थी और ऊँघते हुए बालक और स्वयं अपने हृदय की व्यथा को शान्त करने के लिए निरन्तर एक ही सुर में गुनगुनाती रही थी :

"आँ-आँ-आँ! आँ-आँ-आँ! आँ-आँ-आँ!"

सहसा एक काली चिड़िया उड़ती हुई उधर से गुजरी थी। माँ अपनी निरीह अवस्था से चौंककर उठ खड़ी हुई थी और सर्दी में काँपती हुई घर लौटी थी – फिर उसी पिटाई और अपमानों के चिर-परिचित भयानक वातावरण में...

संगीत का अन्तिम सुर सुनायी दिया और फिर एक उदास ठण्डी आह के साथ संगीत शान्त हो गया।

सोफ़िया ने अपने भाई की तरफ़ मुड़कर देखा।

"पसन्द आया?" उसने धीरे से पूछा।

"बहुत!" उसने मानो नींद से चौंकते हुए उत्तर दिया। "बहुत अच्छा था..."

माँ के सीने में दुखद स्मृतियों की प्रतिध्वनि का कम्पन था और उसकी चेतना के सीमान्त प्रदेश में एक विचार ढल रहा था :

"ऐसे लोग भी होते हैं जो मित्रता के साथ, शान्तिपूर्ण ढंग से मिल-जुलकर रहते हैं। वे झगड़ा नहीं करते, नशे में धुत्त नहीं हो जाते, रोटी के एक-एक टुकड़े के लिए लड़ते नहीं जैसाकि उस दूसरे अन्धकारमय जगत के लोग करते हैं..."

सोफ़िया ने एक सिगरेट निकाली। वह बहुत सिगरेट पीती थी; सिगरेट

उसके हाथ से शायद कभी छूटती ही नहीं थी।

"मेरे कोस्त्या को यह धुन सबसे अधिक पसन्द थी!" उसने कहा। उसने एक गहरी साँस लेकर फिर पियानो के परदों पर उँगलियाँ दौड़ाते हुए एक कोमल दर्दीली धुन छेड़ दी। "उसे पियानो बजाकर सुनाने में मुझे बहुत आनन्द आता था। कितना संवेदनशील था वह, हर बात का उसके हृदय पर प्रभाव होता था; उसका हृदय भावनाओं से भरा हुआ था..."

"अपने पति के बारे में सोच रही होगी," माँ ने अपने मन में कहा, "और मुस्करा रही है..."

"उसके साथ मेरा जीवन कितना सुखी था..." सोफ़िया ने मन्द स्वर में कहा; उसके बोलते समय ऐसा लगता था कि वह सोचकर नहीं बोल रही है, बल्कि शब्द अनायास ही उसके हृदय से निकल रहे हैं। "वह ज़िन्दगी का रहस्य जानता था..."

"सो तो था!" निकोलाई ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए सहमति प्रकट की। "उसकी आत्मा में संगीत था!.."

सोफ़िया ने अभी-अभी जलायी हुई सिगरेट फेंक दी और माँ की तरफ़ मुड़ी।

"आप मेरे शोर मचाने से उकता तो नहीं रही हैं?" उसने पूछा।

माँ अपने क्षोभ को छुपा न सकी :

"मेरी फ़िक्र न करो तुम। मेरी तो कुछ समझ में ही नहीं आता। मैं तो बस बैठे-बैठे सुनती रहती हूँ। मैं तो अपने ही विचारों में डूबी रहती हूँ।"

"आपको ज़रूर समझना चाहिए," सोफ़िया ने कहा, "हर औरत संगीत को समझती है, ख़ासतौर पर जब वह उदास होती है..."

उसने ज़ोर से परदों पर उँगलियाँ मारीं और पियानो इस तरह चिल्ला उठा मानो किसी ने भयानक समाचार सुना हो। सचमुच अतिशय वेदना के ही कारण ऐसा हृदय-विदारक करुण चीत्कार निकल सकता है। इसके उत्तर में सहसा यौवनमय भयातुर स्वर गूँज उठे और तेज़ी से कहीं विलीन हो गये। एक बार फिर बहुत ज़ोर का करुण चीत्कार सुनायी दिया जिसमें बाक़ी सब कुछ डूब गया। कोई भयंकर विपदा आ पड़ी थी, पर उससे करुणा नहीं बल्कि रोष की भावना उत्पन्न हुई थी। फिर कोई सधे हुए सुरों में एक सीधी-सादी मधुर धुन गाने लगा; कितना अनुरोध और आकर्षण था उस गीत में!

माँ इन लोगों से कुछ प्यार-भरी बातें कहने को बेचैन हो उठी। उस पर संगीत का नशा छा रहा था। वह मुस्करा दी। उसे पूरा विश्वास था कि वह इन भाई-बहन की सहायता कर सकती है।

उसने चारों ओर नज़र दौड़ायी – वह क्या काम कर सकती थी? चुपके से उठकर वह रसोईघर में चली गयी और समोवार में आग सुलगा दी।

पर इससे उन लोगों के किसी काम आने की उसकी तीव्र इच्छा पूरी नहीं हुई और चाय उँड़ेलते हुए उसने शर्माते हुए हँसकर कहा :

"उस अँधेरे जीवन में रहने वाले हम लोग – हम अनुभव तो सब कुछ करते हैं, पर उसे शब्दों में कहना कठिन होता है और हमें शरम आती है, क्योंकि बात यह है कि हम समझते हैं, पर उसे कह नहीं सकते। और अक्सर अपनी इसी लज्जा के कारण हम अपने ही विचारों पर झुँझला उठते हैं। ज़िन्दगी हर तरफ़ से हमें कोंचती रहती है। हम चैन से रहना चाहते हैं, पर हमारे विचार हमें चैन से बैठने कब देते हैं।" ऐसा प्रतीत होता था कि इन शब्दों से, जिनका महत्त्व उसके लिए भी उतना ही था जितना उसके श्रोताओं के लिए, वह अपने हृदय को सांत्वना देना चाहती हो।

निकोलाई माँ की बातें सुनते समय सारी देर बैठा अपनी ऐनक पोंछता रहा और सोफ़िया की बड़ी-बड़ी आँखें विस्मय से फैल गयीं। वह अपनी सिगरेट पीना भी भूल गयी, जो अब किसी भी दम बुझने को थी। वह अभी तक पियानो के सामने थोड़ा-सा अपने भाई की तरफ़ मुड़ी बैठी थी और बीच-बीच में अपने दाहिने हाथ से पियानो के परदों को धीरे से छेड़ देती थी। पियानो के कोमल स्वर माँ के हृदय से निकले हुए उन सीधे-सादे शब्दों में विलीन हुए जा रहे थे, जिनके द्वारा वह अपनी भावनाओं को व्यक्त कर रही थी।

"अब मैं अपने बारे में और सब लोगों के बारे में कुछ कह सकती हूँ क्योंकि अब मैं कुछ-कुछ समझने लगी हूँ और चीज़ों की तुलना कर सकती हूँ। पहले तो कोई चीज़ थी ही नहीं जिससे तुलना की जा सके। हमारे मज़दूर जीवन में हर आदमी एक जैसी ज़िन्दगी बसर करता है। लेकिन अब जब मैं दूसरों की ज़िन्दगी को देखती हूँ और याद करती हूँ कि मैं कैसी ज़िन्दगी बसर करती थी तो दिल बैठ जाता है।"

उसका स्वर धीमा पड़ गया :

"मुमकिन है कि मैं इस बात को ठीक से न कह पा रही हूँ या यह सब कहने में कोई तुक ही न हो क्योंकि इसमें तुम लोगों के लिए कोई नयी बात नहीं है..."

माँ का स्वर आँसुओं से रुँधा हुआ था पर वह मुस्कराती हुई आँखों से उन्हें देख रही थी :

"मैं अपना दिल खोलकर तुम लोगों के सामने रख देना चाहती हूँ," उसने कहा। "मैं चाहती हूँ कि तुम लोग जान सको कि मैं अपने हृदय से तुम लोगों

के लिए कितनी भलाई और कितने सुख की कामना करती हूँ।"

"हमें मालूम है!" निकोलाई ने धीरे से कहा।

ऐसा प्रतीत होता था कि अपनी सारी भावनाएँ उनके सामने खोलकर व्यक्त कर देने की उसकी इच्छा शान्त ही नहीं हो रही थी। इसलिए वह उन्हें उन बातों के बारे में बताती रही, जो उसके लिए नयी और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण थीं। उसने उन्हें अपने दुखमय जीवन के बारे में बताया और यह भी बताया कि किस प्रकार वह चुपचाप सब कुछ सहन करती आयी थी। उसके स्वर में क्षोभ नहीं था, पर उसके होंठों पर व्यंग्य की एक झलक थी। उसने अपने पिछले जीवन के नीरस दुखमय दिनों का सारा कच्चा चिट्ठा उनके सामने खोलकर रख दिया, उसने बताया कि कितनी बार उसके पति ने उसे पीटा था। वह आश्चर्य कर रही थी कि अकारण ही जीवन में उसकी इतनी पिटाइयाँ क्यों हुईं और वह उन्हें रोकने में असमर्थ क्यों रही...

वे दोनों चुपचाप उसकी बातें सुन रहे थे। माँ की रामकहानी के पीछे एक गूढ़ अर्थ छुपा हुआ दिखायी दिया। वह एक ऐसे व्यक्ति की रामकहानी थी, जिसे जानवर के बराबर समझा गया था और जिसने अपनी इस स्थिति को चुपचाप स्वीकार कर लिया था। ऐसा लग रहा था कि उसकी जबान से हज़ारों लोग बोल रहे थे; उसके जीवन में जो कुछ हुआ था वह बहुत ही साधारण और आये-दिन की बातें थीं - उतनी ही सीधी-सादी और बेरंग जितनी कि इस पृथ्वी पर रहने वाले अधिकांश लोगों की ज़िन्दगी थी - और उसकी जीवन-कथा एक प्रतीक बन गयी। निकोलाई अपनी कुहनियाँ मेज पर टिकाये, हथेलियों पर सिर रखे आँखें सिकोड़कर ऐनक के पीछे से माँ को एकटक देख रहा था। सोफ़िया अपनी कुर्सी पर पीछे टेक लगाये बैठी थी और बीच-बीच में सिर हिलाकर सिहर उठती थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उसका चेहरा दुबला हो गया है और उसका रंग भी पीला पड़ गया है; वह सिगरेट भी नहीं पी रही थी।

"एक ज़माने में मैं भी अपने को बहुत अभागी समझती थी," सोफ़िया ने आँखें झुकाकर शान्त स्वर में कहा। "ऐसा मालूम होता था कि मैं किसी स्वप्नों की दुनिया में रहती हूँ। यह तब की बात है जब मैं बहुत दूर एक छोटे-से क़स्बे में निर्वासन की सजा काट रही थी। मेरे पास न कोई काम था, और अपने अलावा किसी दूसरी बात के बारे में सोचने को भी नहीं था। समय काटने के लिए बार-बार मैं अपनी पिछली मुसीबतों को याद करती रहती थी। मैं अपने पिता को प्यार करती थी, फिर भी उनसे लड़ी; मैं स्कूल से निकाल दी गयी और सबके सामने मुझे एक लज्जास्पद उदाहरण के रूप में पेश किया गया; मुझे जेल में बन्द कर दिया गया, मेरे एक गहरे दोस्त ने मेरे साथ विश्वासघात किया; मेरे पति

गिरफ़्तार कर लिये गये; मुझे फिर गिरफ़्तार करके निर्वासित कर दिया गया और फिर मेरे पति का देहान्त हो गया था। मुझे ऐसा लगता था कि मैं इस दुनिया में सबसे दुखी प्राणी हूँ। लेकिन, पेलागेया निलोवना, मेरी सारी मुसीबतों की दसगुनी मुसीबतें भी तुम्हारी ज़िन्दगी की एक महीने की मुसीबतों के बराबर नहीं हैं... तुम्हें तो बरसों तक हर दिन यातनाएँ सहनी पड़ीं... इतनी मुसीबतें बरदाश्त करने की ताकत कहाँ से आती है लोगों में?"

"आदत पड़ जाती है!" पेलागेया ने आह भरकर उत्तर दिया।

"मैं मन ही मन इस बात पर ख़ुश रहता हूँ कि मैं ज़िन्दगी को काफ़ी अच्छी तरह समझता हूँ," निकोलाई ने विचारमग्न होकर कहा। "फिर भी जब कभी मुझे ज़िन्दगी का यह चित्र देखने को मिलता है, जो किताबों में दिये हुए चित्र से या मेरे बिखरे हुए विचारों में बनने वाले चित्र से बिल्कुल भिन्न होता है, तो उसकी भयानकता पर मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं! और ज़िन्दगी की छोटी-छोटी चीज़ें ही भयानक होती हैं – ज़िन्दगी की वे महत्त्वहीन घड़ियाँ जो मिलकर बरसों लम्बी हो जाती हैं..."

वे इस अन्धकारमय जीवन के हर पहलू पर विचार करते हुए बड़ी देर तक इसी तरह बातें करते रहे। माँ अतीत की स्मृतियों में खो गयी : विस्मृति के धुँधलके में से एक-एक करके वे सब अपमान उसकी आँखों के सामने आ रहे थे जिन्होंने उसके यौवनकाल को भयावह बना दिया था।

"मैं बैठी बातें बघार रही हूँ और तुम लोगों के सोने का वक़्त हो गया!" उसने आख़िरकार कहा। "इतनी बहुत-सी बातें हैं सब कहाँ तक कह सकता है कोई..."

भाई-बहन ने चुपचाप उससे विदा ली। निकोलाई ने हमेशा से ज़्यादा झुककर माँ को सलाम किया और बड़े प्यार से उसका हाथ दबाया। सोफ़िया माँ को उसके कमरे तक पहुँचा आयी।

"अच्छा, सो जाओ। अच्छी तरह आराम से सोना!" सोफ़िया ने चलते-चलते कहा। उसका स्वर भावावेश से रुँधा हुआ था और उसकी भूरी आँखें बड़े प्यार से माँ के चेहरे को ताक रही थीं...

पेलागेया ने सोफ़िया का हाथ अपने दोनों हाथों में दबा लिया और बोली :

"बहुत-बहुत धन्यवाद!.."

4

कुछ दिन बाद माँ और सोफ़िया निकोलाई के सामने शहर की ग़रीब औरतों के भेस में आयीं। वे फटे हुए सूती कपड़े और शलूके पहने हुए थीं, उनकी पीठ

पर थैले और हाथ में लाठियाँ थीं। इस पोशाक में सोफ़िया का कद कुछ छोटा मालूम होता था और उसका पीला चेहरा हमेशा की अपेक्षा अधिक गम्भीर लग रहा था।

निकोलाई ने अपनी बहन को विदा करते हुए उसका हाथ कसकर दबाया और माँ के हृदय पर उनके पारस्परिक सम्बन्ध की इस शान्त सरलता की गहरी छाप पड़ी। उन्होंने न तो एक-दूसरे को चूमा ही, न प्यार के शब्द ही कहे मगर दोनों को एक-दूसरे की सदा फ़िक्र रहती थी। जहाँ वह अब तक रहती थी वहाँ लोग हर दम एक-दूसरे को चूमते रहते थे और बड़े प्यार-भरे शब्दों में बातें करते थे, पर मौक़ा पड़ते ही एक-दूसरे पर भूखे कुत्तों की तरह टूट भी पड़ते थे।

दोनों औरतें चुपचाप शहर की सड़कें पार करती हुई खेतों की तरफ़ जा निकलीं। बर्च के पुराने वृक्षों की दो पंक्तियों के बीच एक चौड़ी-सी ऊबड़-खाबड़ सड़क पर वे दोनों साथ-साथ चली जा रही थीं।

"तुम थकोगी नहीं!" माँ ने सोफ़िया से कहा।

"मैं बहुत दूर-दूर तक पैदल जा चुकी हूँ; मुझे आदत है..."

सोफ़िया बड़े उल्लास के साथ अपने क्रान्तिकारी काम के बारे में बातें करने लगी, मानो अपने बचपन की शरारतों को याद कर रही हो। न जाने कितनी बार वह अपना नाम बदलकर झूठे शिनाख़्ती काग़ज़ बनवाकर रही थी। जासूसों से बचने के लिए वह भेस बदलकर रही थी, किताबों और पर्चों के भारी-भारी बण्डल लेकर एक शहर से दूसरे शहर गयी थी, साथियों को निर्वासन से भगाने का इन्तज़ाम किया था और उन्हें साथ लेकर विदेश में पहुँचा आयी थी। एक बार उसके घर में एक खुफिया छापाख़ाना भी था और जब पुलिसवाले इसकी ख़बर पाकर घर की तलाशी लेने आये थे तो वह नौकरानी का भेस बनाकर फाटक पर खड़े हुए सन्तरियों की आँख में धूल झोंककर चुपके से भाग निकली थी। जाड़े के दिन थे, उस दिन बड़ी सर्दी पड़ रही थी; एक हल्की-सी पोशाक पहने और सिर पर सूती रूमाल बाँधे वह हाथ में तेल का कनस्तर लिए पूरा शहर पार कर गयी थी मानो मिट्टी का तेल ख़रीदने जा रही हो। इसी तरह एक बार और वह कुछ मित्रों से मिलने के लिए एक नये शहर में पहुँच गयी और उनके घर की सीढ़ियों पर चढ़ने के बाद उसे मालूम हुआ कि तलाशी ली जा रही है। पीछे लौटने का सवाल ही नहीं था इसलिए उसने हिम्मत करके नीचे वाले "लैट की घण्टी बजायी और अपने सूटकेस समेत उन अनजाने लोगों के यहाँ टिक गयी।

"अगर आप चाहें तो मुझे पुलिस के हवाले कर सकते हैं मगर मुझे आप से ऐसी उम्मीद नहीं," उसने सारी परिस्थिति साफ़-साफ़ उनसे बताकर कहा।

वे इतना डर गये थे कि रात-भर उन लोगों ने पलक तक नहीं झपकायी;

हरदम उन्हें यही खटका लगा रहा कि कोई दरवाज़ा तो नहीं खटखटा रहा है। लेकिन उन लोगों ने उसे पुलिस के हवाले नहीं किया और दूसरे दिन सबेरे इस घटना पर जी खोलकर हँसे। इसी तरह एक बार और वह ईसाई मठवासिनी का भेस बनाकर उसी गाड़ी में, बल्कि उसी डिब्बे में सफर करती रही थी जिसमें उसका पीछा करनेवाला खुफिया पुलिस का आदमी बैठा हुआ था। वह बहुत डींग मार रहा था कि वह किस तरह इस औरत का पीछा कर रहा था। वह समझ रहा था कि वह औरत उसी गाड़ी के दूसरे दर्जे के डिब्बे में बैठी थी। हर स्टेशन पर उतरकर वह उसे देखने जाता और लौटकर उससे कहता :

"कहीं दिखायी नहीं दी, शायद सो गयी होगी। ये लोग भी थक जाती हैं, इनकी ज़िन्दगी भी कोई हमारी ज़िन्दगी से ज़्यादा आराम की थोड़े ही है!"

ये क़िस्से सुनकर माँ हँस दी और बड़े प्यार से उसने अपनी संगिनी की तरफ़ देखा। सोफ़िया लम्बे कद और छरहरे बदन की थी; अपनी सुडौल टाँगों पर वह बड़ी फुर्ती से चलती थी। उसके चलने और बात करने के ढंग से, उसके उल्लास-भरे भारी स्वर से और उसकी पूरी तनी हुई आकृति से साहस और भरपूर जीवन टपकता था, वह हर चीज़ के प्रति नौजवानों जैसा उत्साह रखती थी और हर चीज़ में उसे ख़ुशी का कोई न कोई स्रोत मिल ही जाता था।

"कितना सुन्दर सनोबर है!" सोफ़िया ने एक पेड़ की ओर संकेत करके पुलकित स्वर में कहा। माँ रुककर देखने लगी – वह पेड़ सनोबर के दूसरे पेड़ों जैसा ही था।

"हाँ, बड़ा अच्छा पेड़ है!" वह हँस पड़ी और सोफ़िया के कान के पास हवा में उड़ती हुई सफ़ेद बालों की लटों को देखती रही।

"लवा है!" सोफ़िया की भूरी आँखें प्यार से चमक उठीं और वह एकाग्रचित होकर स्वच्छ आकाश में गूँजते हुए संगीत को सुनती रही। कभी-कभी जंगली फूल तोड़कर अपनी पतली-पतली फुर्तीली उँगलियों से उसकी काँपती हुई पँखुड़ियों को सहलाने लगती और धीरे-धीरे कोई धुन गुनगुनाने लगती।

भूरी आँखोंवाली उस औरत की इन सब बातों ने माँ को मोह लिया और वह उससे बिल्कुल सटकर क़दम मिलाकर चलने लगी। कभी-कभी सोफ़िया सख़्ती से भी बोलती थी और माँ को इस पर दुख होता था।

"रीबिन इससे ख़ुश नहीं होगा....." माँ चिन्तित होकर सोचने लगी।

पर दूसरे ही क्षण सोफ़िया फिर बड़े प्यार-भरे सीधे-सादे स्वर में बोलने लगती और माँ मुस्कराकर उसकी आँखों में आँखें डालकर देखती।

"तुम अभी तो बिल्कुल जवान हो!" माँ ने आह भरकर कहा।

"मैं बत्तीस बरस की हो चुकी हूँ!" सोफ़िया ने उत्तर दिया। पेलागेया

मुस्करा दी।

"मेरा मतलब यह नहीं था। देखने में तो शायद तुम्हारी उमर इससे भी ज़्यादा मालूम होती है। लेकिन जब मैं तुम्हारी बातें सुनती हूँ और तुम्हारी आँखों में आँखें डालकर देखती हूँ तो मुझे बड़ा आश्चर्य होता है – तुम बिल्कुल नवयुवती लगती हो। तुमने बहुत कठोर और संकटमय जीवन बिताया है फिर भी तुम्हारा हृदय हमेशा मुस्कराता रहता है।"

"मुझे इस कठोरता का कभी आभास भी नहीं होता। मुझे तो ऐसा लगता है कि मेरी ज़िन्दगी से अच्छी और दिलचस्प ज़िन्दगी किसी की हो ही नहीं सकती.. मैं तुम्हें तुम्हारे पितृनाम से पुकारा करूँगी – निलोवना। न जाने क्यों पेलागेया नाम मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"जो जी में आये कहो," माँ ने सोच में डूबे हुए कहा। "जो जी में आये। मैं तुम्हें देखती रहती हूँ, तुम्हारी बातें सुनती रहती हूँ पर अपने ही विचारों में डूबी रहती हूँ। मुझे यह देखकर ख़ुशी होती है कि तुमने मनुष्य के हृदय तक पहुँचने का रास्ता मालूम कर लिया है। हर आदमी बिना किसी संकोच के तुम्हें बता देता है कि उसके हृदय में क्या छुपा हुआ है। वह अपनी इच्छा से अपनी आत्मा तुम्हारे सामने खोलकर रख देता है। और जब भी मैं तुम सब लोगों के बारे में सोचती हूँ तो मुझे विश्वास हो जाता है कि तुम लोग मनुष्य के जीवन की बुराइयों को मिटा दोगे। मुझे इसका पूरा विश्वास है!"

"हम ज़रूर मिटा देंगे क्योंकि हम मेहनतकश लोगों के साथ हैं!" सोफ़िया ने ऊँचे स्वर में आश्वासन दिलाया। "उनमें एक महान शक्ति छुपी हुई है, वे कुछ भी कर सकते हैं! हमें बस उन्हें यह जता देना है कि उनका असली मूल्य क्या है, ताकि वे आजादी से आगे बढ़ सकें...."

उसकी इन बातों को सुनकर माँ के हृदय में अनेक भावनाएँ उमड़ पड़ीं। न जाने क्यों उसे सोफ़िया पर तरस आने लगा, वह उससे नाराज़ नहीं थी बल्कि उसके हृदय में उसके प्रति मित्रता थी और वह उसके मुँह से ऐसी ही और भी सीधी-सादी बातें सुनना चाहती थी।

"तुम्हारी इस सब मेहनत का फल तुम्हें कौन देगा?" माँ ने उदास होकर धीरे से पूछा।

"हमें अपनी मेहनत का फल तो मिल भी गया," सोफ़िया ने उत्तर दिया और माँ को ऐसा मालूम हुआ कि उसके स्वर में गर्व की भावना थी। "हमने जीवन का एक ऐसा ढर्रा मालूम कर लिया है जो हमें पसन्द है। हम अपनी आत्मा की सारी शक्तियों को काम करने का पूरा मौक़ा देते हैं – जीवन से हम इससे ज़्यादा क्या आशा कर सकते हैं?"

माँ ने एक नज़र उसे देखकर आँखें झुका लीं और फिर सोचने लगी : "रीबिन को वह अच्छी नहीं लगेगी..."

वे मादक पवन में गहरी-गहरी साँसें लेती हुई तेज़ी से चली जा रही थीं, पर उन्हें कोई घबराहट या जल्दी नहीं थी, माँ को ऐसा लग रहा था जैसे वह तीर्थ-यात्रा पर जा रही हो। उसे याद आ रहा था कि बचपन में त्योहारों के दिन जब वह अपने गाँव से बहुत दूर एक गिरजाघर में जाती थी उसे कितनी ख़ुशी होती थी। उस गिरजाघर में एक चमत्कार करनेवाली मूरत भी थी।

बीच-बीच में सोफ़िया अपने कोमल मधुर स्वर में आकाश या प्रेम के बारे में कोई नया गीत गाने लगती, या खेतों और जंगलों और वोल्गा नदी के बारे में कोई कविता सुनाती और माँ सुनकर मुस्कराने लगती; अनायास ही उस पर संगीत का नशा छा जाता और वह कविता की धुन पर सिर हिलाने लगती।

माँ के हृदय में ऐसी शान्ति, ऐसा उल्लास और ऐसी गम्भीरता थी मानो वह गर्मियों की शाम को किसी सुन्दर बाग के कोने में बैठी हो।

5

वे दोनों तीसरे दिन अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचीं। माँ ने खेत में काम करते हुए एक किसान से तारकोल के कारख़ाने का पता पूछा और शीघ्र ही वे जंगल की एक ढलान पर चल पड़ीं जहाँ पेड़ों की जड़ों ने सुविधा के लिए सीढ़ियाँ बना दी थीं। कुछ दूर चलने के बाद वे एक गोल खुली हुई जगह पर पहुँच गयीं जहाँ चारों ओर कोयला और लकड़ियाँ बिखरी हुई थीं और हर तरफ़ तारकोल के थक्के जमे हुए थे।

"आख़िर वो पहुँच ही गयीं," माँ ने घबराकर चारों ओर नज़र दौड़ाते हुए कहा।

बल्लियों और पेड़ों की टहनियों के बने हुए सायबान के सामने एक मेज पड़ी हुई थी, जो लकड़ी के घोड़ों पर तीन तख़्ते टिकाकर तैयार की गयी थी। तारकोल में सना हुआ, रीबिन क़मीज़ के बटन खोले, येफ़ीम और दो अन्य नौजवानों के साथ मेज पर बैठा खाना खा रहा था। सबसे पहले रीबिन ने ही उन औरतों को देखा और वह कुछ कहे बिना आँखों पर हथेली की ओट करके उनके निकट आने की प्रतीक्षा करता रहा।

"सलाम, भैया मिख़ाइलो!" माँ ने कुछ दूर से ही चिल्लाकर कहा।

वह उठा और बड़े इतमीनान से उनकी तरफ़ बढ़ा। माँ को पहचानकर वह ठहर गया और दाढ़ी पर अपना काला हाथ फेरते हुए मुस्कराने लगा।

"हम तीर्थ-यात्रा पर निकली हैं!" माँ ने उसके पास आकर कहा। "सोचा

रास्ते में तुम्हारा हाल–चाल भी पूछते चलें। यह मेरी सहेली हैं – इनका नाम आन्ना है..."

अपनी चतुराई पर बड़े गर्व से उसने कनखियों से सोफ़िया की कठोर और गम्भीर मुद्रा को देखा।

रीबिन ने माँ से हाथ मिलाया और बहुत झुककर सोफ़िया का अभिवादन करते हुए मुँह टेढ़ा करके मुस्कराकर कहा, "तुम्हारा क्या हाल–चाल है? अब झूठ न बोलो। तुम अब शहर में नहीं हो, यहाँ झूठ बोलने की ज़रूरत नहीं! सब अपने ही लोग हैं..."

येफ़ीम ने मेज के पास बैठे–बैठे ही यात्रियों को देखा और अपने साथियों से कुछ फुसफुसाकर कहा। जब औरतें पास आ गयीं तो वह उठा और उसने झुककर उन्हें सलाम किया। उसके साथी निश्चल बैठे रहे मानो उन्होंने अतिथियों को देखा ही न हो।

"हम लोग यहाँ साधुओं की तरह रहते हैं," रीबिन ने पेलागेया निलोवना का कन्धा हल्के से थपथपाते हुए कहा। "यहाँ कोई भी हमसे मिलने नहीं आता। मालिक आजकल बाहर हैं; उनकी बीवी अस्पताल में हैं। एक तरह से मैं ही यहाँ का कर्त्ता–धर्त्ता हूँ। आओ, बैठो। कुछ खाओगी? येफ़ीम, थोड़ा–सा दूध तो ले आओ!"

येफ़ीम बिना जल्दी किये सायबान में चला गया और यात्रियों ने अपने थैले उतारकर नीचे रख दिये। एक नौजवान ने, जो लम्बे कद का दुबला–पतला लड़का था, उठकर उनकी मदद की, लेकिन उसका झबरे बालोंवाला गठीले शरीर का साथी मेज पर कुहनियाँ टिकाये विचारों में खोया हुआ बैठा उन्हें देखता रहा और अपना सिर खुजाकर कोई धुन गुनगुनाता रहा।

तारकोल और सड़ी–गली पत्तियों की तेज़ बदबू से उन दोनों औरतों को चक्कर से आने लगे।

"इसका नाम याकोव है," रीबिन ने उस लम्बे लड़के की तरफ़ इशारा करके कहा, "और वह दूसरावाला इगनात है। हाँ, तुम्हारे बेटे का क्या हाल है?"

"जेल में है," माँ ने आह भरकर कहा।

"फिर?" रीबिन ने चौंककर कहा। "मालूम होता है जेल पसन्द आ गया..."

इगनात ने गाना बन्द कर दिया और याकोव ने माँ के हाथ से लाठी ले ली।

"बैठ जाओ!" उसने कहा।

"आप खड़ी क्यों हैं? बैठ जाइये!" रीबिन ने सोफ़िया से कहा। सोफ़िया चुपचाप एक पेड़ के ठूँठ पर बैठ गयी और बड़े ध्यान से रीबिन को देखती रही।

"कब पकड़ा गया वह?" रीबिन ने माँ के सामने बैठकर सिर हिलाते हुए

पूछा। “निलोवना, तुम्हारी भी तकदीर ख़राब है!”

“नहीं, ख़राब क्या है!” माँ ने कहा।

“आदत पड़ती जा रही है, क्यों है न?”

“नहीं, आदत तो नहीं पड़ती जा रही है, मगर मैं जानती हूँ कि और कोई चारा नहीं है!”

“हुँः!” रीबिन ने कहा। “अच्छा, यह तो बताओ कि हुआ क्या था...”

येफ़ीम एक जग में दूध ले आया और मेज पर से प्याला उठाकर धोया और उसमें दूध भरकर सोफ़िया को दिया, लेकिन उसके कान माँ की बातों की ओर ही लगे हुए थे। वह बड़ी सावधानी से इस बात का प्रयत्न कर रहा था कि कोई आवाज़ न होने पाये। जब माँ अपना क़िस्सा ख़त्म कर चुकी तो एक-दूसरे की तरफ़ देखे बिना सभी क्षण-भर को ख़ामोश रहे। इगनात बैठा हुआ मेज पर अपने नाख़ूनों से लकीरें खींच रहा था। येफ़ीम अपनी कुहनी रीबिन के कन्धे पर रखे उसके पीछे खड़ा था; याकोव पेड़ के तने का सहारा लगाये सीने पर दोनों हाथ बाँधे सिर झुकाये खड़ा था। सोफ़िया चुपचाप बैठी अपनी भवों के नीचे से इन किसानों को बड़े ध्यान से देख रही थी...

“हूँ-ऊँ!” रीबिन ने धीरे-धीरे बड़े नीरस भाव से कहा। “तो यह हो रहा है – खुल्लम-खुल्ला मैदान में आ गया है!..”

“अगर हम लोग कभी ऐसा जुलूस निकालें,” येफ़ीम ने मुँह लटकाकर मुस्कराते हुए कहा, “तो देहाती मारते-मारते हमारी जान ही ले लें!”

“इसमें तो शक नहीं, वे हमें मार डालें!” इगनात ने सिर हिलाकर सहमति प्रकट की। “मैं तो जाकर किसी कारख़ाने में काम करूँगा। वहाँ ज़्यादा अच्छा रहेगा...”

“तुम कह रही थीं न कि पावेल पर मुक़दमा चलाया जायेगा, क्यों?” रीबिन ने पूछा। “और सजा क्या मिलेगी? मालूम है कुछ?”

“सख़्त कैद की लम्बी सजा होगी या हमेशा के लिए साइबेरिया भेज दिया जायेगा...” माँ ने शान्त भाव से उत्तर दिया।

तीनों नौजवानों ने एक साथ मुड़कर माँ की तरफ़ देखा।

“जब उसने जुलूस निकाला था तो क्या उसे मालूम था कि इसकी सजा क्या होगी?” रीबिन ने अपना सिर झुकाकर पूछा।

“मालूम क्यों नहीं था!” सोफ़िया ने ऊँचे स्वर में कहा।

सब लोग चुपचाप और निश्चल बैठे थे, मानो यह सोचकर उनका ख़ून जम गया हो।

“हुँः!” रीबिन ने बड़ी गम्भीरता के साथ अर्थपूर्ण ढंग से कहा। “मुझे

यकीन है कि उसे ज़रूर मालूम रहा होगा। वह आँख बन्द करके यों ही अँधेरे में नहीं कूद पड़ा होगा – वह बहुत गम्भीर स्वभाव का है। सुना तुम लोगों ने? वह जानता था कि मुमकिन है उसके सीने में संगीन भोंक दी जाये या साइबेरिया भेज दिया जाये, लेकिन वह इससे ज़रा भी नहीं घबराया। अगर उसकी माँ भी उसका रास्ता रोककर सामने लेट गयी होती तब भी वह उसे फाँदकर आगे बढ़ गया होता। क्यों है न, निलोवना?"

"हाँ, ज़रूर बढ़ गया होता!" माँ ने चौंककर कहा। उसने एक आह भरी और चारों ओर नज़र दौड़ायी। सोफ़िया ने चुपचाप उसका हाथ थपथपाया और भवें सिकोड़कर रीबिन को घूरती रही।

"इसे कहते हैं जवान मर्द!" रीबिन ने गम्भीर दृष्टि से उन सबको देखते हुए शान्त भाव से कहा। सब लोग फिर चुप हो गये। सूरज की किरनें सुनहरी झालरों की तरह वायुमण्डल में लहरा रही थीं। कहीं से कौए की काँव-काँव सुनायी दी। मई दिवस की स्मृतियों ने माँ को उत्तेजित कर दिया था, पावेल और अन्द्रेई से मिलने की इच्छा ने उसे बेचैन कर रखा था। उस छोटी-सी खुली हुई जगह में चारों ओर तारकोल के ख़ाली पीपे बिखरे हुए थे और पेड़ों के उखड़े हुए ठूँठ इधर-उधर पड़े थे। सिरे पर शाहबलूत और बर्च के वृक्ष झुण्ड बाँधे निश्चल खड़े थे और पृथ्वी पर अपनी काली-काली गर्म छाया डाल रहे थे।

सहसा याकोव पेड़ का सहारा छोड़कर एक तरफ़ को चल दिया।

"हमें और येफ़ीम को फ़ौज में भरती करके क्या इन्हीं लोगों के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए भेजा जायेगा?" उसने अपना सिर पीछे की ओर झटककर ऊँचे स्वर में कहा।

"और तुमने क्या समझा था कि तुम्हें किसके ख़िलाफ़ लड़ने भेजा जायेगा?" रीबिन ने बड़े नीरस भाव से उत्तर दिया। "वे हमें अपने ही हाथों से अपना गला घोंटने पर मजबूर करते हैं – यही तो सारा खेल है!"

"मगर मैं तो फ़ौज में भरती होऊँगा!" येफ़ीम ने हठधर्मी से कहा।

"तुम्हें रोकता कौन है?" इगनात ने चिल्लाकर कहा। "जाकर अभी भरती हो जाओ! मगर एक बात का ख़याल रखना," उसने धीरे से हँसकर कहा, "जब मेरे ऊपर गोली चलाना, तो मेरे सिर पर निशाना लगाना – मुझे अपाहिज बनाकर न छोड़ देना, एक ही बार में काम तमाम कर देना!"

"तुम एक बार पहले भी यह बात कह चुके हो!" येफ़ीम ने झल्लाकर उत्तर दिया।

"बस, बस, चुप हो जाओ तुम लोग!" रीबिन ने हाथ उठाकर कहा और फिर माँ की ओर संकेत करके बोला, "देखो, यह औरत है जिसका बेटा शायद

अब तक ज़िन्दा भी न हो..."

"ऐसी बात क्यों कहते हो?" माँ ने उदास स्वर में धीमे से पूछा।

"कहना ही पड़ता है!" रीबिन ने गम्भीरता से उत्तर दिया। "ताकि तुम्हारे बालों का सफ़ेद होना बेकार न हो। लेकिन क्या तुम लोग समझते हो कि उसके बेटे के साथ ऐसा करके उन्होंने इस औरत को मार डाला है? निलोवना, तुम किताबें लायी हो?"

माँ ने उसे कनखियों से देखा।

"हाँ..." उसने कुछ देर रुककर उत्तर दिया।

"देखा?" रीबिन ने मेज पर मुक्का मारते हुए कहा। "मैं तो तुम्हें देखते ही समझ गया था। तुम्हारे यहाँ आने की और क्या वजह हो सकती थी? देखा? उन्होंने इसके बेटे को लड़ाई के मैदान से हटा लिया – लेकिन माँ ने अपने बेटे की जगह ले ली!"

उसने अपनी मुट्ठी हिलाकर एक मोटी-सी गाली दी।

माँ ने भयभीत होकर उसकी तरफ़ देखा; उसका चेहरा पहले से पतला दिखायी दे रहा था, उसकी दाढ़ी उलझी हुई थी जिसके नीचे से गालों की हड्डियाँ साफ़ उभरी हुई दिखायी दे रही थीं। उसकी आँखों की पुतलियों पर लाल-लाल बारीक डोरे पड़ गये थे मानो वह बहुत दिन से सोया न हो। उसकी नाक शिकारी चिड़ियों की चोंच की तरह पिचकी हुई और टेढ़ी थी। उसकी क़मीज़ किसी समय लाल रही होगी, पर अब तारकोल के कारण काली हो गयी थी। उसके खुले हुए कालर में से हँसली की उभरी हुई हड्डियाँ और सीने पर घने-घने काले बाल दिखायी दे रहे थे। उसकी भूरी आकृति हमेशा से ज़्यादा उदास और मातमी लग रही थी। उसकी सूजी हुई आँखों में क्रोध की चिंगारियाँ सुलग रही थीं जिसके कारण उसके उदास चेहरे पर एक चमक आ गयी थी। सोफ़िया मुँह लटकाये चुपचाप बैठी इन किसानों को एकटक देख रही थी। इगनात अपनी आँखें सिकोड़कर सिर हिलाता रहा और याकोव सायबान में जाकर क्रोध में खड़ा बल्लियों पर की छाल को नोचता रहा। येफ़ीम माँ के पीछे मेज के पास धीरे-धीरे इधर से उधर चक्कर लगा रहा था।

रीबिन फिर बोलने लगा :

"अभी बहुत दिन नहीं हुए, जिले के हाकिम ने बुलाकर मुझसे कहा, 'तूने पादरी से क्या कहा था, बदमाश?' मैंने कहा, 'बदमाश मैं क्यों? मैं अपना ख़ून-पसीना एक करके अपनी रोज़ी कमाता हूँ और किसी का कुछ बिगाड़ता नहीं।' वह मेरे ऊपर गरजा और मेरे दाँतों पर एक ज़ोर का घूँसा मारा ओर तीन दिन तक मुझे जेल में बन्द रखा। 'तो यह है आम लोगों से तुम्हारा बात करने का

तरीक़ा, क्यों?' मैंने अपने मन में सोचा। 'तो यह भी उम्मीद न रखना कि हम इसे भूल जायेंगे, पुराने पापी कहीं के! अगर मैं ख़ुद बदला न ले सका तो कोई और तुम्हें या तुम्हारी औलाद को इसका मजा चखा देगा – याद रखना! तुमने अपने लोहे के पंजों से लोगों के सीने खुरच डाले हैं और उनमें नफ़रत के बीज बोये हैं, तो अब रहम की कोई उम्मीद न करना, शैतानो!' यही बात है!"

उसके हृदय में क्रोध की जो आग धधक रही थी उसके कारण उसका चेहरा लाल हो गया और उसके स्वर में ऐसा पुट था जिससे माँ भयभीत हो उठी।

"और मैंने पादरी से कहा क्या था?" वह कुछ शान्त होकर कहता रहा। "एक बार गाँव की एक सभा के बाद वह बैठा कुछ किसानों से बातें कर रहा था और उन्हें समझा रहा था कि आम लोग भेड़ों के गल्ले की तरह होते हैं जिन्हें हाँकने के लिए हमेशा किसी गड़रिये की ज़रूरत होती है। हुँः! मैंने भी मज़ाक़ में कह दिया, 'अगर लोमड़ी को परिन्दों का रखवाला बना दिया गया तो पर तो इधर-उधर उड़ते बहुत दिखायी देंगे पर चिड़िया एक भी हाथ नहीं लगेगी!' उसने गर्दन टेढ़ी करके मुझे देखा और समझाने लगा कि लोगों को धीरज से अपनी सारी मुसीबतें बरदाश्त कर लेनी चाहिए और ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह उन्हें सारी मुसीबतें और विपदाएँ सहने की शक्ति दे। इस पर मैंने कह दिया कि लोग यों ही क्या कम प्रार्थना करते हैं, मगर ऐसा मालूम होता है कि ईश्वर को उनकी सुनने की फ़ुरसत ही नहीं है। हुँः! इस पर उसने मुझसे पूछा कि मैं कौन-सी प्रार्थना करता हूँ, जिसके जवाब में मैंने कहा कि मैं ज़िन्दगी भर वही एक प्रार्थना करता आया हूँ जो सारे छोटे-मोटे लोग करते हैं : हे भगवान्, तू मुझे कोई तरकीब ऐसी बता दे कि मैं पत्थर खाकर इन शरीफ़जादों के लिए शहतीरें उगला करूँ। पर उसने मुझे अपनी बात भी पूरी नहीं करने दी।" सहसा रीबिन ने सोफ़िया की तरफ़ देखकर पूछा, "आप भी किसी शरीफ़ घर की हैं?"

"क्यों, शरीफ़ घर से क्या मतलब?" सोफ़िया ने चौंककर जल्दी से पूछा।

"क्यों क्या?" रीबिन ने तड़ से जवाब दिया। "क्योंकि मेरा ख़याल है कि आप शरीफ़ घर में पैदा हुई हैं। हर आदमी अपनी-अपनी तकदीर से अच्छे या बुरे घर में पैदा होता है। आप समझती हैं कि सिर पर किसानों की तरह रूमाल बाँधकर आप उसके नीचे इन शरीफ़ लोगों के पापों को छुपा सकती हैं? अगर आप किसी पादरी को बोरे में भी बन्द कर दें तो हम उसे पहचान लेंगे। अभी मेज पर, जहाँ कुछ गिरा पड़ा था, आपकी कुहनी पड़ गयी थी तो आपने बिदककर कैसा मुँह बनाया था। और आप की पीठ इतनी सीधी है कि किसी मेहनतकश औरत की हो ही नहीं सकती..."

इस भय से कि कहीं रीबिन के इस क्रूर परिहास पर सोफ़िया नाराज़ न

हो जाये, माँ बीच में जल्दी-जल्दी और गम्भीरता से कह उठी :

"मिखा़इलो इवानोविच, यह मेरी दोस्त हैं और बहुत ही अच्छी औरत हैं। हमारे लिए लड़ते-लड़ते इनके बाल सफे़द हो गये हैं। तुम ज़रूरत से ज़्यादा बढ़कर बातें कर रहे हो..."

रीबिन ने एक गहरी आह भरी :

"क्यों, क्या मैंने कोइे ऐसी-वैसी बात कह दी?"

"मेरा ख़याल है आप मुझे कुछ बताने जा रहे थे?" सोफ़िया ने रुखाई से कहा।

"ऐसी बात है? अरे हाँ! अभी कुछ ही दिन हुए यहाँ एक नया आदमी आया था – याकोव का रिश्ते का भाई है। उसे तपेदिक हो गयी है। बुलाऊँ उसे?"

"हाँ-हाँ, ज़रूर बुलाइये!" सोफ़िया ने कहा।

रीबिन आँखें सिकोड़कर एक मिनट तक उसे देखता रहा।

"जाकर उससे कह देना कि आज शाम को यहाँ आ जाये," उसने येफ़ीम से कहा।

येफ़ीम ने अपनी टोपी पहनी और किसी की तरफ़ देखे या किसी से एक शब्द भी कहे बिना जंगल में ग़ायब हो गया। रीबिन उसके चले जाने के बाद सिर हिलाता रहा।

"बहुत भारी गुजर रही है इस पर," उसने कहा। "थोड़े ही दिन में फ़ौज में भरती कर लिये जायेंगे – यह और याकोव दोनों। याकोव तो साफ़ कहता है कि फ़ौज उसकी जगह नहीं है। जगह तो येफ़ीम की भी नहीं है, मगर वह जाना चाहता है। वह सोचता है कि सिपाहियों में जागृति पैदा कर देगा। मैं तो कहता हूँ कि सिर मारने से दीवार नहीं टूटती... आदमी के हाथ में बन्दूक दे दो फिर देखो वह कैसा क़दम से क़दम मिलाकर चलता है। मगर येफ़ीम पर बहुत भारी गुजर रही है और यह इगनात उसे सताता रहता है। इसमें क्या तुक है!"

"है क्यों नहीं?" इगनात ने रीबिन की तरफ़ देखे बिना मुँह लटकाये हुए कहा। "अरे, थोड़े ही दिन में वे उसे मार-पीटकर ऐसा बराबर कर लेंगे कि वह भी दूसरों की तरह उनके इशारे पर लोगों को गोली का निशाना बनाने लगेगा..."

"मैं यकीन नहीं करता इस बात पर," रीबिन ने कुछ सोचते हुए उत्तर दिया। "यह बात दूसरी है कि मैं भी यही समझता हूँ कि वह न जाये तो अच्छा है। रूस बहुत बड़ा मुल्क है – वे उसे कहाँ-कहाँ ढूँढ़ने जायेंगे? वह झूठे शिनाख्ती काग़ज़ बनवाकर एक गाँव से दूसरे गाँव में फिरता रहे..."

"मैं तो यही करूँगा!" इगनात ने एक पटरी धप से अपने पैर पर मारकर कहा। "एक बार जब फ़ैसला कर लिया कि उनके ख़िलाफ़ लड़ना है तो फिर

उस रास्ते से हटने का कोई सवाल नहीं!"

बातचीत का सिलसिला टूट गया। हवा में शहद की मक्खियों और भिड़ों की भनभनाहट गूँज रही थी। चिड़ियाँ चहचहा रही थीं और खेतों के पार से किसी के गाने की आवाज़ लहराती हुई आ रही थी।

"काम शुरू कर देने का वक़्त हो गया है..." रीबिन ने कुछ रुककर कहा। "आप लोग थोड़ा आराम कर लें। सायबान में कुछ तख़्ते पड़े हैं। याकोव, जाकर थोड़ी-सी सूखी पत्तियाँ लाकर उन पर बिछा दो... माँ, किताबें हमें दे दो..."

माँ और सोफ़िया अपनी-अपनी पोटलियाँ खोलने लगीं।

"ओह, कितनी बहुत-सी लायी हैं!" रीबिन ने झुककर पोटलियों को देखा और ख़ुशी से चिल्लाकर कहा। "मालूम होता है आप इस काम के चक्कर में बहुत दिन से हैं - क्यों? क्या नाम है आपका?" उसने सोफ़िया से पूछा।

"आन्ना इवानोवना!" उसने उत्तर दिया। "बारह बरस से... क्यों, आपने यह क्यों पूछा?"

"कुछ नहीं, यों ही। जेल हो आयी हैं?"

"हाँ..."

"देखा?" माँ ने रीबिन को उलाहना दिया। "और तुम इतनी बदतमीजी से..."

"मेरी बात का बुरा न मानियेगा," उसने किताबों का एक बण्डल उठाते हुए खीसें निकालकर कहा। "शरीफ़ लोग और किसान तारकोल और पानी की तरह होते हैं। वे एक-दूसरे में घुल-मिल नहीं सकते!"

"लेकिन मैं तो शरीफ़-वरीफ कुछ नहीं, बस इंसान हूँ," सोफ़िया ने हल्के से मुस्कराकर आपत्ति की।

"हो सकता है!" रीबिन ने उत्तर दिया। "कहने को लोग यह भी कहते हैं कि कुत्ते भी किसी ज़माने में भेड़िये थे। मैं जाकर ये चीज़ें छुपा आऊँ।"

इगनात और याकोव हाथ फैलाये हुए उसके पास आये।

"लाओ, देखें तो!" इगनात ने कहा।

"सब एक ही हैं?" रीबिन ने सोफ़िया से पूछा।

"नहीं, अलग-अलग, कुछ अखबार भी हैं..."

"यह बड़ा अच्छा हुआ!"

तीनों आदमी जल्दी से सायबान में चले गये।

"किसान में आग भड़क रही है!" माँ ने बड़े ग़ौर से रीबिन को घूरते हुए चुपके से कहा।

"हाँ," सोफ़िया ने उत्तर दिया। "मैंने इसका जैसा चेहरा आज तक किसी

और का नहीं देखा – बिल्कुल शहीदों की सूरत है! आओ, हम भी वहाँ चलें; मैं उन लोगों को ग़ौर से देखना चाहती हूँ..."

"उसकी सख़्त बातों को बुरा न मानना..." माँ ने बड़ी नरमी से कहा।

सोफ़िया हँस दी – "निलोवना, तुम भी कितनी प्यारी हो!"

जब वे दोनों दरवाज़े पर पहुँचीं तो इगनात ने सिर उठाकर जल्दी से उन पर एक सरसरी–सी नज़र डाली और फिर अपने घुँघराले बालों में उँगलियाँ फेरकर घुटनों पर फैले हुए अखबार को झुककर पढ़ने लगा। रीबिन छत की एक दरार में से आती हुई धूप में अखबार किये खड़ा पढ़ रहा था और पढ़ते समय उसके होंठ हिल रहे थे। याकोव एक तख़्ते पर अखबार फैलाये उसके सामने घुटनों के बल झुका बैठा था।

माँ बढ़कर सायबान के एक कोने में जाकर बैठ गयी और सोफ़िया उसके कन्धे पर हाथ रखे पीछे खड़ी चुपचाप उन तीनों को देखती रही।

"चाचा मिख़ाइलो, वे हम किसानों में खराबियाँ निकाल रहे हैं!" याकोव ने बिना मुड़े शान्त स्वर में कहा। रीबिन उसकी तरफ़ देखकर हँस दिया।

"इसलिए कि वे हमें प्यार करते हैं!" उसने कहा।

इगनात ने एक गहरी साँस लेकर सिर ऊपर उठाया।

"इसमें लिखा है 'किसान अब देखने में बिल्कुल इंसान नहीं लगता।' यह तो सच है कि वह इंसान नहीं लगता!"

उसके सीधे–सादे निष्कपट चेहरे पर एक कालिमा–सी छा गयी, मानो उसे यह बात बुरी लगी हो।

"हमारी जगह तुम लोग आ जाओ तो देखें तुम्हारी सूरत कैसी लगती है, बड़े तीसमारखाँ आये!"

"मैं तो थोड़ी देर लेटती हूँ!" माँ ने सोफ़िया से कहा। "मैं थक भी गयी हूँ और यहाँ की बदबू में मेरा सिर चकरा रहा है। तुम भी आराम कर लो थोड़ी देर।"

"मैं आराम नहीं करूँगी।"

माँ तख़्ते पर लेटकर ऊँघने लगी। सोफ़िया उसके पास बैठकर उन लोगों को देखती रही। अगर कोई भिड़ या शहद की मक्खी आकर माँ की नींद में विघ्न डालती तो वह उसे उड़ा देती। माँ अधखुली आँखों से उसे देख रही थी। सोफ़िया उसका जितना ध्यान रख रही थी, उस पर माँ का हृदय द्रवित हो उठा।

रीबिन उनके पास आया।

"सो गयीं?" उसने दबी जबान में काफ़ी ज़ोर से पूछा।

"हाँ!"

वह थोड़ी देर तक खड़ा माँ के चेहरे को देखता रहा।

"मैं समझता हूँ कि यह पहली औरत है जिसने इस रास्ते पर अपने बेटे का साथ दिया है," उसने आख़िरकार आह भरकर कहा।

"इन्हें सोने दें, आइये, हम लोग बाहर चलें!" सोफ़िया ने कहा।

"मुझे तो अब काम पर जाना है। आपसे बातें करना चाहता हूँ मगर अभी तो नहीं, शाम को देखा जायेगा! आओ, दोस्तो..."

तीनों आदमी सोफ़िया को सायबान में छोड़कर बाहर चले गये।

"चलो, अच्छा हुआ इनकी दोस्ती हो गयी!.." माँ ने सोचा।

और वह लकड़ी और तारकोल की तेज़ दुर्गंध में सो गयी।

6

दिन-भर का काम ख़त्म करके तारकोल के कारख़ाने में काम करनेवाले वे मज़दूर शाम को ख़ुश-ख़ुश वापस आये।

उनकी आवाज़ से माँ जाग गयी, और जम्हाई लेती और मुस्कराती हुई सायबान से बाहर निकली।

"तुम लोग काम कर रहे थे और मैं रानी साहिबा की तरह सो रही थी!" उसने बड़ी ममता से उन्हें देखकर कहा।

"तुम्हें इसके लिए माफ़ किया जा सकता है!" रीबिन ने उत्तर दिया। थकावट के कारण उसकी सारी तेज़ी ख़त्म हो गयी थी और अब वह पहले से ज़्यादा शान्त था।

"इगनात," उसने कहा, "चाय बनाने के बारे में क्या ख़याल है? हम लोग बारी-बारी से घर-गृहस्थी का काम करते हैं। आज हमें खिलाने-पिलाने की बारी इगनात की है!"

"आज अगर कोई मेरे बदले काम कर दे तो मुझे बड़ी ख़ुशी होगी!" इगनात ने आग जलाने के लिए सूखी टहनियाँ और खपच्चियाँ बटोरते हुए कहा।

"तुम समझते हो कि अकेले तुम्हीं को मेहमानों से बात करने का शौक है!" येफ़ीम ने सोफ़िया के पास बैठते हुए कहा।

"इगनात, मैं तुम्हारी मदद करूँगा!" याकोव ने कहा। सायबान में जाकर वह एक डबल रोटी उठा लाया और उसके टुकड़े काटकर मेज पर सजा दिये।

"सुनते हो!" येफ़ीम बोला। "कोई खाँस रहा है..."

रीबिन ने कान लगाकर सुना और सिर हिला दिया।

"वही है। जीता-जागता सबूत आ रहा है," उसने सोफ़िया को समझाते हुए कहा। "अगर मेरा बस चलता तो मैं उसे शहर-शहर ले जाकर बाज़ार में बीच

चौराहे पर खड़ा कर देता ताकि सब लोग उसकी बातें सुन सकते। उसकी भी बस एक ही रट है, मगर वह ऐसी बात है जिसे सब लोगों को जानना चाहिए...''

गोधूलि-बेला के साथ-साथ निस्तब्धता भी बढ़ती गयी, लोग अब ज़्यादा धीमे स्वर में बोल रहे थे। सोफ़िया और माँ उन लोगों को देख रही थीं। वे सब बहुत धीरे-धीरे काम कर रहे थे – उन पर एक विचित्र शैथिल्य छाया हुआ था। और वे लोग भी उन दोनों औरतों को देख रहे थे।

एक लम्बा-सा आदमी लकड़ी के सहारे झुककर चलता हुआ जंगल में से निकला। उसके हाँफ-हाँफकर साँस लेने की आवाज़ सबको सुनायी दे रही थी।

''लो, मैं आ गया!'' उसने कहा और यह कहते ही उसे खाँसी का दौरा पड़ गया।

वह एक फटा हुआ कोट पहने था जो ज़मीन तक लटक रहा था। उसकी पिचकी हुई गोल टोपी में से पीले-पीले सीधे बालों की लटें बाहर को निकली हुई थीं। उसके हड़ीले पीले चेहरे पर भूरे रंग की दाढ़ी थी; उसके होंठ हरदम खुले रहते थे और उसकी आँखें यद्यपि बहुत अन्दर को धंसी हुई थीं, फिर भी उनमें एक अजीब चमक थी।

रीबिन ने जब उसका परिचय सोफ़िया ने कराया तो उसने पूछा :

''मैंने सुना है आप लोग किताबें लायी हैं?''

''हाँ,'' सोफ़िया ने उत्तर दिया।

''बहुत-बहुत धन्यवाद... सब लोगों की तरफ़ से!.. वे लोग अभी तक सच्चाई को नहीं समझ पाये हैं... लेकिन मैं चूँकि उस सच्चाई को जानता हूँ... इसलिए मैं उनकी तरफ़ से आपको धन्यवाद देता हूँ।''

वह जल्दी-जल्दी हाँफ-हाँफकर साँसें ले रहा था, मानो न जाने कितने दिन बाद साँस लेने का मौक़ा मिला हो। बोलते-बोलते वह बीच में रुक जाता था, और कोट के बटन बन्द करने के लिए अपने सीने पर पतली-पतली उँगलियाँ दौड़ाने लगता था।

''इतनी देर से जंगल में निकलना तुम्हारे लिए ठीक नहीं। पेड़ों की वजह से हवा नम और भारी हो जाती है!'' सोफ़िया ने कहा।

''अब मेरे लिए कोई भी चीज़ अच्छी नहीं रह गयी!'' उसने साँस लेकर कहा। ''अब तो मेरे लिए बस मौत ही अच्छी है...''

उसकी आवाज़ सुनकर बड़ी तकलीफ होती थी और उसकी पूरी आकृति को देखकर हृदय में असीम करुणा और लाचारी की भावना जागृत होती थी जिससे एक अजीब घुटी झुँझलाहट पैदा होती थी। वह अपने घुटने मोड़कर एक

पीपे पर इस तरह बैठ गया मानो उसे डर हो कि कहीं घुटने टूट न जायें और उसने अपने माथे का पसीना पोंछा। उसके रूखे बाल नीचे लटक रहे थे, मानो किसी मुर्दे के बाल हों।

आग की लपटें भड़कने लगीं, सहसा ऐसा मालूम हुआ कि हर चीज़ यकायक चौंककर काँपने लगी; झुलसी हुई परछाइयाँ जंगल की तरफ़ भाग चलीं और आग के ऊपर इगनात का भरे-भरे गालों वाला चेहरा चमक उठा। आग की लपटें शान्त हो गयीं, धुएँ की बू आ रही थी; धीरे-धीरे उस खुले मैदान में अँध ेरा और ख़ामोशी छा गयी, ऐसा लगता था कि उस बीमार आदमी की कहानी सुनने के लिए सारा वातावरण कान लगाये बैठा था।

"मैं अब भी आप लोगों के काम आ सकता हूँ – एक बहुत बड़े गुनाह के सबूत की तरह... मुझे देखिये... मेरी उमर अभी अट्ठाईस बरस की है और मैं मर रहा हूँ! अब से दस बरस पहले मैं बड़ी आसानी से पूरे पाँच मन का बोझ उठा लेता था। मुझे पूरा यकीन था कि मेरे जैसा हट्टा-कट्टा आदमी सत्तर बरस की उमर तक तो ज़िन्दा रहेगा ही। लेकिन उसके बाद मैं सिर्फ़ दस बरस और ज़िन्दा रहा – और अब – अब सब कुछ ख़त्म हो चुका है। मेरे मालिकों ने मुझे लूट लिया – मेरी ज़िन्दगी के चालीस बरस मुझसे लूट लिए – चालीस बरस!"

"इसकी बस यही एक धुन है!" रीबिन ने भारी आवाज़ में कहा।

आग फिर भड़क उठी, पहले से भी ज़्यादा तेज़ी और ज़ोर के साथ और एक बार फिर परछाइयाँ भागकर जंगल की तरफ़ गयीं और वापस आकर चुपचाप आग के चारों ओर एक भयानक नाच नाचने लगीं। गीली लकड़ियाँ चटख रही थीं और उनमें से सी-सी की आवाज़ आ रही थी। पेड़ों की पत्तियाँ गरम हवा के झोंकों से कानाफूसी कर रही थीं। लाल और पीली लपटें आपस में खेल रही थीं, कभी एक-दूसरे से लिपट जातीं और कभी यकायक भड़ककर चारों ओर चिंगरियाँ बिखेर देतीं। एक सुलगती हुई पत्ती हवा में उड़ी और रात के अँधेरे में आसमान पर चमकते हुए तारों ने मुस्कराकर नीचे चिंगरियों को देखा, मानो उन्हें ऊपर बुला रहे हों।

"यह मेरी धुन नहीं है। यह वह धुन है जिसे हज़ारों लोग बिना यह समझे अलापते रहते हैं कि उनकी मुसीबत दूसरों के लिए सबक है। कितने लोग काम करते हुए अपाहिज होकर भूखों मर जाते हैं..." उसे फिर खाँसी का दौरा पड़ गया और वह खाँसते-खाँसते दोहरा हो गया।

याकोव ने एक बाल्टी में क्वास पेय और हरे प्याज की एक गट्ठी लाकर मेज पर रख दी।

"सवेली, लो मैं तुम्हारे लिए दूध लाया हूँ..." उसने कहा।

सवेली ने अपना सिर हिला दिया, पर याकोव उसकी बाँह पकड़कर उसे मेज के पास खींच लाया।

"तुमने इसे यहाँ क्यों बुलवाया?" सोफ़िया ने रीबिन को झिड़कते हुए कहा। "यह किसी भी दम मर जायेगा..."

"मैं जानता हूँ!" रीबिन ने सहमति प्रकट की। "लेकिन जब तक इसमें दम है तब तक तो इसे बोलने दो। इसकी सारी ज़िन्दगी तो यों ही बेकार कुर्बान हो गयी; अब एक नेक काम के लिए थोड़ी-सी मुसीबत और बरदाश्त कर लेगा तो क्या हुआ! ठीक है, कोई फिकर की बात नहीं है।"

"तुम्हें इसमें मजा मिलता है!" सोफ़िया ने कहा।

रीबिन ने कनखियों से उसे देखा और गम्भीर स्वर में बोला :

"आप जैसे शरीफ़ लोगों को सलीब पर कराहते हुए ईसा मसीह की तारीफ करने में मजा मिलता है। लेकिन हम लोग इस आदमी की हालत देखकर सबक लेना चाहते हैं और यही चाहते हैं कि आप भी सबक लें..."

माँ ने चिन्तित मुद्रा में एक भौंह चढ़ा ली।

"बस, बहुत हो चुका!.." उसने कहा।

वह रोगी, जो अब मेज के पास बैठा था फिर बातें करने लगा :

"आख़िर आदमी से इतना काम क्यों लिया जाये कि वह मर जाये? किसी से उसकी ज़िन्दगी क्यों लूट ली जाती है? मैं नेफेदोव फ़ैक्टरी में काम करता था – मेरे मालिक ने एक ऐक्ट्रेस को मुँह-हाथ धोने के लिए सोने का तसला और सोने का बेड-पैन दिया था। मेरी ताकत और मेरी ज़िन्दगी सब बेड-पैन में चली गयी! मैंने अपनी ज़िन्दगी उसी बेड-पैन के लिए कुर्बान की। एक आदमी ने मुझसे काम लेते-लेते मेरी जान ले ली ताकि वह अपनी रखैल को मेरे ख़ून की कुर्बानी देकर ख़ुश रख सके। उसने मेरा ख़ून बेचकर उसके लिए सोने का बेड-पैन ख़रीदा!"

"इंसान की शक्ल-सूरत ईश्वर जैसी बनायी गयी है," येफ़ीम ने तिरस्कार से कहा, "और यहाँ उसके साथ यह सलूक होता है..."

"तो फिर चुप न रहो!" रीबिन ने मेज पर हाथ मारते हुए कहा।

"बरदाश्त न करो!" याकोव ने धीरे से कहा।

इगनात हँस दिया।

माँ ने देखा कि ये तीनों लड़के भूखी आत्माओं की कभी शान्त न होने वाली उत्सुकता के साथ सवेली की बातें सुनते थे और जब कभी रीबिन बात करता था तब वे उसके चेहरे को परेशानी से देखते रहते थे। सवेली की बातें सुनकर उनके चेहरों पर व्यंग्य का एक विचित्र भाव आ गया : ऐसा प्रतीत होता

था कि उन्हें रोगी से कोई सहानुभूति नहीं है।

"क्या यह सच कह रहा है?" माँ ने सोफ़िया की तरफ़ झुककर चुपके से पूछा।

"हाँ, सच है!" सोफ़िया ने ऊँचे स्वर में उत्तर दिया। "इन उपहारों की ख़बर तो मास्को के अखबारों में भी छपी थी..."

"लेकिन अपराधी को कभी सजा नहीं मिलती!" रीबिन ने अपनी भारी आवाज़ में कहा। "उसे सजा मिलनी चाहिए – उसे सबके सामने लाकर उसकी बोटी-बोटी उड़ा देनी चाहिए और उसका सड़ा हुआ गोश्त कुत्तों को खिला देना चाहिए। अरे, जनता जब उठ खड़ी होगी तो वह बहुत भयानक सजा देगी। लोगों ने जो मुसीबतें उठायी हैं उनके दाग धोने के लिए वे बहुत ख़ून बहायेंगे! और यह उनका अपना ख़ून होगा, उनकी नसों से निचोड़ा हुआ ख़ून होगा, इसलिए उन्हें हक होगा कि वे इस ख़ून का जो चाहें करें!"

"मुझे जाड़ा लग रहा है!" रोगी ने कहा।

याकोव ने सहारा देकर उसे उठाया और आग के पास ले जाकर बिठा दिया।

अब आग तेज़ जल रही थी ओर उसके चारों ओर अस्पष्ट आकृतियों वाली परछाइयाँ नाच रही थीं और स्पष्ट लपटों की उल्लासमय क्रीड़ा देख रही थीं। सवेली एक कटे हुए पेड़ के ठूँठ पर बैठ गया और उसने अपने सूखे हुए हाथ आग की तरफ़ फैला दिये। उसके हाथ इतने सूखे हुए ओर पतले थे कि आग की रोशनी उनके पार होकर झलक रही थी।

"किताबों से भी यह बात इतनी अच्छी तरह समझ में नहीं आती!" रीबिन ने सिर हिलाकर रोगी की तरफ़ संकेत करते हुए सोफ़िया से कहा। "जब कोई आदमी मशीन पर काम करते हुए मर जाता है या उसका कोई अंग कट जाता है तो कह दिया जाता है कि कुसूर उसी का था। लेकिन जब किसी आदमी का एक-एक बूँद ख़ून निचोड़ लिया जाता है और उसे फोक की तरह फेंक दिया जाता है तो फिर उसके लिए कोई बहाना नहीं बनाया जा सकता। यह बात तो मेरी समझ में आती है कि किसी आदमी को एक बार में कत्ल कर दिया जाये, लेकिन यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि आख़िर किसी आदमी को सिर्फ़ मजा लेने के लिए सता-सताकर क्यों मार डाला जाये! आख़िर लोगों को सताया क्यों जाता है? हम सब लोगों को क्यों सताया जाता है? सिर्फ़ मजा लेने के लिए, सिर्फ़ अपना जी ख़ुश करने के लिए, सिर्फ़ इसलिए कि इस पृथ्वी पर कुछ लोग ऐश कर सकें – इंसान के ख़ून के बदले जो चाहें ख़रीद सकें : ऐक्ट्रेसें, घुड़दौड़ के घोड़े, चाँदी के छुरी-काँटे, सोने की तश्तरियाँ, अपने बच्चों के लिए महंगे-महंगे खिलौने ख़रीद सकें। मालिक कहता है, 'काम करो! ज़्यादा से ज़्यादा

काम करो, ताकि मैं तुम्हारी मेहनत से अपनी प्रेमिका के लिए सोने की सिलफची ख़रीद सकूँ!"

इन बातों को सुनते हुए माँ को ऐसा आभास हुआ कि पावेल और उसके साथियों ने जो पथ अपनाया था, वह रात के अँधेरे में जगमगा उठा।

खाना खाकर वे सब लोग जाकर आग के चारों ओर बैठ गये। आग की लपटें भूखे भेड़ियों की तरह लकड़ी के कुन्दों पर झपट रही थीं; उनके पीछे अँधेरे की एक दीवार खड़ी थी जिसने जंगल और आसमान सबको छुपा लिया था। रोगी बैठा आँखें फाड़े आग को घूर रहा था। वह लगातार खाँस रहा था और इस तरह काँप रहा था मानो उसके बचे-खुचे प्राण रोग से जर्जर शरीर से बाहर निकलने को बेचैन हो रहे हों। लपटों की रोशनी उसके चेहरे पर पड़ रही थी, फिर भी उसके बेजान चेहरे पर जीवन का कोई चिह्न दिखायी न देता था। केवल उसकी आँखों में एक बुझती हुई आग की रोशनी थी।

"सवेली, चलो सायबान में चलकर बैठो न," याकोव ने उसकी तरफ़ झुककर कहा।

"क्यों?" रोगी ने बड़ी कठिनाई से पूछा। "मैं यहीं बैठूँगा – फिर मुझे लोगों से मिलने का मौक़ा ही कहाँ मिलेगा!.."

उसने चारों ओर नज़र दौड़ायी और कुछ देर रुककर सूखी हँसी हँसकर बोला, "तुम लोगों के पास रहना मुझे अच्छा लगता है। जब मैं तुम लोगों को देखता हूँ तो मुझे उम्मीद होती है कि तुम लोग उन लोगों का बदला लोगे जिन्हें दूसरों के लालच ने लूटकर मार डाला है..."

किसी ने सकी बात का उत्तर नहीं दिया और वह शीघ्र ही सो गया, उसका सिर निढाल होकर उसके सीने पर झुक गया।

"यहाँ आकर इसी तरह बैठा रहता है और हमेशा एक ही बात के बारे में बोलता रहता है, खाल खींच लेने के इस भयानक खेल के बारे में," रीबिन ने उसकी तरफ़ देखते हुए धीरे से कहा। "इसके रोम-रोम में यही एक बात बसी हुई है। कोई दूसरी बात इसे सुझायी ही नहीं देती, मानो इसकी आँखों पर यह बात चिपका दी गयी हो।"

"वह और देखे भी क्या?" माँ ने कुछ सोचते हुए कहा। "जब रोज़ हज़ारों लोग काम करते-करते अपनी जानें इसलिए दे देते हैं कि उनके मालिक दुनिया भर की खुराफात पर पैसा लुटा सकें, तो फिर और देख भी क्या सकता है कोई?.."

"उसकी बातें सुनते-सुनते जी उकता जाता है!" इगनात ने धीमे स्वर में कहा। "जो एक बार सुन ले वह कभी भूल नहीं सकता, लेकिन वह हमेशा इसी

की रट लगाये रहता है!"

"इस रट में सब चीज़ें समायी हुई हैं, सारी ज़िन्दगी का निचोड़ है," रीबिन ने गम्भीरतापूर्वक कहा। "इस बात को हमें समझना चाहिए! मैं दर्जनों बार उसकी रामकहानी सुन चुका हूँ फिर भी कभी-कभी मेरे मन में शंका उठती है। कभी-कभी ऐसी घड़ियाँ भी आती हैं, जब यह यकीन करने को जी नहीं चाहता कि लोग इतने नीच और बदमाश होते हैं... जब अमीर-ग़रीब सभी अच्छे लगते हैं... अमीरों को भी गलत रास्ते पर लगा दिया गया है! कुछ लोग अपनी ज़रूरत में अन्धे रहते हैं, कुछ अपने लालच में। यही असली बात है! हम सोचने लगते हैं, मेरे अच्छे लोगो! मेरे भाइयो! अपनी आँखें खोलो, ईमानदारी से सोचो, अपनी पूरी अकल लगाकर सोचो!"

रोगी ने बैठे-बैठै एक झोंका लिया, आँखें खोल दीं, और फिर ज़मीन पर लेट गया। याकोव चुपचाप उठकर सायबान में गया और शीघ्र ही एक भेड़ की खाल लेकर लौटा, जो उसने अपने भाई को ओढ़ा दी और फिर जाकर सोफ़िया के पास बैठ गया।

आग की हँसती-खेलती लपटें चारों ओर अँधेरे में बैठी हुई आकृतियों को आलोकित कर रही थीं और उन लोगों की गम्भीर आवाज़ें लपटों की सरसराहट और लकड़ियों के चटखने के शान्त स्वर में विलीन हुई जा रही थीं।

अपने जीने के अधिकार के लिए सारी दुनिया की जनता के संघर्ष के बारे में, पुराने ज़माने में जर्मनी के किसानों के विद्रोह के बारे में, आयरलैण्ड के निवासियों की दुर्दशा के बारे में और स्वतन्त्रता के संघर्ष में फ़्रांसीसी मज़दूरों की वीरता के बारे में सोफ़िया ने उन्हें बताया...

रात की मखमली चादर ओढ़े हुए इस जंगल में, इस छोटी-सी खुली जगह में जिसके चारों ओर पेड़ों की दीवारें खड़ी थीं और ऊपर आकाश का शामियाना लगा था, जहाँ आग की रोशनी हो रही थी और विस्मित तथा द्वेषपूर्ण परछाइयाँ जिसे घेरे खड़ी थीं, ऐसी घटनाओं की कहानी सुनायी जा रही थी जिन्होंने नीच धनी लोगों की दुनिया की नींव हिला दी थी। सच्चाई और आजादी के लिए लड़ने वालों के नाम लिये गये और ऐसा प्रतीत हुआ मानो एक-एक करके पृथ्वी की सारी जातियों के लोग लड़ाई के थके-हारे और ख़ून में लथपथ सामने से गुजरे।

सोफ़िया का स्वर मन्द और भारी था। यह आवाज़ अतीत की गहराइयों से आती हुई प्रतीत होती थी और जो लोग दूसरे देशों के अपने भाइयों की यह कहानी बड़े ध्यान से चुपचाप सुन रहे थे उनके हृदयों में उसकी आवाज़ आशा और विश्वास जागृत कर रही थी। सोफ़िया के पीले दुबले-पतले चेहरे को बड़े ध्यान से देखते हुए उन्हें दुनिया की सभी जातियों का पुनीत ध्येय - स्वतन्त्रता के लिए

निरन्तर संघर्ष करने का ध्येय, ज़्यादा अच्छी तरह समझ में आने लगा। उन्हें यह मालूम हुआ कि उनके अपने स्वप्न और आकांक्षाएँ भी वही थीं जो सुदूर अतीत में रहने वाली अज्ञात जातियों की थीं और उस अतीत काल और वर्तमान काल के बीच इतिहास का काला रक्त-रंजित परदा पड़ा हुआ था। अपनी भावनाओं और विचारों में उन्होंने सारे विस्तृत संसार से सम्पर्क स्थापित कर लिया और इस संसार में उन्हें ऐसे मित्र मिले जो पृथ्वी पर न्याय का राज्य स्थापित करने के सूत्र में एकबद्ध थे और जो मुसीबतें वे उठा रहे थे और अपने जीवन को बेहतर बनाने के लिए जो ख़ून वे बहा रहे थे, उसने उनके इस दृढ़ निश्चय को पुनीत बना दिया था। दुनिया की सारी जनता के साथ आत्मिक सम्बन्ध की एक नयी भावना जागृत हुई, विश्व को मानो एक नया हृदय मिल गया – एक ऐसा हृदय जिसमें हर बात को जानने, हर चीज़ को समझने की जिज्ञासा का स्पन्दन था।

"एक दिन आयेगा जब सब देशों के मज़दूर उठ खड़े होंगे और कहेंगे, 'बस, बहुत हो चुका! अब हम ऐसा जीवन बरदाश्त करने को तैयार नहीं!' " सोफ़िया ने दृढ़ विश्वास के साथ कहा। "उस वक़्त उन लोगों की डाँवांडोल शक्ति, जो केवल अपने लालच के कारण ही शक्तिशाली है, चकनाचूर हो जायेगी, उनके पाँवों तले ज़मीन खिसक जायेगी और उनका कोई सहारा नहीं रह जायेगा..."

"सच है!" रीबिन ने सिर झुकाये हुए कहा। "अगर हम अपना सब कुछ न्योछावर करने को तैयार हो जायें तो कोई काम ऐसा नहीं है जो हम न कर सकें!"

माँ अपनी भवें ऊपर ताने और होंठों पर सुखद विस्मय की मुस्कराहट लिये सोफ़िया की बातें सुन रही थी। उसने देखा कि सोफ़िया के स्वभाव के विपरीत उसके व्यवहार में जो एक आकस्मिकता, उच्छृंखलता और उद्विग्नता थी वह उसके इस वृत्तान्त के कौतूहलपूर्ण शान्त प्रवाह में ग़ायब हो गयी थी। माँ को रात्रि की निस्तब्धता, आग की लपटों की क्रीड़ा और सोफ़िया का चेहरा सब कुछ बहुत अच्छा लग रहा था – पर सबसे अच्छा उसे यह लग रहा था कि किसान कितने ध्यान से उसकी बातें सुन रहे थे। वे दम साधे बिल्कुल चुपचाप बैठे थे, वे यही चाहते थे कि इस वृत्तान्त के निर्बाध प्रवाह में कोई रुकावट न आये, वे डर रहे थे कि यह ज्योतिर्मय सूत्र जो बाक़ी दुनिया के साथ उनका सम्बन्ध जोड़ रहा था, कहीं टूट न जाये। बीच-बीच में उनमें से कोई उठकर बड़ी सावधानी से आग में और लकड़ी डाल देता था और उसमें से निकलने वाली चिंगारियों की बौछार और धुएँ के बादलों से औरतों को बचाने के लिए अपना हाथ ज़ोर-ज़ोर से हिलाता था।

एक बार याकोव उठा और उसने चुपके से कहा :

"ज़रा एक मिनट..."

वह भागकर सायबान में गया और ओढ़ने के लिए कुछ चीज़ें ले आया जो उसने और इगनात ने चुपचाप अतिथियों के कन्धों और घुटनों पर डाल दीं। सोफ़िया बोलती रही, उसने विजय के दिन का चित्र खींचा और सुनने वालों के हृदय में आत्म-विश्वास की भावना जागृत की, उनमें यह चेतना पैदा की कि उन लोगों के साथ उनका एक अटूट सम्बन्ध है जो मोटी तोंदोंवालों की मूर्खतापूर्ण इच्छाओं को पूरा करने के लिए अपना ख़ून-पसीना एक करते हैं। सोफ़िया के शब्दों ने माँ को उत्तेजित नहीं किया बल्कि उनसे जो भ्रातृत्व की भावना जागृत हुई उसके कारण माँ का हृदय उन लोगों के प्रति गहरी कृतज्ञता से भर गया जो अपने प्राणों की बलि देकर दिन-रात परिश्रम करने वालों को प्रेम और सच्चाई और ईमानदारी से सोचने का संदेश देते थे।

"भगवान इनका भला करे!" उसने आँखें बन्द करके अपने मन में सोचा।

जब सोफ़िया ने अपनी बात समाप्त की उस समय सबेरा हो रहा था, उसने मुस्कराकर अपने चारों ओर ख़ुशी से दमकते हुए विचारशील चेहरों को देखा।

"अब हम लोगों को चलना चाहिए!" माँ ने कहा।

"हाँ, चलना चाहिए!" सोफ़िया ने थकी-सी आवाज़ में उत्तर दिया।

किसी लड़के ने गहरी आह भरी।

"बड़ा बुरा है कि आप लोगों को जाना है!" रीबिन ने असाधारण कोमलता के साथ कहा। "आपकी बातें सुनना बहुत अच्छा लगता है! लोगों में यह चेतना पैदा कर देना कि वे सब एक हैं बहुत बड़ी बात है! जब आदमी यह समझने लगता है कि लाखों दूसरे लोग भी उसी चीज़ के लिए लड़ रहे हैं तो उसके हृदय में बड़ा प्यार उमड़ आता है। और प्यार की शक्ति बहुत बड़ी होती है!"

"हाँ, तुम प्यार करो और दूसरे लोग तुम्हारे चूतड़ पर ठोकरें मारते रहें!" येफ़ीम ने उठते हुए हँसकर कहा। "मिख़ाइलो काका, इससे पहले कि कोई इन्हें यहाँ देखे इन लोगों को यहाँ से चल देना चाहिए। ज्यों ही हम लोग ये किताबें बाँटना शुरू करेंगे वैसे ही हाकिम लोग यह तलाश करने लगेंगे कि ये किताबें लाया कौन था? कोई कह देगा, 'याद है वे दो औरतें जो तीर्थ-यात्रा पर इधर आयी थीं...' "

"माँ, तुमने इतनी तकलीफ की इसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद!" रीबिन बीच में बोल उठा। "जब भी मैं तुम्हें देखता हूँ तो पावेल के बारे में सोचता रहता हूँ। तुम भी कितना अच्छा काम कर रही हो!"

उस समय उसका बर्ताव बड़ी नरमी का था और वह बड़ी हार्दिकता से

दाँत खोलकर मुस्करा रहा था। हवा ठण्डी थी पर वह बिना कोट पहने और क़मीज़ के बटन खोले खड़ा था; उसका सीना खुला हुआ था। माँ का हृदय प्रशंसा से भर उठा।

"कुछ ओढ़ लो," माँ ने बड़ी ममता से कहा, "ठण्डक है!"

"मेरे दिल में गर्मी है!" उसने उत्तर दिया।

तीनों लड़के आग के पास खड़े चुपचाप बातें करते रहे और वह रोगी भेड़ की खाल के कोट में लिपटा हुआ उनके पैरों के पास लेटा रहा। आकाश पर अन्धकार छँटने लगा, परछाइयाँ ग़ायब होने लगीं ओर सूर्योदय के पूर्वाभास से पत्तियाँ हिलने लगीं।

"अच्छा, तो अब फिर कब मुलाक़ात हो कौन जाने!" रीबिन ने सोफ़िया की तरफ़ हाथ बढ़ाते हुए कहा। "शहर में आपको ढूँढना हो तो कैसे ढूँढ़ा जाये?"

"तुम मेरा पता लगा लेना!" माँ ने कहा।

तीनों लड़के धीरे-धीरे सोफ़िया के पास आये और कुछ सिटपिटाकर शिष्टता के भाव से उन्होंने उससे हाथ मिलाया। यह स्पष्ट था कि उनमें से हर एक मन की मन एक गुप्त उल्लास का अनुभव कर रहा था। कितना सुखद और मित्रतापूर्ण था यह उल्लास! और यह भावना उनके लिए इतनी नयी थी कि वे सिटपिटा गये थे। रात के जागरण के कारण उनींदी आँखों से मुस्कराते हुए वे चुपचाप सोफ़िया को घूरते हुए पैर बदलते रहे।

"जाने से पहले थोड़ा-सा दूध क्यों न पी लीजिये?" याकोव ने पूछा।

"है भी दूध?" येफ़ीम ने टोका।

"नहीं है," इगनात ने खिसियाकर अपने बाल पीछे करते हुए कहा, "मुझसे गिर गया..."

तीनों लड़के हँस दिये।

यद्यपि वे दूध की बातें कर रहे थे, पर माँ समझ गयी कि वे किसी और ही बात के बारे में सोच रहे हैं - उनके हृदय उसके और सोफ़िया के प्रति सहृदयता से भरे हुए थे और वे उनके लिए शुभ कामनाएँ कर रहे थे। सोफ़िया ने भी यही अनुभव किया, वह कुछ झेंप गयी और वह नम्रतावश केवल इतना ही कह सकी :

"साथियो, आपको बहुत-बहुत धन्यवाद!"

लड़कों ने एक-दूसरे को इस तरह देखा मानो सोफ़िया के शब्दों ने सहसा उनमें प्रेरणा फूँक दी हो।

रोगी ज़ोर से खाँसा। अलाव में अँगारों की चमक ख़त्म हो गयी।

"अच्छा, सलाम!" किसानों ने धीरे से कहा और यह दुख-भरा शब्द दोनों

औरतों के कान में बड़ी देर तक गूँजता रहा।

पौ फट रही थी। दोनों औरतें प्रातःकाल के धूमिल प्रकाश में जंगल के रास्ते पर धीरे-धीरे आगे बढ़ती जा रही थीं।

"कितना अच्छा रहा!" माँ ने कहा; वह सोफ़िया के पीछे-पीछे चल रही थी। "बिल्कुल स्वप्न मालूम होता है! लोग सच्चाई को जानना चाहते हैं, सचमुच! बिल्कुल वही हालत है जैसी बड़े दिन को या ईस्टर वाले दिन सुबह प्रार्थना शुरू होने से पहले गिरजाघर में होती है : अभी पादरी नहीं आया है, चारों ओर अँधेरा और एक अजीब ख़ामोशी है। लेकिन धीरे-धीरे लोग जमा होते जाते हैं... पहले एक मूरत के सामने मोमबत्ती जलायी जाती है फिर दूसरी मूरत के सामने, धीरे-धीरे अँधेरा छँटता जाता है और ईश्वर का घर प्रकाश से भर उठता है।"

"बिल्कुल सच कहा है!" सोफ़िया ने उल्लसित स्वर में कहा। "फर्क बस यह है कि यहाँ ईश्वर का घर पूरा संसार है!"

"पूरा संसार!" माँ ने सिर हिलाकर कुछ सोचते हुए उसके शब्द दुहराये। "काश यह सच होता!.. तुम इतनी अच्छी तरह बोली – इतनी अच्छी तरह कि क्या कहूँ! मैं तो डर रही थी कि वे लोग तुम्हें पसन्द नहीं करेंगे..."

सोफ़िया एक क्षण तक चुप रही।

"जब आदमी उनके साथ होता है तो उसमें ज़्यादा सादगी आ जाती है," सोफ़िया ने आख़िरकार बहुत शान्त भाव से गम्भीर स्वर में कहा।

वे रीबिन और उस रोगी और उन लड़कों की बातें करती हुई आगे बढ़ती गयीं, जिन्होंने सोफ़िया की बातें बड़े ध्यान से सुनी थीं, जो उनके सामने कुछ सिटपिटा भी गये थे और जिन्होंने उनके छोटे-से-छोटे आराम का ख़याल रखकर उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की थी। शीघ्र ही वे खेतों में पहुँच गयीं और सूरज उनका स्वागत करने को निकला। यद्यपि सूरज अभी दिखायी नहीं दे रहा था, पर उसने अपनी गुलाबी निर्मल किरणों का पंखा आकाश में खोल दिया और घास पर पड़ी हुई ओस की बूँदें वसन्त के पुलकित उल्लास के साथ नाना रंगों में चमक उठीं। चिड़ियाँ जाग उठीं और उन्होंने अपने हर्षित कलरव से प्रातःकाल के वातावरण को मुखरित कर दिया। मोटे-मोटे कौवे हवा में अपने भारी पंख मारते निरन्तर काँव-काँव करते हुए उधर से गुजरे। कहीं ओरिओल पक्षी की सीटी जैसी आवाज़ सुनायी दी। दूर-दूर तक खुली जगहें दिखायी देने लगीं मानो निकलते हुए सूरज का अभिनन्दन करने के लिए पहाड़ियों पर से रात की चादर उतार ली गयी हो।

"कभी-कभी ऐसा होता है कि आदमी बात करता रहता है, लेकिन उसकी एक बात भी समझ में नहीं आती, सहसा वह कोई बहुत ही सीधा-सादा शब्द

कहता है और सारी बातें साफ़ समझ में आ जाती हैं!" माँ ने विचारमग्न होकर कहा। "उस रोगी के साथ यही बात थी। कारख़ानों में और दूसरी जगहों पर मज़दूरों से जिस तरह काम लिया जाता है, उसके बारे में मैं बहुत कुछ सुन चुकी हूँ और मैं ख़ुद भी बहुत कुछ जानती हूँ। लेकिन धीरे-धीरे इन बातों की आदत पड़ जाती है और दिल पर इन बातों का असर नहीं होता। लेकिन उसने जो कुछ कहा वह बहुत ही भयानक था! बहुत ही शर्मनाक था! हे भगवान! क्या ऐसा भी होता है कि लोग अपनी जान तक निकाल देते हैं सिर्फ़ इसलिए कि उनके मालिक उनके साथ ऐसा क्रूर मज़ाक़ कर सकें? यह सरासर अन्याय है!"

माँ के विचार इस आदमी की ज़िन्दगी पर केन्द्रित हो गये और उसकी स्मृति में न जाने कितने लोगों के चित्र घूम गये जिनके बारे में उसने सुना था पर जिन्हें वह भूल गयी थी।

"लगता है कि वे अपने पेट में इतना ज़्यादा ठूँस चुके हैं कि अब उन्हें मतली होने लगी है! बहुत दिन की बात है, गाँव का एक हाकिम था जिसने हुक्म दे रखा था कि उसका घोड़ा जब भी गाँव से होकर गुजरे तो सब किसान झुककर घोड़े को सलाम करें और जो नहीं करता था उसे वह गिरफ़्तार करवा देता था। वह ऐसा क्यों करता था? कोई वजह तो समझ में आती नहीं इसकी!"

सोफ़िया धीरे-धीरे एक गीत गुनगुनाने लगी जिसमें प्रातःकाल की ताज़गी और उल्लास था...

7

माँ के जीवन की धारा एक विचित्र शान्त गति से बहती रही। कभी-कभी तो इस शान्ति पर उसे स्वयं भी आश्चर्य होता। उसका बेटा जेल में था और वह जानती थी कि उसे कठोर दण्ड मिलेगा, फिर भी जब कभी वह इस विषय में सोचती उसके मस्तिष्क में अन्द्रेई और फ़्योदोर तथा अन्य लोगों के चित्र घूम जाते। माँ की आँखों के आगे अपने बेटे का चित्र घूमने लगा, जिसमें वे सभी लोग शामिल थे जो जीवन के सुख-दुख में उसके साथ थे। माँ उसके बारे में सोचने लगी और उसके जाने बिना ही ये विचार चारों दिशाओं में फैल गये। पतली-पतली तेज़ किरणों की तरह वे हर जगह पहुँच गये और मानो सारी घटनाओं पर प्रकाश डालने के लिए और हर चीज़ को एक ही सूत्र में बाँधा देने के प्रयत्न में इन विचारों ने हर चीज़ को छू लिया हो। इन भटकते हुए विचारों के कारण वह अपना ध्यान किसी एक चीज़ पर, विशेषतः अपने बेटे को देखने की लालसा और उसके कारण हृदय में उठने वाली आशंकाओं पर, केन्द्रित न कर सकी।

शीघ्र ही सोफ़िया कहीं चली गयी और पाँच दिन बाद जब लौटकर आयी तो बहुत ख़ुश और मगन थी। आने के कुछ ही घण्टे बाद वह फिर कहीं ग़ायब हो गयी और अब की बार दो हफ़्ते बाद लौटकर आयी। ऐसा मालूम होता था कि वह अपने जीवन की यात्रा बड़े-बड़े गोल चक्करों में पूरी करती थी, कभी-कभी वह अपने भाई के पास लौट आती थी और उसके आते ही सारे घर में साहस और संगीत का संचार हो जाता था।

माँ को संगीत से रुचि हो चली। जब वह कोई गाना सुनती तो उसे ऐसा लगता कि उसके सीने में गर्म लहरें उठकर उसके दिल पर थपेड़े मार रही हैं। इन थपेड़ों से उसके हृदय का स्पन्दन और भी समान गति से चलने लगा और उसमें ऐसे विचार उत्पन्न होने लगे जो अच्छी तरह सींची गयी पृथ्वी में गहराई तक जमे हुए बीजों की तरह संगीत के प्रभाव से बड़े सहज ढंग से शब्दों के सुन्दर फूलों के रूप में प्रस्फुटित होते थे।

माँ के लिए सोफ़िया का फूहड़पन असह्य था; घर-भर में उसके कपड़े, सिगरेटें और सिगरेटों की राख बिखरी रहती थी। सोफ़िया के आवेशपूर्ण भाषण तो उसके लिए और भी असह्य थे। निकोलाई जिस शान्त आत्म-विश्वास और कोमल गम्भीरता के साथ बोलता था, उससे सोफ़िया का बोलने का ढंग बिल्कुल उल्टा था। उसे सोफ़िया ऐसी लगती थी कि जैसे कोई किशोरावस्था में बड़े-बूढ़ों की बराबरी करने की उत्सुकता दिखा रहा हो और इसी भावना के अधीन वह दूसरों को ऐसे देखती थी जैसे वे विचित्र खिलौने हों। वह हमेशा श्रम के उदात्त स्थान की बातें करती थी, मगर अपने फूहड़पन के कारण माँ का काम बढ़ाती रहती थी; वह आजादी की लम्बी-चौड़ी बातें करती थी, फिर भी माँ यह देखती थी कि वह अपनी असहिष्णुता और लगातार बहस करते रहने के कारण दूसरों को सताती रहती थी। वह अन्तर्विरोधों का भण्डार थी और इसीलिए माँ हमेशा उसके साथ अपने व्यवहार में बहुत सतर्क रहती थी और उसके प्रति माँ के हृदय में वह अपरिवर्तनशील सद्भावना नहीं थी जो निकोलाई के प्रति थी।

दिन-प्रतिदिन एक ही ढर्रे पर अपना जीवन बिताते हुए भी वह हमेशा चिन्ताकुल रहता था; सुबह आठ बजे चाय पीता और अखबार पढ़कर माँ को ख़बरें सुनाता। उसकी बातें सुनते समय माँ के सामने आश्चर्यजनक स्पष्टता के साथ यह चित्र खिंच जाता कि जीवन का क्रूर चक्र कितनी निर्ममता से लोगों को पीसकर धन-दौलत से परिवर्तित कर देता था। उसने देखा कि निकोलाई और अन्द्रेई में बहुत-सी बातें एक जैसी थीं। उक्रइनी की तरह ही वह भी लोगों के बारे में बिना किसी द्वेष के बातें करता था, दुनिया की खराबियों के लिए वह सब को दोष देता था, पर नये जीवन के प्रति उसकी आस्था न तो अन्द्रेई जितनी

दृढ़ थी न उतनी चित्ताकर्षक ही। वह हमेशा एक कठोर और ईमानदार न्यायाधीश के गम्भीर स्वर में बोलता था और यद्यपि भयानक बातों की चर्चा करते समय उसके होंठों पर एक खेद-भरी शान्त मुस्कराहट खेलती थी, पर उसकी आँखों में एक कठोर भावहीन चमक होती थी। यह सब देखकर माँ समझने लगी थी कि वह कभी किसी को किसी बात के लिए माफ़ नहीं करेगा – वह माफ़ कर ही नहीं सकता था। माँ को उस पर तरस आता था क्योंकि वह जानती थी कि अपने आपको कठोर बनाने में कितना कष्ट होता था। दिन-प्रतिदिन वह उसे ज़्यादा चाहने लगी।

नौ बजे वह काम पर चला जाता था। उसके चले जाने के बाद माँ घर साफ़ करती, खाना तैयार करती, नहा-धोकर साफ़ कपड़े पहनती और अपने कमरे में बैठकर किताबों की तस्वीरें देखती। उसने पढ़ना सीख लिया था पर उसे पढ़ने में इतनी मेहनत पड़ती थी कि वह शीघ्र ही थक जाती थी और शब्दों को उनके उचित क्रम में नहीं समझ पाती थी। लेकिन तस्वीरें देखने में उसे बच्चों जैसा आनन्द आता था। इन तस्वीरों ने उसके सामने एक नये और अद्‌भुत जगत का रहस्योद्‌घाटन किया जिसे वह समझती थी और जो उसे न्यायसंगत मालूम होता था। उसकी आँखों के सामने बड़े-बड़े शहर, सुन्दर इमारतें, मशीनें, जहाज, स्मारक और मनुष्य के हाथों की रची हुई अपार सम्पदा और अपने वैविध्य से चकित कर देने वाले प्रकृति के असंख्य अनुपम उपहारों का चित्र घूम जाता। जीवन की परिधि निरन्तर बढ़ती ही गयी, एक-एक करके नयी-नयी आश्चर्यजनक चीज़ें उसकी आँखों के सामने आती गयीं और अपनी अपार निधि तथा अक्षय सौन्दर्य से उसकी तृषित आत्मा में प्रेरणा का संचार करती रहीं। उसे पशु-ज्ञान की चित्रावली देखने में बड़ी रुचि थी। यह पुस्तक यद्यपि एक विदेशी भाषा में थी फिर भी उससे उसे पृथ्वी की सम्पदा तथा सौन्दर्य और उसके विस्तार का स्पष्ट ज्ञान हो गया।

"दुनिया कितनी बड़ी है!" एक दिन उसने निकोलाई से कहा।

वह कीड़ों को, विशेष रूप से तितलियों को देखकर बहुत ख़ुश होती थी। वह उनके चित्र देखती और आश्चर्य करती।

"निकोलाई इवानोविच, कितनी सुन्दर है न!" वह कहती। "चारों तरफ़ कितनी सुन्दरता बिखरी पड़ी है जिसका हमें ज्ञान भी नहीं है, जो हमारे सामने से निकल जाती है और हमें पता भी नहीं चलता। लोग इधर से उधर भागते फिरते हैं, न कुछ जानते हैं, न कुछ देखते हैं – उनके पास न समय ही होता और न ही इच्छा। अगर हमें पृथ्वी की सम्पदा का ज्ञान होता और यह मालूम होता कि उस पर कितने प्रकार के जीव रहते हैं तो हमारे जीवन में कितना सुख होता। और

सब चीज़ें सब के लिए हैं, हर चीज़ हर एक के लिए है – है न?"

"है तो!" निकोलाई ने मुस्कराकर कहा और एक अन्य सचित्र पुस्तक उसे ला दी।

लोग बहुधा शाम को उससे मिलने आते थे। उसके अतिथियों में ये लोग होते थे : अलेक्सेई वासील्येविच, काली दाढ़ी और पीले चेहरे वाला ख़ूबसूरत-सा आदमी जो बहुत रोबदार और अल्पभाषी था; रोमान पेत्रोविच, जिसका सिर गोल था और जिसके चेहरे पर मुँहासे थे ओर जो हर दम किसी न किसी बात पर बड़े खेद के साथ चिचकारी भरता रहता था; इवान दनीलोविच, जो छोटे कद का दुबला-पतला आदमी था, जिसकी दाढ़ी नुकीली और आवाज़ बहुत ऊँची थी – वह बहुत फुर्तीला और बातूनी और खंजर की तरह तेज़ था; येगोर, जो हमेशा अपने आप पर, अपने साथियों पर और दिन-ब-दिन बढ़ते हुए रोग पर हँसता रहता था। दूसरे लोग भी थे जो दूर-दूर के शहरों से आते थे। निकोलाई उनके साथ बड़ी देर-देरे तक शान्त भाव से बातें करता था। उसकी बातों का विषय हमेशा एक ही रहता था – दुनिया की श्रमिक जनता। वे जोश में आकर हाथ हिला-हिलाकर बहस करते थे और चाय बहुत ज़्यादा पीते थे। कभी-कभी जब वे बातें करते तो निकोलाई पर्चे लिखता और अपने साथियों को पढ़कर सुनाता। वे फ़ौरन उन्हें नकल कर लेते और माँ बड़ी सावधानी से मसविदे के फटे हुए काग़ज़ बटोरकर जला देती।

उनके लिए चाय बनाते समय माँ आश्चर्य करती कि वे ज़िन्दगी और मेहनतकश जनता के भविष्य के बारे में, उनके बीच जल्दी से जल्दी सच्चाई का प्रचार करने और उनमें उत्साह भरने की सर्वोत्तम विधियों के बारे में कितने जोश से बातें करते थे। कभी-कभी वे बहस करते-करते क्रुद्ध भी हो जाते थे और एक-दूसरे पर अपमानजनक आरोप लगाते थे, पर बहस जारी रखते थे।

माँ को ऐसा लगता था कि मज़दूरों के जीवन को वह उनसे ज़्यादा अच्छी तरह जानती है। उसे ऐसा अनुभव होता था कि जिस काम का उन्होंने बीड़ा उठाया था उसकी विशालता को वह ज़्यादा अच्छी तरह समझती थी और इसलिए वह उन्हें किंचित तिरस्कार की दृष्टि से देखती थी जिस प्रकार कोई बड़ा आदमी उन बच्चों को पति-पत्नी का नाटक खेलते हुए देखता है जिन्हें इस सम्बन्ध की मुसीबतों का कुछ भी ज्ञान नहीं होता। अनायास ही वह उनके भाषणों की तुलना अपने बेटे और अन्द्रेई के भाषणों से करने लगती और उसे उनमें साफ़ एक अन्तर दिखायी देता जिसे वह शुरू-शुरू में नहीं समझ पाती थी। कभी-कभी तो उसे ऐसा लगता कि यहाँ लोग मज़दूरों की बस्ती के मुकाबले में चिल्लाते ज़्यादा थे।

" वे ज़्यादा जानते हैं, इसीलिए ज़्यादा चिल्लाते भी हैं," वह उनके व्यवहार

की व्याख्या इस प्रकार करती।

परन्तु बहुधा उसे यह आभास होता कि वे लोग जानबूझकर एक-दूसरे को उत्तेजित करते थे और अपने उत्साह का दिखावा ज़्यादा करते थे, मानो हर आदमी अपने साथियों के सामने यह सिद्ध कर देना चाहता हो कि उसके लिए सत्य का जितना महत्त्व है उतना दूसरों के लिए नहीं; कुछ लोग इस पर बुरा मान जाते और बारी-बारी से स्वयं यह सिद्ध करने के लिए कि वे ही सत्य के सबसे बड़े पुजारी हैं, भोंडे और कटु तर्कों का प्रयोग करते। हर आदमी दूसरे से ऊँचा कूदने का प्रयत्न करता ओर माँ को इस पर बड़ी चिन्ता और दुख होता।

"वे पावेल और उसके साथियों को बिल्कुल भूल ही गये हैं," वह काँपती हुई भवों और विनय-भरी आँखों से उन्हें एकटक देखते हुए सोचती रहती।

यद्यपि वह उन्हें समझ न पाती फिर भी वह उनकी सारी बहसें बड़े ध्यान से सुनती, पर वह उनके शब्दों का तात्पर्य समझने का प्रयत्न करती और यह बात उसके सामने स्पष्ट हो गयी कि जब मज़दूरों की बस्ती में नेकी पर बहस होती थी, तब उसे बिना किसी संकोच के एक अखण्ड वस्तु के रूप में स्वीकार किया जाता था, लेकिन यहाँ उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाते थे; वहाँ भावनाएँ ज़्यादा गहरी और दृढ़ होती थीं, यहाँ तीव्र तर्क-वितर्क से उन्हें खण्ड-खण्ड कर दिया जाता था। यहाँ पुरानी चीज़ों को ढा देने की बातें ज़्यादा की जाती थीं, वहाँ भविष्य की कल्पना पर ज़ोर दिया जाता था और यही कारण था कि उसके बेटे और अन्द्रेई के शब्द उसको अधिक प्रिय थे और ज़्यादा अच्छी तरह उसकी समझ में आते थे...

उसने देखा कि जब कोई मज़दूर निकोलाई से मिलने आता था तो उसका बोलचाल का ढंग और व्यवहार ज़रूरत से ज़्यादा निःसंकोच और उन्मुक्त हो जाता था। उसके चेहरे पर एक मिठास आ जाती थी और वह एक नये ही ढंग से बोलने लगता था - शायद ज़्यादा खुलकर साफ़-साफ़ शब्दों में या शायद ज़्यादा बेपरवाही से।

"वह इस ढंग से बातें करने की कोशिश कर रहा है कि यह आदमी उसकी बात समझ ले!" माँ सोचती।

पर इससे उसे सन्तोष नहीं होता था। वह देखती थी कि मज़दूर भी कुछ सकुचाया-सा रहता था, जैसे अन्दर से किसी ने उसे जकड़ लिया हो और इसलिए वह निकोलाई के साथ उतना खुलकर और आसानी से बात नहीं कर सकता था जितना खुलकर वह उसकी जैसी साधारण मज़दूर औरत के साथ बातें करता था। एक बार जब निकोलाई कमरे से बाहर गया तो उसने वहाँ बैठे हुए एक नौजवान से कहा :

"तुम डरते क्यों हो? तुम कोई स्कूली बच्चे की तरह अपने अध्यापक को सबक सुनाने तो आये नहीं हो..."

मज़दूर ने खीसें निकाल दीं :

"अपनी संगत न हो तो सभी का रंग फीका पड़ जाता है... कुछ भी हो, वह हमारे जैसा मज़दूर तो है नहीं..."

कभी-कभी साशा भी आती। वह ज़्यादा देर नहीं रुकती थी और बिना हँसे या मुस्कराये सिर्फ़ काम की ही बातें करती थी और चलते वक़्त हमेशा माँ से कहती थी :

"पावेल मिखा़इलोविच की क्या ख़बर है?"

"अच्छा है – भगवान की कृपा से ख़ुश है!"

"उससे मेरा सलाम कहना!" लड़की इतना कहकर ग़ायब हो जाती।

एक बार माँ ने उससे शिकायत करते हुए कहा कि पावेल को इतने दिन से जेल में बन्द कर रखा है, आख़िर उस पर मुक़दमा क्यों नहीं चलाया जाता। साशा की त्योरियों पर बल पड़ गये, पर वह कुछ बोली नहीं लेकिन उसकी उँगलियाँ फड़कने लगीं।

माँ का जी तो बहुत चाहता था कि उससे कह दे :

"मैं जानती हूँ कि तुम उसे प्यार करती हो..."

पर उसका साहस न होता था। लड़की की गम्भीर आकृति, उसके भिंचे हुए होंठ और उसके बात कहने के रूखे ढंग के आगे कोई प्यार-भरी बात कही ही नहीं जा सकती थी। आह भरकर माँ उसका बढ़ा हुआ हाथ थाम लेती और कसकर दबा देती।

"मेरी बच्ची, तू भी कितनी दुखी है..." माँ सोचती।

एक दिन नताशा आयी। माँ को वहाँ देखकर वह बहुत ख़ुश हुईं उसने माँ को प्यार किया। इसके बाद नताशा ने सहसा चुपके से कहा :

"मेरी माँ गुजर गयीं, बेचारी कितनी अच्छी थीं!.."

यह कहकर उसने अपना सिर झटका और जल्दी से अपनी आँखें पोंछकर बोली :

"बड़े दुख की बात है! अभी वह पचास वर्ष की भी नहीं थीं। वह अभी और बहुत दिन ज़िन्दा रह सकती थीं। लेकिन फिर मैं सोचती हूँ कि जैसी ज़िन्दगी वह बसर कर रही थीं उससे तो मौत ही अच्छी थी। वह हमेशा अकेली रहीं, कभी किसी ने उनसे प्यार नहीं किया, किसी को उनकी ज़रूरत नहीं थी और वह मेरे पिता की डाँट-फटकार से काँपती रहती थीं। यह भी कोई ज़िन्दगी है? लोग ज़िन्दा रहते हैं इस उम्मीद में कि आगे चलकर उनका जीवन बेहतर होगा

लेकिन मेरी माँ के लिए भविष्य में भी अपमानों के अलावा और कुछ नहीं था..."

"नताशा, तुम सच कहती हो!" माँ ने कुछ सोचते हुए कहा। "लाग इस उम्मीद में ज़िन्दा रहते हैं कि आगे चलकर उनका जीवन बेहतर होगा, लेकिन अगर भविष्य के लिए कोई आशा न हो तो फिर किस काम की ऐसी ज़िन्दगी?" और माँ ने लड़की का हाथ थपककर कहा, "तो अब तुम अकेली रह गयी?"

"बिल्कुल अकेली!" नताशा ने लापरवाही से कहा।

"कोई बात नहीं!" माँ ने थोड़ी देर बाद मुस्कराकर कहा। "अच्छे लोग ज़्यादा दिन तक अकेले नहीं रहते – कोई न कोई उनके साथ हो ही जाता है..."

8

नताशा कपड़ा बुनने के एक कारख़ाने के स्कूल में पढ़ाने लगी और माँ ने उसे ग़ैर-क़ानूनी पुस्तिकाएँ, पर्चे और अखबार पहुँचाने का काम अपने जिम्मे ले लिया।

यही उसका काम हो गया। महीने में कई बार वह मठवासिनी या घर की बुनी हुई लैसें बेचनेवाली, या शहर की शरीफ़ औरत या सन्त-सधुनी का भेस बदलकर कन्धे पर थैला डाले या हाथ में सूटकेस लिये सारे इलाके का चक्कर लगाती। रेलगाड़ियों में और जहाजों पर, होटलों और सरायों में हर जगह वह वही सीधी-सादी गम्भीर औरत बनी रहती, जो अजनबियों से ख़ुद बातचीत शुरू करती और निडर होकर अपनी मिलनसारी और बहुत दुनिया देखे हुए व्यक्ति के आत्म-विश्वास के कारण सब का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती।

उसे लोगों से बात करना, उनके क़िस्से और शिकायतें सुनना और यह मालूम करना अच्छा लगता था कि उन्हें कौन-सी चीज़ें विस्मय में डाल देती थीं। वह ऐसे आदमी से मिलकर बहुत ख़ुश होती थी जिसे हर चीज़ से गहरा असन्तोष हो और जिसका असन्तोष भाग्य के थपेड़ों के विरुद्ध प्रतिरोध करते हुए भी हमेशा सुस्पष्ट प्रश्नों के उत्तर की खोज में रहे। उसके सामने मानव जीवन का व्यापक चित्र फैला हुआ था जिसमें हर आदमी दो वक़्त की रोटी कमाने के लिए जान लड़ाकर संघर्ष करता है। हर तरफ़ वह लोगों को धोखा देने, उनसे कुछ छीन लेने, उनका ख़ून पी लेने और उनकी मेहनत से एक-एक बूँद मुनाफा निचोड़ लेने के निर्लज्ज और दिल दहला देने वाले प्रयत्न देखती थी। वह देखती थी कि पृथ्वी पर हर चीज़ का बाहुल्य था फिर भी आम लोग कौड़ी-कौड़ी को मुहताज रहते थे और इस प्रचुर सम्पदा के बावजूद उन्हें भर-पेट भोजन नहीं मिलता था। शहरों के गिरजाघरों में सोने-चाँदी के अम्बार लगे थे जिसकी ईश्वर को कोई ज़रूरत नहीं थी और इन्हीं गिरजाघरों के फाटकों पर सर्दी में ठिठुरते हुए भिखारी

पैसा–धेला पा जाने की आस में हाथ फैलाये खड़े रहते थे। यह सब कुछ वह पहले भी देख चुकी थी – धन–दौलत वाले गिरजाघर, पादरियों की जरी और कमखाब की पोशाकें, ग़रीबों की झोपड़ियाँ और उनके लज्जास्पद चीथड़े। पर उस समय वह इन सब बातों को स्वाभाविक समझती थी, लेकिन अब यह उसके लिए असह्य हो गया था और इसे वह ग़रीबों का अपमान समझती थी, क्योंकि वह जानती थी कि वे गिरजाघर के अधिक निकट थे और अमीरों की अपेक्षा उन्हें गिरजाघर की ज़्यादा आवश्यकता थी।

उसने ईसा मसीह के जो चित्र देखे थे और उनके बारे में जो कहानियाँ सुनी थीं उनसे वह जानती थी कि वह बहुत साधारण कपड़े पहनते थे और ग़रीबों के मित्र थे। पर गिरजाघरों में वह उनकी मूर्ति को चमकदार सोने और रेशम में सजा हुआ देखती थी और अब ग़रीब लोग अपना दुखड़ा लेकर उनके पास आते थे तो मानो उन्हें देखते ही घृणा से इस रेशम में सरसराहट होने लगती थी। अनायास ही उसे रीबिन के शब्द याद आ जाते थे :

"उन्होंने हमें ईश्वर के मामले में भी बेवक़ूफ़ बना दिया है!"

उसे यह मालूम भी न हुआ कि कैसे धीरे–धीरे उसका प्रार्थना करना कम होता गया था, पर वह ईसा मसीह और उन लोगों के बारे में दिन–प्रतिदिन अधिक सोचने लगी जो कभी ईसा मसीह का नाम भी नहीं लेते थे और जिन्हें शायद उनके बारे में जानकारी भी बहुत कम थी, पर जो उनके बताये हुए ढंग से और उनके सिद्धान्तों के अनुसार जीवन व्यतीत करते थे, इस पृथ्वी को ग़रीबों का राज्य समझते थे और उसकी सम्पदा को सबके बीच बाँटने के लिए प्रयत्नशील थे। वह इसके बारे में बहुत सोचती थी, उसके ये विचार बढ़ते गये और इन विचारों की जड़ें गहराई तक जम गयीं; वह जो कुछ देखती या सुनती थी उस सब का समावेश इन विचारों में था। इन विचारों ने बढ़कर प्रार्थना की ज्योति धारण कर ली और सारा अन्धकारमय जगत, सारा जीवन और सारी जनता इस अखण्ड ज्योति से आलोकित हो उठी। माँ को ऐसा लगा कि ईसा मसीह के प्रति उसका प्रेम और भी गहरा हो गया था; ईसा मसीह के प्रति तो उसके हृदय में हमेशा ही से था – एक अस्पष्ट–सी कोमल भावना, एक मिश्रित भाव जिसमें भय अभिन्न रूप से आशा के साथ और हर्ष वेदना के साथ सम्बद्ध था। अब ईसा मसीह बदल गये थे, उनका स्वरूप अधिक उदात्त हो गया था और उन तक आसानी से पहुँचा जा सकता था; उनका रूप अधिक ज्योतिर्मय और उल्लासपूर्ण हो गया था। ऐसा मालूम होता था कि उन लोगों ने, जो अपनी विनम्रता के कारण उनका नाम – मनुष्य के आर्त्त मित्र का नाम – भी नहीं लेते थे, उनके नाम पर अपने ख़ून की नदियाँ बहाकर उन्हें अमर बना दिया था। हर बार दौरा करके जब माँ निकोलाई

के पास लौटती तो बहुत ख़ुश होती और रास्ते में जो कुछ देखती या सुनती उसके प्रति उसके हृदय में बड़ा उत्साह होता और यह सन्तोष होता कि उसने अपना काम पूरा कर दिया।

"इस तरह घूमने-फिरने और इतनी बहुत-सी चीज़ें देखने से बहुत फ़ायदा होता है!" वह निकोलाई से अक्सर शामों को कहा करती थी। "इससे आदमी ज़िन्दगी को समझता है। आम लोगों को ढँकेलकर ज़िन्दगी की बाहरी सीमा पर पहुँचा दिया जाता है, जहाँ वे अँधेरे में सड़ते हैं और यही प्रश्न करते रहते हैं कि आख़िर ऐसा क्यों है। उन्हें क्यों इस तरह दुतकार दिया जाता है? जब खाने को इतना मौजूद है, तो वे भूखों क्यों मरते हैं? जब इतना ज्ञान मौजूद है, तो वे जाहिल क्यों रहते हैं? और वह दया-निधान भगवान क्यों यह सब देखता रहता है, जिसके लिए अमीर-ग़रीब में कोई अन्तर नहीं है, जो सब उसी की प्रिय सन्तान हैं? लोग जब अपनी ज़िन्दगी के बारे में सोचते हैं तो वे उत्तेजित हो उठते हैं, वे इस बात को समझते हैं कि अगर उन्होंने कोई रोक-थाम न की तो अन्याय उनका नाम-निशान तक मिटा देगा!"

माँ की यह इच्छा प्रतिदिन प्रबल होती गयी कि वह आम लोगों से उनके जीवन के अन्यायों के बारे में बात करे; कभी-कभी तो उसके लिए इस इच्छा को दबाना भी कठिन हो जाता...

निकोलाई जब भी उसे तन्मय होकर तस्वीरें देखता हुआ पाता वह उसे दुनिया की अनोखी बातों के बारे में बताता। माँ जब सोचती कि मनुष्य ने कितने बड़े-बड़े कामों की बीड़ा उठाता है तो वह दंग रह जाती।

"क्या यह सम्भव है?" वह संशय के भाव से पूछती।

अपनी भविष्यवाणी में अटल आस्था के साथ वह बड़ी स्नेह-भरी दृष्टि से उसे अपनी ऐनक के पीछे से देखता और माँ को भविष्य के बारे में कहानियाँ सुनाता :

"मनुष्य की इच्छाओं की कोई सीमा नहीं है और उसकी शक्ति अक्षय है! पर दुनिया की आत्मिक समृद्धि बहुत धीरे-धीरे होती है, क्योंकि उस आदमी को, जो स्वतन्त्र रहना चाहता है, ज्ञान के बजाय पैसा बटोरना पड़ता है। लेकिन जब लोग इस धन के लोभ और बेगार से मुक्त हो जायेंगे तब..."

माँ की समझ में उसकी बातें शायद ही कभी आती हों, पर धीरे-धीरे वह उस शान्त और गम्भीर आस्था को समझने लगी जो इन विचारों को प्रेरित करती थी।

"असल मुसीबत यह है कि पृथ्वी पर स्वतन्त्र लोग बहुत कम हैं!" वह कहता।

माँ की समझ में यह बात आती थी। वह ऐसे लोगों को जानती थी जिन्होंने अपने आपको लोभ और ईर्ष्या से मुक्त कर लिया था और वह जानती थी कि अगर ऐसे लोगों की संख्या बढ़ जाये तो जीवन इतना अन्धकारमय और भयानक न रह जाये, वह अधिक सरल, अधिक उज्ज्वल और अधिक उदात्त हो जाये।

"लोगों को ज़बरदस्ती बेरहम बना दिया जाता है!" निकोलाई ने उदास भाव से कहा।

माँ को उक्रइनी के शब्द याद आ गये और उसने सहमति में सिर हिला दिया।

9

निकोलाई रोज़ तो बहुत ठीक वक्त से घर लौट आता था, पर एक दिन वह कुछ देर से घर लौटा।

उसने अपना कोट उतारे बिना उत्तेजना से हाथ मलते हुए कहा :

"निलोवना, आज हमारा एक साथी जेल से भाग निकला। कौन हो सकता है? मैं पता नहीं लगा पाया।"

माँ की आँखों के आगे ज़मीन घूमने लगी।

"क्या पावेल हो सकता है?" उसने बैठकर चुपके से पूछा।

"हो तो सकता है," निकोलाई ने अपने कन्धे बिचकाकर कहा। "लेकिन हम उसे छुपायेंगे कैसे? हमें उसका पता कैसे लगेगा? मैं इस उम्मीद से बड़ी देर तक सड़कों का चक्कर लगाता रहा कि शायद वह कहीं मिल जाये। ख़ैर, यह तो मेरी मूर्खता थी लेकिन हमें कुछ करना चाहिए! मैं फिर बाहर जा रहा हूँ..."

"मैं भी चलती हूँ!" माँ ने ऊँचे स्वर में कहा।

"तुम येगोर के यहाँ जाकर मालूम कर आओ कि उसे तो कुछ नहीं मालूम?" निकोलाई ने उससे कहा और जल्दी से बाहर निकल गया।

माँ ने जल्दी से अपने सिर पर एक रूमाल बाँधा और सड़क पर उसके पीछे हो ली। उसके हृदय में आशाओं का तूफान उमड़ा पड़ रहा था; उसकी आँखों के आगे लाल-लाल धब्बे नाच रहे थे और उसका दिल इतनी तेज़ी से धड़क रहा था कि वह प्राय: भागने लगी। उसे अपने आस-पास की किसी चीज़ का होश नहीं था, वह सिर झुकाये एक अज्ञात सम्भावना की खोज में चली जा रही थी।

"शायद वह वहाँ मिल ही जाये!" यही आशा उसे आगे बढ़ा रही थी।

उसे बड़ी गर्मी लग रही थी और थकन के मारे वह हाँफ रही थी। येगोर के मकान की सीढ़ियों के पास पहुँचकर वह रुक गयी, उसकी ताकत ने जवाब

दे दिया। उसने पीछे मुड़कर देखा और सहसा चीख़ मारकर आँखें बन्द कर लीं। उसे ऐसा लगा कि उसने घर के फाटक पर निकोलाई वेसोवश्चिकोव को जेबों में हाथ डाले खड़े देखा था। पर जब उसने दुबारा देखा तो वहाँ कोई भी नहीं था।

"मैंने कल्पना की होगी!" उसने सीढ़ियों पर चढ़ते हुए सोचा, उसके कान चौकन्ने थे। नीचे आँगन में उसे किसी के धीमे क़दमों की आहट सुनायी दी। वह सीढ़ियों पर ठहरकर नीचे देखने लगी। फिर उसने वही चेचक के दागों से भरा हुआ चेहरा देखा, अब वह उसे देखकर मुस्करा रहा था।

"निकोलाई! निकोलाई!" माँ ने चिल्लाकर कहा और उससे मिलने के लिए सीढ़ियों के नीचे भागी। उसके हृदय में निराशा की वेदना थी।

"तुम चलती जाओ! चलती जाओ!" उसने अपना हाथ हिलाकर धीरे से कहा।

जल्दी-जल्दी सीढ़ियाँ लाँघकर वह येगोर के कमरे में घुसी; येगोर कोच पर लेटा हुआ था।

"निकोलाई... जेल से... भाग आया है!.." माँ ने हाँफते हुए कहा।

"कौन-सा निकोलाइ?" येगोर ने तकिये पर से सिर उठाकर भर्रायी हुई आवाज़ में पूछा। "दो निकोलाई हैं..."

"वेसोवश्चिकोव... वह यहीं आ रहा है!.."

"अच्छी बात है!"

इतने में निकोलाई स्वयं कमरे में आया और दरवाज़े का कुण्डा लगाकर वहाँ खड़ा अपने बालों पर हाथ फेरता हुआ मुस्कराता रहा। येगोर कुहनियों के बल उठ बैठा।

"आओ, आओ," उसने सिर हिलाकर कहा।

निकोलाई खीसें निकाले माँ की तरफ़ बढ़ा और उसका हाथ पकड़ लिया :

"अगर मैं तुमसे न मिला होता तो शायद मैं फिर जेल वापस चला जाता! मैं शहर में तो किसी को जानता नहीं था और अगर बस्ती में जाता तो मुझे वे फ़ौरन गिरफ़्तार कर लेते। इसलिए मैं सड़कों पर फिरता रहा और सोचता रहा कि मैंने भी भागकर कितनी बेवक़ूफ़ी की! यकायक मैंने पेलागेया निलोवना को जल्दी-जल्दी इधर आते देखा, बस मैं इनके पीछे हो लिया..."

"तुम बाहर निकले कैसे?" माँ ने पूछा।

वह कुछ झेंपता हुआ कोच के सिरे पर बैठ गया और उसने अपने कन्धे झटक दिये।

"बस इत्तफाक की बात है!" उसने कहा। "मैं बाहर टहल रहा था कि इतने

में फ़ौजदारी के कैदियों ने एक सन्तरी को पीटना शुरू कर दिया। इस सन्तरी को एक बार चोरी के जुर्म में राजनीतिक पुलिस से निकाला जा चुका है, इसलिए अब वह हर आदमी के ख़िलाफ़ जासूसी करता है, जाकर सारी ख़बरें पहुँचाता है और किसी को चैन से नहीं बैठने देता! इसीलिए लोग उसे पीट रहे थे। चारों तरफ़ गड़बड़ी मची हुई थी और दूसरे सन्तरी सीटियाँ बजाते हुए इधर से उधर भाग रहे थे। मैंने नज़र उठायी तो देखता क्या हूँ कि फाटक खुला हुआ है, बाहर चौक और शहर दिखायी दे रहा है। मैं धीरे-धीरे आगे बढ़ा... जैसे नींद में चल रहा होऊँ। जब मैं बाहर सड़क पर बहुत दूर निकल आया तो मुझे होश आया और मैं सोचने लगा कि मैं जाऊँगा कहाँ? पीछे मुड़कर देखा तो जेल का फाटक बन्द हो चुका था...''

''हुँः!'' येगोर ने कहा। ''तो हुजूर वापस क्यों नहीं लौट गये? जाकर शराफ़त से दरवाज़ा खटखटाते और उनसे कहते कि तुम्हें अन्दर ले लें। तुम उनसे कहते – 'माफ़ कीजियेगा, जनाब, मुझसे ज़रा-सी गल्ती हो गयी...' ''

''हाँ,'' निकोलाई हँसकर बोला, ''बेवक़ूफ़ी तो थी मेरी, लेकिन मुझे ऐसा लगा कि मैंने अपने साथियों के साथ ठीक नहीं किया, इस तरह किसी से कुछ कहे-सुने बिना चला आया... लेकिन मैं आगे बढ़ता रहा। रास्ते में मुझे एक जनाजा मिला, लोग किसी बच्चे की लाश को द''न करने ले जा रहे थे। मैं भी साथ हो लिया, सिर झुकाकर, किसी की तरफ़ देखे बिना मैं जनाजे के पीछे-पीछे चलने लगा। थोड़ी देर तक क़ब्रिस्तान में बैठकर मैं हवा खाता रहा, फिर यकायक मुझे एक बात सूझी...''

''बस एक बात?'' येगोर ने आह भरकर पूछा। ''मेरे ख़याल से इस एक ही बात से तुम्हारा दिमाग कहीं ठसाठस भर तो नहीं गया...''

वेसोवश्चिकोव सहृदयता से हँस दिया और सिर हिलाने लगा।

''अब मेरा दिमाग उतना ख़ाली नहीं है जितना किसी ज़माने में हुआ करता था। लेकिन मैं देखता हूँ कि येगोर इवानोविच तुम अभी तक बीमार हो...''

''जिसमें जो करने की सकत होती है वह वही करता है,'' येगोर ने खाँसकर कहा और बलगम थूक दिया। ''तुम अपना क़िस्सा सुनाओ!''

''मैं यहाँ के अजायबघर में चला गया। बड़ी देर तक वहाँ घूम-फिरकर चीज़ें देखता रहा और सोचता रहा : अब यहाँ से कहाँ जाऊँगा? मुझे अपने आप पर गुस्सा आ रहा था। और भूखा तो मैं इतना था कि अगर कोई मिल जाता तो कच्चा खा जाता! मैं बाहर सड़क पर निकलकर आगे चला। मैं हिम्मत हार चुका था... पुलिसवाले सबको बड़े ग़ौर से देख रहे थे। मैंने सोचा कि बस अभी पकड़ा जाऊँगा! इतने में यकायक मैंने पेलायेगा निलोवना को जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाये

इधर आते देखा। मैं एक तरफ़ को हट गया और फिर इनके पीछे-पीछे चला आया। बस यह हुआ!"

"मैंने तुम्हें नहीं देखा!" माँ ने अपराधी की तरह कहा। ध्यान से देखने पर उसे मालूम हुआ कि वेसोवश्चिकोव दुबला हो गया था।

"शायद साथी परेशान हो रहे होंगे," वेसोवश्चिकोव ने सिर खुजाते हुए कहा।

"और हाकिम भी तो परेशान हो रहे होंगे! तुम्हें उन पर तरस नहीं आता? वे तो बहुत परेशान होंगे!" येगोर ने कहा। वह अपना मुँह खोलकर इस तरह होंठ चलाने लगा मानो हवा चबा रहा हो। "अच्छा, मज़ाक़ तो बहुत हो लिया! अब हमें तुमको कहीं छुपाना पड़ेगा। मुझे इससे ख़ुशी तो बहुत है, पर यह काम आसान नहीं है। कमबख़्त, मैं उठ भी तो नहीं सकता..." उसने साँस लेने का प्रयत्न करते हुए कहा और दोनों हाथ सीने पर रखकर धीरे-धीरे अपना सीना मलने लगा।

"येगोर इवानोविच, तुम तो बहुत बीमार मालूम होते हो!" निकोलाई ने अपना सिर झुकाये हुए कहा। माँ ने एक आह भरी और उस छोटे-से कमरे में बड़ी चिन्ता से चारों तरफ़ नज़र दौड़ाकर देखा।

"तुम उसकी फिकर न करो!" येगोर ने उत्तर दिया। "माँ, अब ज़्यादा शरमाओ नहीं, उससे पावेल के बारे में पूछ लो!"

वेसोवश्चिकोव ने खीसें निकाल दीं।

"पावेल मजे में है। बिल्कुल ठीक है। वहाँ वही हमारा सरदार था। वही अफ़सरों से बात करता है और हर बात में सबसे आगे रहता है। सब लोग उसको बहुत मानते हैं..."

वेसोवश्किोव की बातों पर पेलागेया अपना सिर हिलाती रही और कनखियों से येगोर के फूले-फूले नीलवर्ण चेहरे को देखती रही। उसका चेहरा उसे अजीब सपाट, निश्चेष्ट और भावहीन मालूम हो रहा था। पर उसकी आँखों में स्फूर्ति और हर्ष की चमक थी।

"कुछ खाने को है – मुझे बहुत भूख लगी है!" सहसा निकोलाई ने कहा।

"माँ, वहाँ अल्मारी पर थोड़ी-सी रोटी रखी है," येगोर ने कहा। "फिर तुम ज़रा गलियारे में चली जाओ और वहाँ बायीं तरफ़ दूसरा दरवाज़ा खटखटाओ। एक औरत दरवाज़ा खोलेगी; तुम उससे कहना कि जो भी खाने को हो ले आये।"

"इतने खाने की क्या ज़रूरत है?" निकोलाई ने प्रतिरोध किया।

"तुम फ़िक्र न करो, बहुत नहीं होगा..."

माँ ने बाहर जाकर दरवाज़ा खटखटाया। उत्तर की प्रतीक्षा करते हुए वह येगोर के बारे में सोचने लगी :

"वह मर रहा है..."

"कौन है?" किसी ने कमरे में से पूछा।

"मुझे येगोर इवानोविच ने भेजा है!" माँ ने धीरे से उत्तर दिया। "उसने आपको बुलाया है..."

"अभी!" औरत ने दरवाज़ा खोले बिना उत्तर दिया। माँ ने एक क्षण प्रतीक्षा करने के बाद फिर दरवाज़ा खटखटाया। दरवाज़ा जल्दी से खुला और एक लम्बे कद की औरत ऐनक लगाये हुए बाहर गलियारे में आयी और वहाँ खड़ी-खड़ी जल्दी-जल्दी अपनी आस्तीनों की सिलवटें ठीक करने लगी।

"क्या चाहिए?" उसने रुखाई से पूछा।

"येगोर इवानोविच ने मुझे भेजा है..."

"आइये, चलें। लेकिन मेरा ख़याल है कि मैं आपसे पहले भी मिल चुकी हूँ, क्यों है न?" उस औरत ने धीरे से कहा। "आप कैसी हैं? यहाँ कुछ अँधेरा है..."

माँ ने उसे एक नज़र देखा और उसे याद आया कि उसने उस औरत को कई बार निकोलाई के यहाँ देखा था।

"सब अपने ही लोग हैं!" उसने सोचा।

वह औरत पेलागेया के पीछे-पीछे हो ली।

"क्या उसकी तबियत बहुत ख़राब है?" उसने पूछ्ज्ञ।

"हाँ, लेटा हुआ है। उसने मुझसे कहा था कि तुमसे कुछ खाना ले आने को कह दूँ..."

"उसकी कोई ज़रूरत नहीं..."

जब वे येगोर के कमरे में घुसीं तो उन्हें उसकी साँस की खरखराहट साफ़ सुनायी दे रही थी।

"दोस्तो, मैं तो अब अपने पुरखों के पास जाता हूँ... आह, लूदमीला वासील्येवना! यह नौजवान इतना गुस्ताख है कि हाकिमों की इजाजत लिये बिना जेल से बाहर चला आया है! पहले तो इसे कुछ खाने को दे दो फिर कहीं इसके ठहरने का इन्तज़ाम कर दो।"

उस औरत ने सिर हिलाकर हामी भरी और जल्दी से एक नज़र रोगी पर डाली।

"येगोर, जब ये लोग आये थे तभी मुझे बुला लिया होता!" उसने कहा। "और तुमने फिर दो बार दवा नहीं पी। बड़ी शरम की बात है। कामरेड, मेरे साथ आइये! वे लोग येगोर को अस्पताल ले जाने के लिए आते ही होंगे।"

"तो तुम मुझे अस्पताल भेजे बिना मानोगी नहीं?"

"हाँ, मैं भी वहाँ तुम्हारे साथ रहूँगी।"

"वहाँ भी? हे भगवान!"

"बस, अब तुम्हारी एक नहीं सुनूँगी!"

बातें करते-करते उस औरत ने कम्बल खींचकर येगोर को सीने तक उढ़ा दिया, फिर निकोलाई को बड़े ध्यान से देखा और शीशियाँ हिलाकर देखा कि दवा कितनी बची है। वह बहुत सपाट सुरीली आवाज़ में बोलती थी और उसकी चाल में बहुत नजाकत थी। उसके चेहरे का रंग पीला था और उसकी भवें नाक के पास आकर मिलती थीं। माँ को उसकी सूरत बिल्कुल पसन्द नहीं थी। उसे उसमें बहुत दम्भ दिखायी देता था। उस औरत की आँखों में कभी मुस्कराहट या चमक नहीं आती थी और वह बड़े आदेशपूर्ण ढंग से बोलती थी।

"अच्छा, अभी तो हम लोग जाते हैं!" वह कहती रही, "लेकिन मैं अभी लौटकर आती हूँ! येगोर को एक चम्मच दवा पिला देना। और उसे बोलने न देना..."

यह कहकर वह निकोलाई के साथ बाहर चली गयी।

"बहुत कहकर वह निकोलाई के साथ बाहर चली गयी।

"बहुत अच्छी औरत है!" येगोर ने आह भरकर कहा। "बहुत ही शानदार औरत है... माँ, मैं तुम्हारा इसके साथ रहने का इन्तज़ाम कर दूँगा, वह बहुत थक जाती है..."

"बोलो नहीं! लो, यह दवा पी लो!.." माँ ने बड़ी नरमी से कहा।

उसने दवा पी और कड़वाहट के मारे एक आँख बन्द कर ली।

"अगर मैं अपनी जबान पर ताला भी लगा लूँ, तब भी मैं मर तो जाऊँगा ही..." उसने कहा।

वह अपनी खुली हुई आँख से माँ को देखता रहा और मुस्कराहट से उसके होंठ खुल गये। माँ ने अपना सिर झुका लिया और व्यथा से उसकी आँखों में आँसू निकल आये।

"ठीक ही है - यह तो होता ही है," रोगी ने कहा। "जो जीवन का सुख भोगता है उसे एक न एक दिन मरना भी पड़ता ही है..."

माँ ने अपना हाथ उसके माथे पर रख दिया और बड़े चुपके से बोली :

"तुम थोड़ी देर शान्त क्यों नहीं रहते?.."

उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं मानो अपने सीने की खरखराहट सुन रहा हो।

"माँ, शान्त रहने से क्या फ़ायदा?" वह कुढ़कर बोलता रहा। "मुझे इससे क्या मिल जायेगा? यही न कि मेरी मौत कुछ देर के लिए टल जायेगी, लेकिन

तुम्हारी जैसी नेक औरत से दो–चार बातें कर लेने का सुख मुझसे छिन जायेगा। मुझे यकीन है कि दूसरी दुनिया के लोग इतने अच्छे नहीं हो सकते जितने यहाँ के हैं...”

“वह अमीरजादी अभी आकर मुझे डांटेगी कि मैंने तुम्हें बातें क्यों करने दीं,” माँ ने चिन्तित स्वर में उसकी बात काटते हुए कहा।

“वह अमीरजादी नहीं है, कामरेड, वह क्रान्तिकारी है और बहुत ही अच्छी औरत है। हाँ, डाँटेगी तो ज़रूर। डाँटती तो वह सभी को है...”

येगोर माँ को अपनी पड़ोसिन की ज़िन्दगी के बारे में बताने लगा। स्पष्ट था कि उसे बोलने में बड़ी कठिनाई हो रही थी। उसकी आँखों में चमक थी और माँ समझ गयी कि वह उसे छेड़ रहा था।

“यह बचेगा नहीं,” उसके आर्द्र तथा विवर्ण चेहरे को ध्यान से देखते हुए माँ सोचने लगी।

लूदमीला लौट आयी और बड़ी सावधानी से दरवाज़ा बन्द करके उसने माँ की तरफ़ देखा।

“तुम्हारे दोस्त को कपड़े बदलकर फ़ौरन मेरे कमरे से कहीं चले जाना चाहिए, इसलिए तुम जाकर उसके पहनने के लिए कुछ कपड़े ले आओ। यहीं लेती आना। यह बड़ा बुरा हुआ कि सोफ़िया यहाँ नहीं है – लोगों को छुपाने में वही बहुत होशियार है।”

“वह कल लौटकर आ रही है!” माँ ने अपने कन्धों पर शाल डालते हुए कहा।

जब भी उसे कोई काम सौंपा जाता था तो वह उसे जल्दी से और अच्छी तरह पूरा करने के लिए इतनी उत्सुक रहती थी कि उसे और किसी बात का ध्यान ही नहीं रहता था।

“उसे कैसे कपड़े पहनाने होंगे?” माँ ने अपनी भवें सिकोड़कर बड़े कामकाजी ढंग से पूछा।

“कैसे ही हों, कोई फरक नहीं पड़ता! वह रात को जायेगा...”

“रात को जाना तो और भी बुरा है – सड़क पर बहुत थोड़े लोग होते हैं और पुलिसवाले भी ज़्यादा चौकस रहते हैं। और वह बहुत चालाक भी नहीं है. ..”

येगोर अपनी भर्रायी हुई आवाज़ में हँस दिया।

“क्या मैं अस्पताल में तुमसे मिलने आ सकती हूँ?” माँ ने पूछा।

उसने स्वीकृति में सिर हिलाया और खाँसने लगा।

“क्या तुम यह कर सकती हो कि मैं और तुम बारी–बारी से थोड़ी–थोड़ी

देर अस्पताल में इसके पास बैठें?" लूदमीला ने अपनी काली आँखों से माँ को देखते हुए पूछा। "कर सकती हो? बहुत अच्छी बात है! मगर अब जल्दी से जाकर यह काम कर डालो..."

उसने बड़े प्यार से, पर साथ ही बड़े आदेशपूर्ण ढंग से माँ का हाथ पकड़ा और उसे दरवाज़े तक पहुँचा आयी।

"बुरा न मानना कि मैं तुम्हें इस तरह भेजे दे रही हूँ!" बाहर पहुँचकर उसने कहा। "बात यह है कि उसे बोलना नहीं चाहिए... मुझे अब भी उसके बचने की उम्मीद है..."

उसने अपने हाथ इतने कसकर दबाये कि उसकी हड्डियाँ चरमरा गयीं और उसने शिथिल भाव से अपनी आँखें बन्द कर लीं। उसकी इस स्पष्टवादिता से माँ कुछ खिसिया गयी।

"कैसी बात कहती हो?" माँ ने बुदबुदाकर कहा।

"इस बात का ख़याल रखना कि कोई तुम्हारा पीछा तो नहीं कर रहा है!" लूदमीला ने हाथ उठाकर अपनी कनपटियाँ मलते हुए मन्द स्वर में कहा। उसके होंठ काँपने लगे और उसके चेहरे पर कोमलता का भाव छा गया।

"यह मैं जानती हूँ!" माँ ने किचिन्त गर्व के साथ कहा।

फाटक से निकलकर वह अपनी शाल ठीक करने के बहाने एक क्षण के लिए रुकी और उसने चारों ओर फुर्ती से नज़र डाली। खुफिया पुलिसवालों को वह बड़ी-से -बड़ी भीड़ में भी पहचान लेती थी। वे जिस तरह ज़रूरत से ज़्यादा लापरवाही से चलते थे, उनके हाव-भाव में जो एक अस्वाभाविक निश्चिन्तता होती थी, उनकी आँखों में अपराधियों जैसा जो चौकन्नापन होता था, जो उकताहट और बेदिली की बनावटी मुद्रा में भी छुपाये नहीं छुपता था – इन सब बातों से माँ भली भाँति परिचित थी।

जब उसे इस प्रकार का कोई आदमी दिखायी न दिया तो माँ इतमीनान से सड़क पर आगे बढ़ी और एक किराये की गाड़ी करके उसने गाड़ीवाले से बाज़ार की तरफ़ चलने को कहा। उसने निकोलाई के लिए एक कोट पसन्द किया और बड़ी देर तक उसकी क़ीमत के लिए मोल-तोल करती रही और अपने एक कल्पित पति को गालियाँ देती रही कि वह इतना शराबी था कि उसे हमेशा उसके लिए नये कपड़े ख़रीदने पड़ते थे। उसकी इन मनगढ़न्त बातों का दुकानदारों पर कोई प्रभाव न पड़ा, पर वह स्वयं इससे बहुत ख़ुश थी क्योंकि गाड़ी में बैठे-बैठे उसने सोचा था कि पुलिसवाले बाज़ार में अपने जासूस ज़रूर भेजेंगे क्योंकि उन्हें मालूम था कि निकोलाई के लिए कपड़े ज़रूर ख़रीदे जायेंगे। वापसी में भी पहले ही की तरह भोलेपन से सतर्क रहकर माँ येगोर के घर की तरफ़ लौटी। फिर उसे

निकोलाई को शहर के सिरे तक पहुँचाने जाना पड़ा। वे सड़क की दोनों पटरियों पर अलग–अलग चल रहे थे। निकोलाई को सिर झुकाये चलते देखकर माँ को बड़ी ख़ुशी हो रही थी और कुछ हँसी भी आ रही थी, उसके लम्बे–से कत्थई कोट का दामन बार–बार उसकी टाँगों में उलझ रहा था, और उसकी टोपी बार–बार सरककर उसकी नाक पर आ जाती थी। एक सुनसान गली में साशा से उनकी मुलाक़ात हुई, माँ ने सिर हिलाकर वेसोवश्चिकोव को इशारा किया और अपने घर की तरफ़ वापस लौट पड़ी।

"लेकिन पावेल अभी तक जेल में है... और अन्द्रेई..." उसने सोचा और उदास हो गयी।

10

निकोलाई इवानोविच जब उससे मिला तो बहुत परेशान था।

"येगोर की तबियत बहुत ख़राब है!" उसने कहा। "बहुत ज़्यादा ख़राब है! वे उसे अस्पताल ले गये हैं। लूदमीला यहाँ आयी थी और वह तुम्हें अस्पताल बुला गयी है..."

"अस्पताल?"

निकोलाई इवानोविच ने अपना चश्मा ऊपर सरकाया और माँ को उसका शलूका पहना दिया।

"लो, यह बण्डल लेती जाओ," उसने काँपते हुए स्वर में कहा और अपने गर्म सूखे हाथ में उसकी उँगलियाँ दबा लीं।

"वेसोवश्चिकोव ठीक है?"

"हाँ..."

"मैं भी येगोर को देखने आऊँगा..."

थकान के मारे माँ का सिर घूमने लगा। निकोलाई की परेशानी से उसे किसी भयानक घटना का पूर्वाभास होने लगा।

"वह बचेगा नहीं," उसने दिमाग में यह विचार बार–बार हथौड़े की तरह चोटें मारता रहा।

लेकिन जब उसने उस साफ़–सुथरे छोटे से प्रकाशमय कमरे में प्रवेश किया जहाँ येगोर सफ़ेद तकियों के एक ढेर का सहारा लगाये लेटा भर्राये हुए स्वर में हँस रहा था, तो उसके मन को कुछ शान्ति मिली। वह मुस्कराते हुए दरवाज़े के पास खड़ी सुनती रही कि वह डॉक्टर से क्या कह रहा था।

"रोगी का इलाज करना वैसा ही है जैसे छोटे–मोटे सुधार करना..."

"येगोर, कभी तो समझदारी की बात किया करो!" डॉक्टर ने चिन्तित स्वर

में कहा।

"लेकिन मैं क्रान्तिकारी हूँ और इसलिए मुझे सुधार से नफ़रत है..."

डॉक्टर ने बड़ी सावधानी से येगोर का हाथ उसके घुटनों पर रख दिया और उठ खड़ा हुआ, वह विचारों में डूबा हुआ अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरकर रोगी के चेहरे की सूजन को अपनी उँगलियों से छूने लगा।

माँ डॉक्टर को जानती थी – वह निकोलाई का बहुत गहरा मित्र था, उसका नाम था इवान दनीलोविच। वह येगोर के पास गयी और उसने जीभ निकालकर माँ का स्वागत किया। डॉक्टर ने पीछे मुड़कर देखा।

"अरे, निलोवना, तुम! कहो! तुम्हारे हाथ में क्या है?"

"किताबें होंगी," वह बोल उठी।

"इन्हें पढ़ने की मनाही है!" उस नाटे कद के डॉक्टर ने कहा।

"यह मुझे बिल्कुल मूर्ख बना देना चाहते हैं!" रोगी ने शिकायत करते हुए कहा।

वह बहुत जल्दी-जल्दी साँसें ले रहा था और उसके सीने में से गड़गड़ाहट और खरखराहट की आवाज़ आ रही थी। उसके चेहरे पर पसीने की छोटी-छोटी बूँदें थीं और हाथ उठाकर माथे का पसीना पोंछने में भी उसे बड़ी कठिनाई हो रही थी। उसके फूले-फूले गालों पर जो एक विचित्र निश्चलता थी उसके कारण उसका चौड़ा-चकला उदार चेहरा एक बेजान नकाब मालूम हो रहा था। केवल उसकी आँखों में, जो चारों तरफ़ की सूजन के कारण अन्दर धँसी हुई मालूम होती थी, एक निर्मल चमक और एक तिरस्कारपूर्ण मुस्कराहट थी।

"अरे, धनवन्तरी महाराज, मैं बहुत थक गया हूँ, ज़रा लेट जाऊँ?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं!" डॉक्टर ने सख़्ती से जवाब दिया।

"ख़ैर, आप चले जायेंगे तब लेट जाऊँगा..."

"निलोवना, इन्हें लेटने न देना! इनके तकिये ठीक कर देना और देखो, बोलने बिल्कुल न देना। बोलना इनके लिए बहुत बुरा है..."

निलोवना ने सिर हिलाकर स्वीकृति प्रकट की और डॉक्टर तेज़ी से छोटे-छोटे क़दम रखता हुआ बाहर चला गया। येगोर ने अपना सिर एक झटके के साथ पीछे कर लिया और आँखें मूँद लीं और बिल्कुल निश्चल होकर लेट गया, केवल उसकी उँगलियाँ रह-रहकर फड़क उठती थीं। उस छोटे-से कमरे की दीवारें अत्यन्त नीरस और निराशाजनक थीं। बड़ी-सी खिड़की में से लाइम के पेड़ों की झुकी हुई फुनगियाँ दिखायी देती थीं, धूल से अटी हुई उनकी गहरे रंग की पत्तियों के बीच-बीच में पीले-पीले धब्बे दिखायी देते थे – यह शरद का क्रूर स्पर्श था।

"मौत धीरे-धीरे कुछ संकोच करते हुए मुझे अपने शिकंजे में जकड़ती जा रही है..." येगोर ने अपनी आँखें मूँदे-मूँदे ही कहा। "ऐसा मालूम होता है कि उसे मुझ पर बड़ा तरस आ रहा है - मेरी तो सबों के साथ हमेशा ही बड़ी अच्छी तरह निभी..."

"येगोर इवानोविच, चुप हो जाओ!" माँ ने बड़े प्यार से उसका हाथ सहलाते हुए विनय-भरे स्वर में कहा।

"अभी थोड़ी देर में... बिल्कुल चुप हो जाऊँगा..."

बड़ी कठिनाई से वह बोलता रहा। उसका दम फूल रहा था और बीच-बीच में वह काफ़ी देर के लिए रुक जाता था।

"यह बड़ा अच्छा है कि तुम हमारे साथ हो - तुम्हें देखकर कितनी ख़ुशी होती है। कभी-कभी मैं सोचता हूँ... तुम्हारा क्या होगा? यह सोचकर बड़ा दुख होता है कि... औरों की तरह... तुम्हें भी जेल जाना पड़ेगा... और सारी मुसीबतें उठानी पड़ेंगी... तुम्हें जेल जाने से डर लगता है?"

"नहीं!" माँ ने स्पष्ट उत्तर दिया।

"डर तो नहीं लगता होगा। फिर भी... जेल बड़ी भयानक जगह है। जेल ही ने मेरी यह हालत कर दी। सच पूछो तो - मैं मरना नहीं चाहता..."

माँ कहने ही जा रही थी कि "कौन जाने तुम अब भी बच जाओ!" पर उसके चेहरे का भाव देखकर वह रुक गयी।

"मैं अब भी काम कर सकता हूँ... अगर मैं काम करने लायक न रह जाऊँ तो फिर जीने से फ़ायदा ही क्या - कोई तुक नहीं है..."

माँ को अन्द्रेई का वह वाक्य बरबस याद आ गया जो वह हमेशा कहा करता था : "सच तो है पर उससे कोई शान्ति नहीं मिलती।" और उसने एक आह भरी। वह दिन-भर में बहुत थक गयी थी और उसे बहुत भूख लगी थी। रोगी का निरन्तर अस्फुट स्वर कमरे में गूँज रहा था और ऐसा मालूम होता था कि उसकी आवाज़ हौले-हौले दीवारों पर रेंग रही है। खिड़की के बाहर लाइम के पेड़ों की फुनगियाँ नीचे-नीचे मँड़राते हुए बादलों जैसी लग रही थीं - अत्यन्त उदास और नैराश्यपूर्ण गोधूलि-वेला की निश्चलता में, रात्रि के आगमन की अशुभसूचक आशंका में हर चीज़ पर एक विचित्र निस्तब्धता छायी हुई थी।

"मेरा जी बहुत बुरा हो रहा है!" येगोर ने कहा और अपनी आँखें मूँदकर चुपचाप लेट गया।

"सो जाओ!" माँ ने कहा। "तुम्हारा जी अच्छा हो जायेगा।"

वह उसके साँस लेने की आवाज़ सुनती रही और चारों तरफ़ देखती रही। कुछ देर तक तो वह व्यथा में डूबी हुई निश्चल बैठी रही, फिर उसे नींद आने

लगी।

दरवाज़े पर एक दबी हुई आवाज़ सुनकर उसकी आँख खुल गयी। वह चौंककर उठ बैठी और उसने देखा कि येगोर आँखें खोले लेटा है।

"माफ़ करना, ज़रा मेरी आँख लग गयी थी!" माँ ने कोमल स्वर में कहा।

"माफ़ी तो मुझे माँगनी चाहिए..." येगोर ने भी उतनी ही नरमी से कहा।

शाम का झुटपुटा खिड़की से अन्दर झाँक रहा था। कमरे में ठण्डक थी और हर चीज़ पर एक विचित्र सा धुँधलापन छा गया था। रोगी के चेहरे पर भी एक कालिमा छा गयी थी।

माँ को किसी चीज़ की सरसराहट और लूदमीला की आवाज़ सुनायी दी :

"यहाँ अँधेरे में बैठे क्या खुसुर-फुसुर कर रहे हो तुम लोग? बिजली का बटन कहाँ पर है?"

सहसा कमरे में आँखों को चकाचौंध कर देने वाला प्रकाश हो गया और कमरे के बीचोबीच काली पोशाक में लूदमीला की लम्बी तनी हुई आकृति दिखायी दी।

येगोर के शरीर में एक सिहरन-सी दौड़ गयी। उसने अपना हाथ उठाकर सीने पर रख लिया।

"क्या बात है?" लूदमीला ने भागकर उसके पास जाकर पूछा।

वह आँखें गड़ाये माँ को घूर रहा था। उसकी आँखें इस समय बहुत बड़ी-बड़ी लग रही थीं और उनमें एक विचित्र-सी ज्योति थी।

मुँह फाड़कर उसने अपना सिर ऊपर उठाया और हाथ फैला दिया। माँ ने उसका हाथ पकड़ लिया और उसके चेहरे को घूरकर देखने लगी, वह साँस भी नहीं ले पा रही थी। सहसा अपने शरीर को झंझोड़कर रोगी ने अपने सिर को एक झटका दिया और ऊँचे स्वर में बोला :

"नहीं, नहीं! बस सब खतम हो गया!.."

उसके शरीर में एक झुरझुरी-सी हुई, उसका सिर निढाल होकर उसके कन्धे पर लुढ़क गया औ पलँग पर लटकते हुए लैम्प के क्रूर प्रकाश का निर्जीव प्रतिबिम्ब उसकी खुली हुई आँखों में दिखायी देता रहा।

"हाय, बेचारा!" माँ ने अस्फुट स्वर में कहा।

लूदमीला धीरे-धीरे चलती हुई खिड़की के पास तक गयी और वहाँ खड़ी होकर बाहर देखने लगी।

"वह मर गया..." उसने सहसा इतने ज़ोर से चिल्लाकर कहा कि माँ चौंक पड़ी। लूदमीला खिड़की की चौखट पर कुहनियाँ टिकाकर खड़ी हो गयी और

फिर यकायक मानो किसी ने सहसा उसके सिर पर ज़ोर का आघात किया। वह घुटनों के बल बैठकर दोनों हाथों से मुँह ढंककर रो पड़ी।

येगोर के दोनों हाथ उसके सीने पर रखकर और तकिये पर उसका सिर सीधा करके, माँ ने अपने आँसू पोंछ डाले और लूदमीला के पास चली गयी। वह झुककर बड़ी नरमी से उसके घने बालों पर हाथ फेरने लगी। लूदमीला ने धीरे-धीरे अपना सिर उठाकर फटी हुई ज्योतिहीन आँखों से माँ को देखा और उठकर खड़ी हो गयी।

"निर्वासन में हम दोनों साथ-साथ रहे थे," उसने काँपते हुए अस्फुट स्वर में कहा। "हम दोनों एक साथ वहाँ सजा काटने के लिए भेजे गये थे, दोनों जेलों में रहे थे... कभी-कभी तो वहाँ बहुत ही भयानक मालूम होता था... बिल्कुल असह्य हो जाता था। कई लोगों की हिम्मतें टूट गयीं..."

वह सहसा बड़े ज़ोर से फूट-फूटकर रोने लगी, पर बहुत कोशिश करके उसने अपने आपको सम्भाल लिया। वह माँ के और निकट आ गयी। प्यार और दुख की भावनाओं से चेहरे पर जो कोमलता आ गयी थी उसके कारण वह और नौजवान मालूम होने लगी थी।

"लेकिन यह हमेशा ही हँसमुख रहता था," वह और भी जल्दी-जल्दी दबी जबान में कहती रही। वह अब भी सिसकियाँ ले रही थी। "यह हमेशा हँसता रहता था और मज़ाक़ करता रहता था... जो कमज़ोर थे उनकी हिम्मत बँधाये रखने के लिए अपनी तकलीफ को कभी ज़ाहिर नहीं होने देता था। हमेशा दूसरों के साथ भलाई करता था, बहुत उदार था और दूसरों का हमेशा ध्यान रखता था... वहाँ साइबेरिया में ख़ाली बैठे-बैठे अक्सर लोगों का स्वभाव बिगड़ जाता है और वे अपनी कुत्सित भावनाओं का शिकार हो जाते हैं। वह इसके ख़िलाफ़ लड़ना बहुत अच्छी तरह जानता था!.. तुम नहीं जानतीं वह कितना अच्छा साथी था! उसकी अपनी ज़िन्दगी में दुख के अलावा और कुछ था ही नहीं, लेकिन कभी किसी ने उसे शिकायत करते नहीं सुना! कभी नहीं! मेरी तो बड़ी दोस्ती थी उसके साथ, मैं बहुत आभारी हूँ उसकी। अपने अपार ज्ञान में से जो कुछ वह मुझे दे सकता था उसने दिया। हालांकि वह ज़िन्दगी से बहुत उकताया हुआ और अकेला था, उसने कभी बदले में यह नहीं चाहा कि मैं उससे प्यार करूँ या उसके आराम का ख़याल रखूँ..."

येगोर के पास जाकर लूदमीला ने झुककर उसका हाथ चूम लिया।

"साथी, मेरे प्यारे, अच्छे साथी, धन्यवाद, मैं तुम्हें हृदय से धन्यवाद देती हूँ!" उसने शान्त व्यथित स्वर में कहा, "विदा! मैं तुम्हारी ही तरह काम करती रहूँगी – अपनी ज़िन्दगी भर अटल विश्वास के साथ अनथक काम करती रहूँगी!.

. विदा!"

सिसकियों से उसका शरीर काँप रहा था। उसने येगोर के पायँती पलँग पर अपना सिर रख दिया। माँ चुपचाप बैठी आँसू बहाती रही। न जाने क्यों वह रोना नहीं चाहती थी। वह सांत्वना के शब्दों से लूदमीला को धीरज बँधाना चाहती थी, विशेष और अत्यधिक तीव्र प्यार की भावना से पुचकारना चाहती थी, येगारे के बारे में प्यार और दुख के शब्द कहना चाहती थी। डबडबायी हुई आँखों से उसने येगोर के पिचके हुए चेहरे और उसकी अधखुली आँखों को देखा, मानो वह अभी ऊँघ रहा हो; उसने उसके नीले होंठों को देखा जिन पर अभी तक मुस्कराहट खेल रही थी। हर चीज़ पर एक निस्तब्धता और विषाद छाया हुआ था...

इवान दनीलोविच जल्दी-जल्दी छोटे-छोटे क़दम रखता हुआ आया। सहसा वह कमरे के बीच में रुक गया और दोनों हाथ जेबों में डालकर खड़ा हो गया।

"कितनी देर हुई?" उसने घबराये हुए स्वर में ज़ोर से पूछा।

किसी ने उत्तर नहीं दिया। डॉक्टर ने अपने माथे का पसीना पोंछा और लड़खड़ाते हुए क़दमों से येगोर के पास जाकर उसका हाथ दबाया और अलग हटकर खड़ा हो गया।

"यह तो होना ही था। इतना कमज़ोर दिल था कि कम से कम छ: महीने पहले ही यह हो जाना चाहिए था..."

सहसा उसका ऊँचा स्वर, जो ज़रूरत से ज़्यादा ऊँचा था और जिसे वह बड़ी कोशिश करके शान्त बनाये हुए था, रुँध गया। वह दीवार का सहारा लेकर खड़ा हो गया और घबराहट में ज़ोर से अपनी दाढ़ी मरोड़ता हुआ पलँग के पास बैठी हुई उन दोनों औरतों को देखता रहा।

"एक और चल बसा!" उसने धीरे से कहा।

लूदमीला उठकर खिड़की खोलने चली गयी। थोड़ी ही देर बाद वे तीनों एक-दूसरे से सटकर वहाँ खड़े शरद ऋतु की रात्रि का अन्धकारमय चेहरा देख रहे थे। पेड़ों की काली फुनगियों के ऊपर सितारे जगमगा रहे थे और आकाश के अनन्त विस्तार को और भी अन्धकारमय बना रहे थे...

लूदमीला माँ की बाँह पकड़कर चुपचाप उसके कन्धे का सहारा लेकर खड़ी हो गयी। डॉक्टर सिर झुकाये अपना चश्मा साफ़ कर रहा था। निस्तब्धता को चीरती हुई शहर की रात्रिकालिन शिथिल ध्वनियाँ आ रही थीं। हवा का एक ठण्डा झोंका आया और उसके बालों से अठखेलियाँ करने लगा। लूदमीला काँप उठी और एक आँसू चुपचाप उसके गाल पर ढलक गया। बाहर बरामदे में उन लोगों को दबी हुई भयभीत ध्वनियाँ सुनायी दे रही थीं - कराहने की आवाज़, खुसुर-फुसुर और किसी के पाँव घसीटकर चलने की आवाज़। पर वे तीनों

खिड़की के पास चुपचाप निश्चल खड़े रात्रि के अन्धकार को घूरते रहे।

यह सोचकर कि शायद उसके कारण कोई बाधा पड़ रही हो, माँ ने धीरे से अपना हाथ खींच लिया, झुककर येगोर को शीश नवाा और दरवाज़े की तरफ़ चल दी।

"आप जा रही हैं?" डॉक्टर ने बग़ैर मुड़े धीरे से पूछा।

"हाँ..."

बाहर पहुँचकर माँ लूदमीला के बारे में सोचने लगी कि किस प्रकार उसने अपनी सिसकियों को दबाया था।

"उसे ठीक से रोना भी नहीं आता..."

उसे याद आया कि येगोर ने मरने से पहले क्या कहा था और उसके सीने से एक आह निकल गयी। सड़क पर धीरे-धीरे चलते हुए उसे उसकी चमकदार आँखें, उसका हँसमुख स्वभाव और उसकी सुनायी हुई रोचक कहानियाँ याद आती रहीं।

"अच्छे आदमी के लिए जीना कठिन होता है, पर मरना आसान होता है. .. मालूम नहीं मैं कैसे मरूँगी?..." उसने सोचा।

अपनी कल्पनादृष्टि से वह लूदमीला और डॉक्टर को उस सफ़ेद चमकदार कमरे की खिड़की के पास खड़ा देख रही थी और येगोर की मृत आँखें उन्हें पीछे से घूर रही थीं। सहसा उसके हृदय में सारी मानवता के प्रति गहरी वेदना का तूफान उमड़ पड़ा। लम्बी आह भरकर उसने अपने क़दम तेज़ किये; कोई अज्ञात प्रेरणा उसे तेज़ चलने पर बाध्य कर रही थी।

"मुझे जल्दी चलना चाहिए!" उसने सोचा; जो उदास पर साहसमय शक्ति उसे अन्दर से प्रेरित कर रही थी उसके आगे उसने आत्मसमर्पण कर दिया।

11

दूसरे दिन माँ कफन-दफन का इन्तज़ाम करती रही। शाम को जब वह सोफ़िया और निकोलाई के साथ बैठी चाय पी रही थी उसी समय साशा आयी; उस समय उसमें एक विचित्र चंचलता थी और वह बहुत बातें कर रही थी; उसके गालों पर हर्ष की लाली थी, उसकी आँखें उल्लास से चमक रही थीं और ऐसा प्रतीत होता था कि उसके हृदय में कोई उल्लसित आशा हिलोरें ले रही है। शोक के जिस शान्त की उच्छृंखलता ने सहसा भंग कर दिया। उसका व्यवहार बिल्कुल असंगत था; उसका इस तरह का बर्ताव उन्हें बुरा मालूम हुआ। ऐसा प्रतीत हुआ जैसे अँधेरे में सहसा आग भड़क उठी हो। निकोलाई विचारमग्न होकर मेज पर तबला बजा रहा था।

"साशा, बात क्या है? आज तुम कुछ बदली हुई नज़र आ रही हो?" उसने कहा।

"हूँ न? मुमकिन है!" उसने बहुत ख़ुश होकर धीरे से हँसकर कहा।

माँ ने चुपचाप उसे भर्त्सना-भरी दृष्टि से देखा।

"हम लोग येगोर इवानोविच की बातें कर रहे थे..." सोफ़िया ने बात का क्रम फिर पकड़ते हुए कहा।

"कितना अच्छा आदमी था!" साशा ने कहा। "मैंने उसे हमेशा मुस्कराता हुआ और हँसी-मज़ाक़ करता हुआ ही पाया। और कितना काम करता था वह! वह क्रान्ति का कलाकार था और क्रान्तिकारी ढंग से सोचने में निपुण था। हिंसा, झूठ और अन्याय का चित्रण वह हमेशा कितने सीधे-सादे और ज़ोरदार शब्दों में करता था!"

वह बहुत शान्त स्वर में बोल रही थी और कुछ सोचकर मुस्कराती जा रही थी, पर इस मुस्कराहट की आड़ में भी हर्षातिरेक की वह ज्वाला छुप न सकी, जिसे देख तो सभी रहे थे, पर जिसका कारण किसी की समझ में नहीं आ रहा था।

वे नहीं चाहते थे कि साशा का उल्लास उनकी उदासी की जगह ले ले और उसे भी अपनी ही तरह उदास बनाने का प्रयत्न करके वे बिना जानते हुए ही अपने व्यथित होने के अधिकार की रक्षा कर रहे थे...

"और अब वह मर गया!" सोफ़िया ने बहुत अर्थपूर्ण दृष्टि से साशा की तरफ़ देखकर कहा।

साशा ने जल्दी से उन सब पर एक प्रश्नसूचक दृष्टि डाली और उसकी त्योरियों पर बल पड़ गये। वह सिर झुकाकर चुप हो गयी और धीरे-धीरे अपने बालों की चिमटियाँ ठीक करने लगी। थोड़ी देर तक चुप रहने के बाद उसने सहसा नज़रें ऊपर उठाकर देखा।

"वह मर गया? क्या मतलब इसका कि 'मर गया'? मरना क्या होता है? क्या येगोर के लिए मेरी इज्जत या एक साथी की हैसियत से उसके लिए मेरा प्यार या उसके विचारों के बारे में मेरी समझ-बूझ मर गयी? उसने मेरे हृदय में जो भावनाएँ जागृत की थीं क्या वे मर गयीं या मैंने यह समझना छोड़ दिया कि वह एक ईमानदार और बहादुर आदमी था? क्या यह सब कुछ मर गया? मेरे लिए यह सब कुछ कभी नहीं मर सकता। और मुझे ऐसा लगता है कि हम लोग यह कहने में बड़ी उतावली से काम लेते हैं कि फलां आदमी मर गया। 'उसके होंठ बेजान हो गये लेकिन उसके शब्द ज़िन्दा लोगों के दिलों में हमेशा ज़िन्दा रहेंगे!' "

अपने भावावेश में वह फिर मेज के पास आकर बैठ गयी और मेज पर

कुहनियाँ टिकाकर डबडबायी हुई आँखों से अपने साथियों की तरफ़ देखकर मुस्करायी और विचारमग्न होकर अधिक शान्त स्वर में बोली :

"मुमकिन है कि मैं जो कुछ कह रही हूँ वह आपको बेवक़ूफ़ी की बातें मालूम हो रही हों, लेकिन मैं यह यकीन करती हूँ कि ईमानदार लोग अमर होते हैं; मैं समझती हूँ कि जिन लोगों ने मुझे यह शानदार जीवन बिताने का सुख दिया है वे अमर हैं – ऐसा जीवन जो अपनी आश्चर्यजनक जटिलता से, अपने विभिन्न रूपों के वैविध्य से और उन विचारों के विकास से जो मुझे अपने प्राणों से भी बढ़कर प्रिय हैं, मुझे रोमाचित कर देता है। शायद हम लोग अपनी भावनाओं को बहुत सम्भालकर रखते हैं। हम लोग अपने विचारों को बहुत ज़्यादा महत्त्व देते हैं, इसीलिए हमारा व्यक्तित्व पूरी तरह विकसित नहीं हो पाता। हम चीज़ों को अनुभव करने के बजाय उनकी मीमांसा करने लगते हैं..."

"आज क्या कोई बहुत ख़ुशी की बात हुई है तुम्हारे लिए?" सोफ़िया ने मुस्कराकर पूछा।

"हाँ!" साशा ने उत्तर दिया। "बहुत ही ख़ुशी की बात मालूम होती है मुझे तो! मैं सारी रात वेसोवश्चिकोव से बातें करती रही। मुझे पहले वह कभी अच्छा नहीं लगता था – मैं उसे बहुत उजड्ड और जाहिल समझती थी, और वह था भी। उसके दिल में हर आदमी के लिए एक घिनौनी नफ़रत थी। वह हमेशा हर बात में अपने आपको सबसे ज़्यादा महत्त्व देता था और बड़े भोंडे और ओछे ढंग से कहता रहता था : 'मैं, मैं, मैं!' उसमें एक अजीब भयानक किस्म की तंगनज़री थी..."

साशा ने मुस्कराकर चमकती हुई आँखों से देखा।

"लेकिन अब वह कहता है 'कारमेड!' और आप सुनियेगा कि वह यह शब्द किस तरह कहता है! कुछ शरमाकर इतने प्यार से कहता है कि शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता! अब वह बहुत सीधा हो गया है, उसमें लगन पैदा हो गयी है और वह काम करने के लिए बेताब है। उसने अपने आपको पहचान लिया है – अपनी खूबियों और खराबियों को अब वह जानता है। लेकिन सबसे बड़ी बात तो यह है कि उसमें भाईचारे की एक सच्ची भावना पैदा हो गयी है..."

साशा की बातें सुनकर माँ को बड़ी ख़ुशी हुई कि इतनी कठोर लड़की भी ऐसी कोमल और हँसमुख बन सकती है। लेकिन इसके साथ ही दिल ही दिल में वह जलकर सोचती रही :

"आख़िर पावेल का क्या हुआ?.."

"वह अब सिर्फ़ अपने साथियों के बारे में सोचता है," साशा कहती रही, "और जानते हैं आप लोग, उसने मुझे किस बात का यकीन दिलाने की कोशिश

की? कि हमें उन लोगों को भगाने का कुछ इन्तज़ाम करना चाहिए। वह कह रहा था कि यह काम बड़ी आसानी से किया जा सकता है..."

सोफ़िया ने सिर उठाकर देखा और उत्सुकता से कहा :

"साशा बात तो पते की कहती है। तुम्हारा क्या ख़याल है?"

माँ के हाथ में चाय की प्याली काँप गयी। साशा भवें सिकोड़कर अपनी उत्सुकता को छुपाने का प्रयत्न करने लगी।

"अगर वह सच कहता है, तो हमें ज़रूर कोशिश करनी चाहिए। हमारा फर्ज है कि हम कोशिश करें!" उसने एक क्षण के लिए रुककर बड़े हर्ष से मुस्कराते हुए कहा।

सहसा वह शरमा गयी और बिना कुछ कहे बैठ गयी।

"मेरी बच्ची, बेचारी!" माँ ने सोचा और मुस्करा दी। सोफ़िया भी मुस्करा दी और निकोलाई साशा की तरफ़ कनखियों से देखकर खिसियाकर हँसने लगा। लड़की ने सिर उठाकर सबको कठोर दृष्टि से देखा। उसका रंग पीला पड़ गया था, उसकी आँखें लाल थीं और उसके स्वर में रूखापन था और ऐसा मालूम होता था कि वह बुरा मान गयी है।

"मैं जानती हूँ कि आप लोग क्यों हँस रहे हैं," उसने कहा। "आप समझते हैं कि मैं अपने किसी निजी स्वार्थ से ऐसा करने को कह रही हूँ?"

"ऐसा क्यों सोचती हो, साशा?" सोफ़िया ने भी चालाकी से पूछा और उठकर उसके पास चली गयी। माँ भी समझ गयी कि साशा बुरा मान गयी है। सोफ़िया को ऐसा नहीं करना चाहिए था। उसने एक आह भरी और क्रोध से सोफ़िया की तरफ़ देखा।

"अगर ऐसा है तो मेरा इससे कोई मतलब नहीं!" साशा ने बिगड़कर कहा। "मैं इसमें बिल्कुल भी हाथ नहीं डालूँगी। जब आप लोग यही समझते हैं कि..."

"बस, बस, जाने दो, साशा!" निकोलाई ने धीरे से कहा।

माँ उसके पास जाकर उसके बालों पर हाथ फेरने लगी। साशा ने उसका हाथ पकड़ लिया और अपना तमतमाया हुआ चेहरा ऊपर उठाया। माँ ने मुस्कराकर आह भरी; उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे। सोफ़िया साशा के बगल में कुर्सी पर बैठ गयी और अपना हाथ उसके कन्धे पर रख लिया।

"तुम भी अजीब चीज़ हो!.." उसने रहस्यमयी मुस्कराहट के साथ साशा की आँखों में आँखें डालकर कहा।

"शायद मैंने ही बेवकूफ़ी की बात कही..."

"मगर तुम्हारे दिल में यह बात आयी कैसे?" सोफ़िया ने कहा, लेकिन निकोलाई ने बहुत ही खरी-खरी बात कह दी :

“अगर मुमकिन हो तो हमें उन्हें भगाने का इन्तज़ाम ज़रूर करना चाहिए। लेकिन सबसे पहले तो हमें यह मालूम करना चाहिए कि जेल में हमारे जो साथी हैं वे इसके लिए राजी भी हैं कि नहीं...”

साशा ने अपना सिर झुका लिया।

सोफ़िया ने सिगरेट जलायी और अपने भाई की तरफ़ कनखियों से देखकर माचिस की सलाई कोने में फेंक दी।

“उन्हें क्या एतराज हो सकता है!” माँ ने आह भरकर कहा। “लेकिन मुझे तो यकीन नहीं कि ऐसा हो भी सकता है...”

माँ इसके लिए बहुत उत्सुक थी कि वे लोग उसे यकीन दिला दें कि ऐसा मुमकिन है, लेकिन किसी ने यकीन नहीं दिलाया।

“मुझे वेसोवश्चिकोव से मिलना पड़ेगा!” सोफ़िया ने कहा।

“कल मैं तुम्हें बता दूँगी कि कब और कहाँ तुम उससे मिल सकोगी,” साशा ने कहा।

“उसका अब क्या करने का इरादा है?” सोफ़िया ने कमरे में टहलते हुए पूछा।

“नये छापेख़ाने में उसे टाइप बिठाने के काम पर लगाया जायेगा। उस वक़्त तक वह जंगल के रखवाले के साथ रहेगा।”

साशा की त्योरियों पर बल पड़े हुए थे और उसके चेहरे पर फिर हमेशा जैसी गम्भीरता आ गयी थी। वह बड़ी रुखाई से बोल रही थी।

“परसों जब तुम पावेल से मिलने जाओगी तो पावेल को एक रुक्का दे देना,” निकोलाई ने माँ के पास जाकर कहा। माँ चाय की प्यालियाँ धो रही थी। “बात यह है कि हमें यह मालूम करना है कि...”

“मैं समझ गयी, समझ गयी!” माँ ने जल्दी से उसे आश्वस्त करते हुए कहा। “मैं उसे पर्चा दे दूँगी...”

“अच्छा, मैं अब चलती हूँ!” साशा ने जल्दी से चुपचाप उससे हाथ मिलाकर कहा और बाहर चली गयी। वह इस समय भी तनकर चल रही थी और उसके क़दमों में एक असाधारण दृढ़ता थी।

साशा के चले जाने के बाद सोफ़िया माँ के कन्धों पर हाथ रखकर उसे कुर्सी पर झुलाती रही।

“निलोवना, अगर तुम्हारे ऐसी बहू होती तो क्या तुम उसे प्यार करतीं?..” उसने पूछा।

“काश, मैं उन दोनों को बस एक दिन के लिए ही साथ देख सकती!” माँ ने बड़ी हसरत से कहा; उसका गला रुँध गया था।

"हाँ, थोड़ी-सी ख़ुशी से तो किसी का नुकसान नहीं होता!.." निकोलाई ने बड़ी नरमी से कहा। "लेकिन थोड़े से सन्तोष किसे होता है। और जब कोई चीज़ बहुत हो जाती है, तो उसकी कदर नहीं रह जाती..."

सोफ़िया जाकर पियानो पर बैठ गयी और उसने एक उदास धुन छेड़ दी।

12

दूसरे दिन सबेरे ही लगभग तीस-चालीस आदमी अस्पताल के फाटक पर खड़े अपने साथी की अर्थी निकलने की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनमें कुछ जासूस भी थे जो उनकी बातें सुन रहे थे और उनके चेहरे, उनका बात करने का ढंग और उनकी बातें अच्छी तरह अपने दिमाग में बिठाते जा रहे थे। सड़क के पास कुछ पुलिसवाले कमर पर पिस्तौल लगाये हुए तैनात थे। जासूसों की इस बेहयाई पर और किसी भी समय अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने को तैयार पुलिसवालों की व्यंग्यपूर्ण मुस्कराहट पर जन-समुदाय को क्रोध आ रहा था। कुछ लोग अपने क्रोध को मज़ाक़ में टालने का प्रयत्न कर रहे थे; कुछ लोग बहुत गम्भीर मुद्रा बनाकर अपनी नज़रें झुकाये हुए थे कि वे उनके इस अपमानजनक व्यवहार को देखें ही नहीं और कुछ लोग ऐसे भी थे जो अपनी भावनाओं को छुपा नहीं पा रहे थे और इसलिए हाकिमों पर फब्तियाँ कस रहे थे कि उन्हें निहत्थी जनता से, जिसके पास अपनी जबान के अलावा कोई दूसरा हथियार नहीं होता, कितना डर लगता है। ऊपर शरद ऋतु का निर्मल आकाश नीचे पतझड़ की पीली पत्तियों से पटी हुई सड़कों को देख रहा था, हवा के झोंके इन पत्तियों को राहगीरों के क़दमों के पास इधर-उधर उड़ा रहे थे।

माँ भीड़ के बीच में खड़ी थी।

"बहुत कम लोग हैं, बहुत कम! और मज़दूर तो शायद कोई भी नहीं है," वह उन परिचित सूरतों को देखकर दुखी होकर सोचने लगी।

फाटक खुला और कुछ लोग ताबूत लेकर बाहर निकले, जिसका ढक्कन लाल फीतों में बँधे हुए हारों से सजा हुआ था। प्रतीक्षा करने वालों ने फ़ौरन अपनी टोपियाँ उतार लीं और ऐसा मालूम हुआ कि जैसे काली-काली चिड़ियों का एक झुण्ड सहसा उड़ गया हो। एक लम्बे कद का पुलिस अफ़सर, जिसके लाल चेहरे पर काली-काली छनी मूँछें थीं, लम्बे-लम्बे क़दम बढ़ाता हुआ जल्दी से भीड़ में घुसा और उसके पीछे-पीछे सिपाही अपने फ़ौजी बूटों को ज़ोर की आवाज़ के साथ पटकते हुए लोगों को ठेलते हुए आगे बढ़े।

"ये फीते हटा दो!" अफ़सर ने अपनी फटी हुई आवाज़ में आज्ञा दी।

मर्द ओर औरतें उसे घेरे खड़े थे और हाथ हिला-हिलाकर एक-दूसरे को

ठेलते हुए उत्तेजित स्वर में बातें कर रहे थे। माँ की आँखों के आगे लोगों के पीले उत्तेजित चेहरे नाच रहे थे, लोगों के होंठ काँप रहे थे, एक औरत के गालों पर आँसू ढलक रहे थे।

"हिंसा का नाश हो!" किसी नौजवान ने चिल्लाकर कहा, पर उसकी आवाज़ शीघ्र ही बहस के शोर में डूब गयी।

माँ के हृदय में जैसे किसी ने डंक मार दिया हो। उसने पास ही खड़े हुए एक नौजवान को, जो बुरे कपड़े पहने था, सम्बोधित करके क्रोध से कहा :

"वे हमें अपनी मर्जी का अंत्येष्टि संस्कार भी नहीं करने देते! कितनी शरम की बात है!"

लोगों की उत्तेजना बढ़ती गयी। लोगों के सिरों के ऊपर ताबूत का ढक्कन डगमगा रहा था, लाल फीते हवा में लहरा रहे थे और नीचे लोगों के सिरों और चेहरों को छू रहे थे, सूखे रेशम की सरसराहट सुनायी दे रही थी, ऐसा प्रतीत होता था कि मानो रेशम के फीते स्वयं घबरा रहे हों।

माँ को भय हुआ कि कहीं टक्कर न हो जाये और वह दायें-बायें खड़े हुए लोगों को सम्बोधित करके जल्दी-जल्दी बुड़बुड़ाती रही :

"अगर ये लोग यही चाहते हैं, तो भाड़ में जायें, फीते दे दो इन्हें! हमीं लोग सबर कर लें!.."

किसी की ऊँची तेज़ आवाज़ इस शोर-गुल को चीरती हुई सुनायी दी :

"हम माँग करते हैं कि हमें अपने साथी की क़ब्र तक उसके साथ जाने का हक दिया जाये – अपने उस साथी की क़ब्र तक जिसे तुम लोगों ने सता-सताकर मार डाला..."

किसी ने ऊँची आवाज़ में गाना शुरू किया :

"बलिदान तुम्हारा उच्च महान..."

"फीते उतार लो! याकोवलेव, काट दो फीते!"

एक तलवार सांय से चली। माँ ने आँखें बन्द कर लीं। वह सोच रही थी कि लोगों में खलबली मच जायेगी, लेकिन लोग सिर्फ़ घिरे हुए भेड़ियों की तरह दाँत निकालकर बुड़बुड़ाते रहे। चुपचाप सिर झुकाये वे आगे बढ़ते गये और उनके घिसटते हुए क़दमों की आवाज़ हवा में गूँजने लगी।

लोगों के सिरों के ऊपर ताबूत का ढक्कन और उस पर फूलों के कुचले हुए हार हवा में लहरा रहे थे ओर उनके बगल में घुड़सवार सिपाही ऐंठते हुए चल रहे थे। माँ सड़क के किनारे पटरी पर चल रही थी इसलिए उसे ताबूत दिखायी नहीं दे रहा था, देखते-देखते जनाजे के चारों ओर भीड़ बढ़ गयी थी और पूरी सड़क खचाखच भर गयी थी। घुड़सवार पुलिसवालों की भूरी आकृतियाँ पीछे रह

गयी थीं और जुलूस के दोनों ओर पुलिसवाले अपनी तलवारों के दस्तों पर हाथ रखे चल रहे थे। हर तरफ़ माँ को जासूसों की चिरपरिचित आँखें दिखायी दे रही थीं जो लोगों के चेहरों को बड़े ध्यान से देख रहे थे।

दो आदमियों ने शोक में डूबे हुए स्वर में गाना शुरू किया :

"विदा, साथी, विदा..."

"गाने की कोई ज़रूरत नहीं!" किसी ने चिल्लाकर कहा। "हम लोग ख़ामोशी से जुलूस में चलें!"

इस आवाज़ में बड़ा रोब था। शोक में डूबा हुआ गीत बन्द हो गया, लोगों की बातचीत भी धीमी पड़ गयी, सड़क के पत्थरों पर बस लोगों के बेजान क़दमों की सपाट आवाज़ सुनायी दे रही थी। वह आवाज़ लोगों के सिरों के ऊपर उठती हुई निर्मल आकाश में गूँजने लगी और वातावरण जैसे दूर से आती हुई तूफ़ान की पहली गरज से काँप गया। प्रतिक्षण तेज़ होती हुई ठण्डी हवा गर्द और शहर की सड़कों का तमाम कूड़ा उड़ाकर लोगों पर झोंक रही थी। हवा के झोंकों में उनके बाल और कपड़े उड़ रहे थे, उनके लिए आँखें खोलना भी नामुमकिन हो गया था; हवा के थपेड़े उनके पाँवों से लिपटे जा रहे थे...

यह ख़ामोश जनाजा जिसके साथ न पादरी थे और न शोक के मर्मस्पर्शी गीत ही, ये विचारमग्न चेहरे और चढ़ी हुई त्योरियाँ – इन सबको देखकर माँ का हृदय भयभीत हो उठा। उसके दिमाग में कुछ विचार धीरे-धीरे चक्कर काट रहे थे और वह उन्हें उदास शब्दों में व्यक्त कर रही थी :

"बहुत थोड़े हैं आप, सच्चाई के लिए लड़नेवाले..."

वह सिर झुकाये चली जा रही थी और उसे ऐसा लग रहा था कि वे येगोर को नहीं बल्कि किसी और चीज़ को द"न करने जा रहे हैं – किसी ऐसी चीज़ को जो उसे बहुत प्यारी थी और उसके लिए बहुत ज़रूरी थी। उसने अपने मन में एकाकीपन का दुख अनुभव किया। उसके हृदय में इन लोगों के प्रति जो येगोर को द"न करने जा रहे थे विरोध की एक घुटी हुई भयानक भावना उत्पन्न हुई।

"येगोर ईश्वर में विश्वास नहीं रखता था," माँ ने सोचा, "और ये लोग भी कोई ईश्वर में विश्वास नहीं रखते..."

वह इस बात के बारे में और ज़्यादा सोचना नहीं चाहती थी, इसलिए उसने आह भरकर यह भारी बोझ अपने सीने पर से उतार देने का प्रयत्न किया।

"हे भगवान! हे ईसा मसीह! क्या यह हो सकता है कि मैं भी – इन लोगों की तरह..."

वे लोग क़ब्रिस्तान में पहुँचे और कुछ देर तक क़ब्रों के बीच के पतले-पतले रास्तों में घूमते हुए एक खुली जगह पर पहुँचे, जहाँ चारों तरफ़

नीची–नीची सफ़ेद सलीबें लगी हुई थीं। चुपचाप वे एक नयी ख़ुदी हुई क़ब्र के चारों तरफ़ भीड़ लगाकर खड़े हो गये। क़ब्रों के बीच जीवित लोगों का यह गम्भीर मौन किसी भनायक घटना की चेतावनी दे रहा था जिसके कारण माँ के हृदय का स्पन्दन रुक गया। सलीबों के बीच से हवा गरजती और सीटी बजाती हुई गुजर रही थी और ताबूत के ढक्कन पर कुचले हुए फूलों से अठखेलियाँ कर रही थी...

पुलिसवाले अपने अफ़सर पर नज़रें जमाकर अटेन्शन की मुद्रा में खड़े हो गये। एक लम्बा–सा नौजवान, जिसका चेहरा पीला, भवें घनी और बाल लम्बे थे, क़ब्र के सिरे पर आकर खड़ा हो गया।

"सुनिये..." पुलिस अफ़सर ने भर्रायी हुई आवाज़ में चिल्लाकर कहा।

"साथियो!" नौजवान ने ऊँची आवाज़ में कहना शुरू किया।

"ज़रा रुकिये!" अफ़सर ने चिल्लाकर कहा। "मैं साफ़ कहे देता हूँ कि यहाँ भाषण देने की इजाजत नहीं दे सकता..."

"मैं सिर्फ़ कुछ शब्द कहूँगा!" नौजवान ने शान्त स्वर में उत्तर दिया। "साथियो, आइये, हम अपने दोस्त और गुरु की क़ब्र पर कसम खायें कि उसने हमें जो कुछ सिखाया है उसे कभी नहीं भूलेंगे और हममें से हर एक उम्र–भर उस ताकत की क़ब्र खोदता रहेगा जो हमारी मातृभूमि की सारी मुसीबतों की जड़ है। वह पापी जालिम शक्ति है – ज़ार की निरंकुशता!"

"गिरफ़्तार कर लो इसे!" अफ़सर ने चिल्लाकर कहा, पर उसकी आवाज़ बहुत–सी आवाज़ों के शोर में डूब गयी :

"ज़ारशाही मुर्दाबाद!"

पुलिसवाले भीड़ को चीरत हुए वक्ता की ओर बढ़े; उसके साथी उसके बचाव के लिए उसके चारों ओर सटकर खड़ थे।

"आजादी ज़िन्दाबाद!" उसने हाथ हिलाकर नारा लगाया।

माँ धक्का खाकर एक तरफ़ को हट गयी। भयभीत होकर वह एक सलीब का सहारा लेकर खड़ी हो गयी और उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं; वह सोच रही थी कि किसी भी क्षण उस पर वार होगा। कोलाहल से उसके कान फटे जा रहे थे, उसके पाँवों तले ज़मीन खिसकी जा रही थी। तेज़ हवा और भय के कारण वह साँस भी ठीक से नहीं ले पा रही थी। पुलिसवालों की सीटियाँ ख़तरे की चेतावनी दे रही थीं, अफ़सर कर्कश स्वर में आज्ञाएँ दे रहे थे, औरतें ज़ोर से चिल्ला रही थीं, चहारदीवारी की लकड़ियाँ चरमरा रही थीं और सूखी मिट्टी पर भारी बूटों की धमक सुनायी दे रही थी। यह सब कुछ इतनी देर तक होता रहा कि माँ वहाँ आँखें बन्द किये खड़े रहने की यातना को और अधिक सहन

न कर सकी।

उसने नज़र उठाकर देखा और बाँहें फैलाकर एक चीख़ मारकर आगे दौड़ी। कुछ ही दूर पर क़ब्रों के बीच एक पतली-सी गली में पुलिसवालों ने उस नौजवान को घेर लिया था और जो लोग उसे बचाने के लिए बढ़ते थे उन्हें वे मार-मारकर पीछे ढँकेल रहे थे। नंगी तलवारें बड़ी क्रूरता से चमक रही थीं, कभी लोगों के सिरों पर चमकतीं और कभी उनके बीच में धंस जाती थीं। बेंत और चहारदीवारी की टूटी हुई लकड़ियाँ हथियारों की तरह इस्तेमाल की जा रही थीं। लोग शोर मचाते हुए पागलों की तरह इधर-उधर नाच रहे थे और उस नौजवान का पीला चेहरा इस पूरे दृश्य पर छाया हुआ था। भावोत्तेजन के इस तूफ़ान को चीरता हुआ उसका दृढ़ स्वर सुनायी दिया :

"साथियो, अपनी शक्ति बेकार नष्ट न करो!.."

लोगों ने उसकी बात पर ध्यान दिया और अपनी लकड़ियाँ छोड़-छोड़कर वहाँ से भागने लगे, लेकिन माँ किसी अदम्य शक्ति से प्रेरित होकर आगे बढ़ती रही। उसने देखा कि निकोलाई अपनी टोपी गुद्दी की तरफ़ सरकाये उत्तेजित जन-समूह को पीछे ढँकेल रहा है।

"क्या तुम लोग पागल हो गये हो?" उसने लोगों को डाँटते हुए कहा। "शान्त हो जाओ!.."

माँ को ऐसा लगा कि जैसे उसके हाथ पर ख़ून लगा हुआ था।

"निकोलाई इवानोविच! यहाँ से भाग जाओ!" माँ ने उसकी तरफ़ झपटते हुए चिल्लाकर कहा।

"कहाँ जा रही हो? मार खा जाओगी..."

किसी ने माँ के कन्धे पर हाथ रखा और उसने मुड़कर देखा तो सोफ़िया नंगे सिर बाल बिखराये एक लड़के का हाथ पकड़े उसके बगल में खड़ी थी। वह लड़का जो अभी बिल्कुल बच्चा ही था अपने चेहरे पर से ख़ून पोंछ रहा था।

"मुझे छोड़ दो... कोई बात नहीं है..." वह काँपते हुए होंठों से बुदबुदा रहा था।

"लो इस सम्भालो – और हमारे घर पहुँचा दो! लो यह रूमाल, इसके चेहरे पर पट्टी बाँध देना!.." सोफ़िया ने जल्दी से कहा और लड़के का हाथ माँ के हाथ में थमाकर वहाँ से भाग गयी। "जल्दी जाओ, नहीं तो तुम्हें गिरफ़्तार कर लेंगे!.." उसने पीछे मुड़कर माँ से चिल्लाकर कहा।

लोग क़ब्रिस्तान में चारों तरफ़ तितर-बितर हो गये थे और पुलिसवाले अपने भारी बूट पटकते हुए क़ब्रों के बीच इधर-उधर भाग रहे थे, उनके लम्बे-लम्बे कोटों के दामन उनके पैरों में बार-बार उलझ रहे थे और वे अपनी तलवारें

चमकाते हुए गालियाँ बक रहे थे। लड़का भेड़िये की तरह उन्हें देख रहा था।

"जल्दी चलो!" माँ ने रूमाल से उसका मुँह पोंछकर कहा।

"तुम मेरी फ़िक्र न करो – ज़्यादा चोट नहीं लगी है," उसने ख़ून थूकते हुए कहा। "उसने तलवार की मूठ से मुझे मारा था। लेकिन उसे भी मैंने पूरा मजा चखा दिया! मैंने भी उसे इतने ज़ोर की लकड़ी रसीद की कि वह चीख़ उठा! तुम लोग ज़रा ठहर जाओ!" उसने अपनी ख़ून में भरी हुई मुट्ठी हिलाते हुए चिल्लाकर कहा। "अभी तो कुछ नहीं हुआ है, आगे देखना! एक बार जहाँ हम सब मज़दूर उठ खड़े हुए, तो बिना लड़े ही हम तुम्हारा सफाया कर देंगे!"

"जल्दी चलो!" माँ ने क़ब्रिस्तान की चहारदीवारी के छोटे-से फाटक की तरफ़ बढ़ते हुए कहा। वह कल्पना कर रही थी कि चहारदीवारी के पार खुले खेत में पुलिस उनकी ताक में बैठी होगी और उनके निकलते ही वे झपट पड़ेंगे और उन दोनों को बहुत मारेंगे। लेकिन फाटक पर पहुँचकर जब उसने चारों ओर खेत में नज़र दौड़ायी जहाँ शरद ऋतु की गोधूलि-वेला का झुटपुटा फैला हुआ था, तो उसे निस्तब्धता और निर्जनता के अलावा और कुछ दिखायी न दिया।

"लाओ, मैं पट्टी बाँध दूँ," उसने लड़के से कहा।

"रहने दो, मुझे कोई इस चोट से शर्म थोड़े ही आती है!" लड़के ने कहा। "बराबर की लड़ाई हुईं उसने मुझे मारा, मैंने उसे मारा..."

माँ ने जल्दी से घाव पर पट्टी बाँध दी। लड़के का ख़ून देखकर उसका हृदय संवेदना से भर उठा और जब उसने अनुभव किया कि उसका ख़ून कितना गर्म और गाढ़ा था तो उसके शरीर में झुरझुरी-सी दौड़ गयी। वह बग़ैर कुछ बोले उसे साथ लिये जल्दी-जल्दी खेत को पार कर गयी।

"कामरेड, आप मुझे कहाँ ले जा रही हैं?" लड़के ने अपने मुँह पर से पट्टी हटाते हुए बहुत अकड़कर पूछा। "मैं अकेला ही चला जाऊँगा!.."

लेकिन माँ ने अनुभव किया कि लड़के के हाथ काँप रहे थे और उसके पाँव लड़खड़ा रहे थे। वह लगातार बातें करता जा रहा था और उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना प्रश्न पूछता जा रहा था; उसका स्वर क्षीण होता जा रहा था :

"आप कौन हैं? मैं तो ठठेरा हूँ, मेरा नाम इवान है। येगोर इवानोविच के मण्डल में हम तीन थे – कुल मिलाकर तो ग्यारह लोग थे, लेकिन ठठेरे हम तीन ही थे। हमें वह बहुत अच्छा लगता था। मैं भगवान में यकीन नहीं रखता फिर भी मैं प्रार्थना करता हूँ कि भगवान उसकी आत्मा को शान्ति दे..."

एक सड़क पर पहुँचकर माँ ने किराये की गाड़ी कर ली और इवान को उसमें बिठाकर चुपके से उसके कान में कहा :

"कुछ बोलना नहीं!" और यह कहकर बड़ी सावधानी से उसके मुँह पर

पट्टी बाँध दी।

वह अपना हाथ उठाकर मुँह के पास तक ले गया, पर फिर उसे गोद में ढीला छोड़ दिया; उसमें पट्टी खोलने की सकत भी बाक़ी नहीं रही थी। पट्टी की तहों के पीछे से वह बुदबुदाता रहा :

"यारो, यह न समझ लेना कि मैं कभी भी इस बात को भूल जाऊँगा... उसके आने से पहले यहाँ तितोविच नाम का एक विद्यार्थी था... जो हमें पढ़ाया करता था... राजनीतिक अर्थशास्त्र... उसे गिरफ़्तार कर लिया गया..."

माँ ने अपनी बाँह इवान के गले में डालकर उसका सिर अपने सीने से लगा लिया। सहसा लड़का निढाल होकर पड़ रहा और बिल्कुल चुप हो गया। माँ ने भयविमूढ़ होकर चारों ओर घबराकर देखा। उसे डर लगा हुआ था कि पुलिसवाले किसी कोने से निकलकर झपटते हुए उसके पास आयेंगे और इवान के सिर पर पट्टी बँधी देखकर उसे पकड़कर मार डालेंगे।

"नशे में है?" गाड़ीवान ने अपनी जगह पर बैठे-बैठै ही पीछे मुड़कर पूछा और बड़ी सहृदयता से मुस्करा दिया।

"हाँ!" बहुत ज़्यादा पी ली!" माँ ने आह भरकर कहा।

"तुम्हारा बेटा है?"

"हाँ। जूते बनाता है। मैं रसोईदारिन हूँ..."

"बड़ी मुसीबत की ज़िन्दगी है तुम्हारी भी। हूँ-ऊँ..."

चाबुक फटकारकर गाड़ीवान ने फिर पीछे मुड़कर देखा।

"कुछ सुना तुमने अभी क़ब्रिस्तान में जो लड़ाई हुई?.." उसने धीमी आवाज़ में पूछा। "मैंने सुना है कि लोग किसी राजनीतिक आदमी को द"न करने आये थे - उन्हीं में से था कोई जो बड़े-बड़े लोगों के ख़िलाफ़ है, कोई झगड़ा है उनका उन लोगों के साथ। ऐसा लगता है कि जो लोग उसे द"न करने आये थे, वे सब एक ही किस्म के लोग थे - एक तरह से साथी थे एक-दूसरे के। वे नारे लगाने लगे। 'सरकार मुर्दाबाद! जनता को लूटनेवालों का नाश हो!' पुलिस ने आकर उन लोगों को पीटना शुरू कर दिया! सुना है कि कुछ लोग तो तलवार से मारे भी गये। लेकिन पुलिस की भी बड़ी पिटाई हुई..." वह एक क्षण के लिए चुप रहा। "मुर्दों को भी इस तरह सताते हैं!" उसने भयातुर स्वर में कहा और बड़े विस्मय से अपना सिर हिलाने लगा। "मुर्दों को भी चैन नहीं लेने देते!"

सड़क के पत्थरों पर गाड़ी की खड़खड़ से इवान का सिर धीरे से माँ के सीने से टकराया। गाड़ीवान पीछे को कुछ मुड़ा हुआ अपनी जगह पर बैठा बुड़बुड़ाता रहा :

"लोगों में बेचैनी पैदा हो गयी है - गड़बड़ी फैलती जा रही है! कल रात

हमारे एक पड़ोसी के यहाँ राजनीतिक पुलिसवाले आये थे। सुबह तक वे एक-एक चीज़ को उलट-पुलटकर तलाशी लेते रहे और चलते वक़्त एक लोहार को अपने साथ लेते गये। लोग कहते हैं कि आधी रात को उसे ले जाकर नदी में डुबो देंगे। वह लोहार बहुत भला आदमी था..."

"क्या नाम था उसका?" माँ ने पूछा।

"उस लोहार का? सावेल येवचेन्को। अभी उमर ज़्यादा नहीं थी उसकी, लेकिन जानता वह बहुत था। मालूम होता था कि कुछ जानना भी जुर्म है! वह हम लोगों के पास आकर कहा करता था, 'तुम कोचवानों की भी कैसी ज़िन्दगी है?' हम कहते, 'कुत्तों से भी बदतर!' "

"बस यहीं रोक दो!" माँ ने कहा।

गाड़ी को झटका लगने से इवान की आँख खुल गयी और वह धीरे से कराहा।

"बिल्कुल धुत्त है!" गाड़ीवान ने कहा। "वोदका से यही हाल होता है... "

बड़ी कठिनाई से इवान लड़खड़ाता हुआ टाँगन में पहुँचा।

"मैं बिल्कुल ठीक हूँ, मैं अकेला चला जाऊँगा," वह प्रतिरोध करता रहा।

13

सोफ़िया पहले ही घर पहुँच गयी थी। वह बहुत घबरायी हुई और उद्विग्न थी और दाँतों में सिगरेट दबाये हुए थी।

घायल लड़के को कोच पर लिटाकर उसने जल्दी से उसके सिर की पट्टी खोली और सिगरेट के धुएँ के कारण आँखें मिचमिचाकर आदेश देने लगी।

"इवान दनीलोविच, वह आ गया! निलोवना, थक गयी तुम? डर गयी थी, क्यों? अच्छा, अब आराम कर लो। निकोलाई, निलोवना को एक गिलास में थोड़ी सी पोर्ट तो दे दो!"

माँ पर जो कुछ बीती थी उसका आघात अभी तक उसके हृदय से दूर नहीं हुआ था। उसे साँस लेने में कठिनाई हो रही थी और सीने में तीव्र पीड़ा हो रही थी।

"मेरी फिकर न करो," उसने बुदबुदाकर कहा। पर उसके रोम-रोम में यह इच्छा समायी हुई थी कि कोई उसकी देखभाल करे - बड़े प्यार से उसकी छोटी-से-छोटी ज़रूरत की ओर ध्यान दे।

निकोलाई, जिसके हाथ पर पट्टी बँधी थी, दूसरे कमरे में से आया और माँ ने देखा कि उसके साथ डॉक्टर इवान दनीलोविच भी था, जिसके उलझे हुए

बाल साही के काँटों की तरह खड़े थे। वह सीधे इवान के पास गया और झुककर उसे देखने लगा।

"पानी," उसने कहा। "बहुत-सा पानी ले आओ और थोड़ी-सी रूई और साफ़ कपड़ा!"

माँ रसोई की तरफ़ चली, पर निकोलाई ने बाँह पकड़कर उसे खाने के कमरे में पहुँचा दिया।

"वह काम सोफ़िया से करने को कहा गया था," उसने बड़ी नरमी से कहा। "मेरा ख़याल है कि तुम बहुत परेशान हो, क्यों हो न?"

उसकी सहानुभूति-भरी पैनी दृष्टि के आगे माँ अपने आपको वश में न रख सकी।

"ओह, क्या हो गया है!" उसने सिसक-सिसककर रोते हुए कहा। "लोगों को उन्होंने किस बेरहमी से मारा, उनको तलवार से काटकर रख दिया!"

"मैंने सब देखा!" निकोलाई ने माँ को शराब का गिलास देते हुए सिर हिलाकर कहा। "दोनों ही तरफ़ लोग पागल हो गये थे। लेकिन तुम परेशान न हो। वे तलवार के चपटे से मार रहे थे। मालूम होता है सिर्फ़ एक आदमी को गहरी चोट आयी है। मैंने उसे अपनी आँख से देखा था और मैं उसे झगड़े में से बाहर निकाल लाया..."

निकोलाई की बात से माँ को कुछ धीरज बँधा। कमरे के सुखकर और प्रकाशमय वातावरण से भी उसके हृदय को काफ़ी शान्ति मिली। उसने बड़ी कृतज्ञता से निकोलाई को देखा।

"तुम्हें भी मार पड़ी?" माँ ने पूछा।

"नहीं, मेरा हाथ तो शायद मेरी ही गलती से कट गया – मैंने लापरवाही में अपना हाथ किसी चीज़ पर मार दिया, थोड़ी-सी खाल उधड़ गयी। लो, चाय पी लो। बाहर ठण्डक है और तुम कपड़े भी ठीक से नहीं पहने हो..."

माँ ने प्याली लेने के लिए हाथ बढ़ाया और देखा कि उसकी उँगलियों पर ख़ून सूख गया था। उसने जल्दी से अपना हाथ खींचकर अपनी गोद में रख लिया। उसका साया भीगा हुआ था। उसकी भवें ऊपर को चढ़ गयीं और वह आँखें फाड़कर अपनी उँगलियों को घूरती रही। उसका दिल ज़ोर से धड़क रहा था और उसे चक्कर आ रहा था :

"पावेल भी – मुमकिन है ये लोग उसके साथ भी ऐसा ही बर्ताव करें!"

इवान दनीलोविच वास्कट पहने और क़मीज़ की आस्तीनें समेटे हुए कमरे में आया। उसने निकोलाई के मूक प्रश्न का उत्तर बड़ी ऊँची आवाज़ में दिया :

"चेहरे पर का जख्म तो कोई ख़ास गहरा नहीं है, मगर इसकी खोपड़ी की

हड्डी चिटक गयी है, हालाँकि ज़्यादा नहीं चिटकी है – बहुत जीवट का आदमी है! मगर ख़ून बहुत बह गया है। इसे अस्पताल न भेज दें?"

"क्यों? यहीं रहने में क्या हर्ज है!" निकोलाई ने कहा।

"आज तो ठीक है और शायद कल भी। लेकिन फिर उसके बाद से मुझे ज़्यादा आसानी इसी में होगी कि वह अस्पताल में रहे। मुझे मरीजों को उनके घर जाकर देखने की फ़ुरसत नहीं मिलती। क़ब्रिस्तानवाली घटना के बारे में तुम एक पर्चा तैयार कर सकते हो?"

"तैयार कर दूँगा!" निकोलाई ने कहा।

माँ चुपचाप उठकर रसोई की तरफ़ चल दी।

"कहाँ जा रही हो, निलोवना?" निकोलाई ने बड़े आग्रह से उसे रोककर पूछा। "सोफ़िया तुम्हारी मदद के बिना ही सारा काम कर लेगी!"

माँ ने उसे एक नज़र देखा और काँपते हुए तथा विचित्र ढंग से हँसकर कहा : "मैं ख़ून से लथपथ हूँ..."

अपने कमरे में कपड़े बदलते समय वह इस बात पर आश्चर्य करती रही कि ये लोग कैसे इतने निश्चिन्त रहते हैं और इतनी भयानक बातों को कैसे इस तरह हँसकर बरदाश्त कर लेते हैं। इन विचारों ने उसकी उद्विग्नता को शान्त कर दिया और उसके हृदय से भय दूर हो गया। जब वह उस कमरे में आयी जहाँ वह घायल लड़का लेटा हुआ था तो उसने देखा कि सोफ़िया झुककर उससे कुछ बातें कर रही है।

"कामरेड, बेकार की बातें न करो!" वह कह रही थी।

"मेरी वजह से औरों को तकलीफ होती होगी!" उसने दबी जबान से प्रतिरोध किया।

"अच्छा, बातें न करो तो तुम्हारे लिए ज़्यादा अच्छा है..."

माँ सोफ़िया के कन्धे पर हाथ रखे उसके पीछे खड़ी थी और लड़के के सफ़ेद चेहरे को देखकर मुस्करा रही थी और सोफ़िया को बता रही थी कि गाड़ी में बैठकर जब वह न जाने कैसी-कैसी ख़तरनाक बातें बुड़बुड़ा रहा था तब वह कितना डर गयी थी। इवान की आँखें बुरी तरह जल रही थीं।

"मैं भी कितना बेवक़ूफ़ हूँ!" उसने शरमाते हुए कहा।

"अच्छा, अब हम लोग जाते हैं!" सोफ़िया ने उसे कम्बल उढ़ाते हुए कहा। "अब तुम सो जाओ!"

वे बैठक में चले गये और बड़ी देर तक दिन की घटनाओं पर चर्चा करते रहे। उन्होंने उसको अतीत की बात मान लिया था और वे दृढ़ विश्वास के साथ भविष्य की ओर देख रहे थे और अगले दिन के काम की योजनाएँ बना रहे थे।

चेहरे पर थकान के चिह्न होने पर भी उनके विचारों में साहस था और काम की बातें करते समय वे स्वयं अपने प्रति असन्तोष को छिपाने का कोई प्रयत्न नहीं कर रहे थे। डॉक्टर कुछ घबराकर कुर्सी पर पहलू बदलकर बैठ गया।

"आजकल केवल प्रचार ही काफ़ी नहीं है!" उसने अपने ऊँचे और तीखे स्वर में कुछ नरमी लाने का प्रयत्न करते हुए कहा। "नौजवान मज़दूर ठीक कहते हैं! हमें अपने आन्दोलन-क्षेत्र को विस्तृत करना चाहिए। मैं आपसे कहता हूँ, मज़दूर ठीक कहते हैं..."

निकोलाई त्योरियों पर बल डालकर डॉक्टर के स्वर में बोला :

"हर तरफ़ से यही शिकायत आती है कि पढ़ने के लिए काफ़ी चीज़ें नहीं मिलतीं फिर भी हम अभी तक एक अच्छा-सा छापाख़ाना नहीं खोल पाये हैं। लूदमीला काम करते-करते अपनी जान दिये दे रही है। अगर हमने उसकी मदद के लिए कोई आदमी न दिया, तो किसी दिन वह बीमार हो जायेगी..."

"वेसोवश्चिकोव के बारे में क्या ख़याल है?" सोफ़िया ने पूछा।

"वह शहर में नहीं रह सकता। वह तो तभी काम शुरू कर सकता है, जब हम नया छापाख़ाना क़ायम कर लें, लेकिन जब तक हमें एक और आदमी न मिल जाये, जब तक हम यह भी तो नहीं कर सकते..."

"मुझसे काम नहीं चलेगा?" माँ ने चुपके से पूछा।

तीनों कुछ बोले बिना कई क्षण तक उसे देखते रहे।

"यह भी अच्छा विचार है!" सोफ़िया ने ख़ुश होकर कहा।

"निलोवना, यह काम तुम्हारे लिए बहुत कठिन है!" निकोलाई ने रुखाई से कहा। "तुम्हें शहर से बाहर रहना पड़ेगा, जिसका मतलब है कि तुम पावेल से नहीं मिल सकोगी। और फिर आम तौर पर भी..."

"इससे पावेल को तो कोई ख़ास नुकसान होगा नहीं," माँ ने आह भरकर कहा। "और, सच पूछो तो, मेरे लिए भी उससे मिलने जाना एक मुसीबत है! मुझे उससे बात नहीं करने दी जाती - बस, मैं वहाँ खड़े-खड़े बेवक़ूफ़ों की तरह उसे देखती रहती हूँ और वे लोग मेरे मुँह को घूरते हैं कि कहीं मैं उससे कोई ऐसी बात न कह दूँ जो मुझे न कहना चाहिए..."

पिछले कुछ दिनों की भागदौड़ से वह बिल्कुल थककर चूर हो गयी थी। इसीलिए शहर के कोलाहल से दूर रहने की सम्भावना उपस्थित होते ही उसने सोचा कि यह मौक़ा हाथ से न जाने देना चाहिए।

पर निकोलाई ने बातचीत का विषय बदल दिया।

"इवान, तुम क्या सोच रहे हो?" उसने डॉक्टर को सम्बोधित करते हुए कहा।

डॉक्टर ने अपना झुका हुआ सिर ऊपर उठाया।

"मैं सोच रहा था कि हम लोग कितने थोड़े हैं!" उसने उदास स्वर में उत्तर दिया। "हमें ज़्यादा मेहनत से काम करना होगा... हमें पावेल और अन्द्रेई को भी राजी करना होगा कि वे जेल से भाग आयें। वे दोनों बहुत काम के हैं, हम उन्हें इस तरह वहाँ बेकार नहीं बैठा रहने दे सकते..."

निकोलाई ने भवें सिकोड़कर अपना सिर हिलाया और एक नज़र माँ पर डाली। यह समझकर कि वे लोग उसके सामने उसके बेटे के बारे में बातें करने में संकोच करते थे, माँ उठकर वहाँ से चली गयी : उसे इस बात का बड़ा दुख हुआ कि उन्होंने उसकी इच्छा को ठुकरा दिया था। वह आँखें खोले बिस्तर पर लेटी हुई थी और उनकी फुसफुसाहट सुन रही थी। उसका हृदय आतंक से भर उठा।

उस दिन की अशुभसूचक घटनाएँ उसकी समझ में बिल्कुल नहीं आ रही थीं पर वह इसके बारे में सोचना नहीं चाहती थी। हृदय को उद्विग्न करनेवाली सारी स्मृतियों को दूर हटाकर वह केवल पावेल के बारे में सोचने लगी। वह चाहती थी कि वह आजाद हो जाये, पर साथ ही उसे डर भी लगता था। उसे ऐसा आभास होता था कि उसके चारों ओर की सारी घटनाएँ एक चरम बिन्दु की ओर, किसी भीषण संघर्ष की ओर बढ़ रही थीं। लोग अब तक धैर्यपूर्वक सब कुछ सहन करते आये थे पर अब भविष्य की आशंका से उनकी भावनाओं में एक उत्तेजना आ गयी थी। उनकी झुँझलाहट बहुत बढ़ गयी थी। चारों ओर उसे भाँति-भाँति के शब्द सुनायी देते थे और हर चीज़ से असन्तोष टपकता था... जब भी कोई पर्चा बँटता, तो बाज़ार में, दुकानों में, नौकरों और दस्तकारों के बीच उस पर गरमागरम बहस होती। शहर में जब भी कोई गिरफ़्तार होता, तो लोग भयभीत और चिन्तित होकर इस पर चर्चा करते कि ऐसा क्यों हुआ। कभी-कभी अनजाने ही उनकी बातों में सहानुभूति की झलक उत्पन्न हो जाती। अधिकाधिक वह साधारण लोगों को ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हुए सुनती जिन्हें सुनकर उसे स्वयं एक ज़माने में डर लगता था : विद्रोह, समाजवादी, राजनीति आदि। यदि कोई इन शब्दों का प्रयोग व्यंग्य के साथ करता तो उस व्यंग्य के पीछे कौतूहल छुपा होता; यदि द्वेष के साथ करता तो उस द्वेष के पीछे भय छुपा होता और यदि कोई सोच-समझकर इनका प्रयोग करता, तो उस विचारशीलता में आशा भी होती और चुनौती भी। गतिहीन जीवन के इस अन्धकारमय जल-विस्तार पर असन्तोष के घेरे धीरे-धीरे बढ़ते गये। जो विचार अब तक दबे हुए थे वे जाग पड़े और दिन की घटनाओं को चुपचाप स्वीकार कर लेने की अब तक की प्रवृत्ति भंग हो गयी। दूसरों की अपेक्षा माँ इस बात को ज़्यादा अच्छी तरह समझती थी क्योंकि जीवन

की क्रूर विधि का ज्ञान उसे दूसरों की अपेक्षा अधिक था और अब जीवन में बढ़ती हुई विचारशीलता और असन्तोष को देखकर वह प्रसन्न भी हुई और भयभीत भी – प्रसन्न इसलिए कि उसे इसमें अपने बेटे के प्रयासों का फल दिखायी देता था और भयभीत इसलिए कि वह जानती थी कि अगर वह जेल से भाग निकला तो वह फिर इस संघर्ष से सबसे आगे जा खड़ा होगा जहाँ ख़तरा सबसे ज़्यादा था। और वहाँ वह मारा जायेगा।

कभी-कभी उसके बेटे की आकृति कहानियों के नायकों का रूप धारण कर लेती और वे सभी अच्छे और प्रेरणामय शब्द जो उसने अपने जीवन में सुने थे, वे सभी लोग जिनको उसने अपने जीवन में सराहा था और वे सभी ज्योतिर्मय तथा वीरतापूर्ण बातें जिनसे वह परिचित थी, उसके बेटे की आकृति में मूर्त्त हो उठतीं। उस समय उसका हृदय गर्व और ममता से भर उठता और वह चुपचाप भाव-विह्वल होकर उसकी कल्पना करने लगती।

"सब कुछ ठीक हो जायेगा!" वह सोचती।

परन्तु फिर उसकी मातृत्व की भावना वृहत्तर मानवता के प्रति उसकी भावनाओं को उसके हृदय से दूर कर देती, उन्हें इस तरह नष्ट कर देती जैसे वे किसी प्रचण्ड ज्वाला में भस्म हो गयी हों और उसकी उदात्त भावनाओं की राख में केवल यही एक व्यथित विचार स्पन्दन करता रहता :

वे उसे मार डालेंगे... वे उसे मार डालेंगे!.."

14

अगले दिन दोपहर के समय वह जेल के दफ़्तर में पावेल के सामने बैठी अपनी धुँधली आँखों से उसका चेहरा देख रही थी। उसकी दाढ़ी बहुत बढ़ गयी थी, वह उस अवसर की प्रतीक्षा कर रही थी कि उसे वह पर्चा कैसे दे जो वह अपनी उँगलियों में दबाये हुए थी।

"मैं मजे में हूँ और बाक़ी सब लोग भी मजे में हैं!" पावेल ने धीरे से कहा। "तुम कैसी हो?"

ठीक हूँ! येगोर इवानोविच मर गया!" माँ ने बिल्कुल यन्त्रवत् उत्तर दिया।

"ओह!" पावेल ने चौंककर कहा और चुपचाप अपना सिर झुका लिया।

"उसे द"न करते वक़्त पुलिस ने झगड़ा शुरू कर दिया और एक आदमी को गिरफ़्तार कर लिया!" माँ बड़े भोलेपन से कहती रही। नायब जेलर ने जबान से एक चिचकारी ली और उछलकर खड़ा हो गया।

"क्या तुम्हें नहीं मालूम कि ऐसी बातें कहने की मनाही है?" उसने बुड़बुड़ाकर कहा। "राजनीति की बातें करने की इजाजत नहीं है!..."

माँ भी खड़ी हो गयी।

"मैं राजनीति की नहीं बल्कि एक झगड़े की बातें कर रही थी!" माँ ने खिसियाकर कहा। "सचमुच बड़े ज़ोर की लड़ाई हुई एक आदमी की तो उन लोगों ने खोपड़ी भी खोल दी..."

"इससे कोई फर्क नहीं पड़ता! मैं कहता हूँ कि इस बात की कोई चर्चा नहीं होनी चाहिए! मेरा मतलब यह है कि किसी ऐसी बात की चर्चा न होनी चाहिए जिसका तुमसे निजी ताल्लुक न हो – यानी तुम सिर्फ़ अपने खानदान, अपने घर और ऐसी ही चीज़ों के बारे में बात कर सकती हो!"

यह महसूस करते हुए कि वह गड़बड़ा गया है, वह फिर मेज पर जाकर बैठ गया और कागज़ उलटने-पलटने लगा।

"इन सब बातों की जिम्मेदारी मुझ पर आती है," उसने उकताये हुए स्वर में उत्तर दिया।

मौक़ा देखकर माँ ने जल्दी से रुक्का पावेल के हाथ में थमा दिया और सन्तोष की साँस ली।

"मालूम नहीं किन बातों के बारे में बात करने की इजाजत है," उसने कहा।

"मालूम तो मुझे भी नहीं है," पावेल ने हँसकर कहा।

"तो फिर यहाँ आते क्यों हो!" नायब जेलर ने झुँझलाकर उत्तर दिया। "यह तक मालूम नहीं कि बात क्या करनी चाहिए, बस आ जाते हैं यहाँ लोगों को परेशान करने..."

"क्या मुक़दमा जल्दी चलने वाला है?" माँ ने पूछा।

"सरकारी वकील अभी कुछ दिन हुए आया था, वह कह रहा था कि मुक़दमा जल्दी ही होगा..."

उन्होंने इसी तरह की दो-चार छोटी-मोटी बातें कीं और माँ ने देखा कि पावेल उसे बड़े प्यार से देख रहा है। वह हमेशा की तरह शान्त और गम्भीर था। वह बिल्कुल भी नहीं बदला था। सिर्फ़ उसके हाथ कुछ सफ़ेद हो गये थे और दाढ़ी बढ़ गयी थी जिसके कारण उसकी उम्र बहुत ज़्यादा मालूम होने लगी थी। माँ उसे एक ख़ुशख़बरी सुनाना चाहती थी, वह उसे निकोलाई के बारे में बताना चाहती थी। इसलिए उसने उसी मासूमियत के साथ, जिससे कि वह अब तक छोटी-मोटी बातें कर रही थी, कहा :

"उस दिन तुम्हारे धर्मपुत्र से भेंट हुई थी..."

पावेल चुपचाप प्रश्नसूचक दृष्टि से उसकी आँखों में आँखें डालकर देखता रहा। माँ उसे वेसोवश्चिकोव के चेहरे पर चेचक के दागों की याद दिलाने के लिए अपने गालों पर उँगलियों से संकेत करने लगी।

"वह लड़का ठीक चल रहा है – उसे जल्दी ही काम मिल जायेगा।"

पावेल समझ गया और उसने सिर हिला दिया; उसकी आँखों में उल्लास-भरी मुस्कराहट नाच रही थी।

"यह तो बड़ा अच्छा हुआ!" उसने कहा।

"अच्छा, और तो कोई बात कहने को है नहीं!" माँ ने कहा। वह अपनी सफलता पर बहुत प्रसन्न थी और अपने बेटे की ख़ुशी में वह भी ख़ुश थी।

पावेल ने विदा होते समय उसका हाथ कसकर दबाते हुए कहा :

"बहुत-बहुत धन्यवाद, माँ!"

यह उल्लासमय आभास कि वे दोनों एक-दूसरे के कितने निकट हैं माँ पर तेज़ शराब के नशे की तरह छा गया। उसका उत्तर देने को माँ को शब्द नहीं मिल रहे थे, इसलिए वह चुपचाप उसका हाथ थामे रही।

जब वह घर पहुँची, तो साशा वहाँ उसका इन्तज़ार कर रही थी। जिस दिन माँ पावेल से मिलने जेल जाती थी, साशा आम तौर पर उस दिन उससे मिलने ज़रूर आती थी। वह कभी पावेल के बारे में कुछ नहीं पूछती थी और अगर माँ ख़ुद भी उसका जिक्र न करती, तो वह माँ की आँखों में आँखें डालकर देखती रहती और इस प्रकार अपनी उत्सुकता को शान्त करती। परन्तु इस बार उसने बड़ी उत्सुकता से पूछा :

"वह कैसा है?"

"ठीक है!"

"तुमने रुक्का दे दिया था उसे?"

"हाँ! तुम देखती कि मैंने किस चालाकी से उसके हाथ तक रुक्का पहुँचा दिया..."

"पढ़ा था उसने?"

"वहाँ? वहाँ कैसे पढ़ सकता था?"

"अरे हाँ, मैं तो भूल ही गयी थी!" साशा ने धीरे से कहा। "हमें एक हफ़्ते तक और इन्तज़ार करना पड़ेगा – पूरे एक हफ़्ते! तुम्हारा क्या ख़याल है, क्या वह राजी हो जायेगा?"

साशा भवें चढ़ाकर बड़ी उत्सुकता से माँ को देखती रही।

"मैं कुछ कह नहीं सकती," माँ ने सोचते हुए कहा, "अगर कोई ख़तरे की बात नहीं होगी, तो राजी क्यों नही हो जायेगा?"

साशा ने अपना सिर झटका।

"भला तुम्हें मालूम है कि रोगी को खाना क्या दिया जाता है?" साशा ने रुखाई से पूछा। "उसे भूख लगी है।"

“वह कुछ भी खा सकता है! ज़रा रुको मैं अभी...”

वह रसोई में चली गयी और साशा भी उसके पीछे हो ली।

“मुझे बताओ क्या करना है, मैं कर दूँ!”

“अरे नहीं, रहने दो!”

माँ ने झुककर चूल्हे में से एक लोटा निकाला।

“एक बात कहनी थी मुझे,” लड़की ने धीमे से कहा।

उसका चेहरा पीला पड़ गया, आँखें मानो वेदना से फट गयीं और उसने काँपते हुए होंठों से बहुत ही दबी जबान में कहा :

“मैं यह कहना चाहती थी कि मुझे पूरा यकीन है कि वह राजी नहीं होगा! मैं तुमसे प्रार्थना करती हूँ कि तुम किसी तरह समझा-बुझाकर उसे राजी कर लो! हम लोगों को उसकी बहुत सख़्त ज़रूरत है। उससे कहना कि जिस लक्ष्य के लिए वह लड़ रहा है उसके लिए यह ज़रूरी है। उससे कहना कि मुझे उसके स्वास्थ्य की तरफ़ से बड़ी चिन्ता है। तुम ख़ुद ही देख लो – अभी तक मुक़दमे की तारीख भी तय नहीं हुई है...”

यह स्पष्ट था कि उसे यह सब कहने के लिए बड़ा प्रयास करना पड़ रहा था। उसकी आवाज़ लड़खड़ा रही थी, और वह आँखें चुराये सीधी तनकर खड़ी हुई थी। थोड़ी देर बाद उसने मानो थककर अपनी आँखें मूँद लीं और अपना होंठ काटने लगी। माँ को उसकी बन्द मुट्ठी में उँगलियों के चटखने की आवाज़ साफ़ सुनायी दे रही थी।

साशा की इस आकस्मिक घोषणा से पेलागेया निलोवना कुछ बौखला गयी, पर साशा के हृदय की भावनाओं को समझकर उसने अपनी बाँहें उसके गले में डाल दीं।

“मेरी बच्ची!” उसने उदास स्वर में कहा, “वह अपने अलावा किसी की बात सुनता कब है – किसी की नहीं सुनता!”

थोड़ी देर तक वे दोनों एक-दूसरे से लिपटी वहाँ चुपचाप खड़ी रहीं।

फिर साशा ने चुपचाप अपने आपको माँ के बाहुपाश से छुड़ा लिया।

“तुम ठीक कहती हो!” उसने काँपते हुए कहा। “मेरी बेवक़ूफ़ी थी जो मैंने कहा। मेरे दिमाग पर एक बोझ था सो मैंने उतार दिया...”

फिर बहुत ही कामकाजी ढंग से उसने शान्त भाव से कहा :

“अच्छी बात है, लाओ, अब घायल को खाना खिला दें...”

वह इवान के पास बैठ गयी और उससे पूछने लगी कि उसके सिर में दर्द तो नहीं हो रहा है।

“बहुत तो नहीं हो रहा है लेकिन अब भी हर चीज़ धुँधली-धुँधली दिखायी

देती है! कमज़ोरी बहुत मालूम होती है," उसने उत्तर दिया और कुछ शरमाकर कम्बल अपनी ठोड़ी तक खींच लिया ओर इस तरह आँखें सिकोड़कर देखने लगा मानो रोशनी में उसकी आँखें चौंधिया रही हों। साशा समझ गयी कि वह इतना शर्मीला है कि उसके सामने खायेगा नहीं, इसलिए वह उठकर बाहर चली गयी।

इवान उठकर बैठ गया ओर उसे बाहर जाते हुए देखता रहा।

"कितनी ख़ूबसूरत है!" उसने आँख मिचकाकर कहा।

इवान की नीली आँखों में उल्लास भरा था, उसके दाँत बहुत छोटे-छोटे और सुडौल थे और उसकी आवाज़ अभी बदल ही रही थी।

"तुम्हारी उम्र क्या है?" माँ ने विचारमग्न होकर पूछा।

"सत्रह साल..."

"तुम्हारे माँ-बाप कहाँ हैं?"

"गाँव में। मैं जब दस बरस का था तब से यहाँ हूँ! स्कूल की पढ़ाई ख़त्म करके सीधे यहीं चला आया था। कामरेड, आपका नाम क्या है?"

"मेरा नाम जानकर क्या करोगे?" माँ ने मुस्कराकर कहा। जब कोई माँ को 'कामरेड' कहकर पुकारता तो उसे गुदगुदी-सी होती।

"देखिये, बात यह है," उसने थोड़ी देर बाद कुछ खिसियाकर कहा, "हमारे मण्डल में एक विद्यार्थी हम लोगों को पढ़ाने आता था, उसने हमें पावेल व्लासोव नाम के एक मज़दूर की माँ के बारे में बताया था। आपको पहली मई के जुलूस की याद है?"

माँ ने सिर हिलाया और फ़ौरन सतर्क हो गयी।

"वह पहला आदमी था जो सड़क पर हमारी पार्टी का झण्डा लेकर निकला था!" लड़कें ने बड़े गर्व के साथ कहा और उसका यह गर्व माँ के हृदय में प्रतिध्वनित होने लगा।

"मैं उस वक़्त वहाँ नहीं था – हम लोग अपना अलग जुलूस निकालना चाहते थे मगर हम कामयाब न हो सके! हम लोग बहुत थोड़े थे। लेकिन आप देखियेगा अगले साल हम लोग जुलूस ज़रूर निकालेंगे!"

भविष्य के उत्साह में उसके लिए साँस लेना भी कठिन हो रहा था।

"मैं उसी व्लासोव की माँ की बात कर रहा था," उसने अपना चम्मच हिलाते हुए आख़िर में कहा, "उसी के बाद वह भी पार्टी में भरती हुई लोग कहते हैं वह सचमुच बहुत ही कमाल की औरत है!"

माँ खिलकर मुस्करा दी। लड़के के मुँह से अपनी प्रशंसा सुनकर उसे बड़ी ख़ुशी हो रही थी। ख़ुशी भी हो रही थी और कुछ परेशानी भी। वह उससे कहना चाहती थी : "मैं ही हूँ व्लासोव की माँ!" लेकिन इसके बजाय उसने अपने मन

में कोमल व्यंग से कहा, "तुम भी निरी बेवक़ूफ़ हो और कुछ नहीं!.."

"लो, थोड़ा-सा और खा लो! जल्दी से अच्छे हो जाओ, तुम्हें अपने लक्ष्य के लिए अभी बहुत काम करना है!" माँ ने सहसा जोश में आकर लड़के की तरफ़ झुककर कहा।

सड़क की तरफ़वाला दरवाज़ा खुला और शरद ऋतु की नम ठण्डी हवा का एक झोंका अन्दर आया। माँ ने नज़र उठाकर दरवाज़े के पास खड़ी हुई सोफ़िया को देखा। वह वहाँ खड़ी मुस्करा रही थी और उसका चेहरा गुलाब के फूल की तरह खिला हुआ था।

"कमाल हो गया, जिस तरह जासूस मेरे पीछे चल रहे हैं उसे देखकर मालूम होता है कि मुझे कोई बहुत बड़ी जायदाद मिलने वाली है! मुझे अब यहाँ से खिसक जाना चाहिए... अच्छा, इवान, तुम अब कैसे हो? तबियत पहले से अच्छी है न? निलोवना, पावेल की क्या ख़बर है? साशा यहाँ है?"

उसने एक सिगरेट जलाकर बड़ी प्यार-भरी नज़रों से माँ और उस लड़के को अपनी भूरी आँखों से देखा और जवाब की प्रतीक्षा किये बिना एक के बाद एक सवाल पूछती रही। माँ उसे देखकर मुस्कराती रही।

"मुझे भी अब इन नेक लोगों में गिना जाने लगा है!" उसने सोचा।

वह फिर इवान के पास चली गयी।

"बेटा, जल्दी से अच्छे हो जाओ!" उसने कहा।

यह कहकर वह खाने के कमरे में गयी जहाँ सोफ़िया साशा से बातें कर रही थी।

"उसने तीन सौ कापियाँ तैयार कर ली हैं! अगर इसी तरह वह काम करती रही, तो किसी दिन मर जायेगी! कमाल है! साशा, ऐसे लोगों के बीच रहना, उनकी साथी होना और उनके साथ काम करना, यह भी कितने सौभाग्य की बात है..."

"है तो!" साशा ने नरमी से उत्तर दिया।

शाम को चाय पीते समय सोफ़िया ने माँ को सम्बोधित करके कहा :

"निलोवना, तुम्हें एक बार फिर देहात जाना पड़ेगा।"

"अच्छी बात है! कब?"

"तुम्हारा क्या ख़याल है, तीन दिन में यह काम कर सकोगी?"

"कर लूँगी..."

"इस बार तुम्हें किराये की गाड़ी लेकर दूसरे रास्ते से, निकोल्स्कोये जिले से होकर जाना पड़ेगा," निकोलाई ने कहा।

वह बहुत परेशान और गम्भीर था। यह मुद्रा उसे शोभा नहीं देती थी; उसकी

हमेशा की शील तथा उदार मुद्रा इस प्रकार बिगड़ जाती थी।

"वह तो बहुत लम्बा रास्ता है, निकोल्स्कोये होकर!" माँ ने कहा। "और फिर किराये की गाड़ी करना तो महंगा..."

"सच पूछो तो," निकोलाई बोला, "मैं वहाँ जाने के ख़िलाफ़ हूँ। वहाँ की हालत ठीक नहीं है – कुछ लोग गिरफ़्तार किये गये हैं। सुना है किसी मास्टर को गिरफ़्तार किया गया है। हमें ज़्यादा सावधान रहना चाहिए। क्या यह अच्छा न होगा कि हम कुछ दिन इन्तज़ार करें?..."

"हमें उन लोगों के पास लगातार पढ़ने के लिए मसाला पहुँचाते रहना चाहिए," सोफ़िया ने उँगलियों से मेज पर तबला बजाते हुए कहा। "निलोवना, क्या तुम्हें जाने से डर लगता है?" उसने सहसा पूछा।

माँ के दिल पर चोट-सी लगी।

"मुझे कभी डर लगा है? जब मैं पहली बार गयी थी, तब भी मुझे डर नहीं लगा था... मेरी समझ में नहीं आता कि आख़िर अब क्यों..." उसने वाक्य पूरा किये बिना ही अपना सिर झुका लिया। जब भी वे लोग उससे पूछते, 'तुम्हें डर तो नहीं लगता', या 'तुम्हें कोई एतराज तो नहीं है', या 'तुम यह काम कर सकोगी', तो उसे ऐसा लगता कि वे उससे कोई एहसान करने को कह रहे हैं और उसे सबसे अलग समझा जाता है, उसके साथ वैसा बर्ताव नहीं किया जाता जैसा वे आपस में एक-दूसरे के साथ करते हैं।

"मुझसे यह क्यों पूछा जाता है कि मुझे डर तो नहीं लगता?" उसने रुँधे हुए स्वर में कहा। "तुम एक-दूसरे से तो यह सवाल नहीं पूछते।"

निकोलाई ने अपना चश्मा उतारकर फिर पहन लिया और अपनी बहन को घूरकर देखने लगा। माँ ख़ामोशी के इस तनाव को बरदाश्त न कर सकी; वह अपराधियों की तरह उठी और कुछ कहने ही जा रही थी कि सोफ़िया ने उसका हाथ पकड़कर उसे रोक दिया।

"मुझे माफ़ कर दो! मैं अब कभी ऐसा नहीं कहूँगी!" उसने बड़ी नरमी से कहा।

यह सुनकर माँ के चेहरे पर मुस्कराहट दौड़ गयी; कुछ ही मिनट बाद वे तीनों माँ के जाने की योजना पर बहस कर रहे थे।

15

बहुत तड़के ही माँ किराये की घोड़ागाड़ी पर खड़बड़ करती हुई एक ऐसी सड़क पर जा रही थी जिसे शरद ऋतु की वर्षा के जल ने धोया था। तेज़ हवा चल रही थी और चारों ओर कीचड़ के छींटे उड़ रहे थे। गाड़ीवान अपनी जगह

पर से पीछे मुड़-मुड़कर नाक के सुर में उससे अपना दुखड़ा रो रहा था :

"मैंने उससे कहा, अपने भाई से – कि मैं कहता हूँ कि तुम बँटवारा क्यों नहीं कर लेते! तो हमने बँटवारा कर लिया..."

सहसा उसने बायीं तरफ़वाले घोड़े पर चाबुक फटकारा और ग़ुस्से से चिल्लाया :

"चल बे, हरामजादे!"

शरद ऋतु के मोटे-मोटे कौए ख़ाली पड़े खेतों में बड़ी उत्सुकता से फुदक रहे थे और चारों ओर ठण्डी हवा सांय-सांय कर रही थी। हवा के झोंकों का मुकाबला करने के लिए कौए बहुत तन-तनकर चल रहे थे, लेकिन हवा उनके परों को छेड़ती हुई गुजरती और उनके लिए अपने पाँव जमाये रखना असम्भव हो जाता और वे बड़े अनमनेपन से पर फड़फड़ाते हुए उड़कर दूसरी जगह जा बैठते।

"तो उसने किया क्या कि जाकर सारी चीज़ों पर कब्जा जमा लिया और मैंने देखा कि मेरे लिए कुछ बाक़ी ही नहीं रह गया है..." गाड़ीवान कहता रहा।

माँ उसकी बातें इस तरह सुनती रही मानो कोई स्वप्न देख रही हो। उसके स्मृति-पट पर पिछले कुछ वर्षों की घटनाएँ घूम गयीं और उसने अपने आपको सक्रिय रूप से उनमें भाग लेता हुआ पाया। पहले उसे जीवन की परिस्थितियाँ ऐसी मालूम होती थीं कि जैसे किसी ने बहुत दूर बैठकर उन्हें निर्धारित कर दिया हो – किसने और किस उद्देश्य से, यह तो कोई भी नहीं जानता था; परन्तु अब बहुत-सी परिस्थितियाँ उसके देखते-देखते बदलती जा रही थीं और वह स्वयं भी इस परिवर्तन में भाग ले रही थी। इस बात पर वह अपने आप से सन्तुष्ट तो थी, पर उसे अपनी शक्ति पर विश्वास न था। वह बहुत परेशान और उदास थी...

उसके चारों ओर हर चीज़ बहुत मन्द गति से चल रही थी, आकाश पर सुरमई बादल एक-दूसरे का पीछा कर रहे थे, सड़क के दोनों ओर के पेड़ गाड़ी के गुजरते समय अपनी भीगी हुई पल्लवहीन डालें हिला देते थे, खेतों के क्रम के बाद नीची-नीची पहाड़ियाँ आतीं और फिर वे भी ग़ायब हो जातीं।

गाड़ीवान की नाक का सुर, घोड़े के साज में लगी हुई घण्टियों की टन-टन, नम हवा की सरसराहट – इन सब आवाज़ों ने मिलकर एक कम्पनशील धारा का रूप धारण कर लिया था जो खेतों पर निरन्तर प्रवाहित हो रही थी...

"पैसेवाले के लिए स्वर्ग भी काफ़ी नहीं होता!.." गाड़ीवान अपनी जगह पर बैठे-बैठे झूम-झूमकर कहता रहा। "तो उसने मुझे और भी कसना शुरू किया – सारे हाकिमों से उसकी दोस्ती थी..."

एक चौकी पर पहुँचकर उसने घोड़े खोले दियो।

“मुझे शराब पीने के लिए पाँच कोपेक दे दो!” उसने बड़े विनयभरे स्वर में कहा।

माँ ने पाँच कोपेक का एक सिक्का उसके हाथ में धर दिया। उसने अपनी हथेली पर उसे उछालकर कहा :

“तीन की वोदका लूँगा और दो की रोटी...”

तीसरे पहर माँ सर्दी में ठिठुरती और थकी हुई निकोल्स्कोये के बड़े गाँव में पहुँची और चौकी पर एक गिलास चाय पीने के लिए गयी। अपनी भारी सूटकेस बेंच के नीचे रखकर वह खिड़की के पास बैठ गयी। खिड़की से उसे एक छोटा-सा चौक दिखायी दे रहा था जिसमें रौंदी हुई पीली-पीली घास उगी हुई थी। सामने ही गहरे सुरमई रंग की एक इमारत थी जिसकी छत झुक गयी थी – यही जिले के हाकिम का दफ़्तर था। बरामदे में एक गंजा दाढ़ीवाला किसान ख़ाली क़मीज़ पहने बैठा पाइप पी रहा था। चौक में एक सुअर घास पर चल रहा था। वह झुँझलाकर अपने कान फड़फड़ाता था और सिर हिलाकर अपनी थूथनी ज़मीन में गड़ा देता था।

काले-काले बादलों के बड़े-बड़े झुण्ड मण्डला रहे थे। हर चीज़ शान्त और उदास और भयानक लग रही थी, ज़िन्दगी मानो कहीं जा छिपी थी, उसने दम साध लिया था।

सहसा एक पुलिस सार्जेण्ट घोड़ा दौड़ाता हुआ चौक की तरफ़ आया और दफ़्तर की इमारत के सामने पहुँचकर उसने घोड़ा रोक दिया। अपना चाबुक हवा में घुमाते हुए उसने किसान से चिल्लाकर कुछ कहा। चिल्लाने की आवाज़ काँपती हुई आकर खिड़की से टकरायी, पर शब्द सुनायी न दे सके। किसान ने खड़े होकर दूर किसी चीज़ की ओर संकेत किया। सार्जेण्ट कूदकर घोड़े पर से उतरा और घोड़े की रास किसान को थमा दी। लड़खड़ाता हुआ वह सीढ़ियों तक गया और जंगले का सहारा लेकर बरामदे में जा पहुँचा और दरवाज़े में घुसकर ग़ायब हो गया...

फिर चारों ओर निस्तब्धता छा गयी। घोड़े ने पोली ज़मीन पर दो बार अपने सुम मारे। एक लड़की, जो अभी बारह-तेरह बरस की रही होगी, कमरे में आयी; उसके पीले बालों की एक छोटी-सी चोटी गुँधी हुई थी और उसके गोल चेहरे पर उसकी कोमलता-भरी आँखें बड़ी सुन्दर मालूम होती थीं। तश्तरियों से भरी हुई एक टूटी-सी ट्रे ले जाते हुए वह बराबर अपना सिर हिला रही थी और होंठ काट रही थी।

“बच्ची, सलाम!” प्रेम से माँ ने कहा।

“सलाम!”

चाय का समान मेज पर रखकर लड़की ने सहसा उत्तेजना-भरे स्वर में घोषणा की :

"अभी-अभी उन लोगों ने एक डाकू को पकड़ा है, उसे यहीं ला रहे हैं!"

"कौन है वह डाकू?"

"मालूम नहीं..."

"उसको क्यों पकड़ा है?"

"मालूम नहीं!" लड़की ने फिर वही उत्तर दिया। "मैंने बस इतना सुना कि वह पकड़ा गया है! सन्तरी थानेदार को बुलाने गया है!"

माँ ने खिड़की से बाहर झाँककर देखा। बाहर चौक में किसान जमा हो रहे थे। कुछ लोग बहुत धीरे-धीरे आराम से आ रहे थे, कुछ लोग भागे हुए घटनास्थल की तरफ़ आ रहे थे और भागते हुए ही भेड़ की खाल के अपने कोटों के बटन लगा रहे थे। उस इमारत के सामने एकत्रित होकर वे बायीं तरफ़ देखते रहे।

लड़की ने भी झाँककर खिड़की के बाहर देखा और झट से दरवाज़ा बन्द करती हुई कमरे से बाहर भागी। यह आवाज़ सुनकर माँ चौंक पड़ी, उसने अपना सूटकेस बेंच के और नीचे सरका दिया और सिर पर शाल ओढ़कर जल्दी से दरवाज़े की तरफ़ गयी। न जाने क्यों उसकी इच्छा हो रही थी कि वह झटपट चली जाये, वहाँ से भाग जाये, पर वह सँभल गयी...

जब वह बरामदे में पहुँची तो उसकी आँखों और सीने पर बर्फ़ जैसी ठण्डी हवा का एक झोंका तीर की तरह लगा, उसकी साँस रुकने लगी और उसके पाँव सहसा जवाब देने लगे – चौक के उस पार रीबिन चला आ रहा था, उसके दोनों हाथ पीछे बन्धे हुए थे और गाँव के दो चौकीदार ज़मीन पर अपनी लाठियाँ पटकते हुए उसके दोनों तरफ़ चल रहे थे। जनसमूह चुपचाप बरामदे के सामने खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था।

माँ को जैसे काठ मार गया, वह अपनी नज़रें उधर से न हटा सकी। रीबिन कुछ कह रहा था; माँ को उसकी आवाज़ तो सुनायी दे रही थी, पर उसके हृदय की अन्धकारमय शून्यता में उसके शब्दों की कोई प्रतिध्वनि सुनायी नहीं दे रही थी।

उसने एक गहरी साँस लेकर अपने आपको सम्भाला। बरामदे के पास नीली आँखों और सुनहरे रंग की चौड़ी-सी दाढ़ीवाला एक किसान खड़ा बड़े ध्यान से उसे देख रहा था। माँ ने खाँसा और भय से काँपते हुए हाथ से अपना गला सहलाने लगी।

"क्या हुआ?" माँ ने साहस बटोरकर उससे पूछा।

"ख़ुद ही देख लो!" उसने उत्तर देकर मुँह फेर लिया। एक और किसान

आकर उसके पास खड़ा हो गया।

रीबिन को जो पुलिसवाले ला रहे थे वे भीड़ के सामने आकर रुक गये। भीड़ बढ़ती जा रही थी, पर लोग बिल्कुल शान्त थे। सहसा रीबिन का स्वर उनके सिरों पर से गूँजता हुआ सुनायी दिया।

"ऐ ईसा के भक्तो! तुम लोगों ने उन पर्चों के बारे में सुना है जिनमें हम किसानों की ज़िन्दगी की हकीकत बयान की गयी है? मुझे उन्हीं पर्चों के लिए सजा भुगतनी पड़ रही है मैंने ही वे पर्चे लोगों में बाँटे थे!"

भीड़ रीबिन के और पास आती गयी। उसका स्वर शान्त और उत्तेजनारहित था। उसकी आवाज़ सुनकर माँ होश में आयी।

"सुना तुमने?" दूसरे किसान ने चुपके से उस नीली आँखोंवाले किसान से कहा। उसने सिर उठाकर फिर बिना कुछ उत्तर दिये माँ की तरफ़ देखा। दूसरे किसेन ने भी माँ की तरफ़ देखा। वह पहले वाले किसान से उम्र में छोटा था। उसके एक छिदरी-सी काली दाढ़ी थी और उसके चेहरे पर चित्तियाँ पड़ी थीं। कुछ देर बाद वे दोनों वहाँ से चले गये।

"मुझसे डर गये होंगे!" माँ ने अनायास सोचा।

वह ज़्यादा सतर्क हो गयी। बरामदे में जहाँ वह खड़ी थी वहाँ से उसे मिख़ाइलो इवानोविच का स्याह चोट खाया हुआ चेहरा और उसकी आँखों की उत्तेजना-भरी चमक दिखायी दे रही थी। वह चाहती थी कि रीबिन भी उसे देख ले, इसलिए वह पंजों के बल खड़ी होकर गर्दन लम्बी करके देखने लगी।

लोग रीबिन को गम्भीर अविश्वास की भावना के साथ देख रहे थे, पर कोई कुछ कह नहीं रहा था। केवल भीड़ में पीछे की तरफ़ कुछ लोगों की खुसुर-फुसुर सुनायी दे रही थी।

"किसान भाइयो!" रीबिन ने बहुत ज़ोर लगाकर ऊँची आवाज़ में कहा। "उन पर्चों में जो कुछ लिखा है उस पर यकीन करना। मुमकिन है उनके लिए मुझे अपनी जान की क़ीमत चुकानी पड़े। यह मालूम करने के लिए कि वे पर्चे मुझे कहाँ से मिले थे उन्होंने मुझे पीटा और बहुत यातनाएँ दीं और वे मुझे फिर मारेंगे। लेकिन मैं सब कुछ बरदाश्त करने को तैयार हूँ क्योंकि उन पर्चों में सच्ची बातें कही गयी हैं और सच्चाई हमें अपनी रोज़ी से भी ज़्यादा प्यारी होनी चाहिए। यही असली बात है!"

"वह यह सब क्यों कह रहा है?" बरामदे के पास खड़े हुए एक किसान ने कहा।

"अब उसके लिए फरक भी क्या पड़ता है," नीली आँखोंवाले ने उत्तर दिया। "आदमी एक ही बार तो मर सकता है..."

लोग अभी तक वहाँ चुपचाप खड़े उदास भाव से रीबिन को देख रहे थे और ऐसा मालूम होता था कि कोई अदृश्य बोझ उन्हें नीचे दबा रहा था।

पुलिस सार्जेण्ट लड़खड़ाता हुआ बरामदे में आया।

"कौन बोल रहा था?" उसने नशीली आवाज़ में कहा।

सहसा वह फुर्ती से सीढ़ियों से नीचे उतरा और रीबिन के बाल पकड़कर उसे झंझोड़ दिया।

"क्यों, तू बोल रहा था, सुअर के बच्चे?" उसने चीख़कर कहा।

भीड़ में खलबली मच गयी और लोग बुदबुदाकर कुछ कहने लगे। माँ ने व्यथित होकर लाचारी से अपना सिर झुका लिया। एक बार फिर रीबिन का स्वर गूँज उठा :

"देख लिया तुम लोगों ने!.."

"चुप रहो!" पुलिस सार्जेण्ट ने उसी कनपटी पर एक मुक्का रसीद किया। रीबिन लड़खड़ाया और उसने कन्धे भींच लिये।

"आदमी के हाथ बाँधकर जैसा जी में आता है उसके साथ सलूक करते हैं..."

"सिपाहियो, ले जाओ इसे! और तुम सब लोग घर जाओ अपने-अपने!" पुलिस सार्जेण्ट रीबिन के सामने इस तरह उछलता रहा जैसे किसी कुत्ते को हड्डी मिल गयी हो, और उसे मुँह पर, सीने पर और पेट में घूँसे मारता रहा।

"मारो नहीं उसे!" किसी ने भीड़ में से चिल्लाकर कहा।

"आख़िर मारते क्यों हो?" किसी ने समर्थन में कहा।

"आओ, चलें!" नीली आँखों वाले किसान ने सिर हिलाकर अपने साथी से कहा। वे दोनों धीरे-धीरे वहाँ से चल दिये और माँ सहानुभूतिभरी दृष्टि से उन्हें देखती रही। जब उसने पुलिस सार्जेण्ट को लस्टम-पस्टम भागकर बरामदे की सीढ़ियों पर चढ़ते देखा, तो माँ ने सन्तोष की साँस ली।

"यहाँ लाओ इसे! मैं क्या कह रहा हूँ..." उसने अपना मुक्का हिलाते हुए चीख़कर कहा।

"ख़बरदार जो ऐसा किया!" किसी ने भीड़ में से कड़ककर कहा। माँ ने देखा कि वह वहीं नीली आँखोंवाला किसान बोल रहा था। "लोगो, उसे वहाँ न ले जाने दो! अगर वे उसे वहाँ ले गये, तो मारते-मारते उसकी जान ले लेंगे। और फिर कह देंगे कि हम लोगों ने उसे मार डाला है! अन्दर न ले जाने देना!"

"किसान भाइयो!" मिख़ाइलो ने गरजकर कहा। "तुम लोगों को यह समझ में नहीं आता कि तुम्हारी ज़िन्दगी क्या है? क्या तुम यह नहीं देखते कि वे लोग तुम्हें किस तरह लूटते हैं, तुम्हें धोखा देते हैं और तुम्हारा ख़ून चूस लेते हैं? हर

चीज़ तुम्हारी ही बदौलत है – तुम इस धरती की सबसे बड़ी शक्ति हो – लेकिन तुम लोगों को किस बात का अधिकार है? सिर्फ़ भूखों मरने का!.."

सहसा किसान एक-दूसरे की बात काटते हुए चिल्लाने लगे :

"वह सच कह रहा है!"

"थानेदार कहाँ है? थानेदार साहब को बुलाओ!.."

"पुलिस सार्जेन्ट उन्हीं को बुलाने गये हैं..."

"कौन, वह शराबी?.."

"अफ़सरों को बुलाना कोई हमारा काम थोड़े ही है..."

शोर बढ़ता गया।

"तुम बोले जाओ! हम उन लोगों को तुम्हें हाथ भी न लगाने देंगे..."

"इसके हाथ खोल दो..."

"देखना कहीं तुम ख़ुद न पकड़े जाना!.."

"रस्सियों से मेरे हाथों में दर्द हो रहा है!" रीबिन ने अपनी भारी सुरीली आवाज़ में कहा जिसमें बाक़ी सब आवाज़ें डूब गयीं। "किसान भाइयो, मैं भागूँगा नहीं! मैं सच्चाई से भागकर कहाँ जाऊँगा – वह तो मेरी नस-नस में बसी हुई है..."

कुछ लोग भीड़ से अलग होकर एक तरफ़ को हटकर खड़े हो गये और सिर हिला-हिलाकर टीका-टिप्पणी करते रहे। लेकिन फटे-पुराने कपड़े पहने हुए और लोग बहुत उत्तेजित अवस्था में भागकर आते रहे। वे सब रीबिन के चारों ओर भीड़ लगाये खड़े थे। रीबिन उनके बीच एक वनदेवता की तरह खड़ा था और अपने सिर के ऊपर हाथ हिला-हिलाकर उनसे चिल्ला-चिल्लाकर कह रहा था :

"धन्यवाद, दोस्तो, तुम्हारा बहुत-बहुम धन्यवाद! अगर हम लोग एक-दूसरे के हाथ नहीं खोलेंगे, तो कौन खोलेगा?"

उसने अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरा और ख़ून में सना हुआ हाथ ऊपर उठाया।

"यह मेरा ख़ून है जो मैंने सच्चाई के लिए बहाया है!"

माँ बरामदे की सीढ़ियों से नीचे उतरी, लेकिन चूँकि उसे भीड़ के कारण मिख़ाइलो की सूरत नहीं दिखायी दे रही थी, इसलिए वह फिर ऊपर चढ़ गयी। उसके हृदय में एक अस्पष्ट-सा हर्ष हिलोरें ले रहा था।

"किसान भाइयो! इन पर्चों को ढूँढ़कर पढ़ना! अगर पादरी लोग और सरकारी हाकिम तुमसे कहें कि सच्चाई का प्रचार करने वाले ये लोग नास्तिक और विद्रोही हैं, तो उन पर विश्वास न करना। सच्चाई छुप-छुपकर पृथ्वी पर घूम रही है और वह जनता के बीच वास करने के लिए स्थान ढूँढ़ रही है। इन हाकिमों

के लिए तो वह धधकती हुई आग और तलवार की तरह है। वे उसे स्वीकार नहीं कर सकते – वह उन्हें काटकर रख देगी और जलाकर भस्म कर देगी! तुम्हारे लिए सच्चाई एक दोस्त है, उनके लिए वह एक कट्टर दुश्मन है! इसीलिए वह पृथ्वी पर छुप-छुपकर घूमती है!.."

एक बार फिर भीड़ में से तरह-तरह की आवाज़ें आने लगीं।

"सुनो, ऐ ईसा के भक्तो!.."

"भैया, तुम्हारा अंजाम बुरा होगा..."

"तुम्हें पुलिस के हवाले किसने किया?"

"पादरी ने!" एक पुलिसवाले ने उत्तर दिया।

दो किसानों ने एक मोटी-सी गाली दी।

"देखना लोगो, होशियार रहना!" किसी ने चेतावनी दी।

16

थानेदार भीड़ की तरफ़ आ रहा था। वह लम्बे कद का, गठे हुए शरीर और गोल चेहरेवाला व्यक्ति था। वह अपनी टोपी एक कान के ऊपर झुकाकर पहनता था और उसकी एक तरफ़ की मूँछ ऊपर की ओर और दूसरी तरफ़ की मूँछ नीचे की ओर ऐंठी रहती थी, इसलिए उसके चेहरे पर हमेशा एक नीरस मुस्कराहट का टेढ़ापन क़ायम रहता था। वह अपने बायें हाथ में तलवार लिये था और दाहिना हाथ बहुत ज़ोर से झुला-झुलाकर चल रहा था। उसके भारी और जमे हुए क़दमों की आहट सबने सुनी। उसे रास्ता देने के लिए भीड़ हट गयी और सारा कोलाहल इस तरह शान्त हो गया जैसे धरती में पानी सोख जाये। सबकी मुद्राएँ गम्भीर हो गयीं। माँ को ऐसा लगा कि उसकी आँखें जल रही हैं और उसके माथे की पेशियाँ फड़क रही हैं। वह फिर जाकर भीड़ में मिल जाना चाहती थी। वह आगे झुकी और आशंकाओं से भरी हुई निश्चल खड़ी रही।

"क्या है यह?" थानेदार ने रीबिन के सामने रुककर उसे बड़े रोब से देखते हुए पूछा। "इसके हाथ क्यों नहीं बँधे हैं? सिपाहियो, इसके हाथ बाँध दो!"

उसकी आवाज़ बहुत ऊँची और गूँजती हुई, पर सपाट थी।

"बँधे हुए तो थे, पर लोगों ने खोल दिये!" एक सिपाही ने उत्तर दिया।

"क्या मतलब? लोग क्या होते हैं? किन लोगों ने?" थानेदार ने अपने सामने अर्धवृत्त के रूप में खड़ी हुई भीड़ पर एक नज़र दौड़ायी।

"कौन हैं ये लोग?" उसने अपनी सपाट आवाज़ में पूछा; उसके स्वर में ज़रा भी उतार-चढ़ाव नहीं आने पाया। उसने अपनी तलवार की मूठ से नीली आँखों वाले किसान को छूकर कहा :

"चुमाकोव, जिन लोगों का जिक्र हो रहा है, वह तुम हो? अच्छा, और कौन है? मीशिन, तुम भी?" थानेदार ने उनमें से एक की दाढ़ी अपने दाहिने हाथ से पकड़ ली।

"हरामजादो, चले जाओ यहाँ से, नहीं तो मैं अभी तुम्हारी अक्ल ठिकाने कर दूँगा – अच्छी तरह मजा चखा दूँगा!"

उसकी मुद्रा में न क्रोध था न धमकी। वह बहुत ही आवेशरहित स्वर में बोल रहा था और अपने लम्बे-लम्बे हाथों से उन्हें ऐसे मार रहा था जैसे यह उसकी आदत हो। वे लोग मुँह लटकाये वापस हो गये।

"तुम लोग यहाँ खड़े क्या देख रहे हो?" उसने सिपाहियों से कहा। "मैं कहता हूँ हाथ बाँध दो इसके!"

थानेदार ने एक साँस में कई गालियाँ दीं और फिर रीबिन की तरफ़ देखा।

"ए, हाथ पीछे करो!" उसने गरजकर कहा।

"मैं अपने हाथ बँधवाना नहीं चाहता!" रीबिन ने कहा। "मैं न भागूँगा, न लड़ूँगा, इसलिए हाथ बँधवाने की क्या ज़रूरत है?"

"क्या कहा?" थानेदार ने उसकी तरफ़ बढ़ते हुए कहा।

"वहशियो, अच्छा यही है कि लोगों को इस तरह सताना छोड़ दो!" रीबिन ने अपना स्वर ऊँचा करके कहा। "तुम्हारी बारी भी जल्द ही आने वाली है..."

थानेदार उसका मुँह देखता रह गया, उसकी मूँछें फड़क रही थीं। वह एक क़दम पीछे हट गया और उसने आश्चर्य से साँप की तरह फुफकारकर कहा :

"सुअर के बच्चे! तेरी यह मजाल!"

फिर सहसा उसने रीबिन के मुँह पर ज़ोर का एक घूँसा मारा।

"आप अपने इन घूँसों से सच्चाई को नहीं मार सकते!" रीबिन ने उसकी तरफ़ बढ़ते हुए चिल्लाकर कहा। "जलील कुत्ते, तुझे मुझको मारने का कोई हक नहीं है!"

"मुझे कोई हक नहीं है? मुझे?" थानेदार ने सचमुच कुत्तों की तरह भूँककर कहा।

उसने एक बार फिर रीबिन के सिर का निशाना लेकर अपना मुक्का घुमाया। रीबिन ने सिर नीचे कर लिया और निशाना चूक गया; थानेदार मुँह के बल गिरते-गिरते बचा। किसी ने भीड़ में से चिढ़ाने के लिए सीटी बजायी और एक बार फिर रीबिन का क्रोधपूर्ण स्वर सुनायी दिया :

"शैतान, ख़बरदार जो मुझे हाथ लगाने की हिम्मत की!"

थानेदार ने चारों ओर नज़र दौड़ायी और देखा कि भीड़ और पास आ गयी थी और उन लोगों ने चारों तरफ़ एक घेरा बना लिया था; यह बात बहुत

अशुभसूचक और ख़तरनाक थी...

"निकीता!" थानेदार ने चिल्लाकर आवाज़ दी। "ए निकीता!"

एक छोटे कद का गठे हुए शरीर वाला किसान भेड़ की खाल का कोट पहने भीड़ से बाहर आया। उसका उलझे हुए बालों वाला बड़ा-सा सिर झुका हुआ था।

"निकीता!" थानेदार ने बड़े निश्चिन्त भाव से अपनी मूँछ ऐंठते हुए कहा। "ज़रा इसकी कनपटी पर एक मुक्का रसीद तो करना – ज़ोर का!"

किसान आगे बढ़ा और रीबिन के सामने पहुँचकर खड़ा हो गया। उसने सिर उठाया ही था कि रीबिन ने उसके ऊपर कठोर शब्दों की बौछार की और बड़े विश्वास के साथ अपनी भारी आवाज़ में बोला :

"भाइयो, देखा तुमने, किस तरह ये लोग आदमी को अपने ही हाथों अपना गला घोंटने पर मजबूर करते हैं। आँखें खोलकर देख लो और अच्छी तरह सोचो इसके बारे में!"

धीरे-धीरे उस किसान ने अपना हाथ उठाया और रीबिन के सिर पर एक बहुत ही हल्का-सा मुक्का मारा।

"हरामी, ऐसे मारा जाता है?" थानेदार ने चिल्लाकर कहा।

"ए निकीता!" किसी ने भीड़ में से धीमी आवाज़ में कहा। "यह न भूल जाना कि भगवान के सामने जवाब देना पड़ेगा!"

"मैं कहता हूँ, मारो इसे!" थानेदार ने किसान की गर्दन को धक्का देते हुए उससे चिल्लाकर कहा। लेकिन निकीता अपना सिर झुकाये वहाँ से चल दिया।

"बस, मैं इससे ज़्यादा नहीं कर सकता..." उसने उदास होकर कहा।

"क्या कहा?"

थानेदार के चेहरे पर कालिमा दौड़ गयी; वह अपना पाँव पटककर मोटी-सी गाली देकर रीबिन की तरफ़ झपटा। इसके बाद ही एक घूँसे की आवाज़ आयी और रीबिन चक्कर खाकर लड़खड़ा गया। उसने अपना हाथ उठाया ही था कि इतने में दूसरा घूँसा पड़ा और वह गिर पड़ा। थानेदार उसके सिर और सीने पर तथा पसलियों में ठोकरें मारने लगा।

भीड़ में क्रोध की लहर दौड़ गयी। लोग थानेदार की तरफ़ बढ़े, पर यह देखकर वह उछलकर पीछे हट गया और जल्दी से अपनी तलवार म्यान में से निकालकर बोला :

"क्या मतलब है इसका? तुम लोग बगावत कर रहे हो? अच्छा, तो यह बात है!.."

उसकी आवाज़ काँपकर शान्त हो गयी और वह कुछ कहने के असफल

प्रयास में चिंचियाने लगा। थानेदार की आवाज़ जवाब दे गयी और उसके हाथ-पाँव भी। उसका सिर झुक गया, कन्धे नीचे लटक गये और पीछे हटते हुए उसने हारे जुआरी की तरह चारों तरफ़ नज़र दौड़ायी। वह अपने क़दमों से ज़मीन टटोल-टटोलकर चल रहा था।

"अच्छी बात है!" उसने भर्राये हुए स्वर में चिल्लाकर कहा। "ले जाओ इसे यहाँ से – मैं जा रहा हूँ। हरामजादो, तुम्हें मालूम नहीं कि वह राजनीतिक कैदी है? तुम्हें यह मालूम नहीं कि यह लोगों को ज़ार के ख़िलाफ़ भड़का रहा है? और तुम इसकी तरफ़दारी करते हो? इसलिए तुम भी बागी हो, क्यों न?.."

माँ पलक झपकाये बिना निश्चल खड़ी रही। उसकी सारी शक्ति जैसे किसी ने निचोड़ ली हो, उसका दिमाग बिल्कुल ख़ाली था जैसे उसने कोई भयानक स्वप्न देखा हो। वह भय और व्यथा में डूबी हुई थी। लोगों की उदासी, व्यथा और क्रोध से भरी हुई आवाज़ें मक्खियों की तरह उसके मस्तिष्क में गूँज रही थीं। उसने थानेदार की काँपती हुई आवाज़ और किसी की फुसफुस करके बोलने की आवाज़ सुनी...

"अगर वह अपराधी है, तो उस पर अदालत में मुक़दमा चलाया जाये!.."

"हुजूर, रहम खाइये उस पर..."

"यह सच है, किसी क़ानून में इस तरह के बर्ताव की इजाजत नहीं है..."

"सचमुच कोई क़ानून ऐसा नहीं है! अगर ऐसा होता तो जिसका जी चाहता जिसे मार-पीटकर बराबर कर देता। यह भी कोई बात हुई?.."

लोग दो दलों में बँट गये : एक थानेदार को घेरकर खड़ा हो गया और उस पर चीख़ने-चिल्लाने लगा और उससे अनुनय-विनय करने लगा; दूसरा समूह, जो छोटा था, धराशायी व्यक्ति को घेरे खड़ा था और चुनौती के स्वर में बुड़बुड़ाकर कुछ कह रहा था। इस समूह के कुछ लोगों ने सहारा देकर रीबिन को खड़ा किया और जब पुलिसवालों ने फिर उसके हाथ बाँधने का प्रयत्न किया, तो उन्होंने चिल्लाकर कहा :

"अरे, जल्लादो, इतनी जल्दी क्या है!"

मिख़ाइलो ने अपने मुँह और दाढ़ी पर से गर्द और ख़ून पोंछा और चुपचाप चारों ओर नज़र दौड़ायी। उसकी नज़र माँ पर पड़ी। माँ चौंक पड़ी और उसकी तरफ़ झुककर अनायास ही उसने अपना हाथ हिला दिया। रीबिन ने मुँह फेर लिया। कुछ देर बाद उसकी आँखों ने फिर माँ को ढूँढ़ लिया। माँ को ऐसा प्रतीत हुआ कि वह सिर ऊँचा करके तनकर खड़ा हो गया था और उसके ख़ून में सने हुए गाल काँपने लगे...

"उसने मुझे पहचान लिया – क्या सचमुच उसने मुझे पहचान लिया?.."

माँ ने उसकी तरफ़ देखकर सिर हिलाया। एक तीव्र लालसा के वश उसका सारा शरीर काँप रहा था। दूसरे ही क्षण माँ ने देखा कि वह नीली आँखों वाला किसान रीबिन के बगल में खड़ा उसे देख रहा था। एक क्षण के लिए उसकी दृष्टि से माँ भयभीत हो उठी...

"मैं क्या कर रही हूँ? वे लोग मुझे भी पकड़ लेंगे!"

उस किसान ने रीबिन से कुछ कहा और रीबिन ने उत्तर में सिर हिला दिया।

"कोई फिकर की बात नहीं है!" रीबिन ने काँपते हुए स्वर में कहा, जो कम्पन के बावजूद स्पष्ट और साहसमय था। "मैं इस पृथ्वी पर अकेला नहीं हूँ – वे सारी पृथ्वी के लोगों को तो गिरफ़्तार नहीं कर सकते! जहाँ-जहाँ मैं रहा हूँ वहाँ मेरी याद बाक़ी रहेगी! वे हमारा घोंसला नोचकर बर्बाद भी कर डालें, तमाम साथियों को पकड़ भी ले जायें, फिर भी..."

"वह यह सब मुझसे कह रहा है!" माँ ने अन्दाजा लगाया।

"लेकिन वह दिन आयेगा जब ये उकाब आजादी से उड़ेंगे – जनता सारे बँधन तोड़ डालेगी!"

एक औरत बाल्टी में पानी लाकर रीबिन का मुँह धोने लगी और साथ-साथ आहें भरकर बुड़बुड़ाती रही। उसका यह विनयपूर्ण करुण क्रन्दन मिख़ाइलो के शब्दों में इस तरह घुल-मिल गया कि माँ उनमें अन्तर भी न कर सकी। थानेदार के पीछे-पीछे किसानों का एक समूह उधर बढ़ा।

"कैदी को ले जाने के लिए गाड़ी लाओ! अबकी किसकी बारी है?" किसी ने चिल्लाकर कहा।

इसके बाद थानेदार का स्वर सुनायी दिया जो अब बिल्कुल ही बदला हुआ था। ऐसा मालूम होता था कि वह बहुत झुँझलाकर बोल रहा था।

"मैं तुझे मार सकता हूँ," थानेदार ने कहा, "पर तू मेरे ऊपर हाथ नहीं उठा सकता। अब की बार हिम्मत न करना, गधे कहीं के!"

"अच्छा, यह बात है! आप अपने को समझते क्या हैं – क्या आप ख़ुदा हैं?" रीबिन ने चिल्लाकर कहा।

दबी हुई आवाज़ों के प्रवाह में उसकी आवाज़ डूब गयी।

"भाई, उससे बहस न करो! वह हाकिम है!.."

"हुजूर, आप उस पर खफा न हों! वह इस वक़्त अपने होश में नहीं है..."

"चुप रह, बुद्धू कहीं का!"

"वे लोग अब तुम्हें शहर ले जायेंगे..."

"शहर में ज़्यादा कायदा-क़ानून चलता है!"

लोगों की आवाज़ों में विनय और अनुरोध था। इन तमाम आवाज़ों ने मिलकर

एक अस्पष्ट गुँजन का रूप धारण कर लिया था जिसमें आशा की झलक तक न थी। पुलिसवाले रीबिन की बाँहें पकड़कर उसे दफ़्तर की इमारत की सीढ़ियों के ऊपर ले गये और दरवाज़े के अन्दर चले गये। किसान धीरे-धीरे तितर-बितर हो गये, लेकिन माँ ने नीली आँखों वाले उस किसान को अपनी तरफ़ आते देखा। वह आँखें झुकाये उसे देख रहा था। माँ के पाँव जवाब देने लगे और घोर निराशा ने मानो उसके हृदय की सारी शक्ति चूस ली; उसकी आँखों के आगे अँधेरा-सा छाने लगा।

"मुझे यहाँ से नहीं हटना चाहिए!" उसने सोचा। "मुझे नहीं हटना चाहिए!"

वह जंगला पकड़कर प्रतीक्षा करने लगी।

थानेदार बरामदे में खड़ा अपने हाथ हिला-हिलाकर किसी को डाँट रहा था; उसकी आवाज़ इस समय भी उतनी ही नीरस और बेजान थी।

"तुम लोग बिल्कुल बेवक़ूफ़ हो, सुअर के बच्चो! न कुछ जानें न बूझें, हर बात में अपनी टाँग अड़ाते हैं! गधो, यह सरकार का मामला है! मेरा एहसान मानो, तुम्हें तो मेरे सामने घुटने टेककर मेरा शुक्रिया अदा करना चाहिए कि मैंने तुम्हारे साथ इतनी भलाई की! अगर मैं चाहता, तो सबको पकड़वार सख़्त कैद की सजा करवा देता..."

कोई बीस-पच्चीस किसान नंगे सिर खड़े उसकी बातें सुन रहे थे। बादल नीचे आते गये और अँधेरा छाता गया। नीली आँखोंवाला किसान बरामदे में आया जहाँ माँ खड़ी हुई थी।

"देखा क्या हो रहा है?.."

"हाँ," माँ ने नरमी से उत्तर दिया।

"तुम यहाँ किस काम से आयी हो?" उसने माँ की आँखों में आँखें डालकर पूछा।

"मैं किसान औरतों से लैसें ख़रीदती हूँ और कपड़ा भी..."

किसान धीरे-धीरे अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरने लगा।

"यहाँ की औरतें तो ये चीज़ें बनाती नहीं," उसने इमारत के दरवाज़े की तरफ़ कनखियो से देखकर बड़ी बेपरवाही से कहा।

माँ ने जल्दी से उस पर एक नज़र डाली और अन्दर जाने के लिए उचित अवसर की प्रतीक्षा करने लगी। किसान का चेहरा बहुत ख़ूबसूरत और गम्भीर था और उसकी आँखों में उदासी थी। वह लम्बे कद का चौड़े कन्धों वाला आदमी था; वह पैबन्द लगा हुआ कोट, साफ़-सी सूती क़मीज़ और गाढ़े का भूरा पतलून पहने था; उसके पाँवों पर फटे हुए जूते थे, वह भी बिना मोजों के...

न जाने क्यों माँ ने सन्तोष की साँस ली।

"क्या तुम आज रात-भर के लिए मुझे अपने यहाँ ठहरा सकते हो?" माँ ने सहसा पूछा। यह प्रश्न उसने अन्तःप्रेरणा के वश पूछा था जो इस समय उसके भटकते हुए विचारों से ज़्यादा तेज़ी से काम कर रही थी।

यह प्रश्न पूछते ही उसका पूरा शरीर, उसकी एक-एक हड्डी, एक-एक माँस-पेशी मानो अकड़ गयी। वह तनकर सीधी खड़ी हो गयी और उस आदमी को निडर होकर देखने लगी। कुछ विचार उसके मस्तिष्क में काँटों की तरह चुभ रहे थे :

"मेरी वजह से निकोलाई इवानोविच की तबाही आ जायेगी। और मैं बहुत दिनों तक, न जाने कितने दिनों तक पावेल से नहीं मिल पाऊँगी! वे मुझे बहुत मारेंगे!"

किसान ने ज़मीन पर नज़रें गड़ाये हुए अपने कोट को सीने पर खींचते हुए धीरे-धीरे उत्तर दिया :

"तुम्हें रात-भर के लिए अपने यहाँ ठहरा लूँ? क्यों नहीं? बस इतनी बात है कि मेरी झोपड़ी बहुत मामूली-सी है..."

"मैं ही कौन महलों में रहने की आदी हूँ!"

"अच्छी बात है," किसान राजी हो गया और आँखें उठाकर उसने माँ को सिर से पाँव तक देखा।

काफ़ी देर हो गयी थी और शाम के धुँधालके में उसकी आँखों में उदास चमक थी और उसका चेहरा बहुत पीला मालूम पड़ता था।

"अच्छा, तो मैं अभी चलती हूँ और तुम मेरा सूटकेस ले चलोगे न?.." माँ ने धीरे से कहा। उसे ऐसा लग रहा था कि वह बड़ी तेज़ी से किसी ढलान पर नीचे फिसलती जा रही है।

"अच्छी बात है, लेता चलूँगा," उसने कन्धे ऊँचे करके अपना कोट फिर ठीक किया, "लो, वह गाड़ी आ गयी..."

रीबिन फिर बरामदे में दिखायी दिया। उसके सिर और चेहरे पर भूरे रंग की कोई चीज़ लिपटी हुई थी और उसके हाथ बँधे हुए थे।

"अच्छा, दोस्तो, विदा!" गोधूलि-वेला में सर्दी को चीरता हुआ उसका स्वर सुनायी दिया, "सच्चाई की खोज में रहना और उसकी हिफाजत करना! जो आदमी तुमसे ईमानदारी की बात कहे उस पर विश्वास करना और सच्चाई के लिए लड़ने में अपनी जान की भी परवाह न करना!.."

"बन्द कर जबान!" थानेदार चिल्लाया। "अबे पुलिसवाले, घोड़ों को हाँकता क्यों नहीं?"

"तुम्हारे पास खोने के लिए है ही क्या? अपनी ज़िन्दगी को देखो!.."

गाड़ी चल दी।

"आख़िर तुम लोग भूखों क्यों मरते हो?" रीबिन ने चिल्लाकर कहा; उसके दोनों तरफ़ एक-एक पुलिसवाला बैठा था। "अगर तुम्हें आजादी मिल गयी, तो तुम्हें रोटी और न्याय भी मिल जायेगा! अच्छा, दोस्तो, विदा!.."

उसकी आवाज़ पहियों की खड़खड़, घोड़ों की टापों की आवाज़ और थानेदार की चीख़-पुकार में दबकर रह गयी।

"बस, क़िस्सा खतम हो गया!" किसान ने सिर हिलाकर कहा और फिर माँ की तरफ़ मुड़कर बोला : "तुम यहीं मेरा इन्तज़ार करो, मैं अभी एक मिनट में आया..."

माँ कमरे में चली गयी और समोवार के सामने मेज के पास बैठ गयी। उसने रोटी का एक टुकड़ा उठाकर देखा और फिर तश्तरी में वापस रख दिया। उसकी खाने की बिल्कुल इच्छा नहीं हो रही थी – उसे फिर मतली-सी हो रही थी। उसे न जाने क्यों गर्मी लग रही थी जिसके कारण वह बेचैन थी। मतली के कारण उसकी शक्ति क्षीण होने लगी, उसके हृदय से मानो किसी ने सारा ख़ून निचोड़ लिया और उसकी आँखों के आगे अँधेरा छाने लगा। उस नीली आँखों वाले किसान का चेहरा बराबर उसकी आँखों के सामने फिर रहा था – वह एक अजीब चेहरा था, उसमें किसी बात की कमी मालूम होती थी और उसे देखते ही न जाने क्यों अविश्वास की भावना जागृत होती थी। वह यह नहीं सोचना चाहती थी कि वह उसके साथ विश्वासघात करेगा, पर यह विचार उसके मस्तिष्क में प्रवेश कर गया था और उसके दिल पर एक बोझ बना हुआ था।

"उसने मुझे ध्यान से देखा!" उसने कमज़ोरी अनुभव करते हुए सोचा "उसने मुझे ध्यान से देखा और – भांप गया..."

यह विचार इससे आगे न बढ़ सका, मानो मतली और निराशा की दलदल में फँसकर रह गया हो।

चौक में अभी थोड़ी देर पहले के कोलाहल के बाद जो निस्तब्धता छा गयी थी उससे यह पता चलता था कि गाँववाले डर गये थे। इससे माँ की एकान्त की भावना और तीव्र हो उठी थी और उसकी आत्मा पर राख जैसा कोमल और सुरमई अन्धकार-सा छा गया था।

वह लड़की फिर दरवाज़े पर दिखायी दी।

"आपके लिए अण्डे तलकर ला दूँ?" उसने पूछा।

"नहीं, रहने दो। मेरी खाने की इच्छा नहीं हो रही है, इन लोगों की चीख़-पुकार से मेरा तो दिल हिल गया!"

लड़की मेज के पास आ गयी।

"आपने देखा नहीं कि थानेदार ने उसे कितनी बुरी तरह पीटा!" उसने बड़ी उत्सुकता से दबे स्वर में कहा, "मैं तो पास ही खड़ी थी। उसने उसके सभी दाँत तोड़ डाले। मैंने उस आदमी को थूकते देखा – कितना गाढ़ा और गहरे रंग का था उसका ख़ून!.. और उसकी आँखें तो सूजकर बिल्कुल बन्द हो गयी थीं! वह तारकोल के कारख़ाने में काम करता है। पुलिस सार्जेण्ट ऊपर नशे में धुत्त पड़ा है और अब भी शराब माँग रहा है। वह कहता है कि उनका एक पूरा गिरोह था और यह दाढ़ीवाला उनका सरदार था। उन्होंने तीन लोगों को पकड़ा था, पर एक भाग गया। उन्होंने एक मास्टर को भी गिरफ़्तार कर लिया। वह भी इनके गिरोह में था। वे ईश्वर पर यकीन नहीं रखते और दूसरों से भी कहते हैं कि ईश्वर पर विश्वास न रखें ताकि वे गिरजाघरों को लूट सकें – यही है इन लोगों का काम! कुछ किसानों को उस पर तरस आ रहा था मगर कुछ लोगों का कहना था कि उसे फाँसी दे देनी चाहिए! हमारे गाँव में ऐसे दुष्ट किसान भी हैं!"

माँ लड़की की यह बेसिर-पैर की बातें ध्यान से सुनती रही। लड़की बड़ी तेज़ी से बोल रही थी। माँ अपने भय और आशंकाओं को दबाने को प्रयत्न कर रही थी। लड़की इस बात पर ख़ुश थी कि कोई तो उसकी बात सुन रहा था, इसलिए वह और भी उत्साह के साथ बोलती रही :

"मेरे बाबा कहते हैं कि यह सब फसल ख़राब होने का नतीजा है! दो साल से धरती में कुछ उगा नहीं, किसान बड़ी मुसीबत में हैं! इसीलिए वे यह सब गड़बड़ करते हैं! गाँव की सभाओं में वे चीख़ते-चिल्लाते और हाथापाई करते हैं। अभी उस दिन की बात है कि लगान न अदा करने के कारण जब वास्युकोव का सामान नीलाम किया जा रहा था, तो उसने गाँव के मुखिया को इतने ज़ोर से मारा कि बस! वह बोला, 'लो, यह रहा मेरा कर्ज...' "

दरवाज़े के बाहर किसी के भारी क़दमों की आहट सुनायी दी। माँ मेज का सहारा लेकर जल्दी से उठ खड़ी हुई...

नीली आँखों वाला किसान अपनी टोपी उतारे बिना अन्दर आया।

"कहाँ है तुम्हारा बक्सा?" उसने पूछा।

उसने बड़ी आसानी से उसे उठा लिया और हिलाकर कहा :

"ख़ाली है! मारका, इस औरत को मेरी झोपड़ी में पहुँचा देना।"

वह पीछे देखे बिना बाहर चला गया।

"क्या आप आज रात यहीं रहेंगी?" लड़की ने पूछा।

"हाँ, मैं लैसें ख़रीदने आयी हूँ – मैं लैस ख़रीदने का काम करती हूँ..."

"यहाँ तो कोई लैसें बनाता नहीं! तिनकोवो और दारयिनो में बनाते हैं। यहाँ तो बनाते नहीं!" लड़की ने सूचना दी।

"तो मैं कल वहाँ चली जाऊँगी..."

माँ ने चाय के पैसे देने के बाद जब उस लड़की को तीन कोपेक बख्शीश में दिये, तो वह बहुत ख़ुश हो गयी। वे दोनों बाहर निकलीं और लड़की गीली ज़मीन पर नंगे पाँव जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाती हुई बोली :

"अगर कहो तो मैं दारयिनो जाकर वहाँ की औरतों से अपनी लैसें यहाँ ले आने को कह दूँ," उसने कहा। "तुम वहाँ जाने से बच जाओगी। पूरे आठ मील का सफर है..."

"नहीं बच्ची, तुम फिकर न करो!" माँ ने इस विचार से कि वह कहीं पीछे न रह जाये जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाये। ठण्डी हवा से उसका जी कुछ ठीक हुआ और उसके हृदय में एक अस्पष्ट-सा दृढ़ संकल्प उत्पन्न होने लगा। यह संकल्प बहुत धीरे-धीरे और अनिश्चित गति से बढ़ रहा था, पर उसमें आशा थी और इस संकल्प को बढ़ाते रहने के लिए वह अपने मन में पूछती रही :

"मैं क्या करूँगी? अगर मैं साफ़-साफ़ सब कुछ कह दूँ..."

रात सर्द और नम थी। झोपड़ियों की खिड़कियों में कुछ लाल-लाल झलक देती हुई रोशनियाँ अपलक चमक रही थीं। गड़रियों की हाँक और मवेशियों की अलसायी हुई आवाज़ इस निस्तब्धता को भंग कर रही थी। सारा गाँव अन्धकार और गहरी चिन्ता में डूबा हुआ था...

"बस, यही जगह है!" लड़की ने कहा। "रात ठहरने के लिए आपने बहुत बुरी जगह पसन्द की है - बहुत ही ग़रीब किसान है..."

लड़की ने टटोलकर दरवाज़ा खोला।

"काकी तत्याना!" उसने बड़े साहस के साथ पुकारा।

और फिर वह भाग गयी।

"अच्छा, विदा!.." अँधेरे को चीरता हुआ उसका स्वर सुनायी दिया।

17

माँ अन्दर चली गयी और आँखों पर हाथ का साया करके झोपड़ी को अच्छी तरह देखने लगी। झोपड़ी छोटी थी, पर माँ उसकी सफ़ाई से बहुत प्रभावित हुई। एक नौजवान औरत ने चूल्हे के पीछे से झाँककर देखा, बिना कहे सिर हिलाया और फिर ग़ायब हो गयी। मेज पर लैम्प जल रहा था।

झोपड़ी का मालिक मेज के पास बैठा हुआ अपनी उँगलियों से मेज पर तबला बजा रहा था और माँ की आँखों में कुछ खोजने का प्रयत्न कर रहा था।

"अन्दर आ जाइये!" उसने थोड़ी देर बाद कहा। "तात्याना, जाकर ज़रा प्योत्र को बुला लाओ; देखो, जल्दी बुलाकर लाना!"

वह औरत माँ की तरफ़ देखे बिना बाहर चली गयी। माँ उस आदमी के सामने एक बेंच पर बैठ गयी और कनखियों से चारों तरफ़ देखने लगी। उसका सूटकेस कहीं दिखायी नहीं दे रहा था। झोंपड़ी में एक भयावह निस्तब्धता छायी हुई थी जो बीच-बीच में बस लैम्प के भड़क उठने से कभी-कभी भंग हो जाती थी। उस किसान की चिन्तित और विचारग्रस्त मुद्रा को देखकर माँ को उलझन हो रही थी। उसका चेहरा बार-बार उसकी आँखों के सामने घूम जाता था।

"मेरा सूटकेस कहाँ है?" उसने सहसा पूछा और अपने इस प्रश्न पर स्वयं ही घबरा उठी।

किसान ने अपने कन्धे बिचका दिये।

"खोयेगा नहीं," उसने उत्तर दिया और फिर धीमे स्वर में बोला, "वहाँ चौकी पर मैंने जानबूझकर यह कहा था कि वह हल्का है ताकि वह लड़की सुन ले। लेकिन वह ख़ाली नहीं है! वह तो बहुत भारी है!"

"तो क्या हुआ?" माँ ने पूछा।

वह उठकर माँ के पास आ गया।

"तुम उस आदमी को जानती हो?" उसने बहुत झुककर माँ के कान में कहा।

"हाँ!" माँ ने दृढ़ता के साथ उत्तर दिया, यद्यपि उसका यह प्रश्न सुनकर वह कुछ विस्मित ज़रूर हुई थी। ऐसा मालूम हुआ कि उसके इस एक शब्द ने हर चीज़ को अन्दर से आलोकित कर दिया हो और सारी चीचें स्पष्ट हो गयी हों। माँ ने सन्तोष की साँस ली और बेंच पर जमकर बैठ गयी...

किसान दाँत खोलकर मुस्करा दिया।

"मैं तो उसी वक़्त समझ गया था जब तुमने उसे इशारा किया था और उसने भी जवाब में इशारा किया था। मैंने उससे कान में पूछा था : 'तुम बरामदे में खड़ी हुई उस औरत को पहचानते हो?' "

"तो उसने क्या कहा?" माँ ने जल्दी से पूछा।

"उसने कहा – 'हमारे साथी बहुत हैं।' बहुत से साथी हैं, उसने कहा था..."

किसान अपनी मेहमान की आँखों में आँखें डालकर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखने लगा।

"वह भी बड़ा जीवट का आदमी है!.." उसने मुस्कराकर कहा, "और बहादुर भी है... वह साफ़ कहता है कि हाँ, मैंने यह काम किया! उसे चाहे जितना मारा-पीटा जाये, पर उसे जो कहना होता है उसे कहकर ही रहता है..."

उसका क्षीण और संकोचपूर्ण स्वर, उसका अधूरा चेहरा और उसकी उदास

बेझिझक आँखें – इन सब बातों से माँ को धीरे–धीरे ढाढ़स बँधता गया। धीरे–धीरे भय और विस्मय के स्थान पर उसके हृदय में रीबिन के प्रति एक गहरी संवेदना जाग उठी।

"बदमाश! निर्दयी!" उसने कटु रोष से कहा और रोने लगी।

किसान उदास होकर अपना सिर हिलाता हुआ वहाँ से हट गया।

"हाकिमों के इसी बर्ताव की वजह से लोग इन लोगों से प्यार करने लगे हैं!"

माँ की तरफ़ मुड़कर उसने फिर धीरे से कहा :

"सुनो, उस सूटकेस में अखबार हैं न?"

"हाँ, हैं तो!" माँ ने अपनी आँसू पोंछते हुए सीधा–सा उत्तर दिया। "मैं उसी के पास ले जा रही थी।"

किसान के माथे पर बल पड़ गये। उसने अपनी दाढ़ी कसकर मुट्ठी में पकड़ ली ओर कोने में घूरने लगा।

"वे लोग हमें यहाँ लाकर अखबार दे जाते थे और किताबें भी," उसने कुछ देर बाद कहा। "हम उस आदमी को जानते हैं... हमने उसे देखा है!"

वह रुका और एक क्षण तक कुछ सोचता रहा।

"अब तुम क्या करोगी उसका – उस सूटकेस का?" उसने पूछा।

"तुम्हारे पास छोड़ जाऊँगी!" माँ ने चुनौती के भाव से उसकी तरफ़ देखकर कहा।

उसने न कोई आपत्ति की, न विस्मय ही प्रकट किया।

"अच्छी बात है," उसने कहा।

स्वीकृति में सिर हिलाकर वह मेज के पास जाकर बैठ गया और अपनी दाढ़ी में उँगलियाँ फेरने लगा।

रीबिन का ख़ून से लथपथ घायल चेहरा क्रूर आग्रह के साथ माँ के मस्तिष्क में घूमता रहा और अन्य सभी विचारों को उसके मस्तिष्क से दूर करता रहा। अन्य सभी भावनाएँ व्यथा और रोष के इस प्रवाह में डूब गयीं। माँ अब न अपने सूटकेस के बारे में सोच सकती थी न किसी और बात के बारे में। उसके आँसू लगातार बह रहे थे, पर उसकी मुद्रा कठोर थी, उसने दृढ़ स्वर में कहा :

"जिस तरह वे लोगों को लूटते हैं और उनका अपमान करते हैं, भगवान उन्हें गारत करेगा!"

"उनके पास ताकत है!" किसान ने धीरे से उत्तर दिया। "वे बहुत ताकतवर हैं।"

"कहाँ से मिलती है उन्हें यह ताकत?" माँ ने गुस्से में आकर कहा। "हमीं

लोगों से, आम लोगों से उन्हें यह ताकत मिलती है – हर चीज़ हमारे ही दम से है!"

माँ को किसान का उदार, पर रहस्यमय चेहरा देखकर झुँझलाहट हो रही थी।

"हाँ!" उसने सोचते हुए आवाज़ खींचकर कहा, "चक्र..."

सहसा उसके कान खड़े हुए और वह दरवाज़े की तरफ़ झुककर देखने लगा।

"वे आ रहे हैं," उसने कहा।

"कौन?"

"मालूम होता है हमारे दोस्त ही हैं..."

उसकी बीवी झोपड़ी में आयी। उसके पीछे एक और किसान था जिसने अपनी टोपी एक कोने में फेंकते हुए मालिक के पास आकर पूछा :

"क्या बात है?"

मालिक ने सिर हिला दिया।

"स्तेपान!" गृहिणी ने चूल्हे के पास ही खड़े-खड़े कहा। "यह इतनी दूर से आयी हैं, इन्हें भूख लगी होगी?"

"नहीं, बहन, भूख तो नहीं लगी है मुझे!" माँ ने उत्तर दिया।

दूसरा किसान माँ की तरफ़ मुड़ा।

"मैं अपना परिचय करा दूँ," उसने जल्दी-जल्दी उखड़ी हुई आवाज़ में कहा। "मेरा नाम प्योत्र येगोरोव रियाबीनिन है। लोगों ने मेरा नाम 'सुतारी' रख छोड़ा है। मैं थोड़ा-बहुत जानता हूँ कि आप किस काम से यहाँ आयी हैं। मैं लिखना-पढ़ना भी जानता हूँ, बिल्कुल जाहिल नहीं हूँ!"

उसने बढ़कर माँ का अपनी ओर बढ़ा हाथ पकड़ लिया।

"देखा, स्तेपान," उसने मालिक से कहा, "मेरा ख़याल है कि वरवारा निकोलायेवना यों तो बहुत भली महिला है मगर वह कहती है कि यह काम बहुत बेवक़ूफ़ी और पागलपन का है। वह कहती है कि नौजवान और छात्र आम लोगों के दिमागों में न जाने कैसी-कैसी बातें ठूँस रहे हैं। लेकिन हम और तुम तो इस बात को जानते हैं कि उन्होंने आज एक ऐसे आदमी को गिरफ़्तार किया जो सोलह आने किसान था, और अब इन्हें ही देख लो – अधेड़ उम्र की औरत और मैं समझता हूँ पैसेवाले घर की भी नहीं हैं। नहीं हैं, न?"

वह बहुत जल्दी-जल्दी, मगर स्पष्ट स्वर में बोल रहा था। बीच में वह साँस लेने के लिए भी नहीं रुकता था। उसकी दाढ़ी झटके के साथ हिल रही थी और उसकी नज़रें माँ के चेहरे तथा उसकी पूरी आकृति को ऊपर से नीचे तक देख

रही थीं। उसके कपड़े फटे हुए और तार-तार थे, उसके बाल उलझे हुए थे, मानो वह अभी कहीं से लड़कर आया हो और अपनी विजय पर फूला न समा रहा हो। उसमें जो जोश था और वह अपनी बात जितने सीधे-सादे और निष्कपट भाव से कहता था, वह माँ को अच्छा लगा। उसके प्रश्न का उत्तर देते समय माँ उसकी ओर देखकर मुस्करा दी और वह एक बार फिर माँ से हाथ मिलाकर ठहाका मारकर हँस पड़ा।

"यह ईमानदारी का काम है - नेक काम है, स्तेपान," उसने कहा। "मैं न कहता था तुमसे कि यह जनता का अपना काम है? लेकिन वह कुलीन महिला - वह सच बात नहीं बताती, अगर वह सच-सच बता दे, तो उसे नुकसान पहुँच सकता है। मैं उसकी बड़ी इज्जत करता हूँ, इसमें तो शक नहीं! वह बहुत नेक है और हमारी मदद करना चाहती है - बहुत थोड़ी-सी - लेकिन वहीं तक जहाँ तक उसे कोई नुकसान न हो। लेकिन जो आम लोग होते हैं वे इस बात से डरे बिना कि उन्हें क्या नुकसान पहुँचेगा, सीधे जान की बाजी लगाकर मैदान में कूद पड़ते हैं। फरक समझ में आता है तुम्हारी? वे कुछ भी करें, नुकसान तो हमेशा उन्हीं को पहुँचता है। इसलिए उनके लिए क्या फरक पड़ता है? वे जिस रास्ते पर भी आगे बढ़ने की कोशिश करते हैं, उन्हें बस एक ही शब्द सुनने को मिलता है 'ठहरो!' "

"मैं समझता हूँ!" स्तेपान ने सिर हिलाकर कहा और फिर बोला, "इन्हें अपने बक्से की बड़ी फिकर लगी है।"

प्योत्र ने बड़े अर्थपूर्ण ढंग से माँ की तरफ़ देखकर आँख मारी।

"घबराओ नहीं!" उसने माँ को आश्वस्त करते हुए कहा। "माँ, सब ठीक हो जायेगा! तुम्हारा सूटकेस मेरे घर पर है। आज जब इसने मुझे तुम्हारे बारे में बताया कि तुम भी इसी काम में हो और उस आदमी को जानती हो, तो मैंने उससे कहा, 'स्तेपान, देखो होशियार रहना! अगर ऐसी बात है, तो हमें ज़रा भी चूक नहीं करनी चाहिए!' लेकिन जब हम लोग वहाँ तुम्हारे पास खड़े थे, तब शायद तुम भी समझ गयी थीं कि हम कौन लोग हैं। ईमानदार आदमी सूरत से पहचाना जाता है - सच तो यह है कि ईमानदार आदमी मिलते ही कितने हैं! सूटकेस मेरे घर पर है..."

वह माँ के पास आकर बैठ गया और प्रश्न-भरी दृष्टि से उसे देखने लगा :

"उस सूटकेस में जो कुछ भरा है, अगर तुम उससे पिण्ड छुड़ाया चाहो, तो हम लोग बड़ी ख़ुशी से तुम्हारी मदद कर सकते हैं! हमें किताबों की बड़ी ज़रूरत है..."

"यह तो सब कुछ हमारे पास ही छोड़ जाना चाहती हैं!" स्तेपान ने कहा।

“यह तो बड़ी अच्छी बात है, माँ! हम सब चीज़ें रखने का इन्तज़ाम कर लेंगे!..”

धीरे से हँसकर वह उछलकर खड़ा हो गया और टहलने लगा।

“हम लोग भी तकदीर के सिकन्दर हैं! लेकिन इसमें कोई ताज्जुब की बात नहीं है – रस्सी एक जगह से टूटी, तो दूसरी जगह से जुड़ गयी! माँ, अखबार बहुत अच्छा है, उससे बहुत फ़ायदा हो रहा है, लोगों की आँखों पर से पट्टियाँ खुलती जा रही हैं! जो पैसे वाले लोग हैं वे तो उसे बहुत अच्छा नहीं समझते। मैं यहाँ से कोई चार–पाँच मील दूर पर एक कुलीन महिला के यहाँ बढ़ई का काम करता हूँ। वैसे वह बहुत भली औरत है – हम लोगों को किताबें वग़ैरह पढ़ने के लिए देती है। उन किताबों में कभी–कभी सचमुच ऐसी बातें मिल जाती हैं कि पढ़कर आँखें खुल जाती हैं! हम लोग उसका बड़ा एहसान मानते हैं। लेकिन एक बार मैंने उसे यह अखबार दिखाया था। आपसे क्या बताऊँ कि इस अखबार को देखते ही उस पर क्या असर हुआ। वह बोली, ‘प्योत्र, ये सब चीज़ें न पढ़ा करो! नासमझ लड़कों का एक गिरोह है जो ऐसी बेवक़ूफ़ी की बातें लिखता है। ये सब चीज़ें पढ़कर तुम मुसीबत में फँस जाओगे – जेल में बन्द कर दिये जाओगे, साइबेरिया भेज दिये जाओगे...’ वह यह कहती थी।”

वह फिर अचानक ख़ामोश हो गया और कुछ सोचने के बाद उसने पूछा :

“माँ, आज वह आदमी जो था न – वह तुम्हारा कोई रिश्तेदार है?”

“नहीं!” माँ ने उत्तर दिया।

प्योत्र चुपचाप हँसने लगा और इस तरह सिर हिलाने लगा मानो किसी बात पर बहुत प्रसन्न हो।

“रिश्तेदार तो नहीं है मगर मैं उसे बहुत दिनों से जानती हूँ और अपने भाई की तरह, बड़े भाई की तरह, उसकी इज्जत करती हूँ!” माँ ने जल्दी से सफ़ाई देते हुए कहा मानो यह कहकर कि वह रीबिन की रिश्तेदार नहीं थी उसने कोई भूल की हो।

उसे अपनी भावनाएँ व्यक्त करने के लिए उचित शब्द नहीं मिल रहे थे और इस बात से उसे इतना कष्ट हुआ कि वह फिर रोने लगी। झोपड़ी में एक घुटन और आशंकापूर्ण निस्तब्धाता छा गयी। प्योत्र सिर झुकाये खड़ा था मानो कुछ सुन रहा हो। स्तेपान मेज पर कुहनियाँ रखे बैठा था और कुछ घबराहट के कारण उँगलियों से मेज पर तबला बजा रहा था। उसकी पत्नी चूल्हे का सहारा लिये खड़ी थी। माँ को ऐसा आभास हुआ कि वह औरत एकटक उसे घूर रही है। माँ स्वयं भी कभी–कभी कनखियों से उस औरत की सूरत देख लेती थी। उसका चेहरा लम्बोतरा और रंग साँवला था, नाक सीधी और ठोड़ी बहुत ठोस बनावट

की थी। उसकी कंजी आँखों में चपलता थी और वे आँखें हर चीज़ को बड़े ध्यान से देखती थीं।

"तो वह तुम्हारा दोस्त था!" प्योत्र ने कुछ सोचते हुए कहा। "वह अपनी अकल से काम लेता है, सचमुच!... अपनी कदर पहचानता है, और क्यों न पहचाने! क्या आदमी है, तत्याना? और तुम कहती हो..."

"क्या उसकी शादी हो गयी है?" तत्याना ने अपने छोटे-से मुँह के होंठ भींचकर उसकी बात काटते हुए पूछा।

"शादी हुई थी, बीवी मर गयी!" माँ ने उदास स्वर में उत्तर दिया।

"इसीलिए इतना बहादुर है!" तत्याना ने भारी गूँजती हुई आवाज़ में कहा। "बीवी-बच्चोंवाला कोई आदमी यह रास्ता नहीं अपनायेगा – उसे डर लगेगा..."

"और मैं जो हूँ?" प्योत्र ने ऊँचे स्वर में कहा। "क्या मेरी शादी नहीं हुई?"

"चिः चिः, भैया, तुम करते ही क्या हो!" उस औरत ने प्योत्र की तरफ़ से नज़रें फेरकर एक व्यंगपूर्ण मुस्कराहट के साथ कहा।

"बस, बातें बघारते हो, कभी-कभार एकाध किताब पढ़ ली। तुम और स्तेपान जो कोने में बैठे खुसुर-फुसुर किया करते हो उससे किसी का क्या फ़ायदा होता है?"

"मेरी बातें बहुत-से लोग सुनते हैं!" तत्याना के इस तिरस्कार पर तिलमिलाकर उस किसान ने प्रतिरोध करते हुए कहा। "तुम ऐसे समझ लो कि मैं यहाँ खमीर का काम कर रहा हूँ। तुम्हें ऐसी बात नहीं कहना चाहिए..."

स्तेपान ने बिना कुछ कहे अपनी बीवी की तरफ़ देखा और फिर सिर झुका लिया।

"आख़िर किसान शादी करता ही क्यों है?" तत्याना ने पूछा। "इसीलिए न कि उसे अपना काम कराने के लिए एक औरत की ज़रूरत होती है? मैं पूछती हूँ, कौन-सा काम?"

"तुम्हारे पास क्या करने को काफ़ी काम नहीं है?" स्तेपान ने मुरझाये हुए स्वर में कहा।

"इस काम को करने में क्या तुक है? आधा पेट खाना खाकर ज़िन्दगी के दिन काटते रहने से आख़िर क्या फ़ायदा? अगर बच्चे हों तो इस सब काम-काज के चक्कर में उन्हें देखने-भालने का भी वक़्त नहीं मिलता और तिस पर भी पेट-भर खाने को नहीं मिलता।"

वह माँ के पास जाकर उसके बगल में बैठ गयी और बातें करती रही। उसकी बातों में न शिकायत थी न उदासी...

"मेरे दो बच्चे हुए। एक तो जब दो बरस का था तभी जलकर मर गया

और दूसरा पैदा ही हुआ मरा हुआ, और यह सब कुछ इस मनहूस काम की वजह से हुआ! मुझे इससे भला कोई सुख मिला? मैं तो कहती हूँ कि किसान को ब्याह करना ही नहीं चाहिए। वह बेकार में अपने हाथ–पाँव बाँध लेता है जबकि वह बड़ी आसानी से मनमानी ज़िन्दगी बसर कर सकता है और अपनी ज़िन्दगी को बेहतर बनाने के लिए लड़ सकता है। उस हालत में हर किसान उस आदमी की तरह सच्चाई की खोज में निकल सकता है! क्यों है न, माँ?.."

"हाँ, है तो!" माँ ने कहा। "है तो यही बात। वरना हम इस ज़िन्दगी को बदलने की कोई उम्मीद नहीं रख सकते..."

"तुम्हारा घरवाला है?"

"मर गया। एक बेटा है..."

"तुम्हारे साथ ही रहता है?"

"जेल में है!" माँ ने कहा।

आम तौर पर यही बात कहकर माँ दुखी हो जाया करती थी, पर इस समय उसके स्वर में गर्व की भावना भी थी।

"यह दूसरी बार जेल गया है। उसका कसूर बस इतना है कि वह लोगों को सच्चाई की बातें बताता है... वह अभी नौजवान है, बहुत ख़ूबसूरत और होशियार है! उसी ने तुम लोगों के लिए इस अखबार की बात सोची थी। उसी ने मिख़ाइलो इवानोविच को सही रास्ता दिखाया था, हालाँकि मिख़ाइलो उमर में उससे दुगना है! जल्दी ही उन लोगों पर मुक़दमा चलाया जायेगा और मेरे बेटे को साइबेरिया भेज दिया जायेगा। लेकिन वह वहाँ से भाग आयेगा और यहाँ आकर फिर अपना काम शुरू कर देगा..."

बोलते–बोलते माँ की गर्व की भावना बढ़ती गयी और उसके सामने अपनी इस कहानी के नायक का चित्र इतना स्पष्ट हो गया और उसका वर्णन करने के लिए शब्द एक प्रबल प्रवाह की तरह इतनी तेज़ी से उसके होंठों पर आने लगे कि उसका दम घुटने सा लगा। माँ के लिए यह आवश्यक हो गया था कि उस दिन के अन्धकार को दूर करने के लिए, उस अन्धकार को जिसकी अर्थहीन भयावहता और निर्लज्ज क्रूरता माँ के सीने पर बोझ की तरह रखी हुई थी, वह उसके मुकाबले पर किसी आशाजनक और तर्कसंगत चीज़ को ला खड़ा करे। अपनी समृद्ध आत्मा की इस माँग को पूरा करने के लिए उसने सारी शुद्ध और उज्ज्वल वस्तुओं को बटोरकर एक प्रबल ज्योति का रूप दे दिया जिसके प्रकाश से स्वयं उसकी आँखें चकाचौंध होने लगीं...

"उसके जैसे और भी बहुत से लोग हैं और हर रोज़ नये लोग पैदा होते जाते हैं और ये लोग ज़िन्दगी भर सच्चाई और आजादी के लिए लड़ते जायेंगे..."

माँ ने सतर्कता तजकर बिना किसी का नाम लिये जो कुछ उसे मालूम था सब बता दिया कि जनता को उत्पीड़न से मुक्त कराने के लिए क्या गुप्त काम हो रहा था। उन लोगों की चर्चा करते समय जो उसे बहुत प्रिय थे, वह अपने शब्दों में उस प्रेम की सारी शक्ति और प्रचुरता उँडेले दे रही थी जो जीवन के उतार–चढ़ावों के कारण इतनी देर में जाकर प्रस्फुटित हुआ था। और उसकी कल्पना में जिन लोगों के चित्र उभर रहे थे उन्हें वह स्वयं भी बहुत पुलकित होकर देख रही थी, उसकी भावनाओं ने उन्हें और भी प्रतिभामय और ग़ौरवशाली बना दिया था।

"और यह काम सारी पृथ्वी पर, शहर–शहर में हो रहा है। ईमानदार लोगों की ताकत की कोई हद नहीं है और उनकी यह ताकत दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है और उस वक़्त तक बढ़ती ही जायेगी, जब तक हमारी जीत न हो जाये..."

उसके स्वर में एक सुगम प्रवाह था और उसे शब्द ढूँढ़ने में कोई कठिनाई नहीं हो रही थी, अपने हृदय से उस दिन के रक्त और गन्दगी के हर चिन्ह को मिटा देने की इच्छा के मज़बूत धागे पर वह इन शब्दों को रंगीन मोतियों की तरह पिरोती जा रही थी। वह देख रही थी कि इन किसानों पर उसकी बातों का प्रभाव हो रहा था, वे उसके चेहरे पर अपनी नज़रें जमाये चुपचाप बैठे थे। माँ को अपने पास बैठी हुई औरत की साँस लेने की झटकेदार आवाज़ सुनायी दे रही थी। और इससे उन बातों के प्रति उसका अपना विश्वास भी बढ़ता गया जो वह उन लोगों से कह रही थी और जिनका वह उन लोगों को यकीन दिला रही थी...

"वे सब लोग जो मुसीबत की ज़िन्दगी बिताते हैं, मुफलिसी और अन्याय ने जिनकी कमर तोड़ दी है, वे सब लोग जिन्हें अमीर लोगों ने और उनके ताबेदारों ने बेरहमी से कुचलकर रख दिया है – इन सबको उन लोगों का साथ देना चाहिए जो जेलों में सड़ते रहते हैं और जिन्हें अपने भाइयों की खातिर तकलीफें बरदाश्त करनी पड़ती हैं। अपने बारे में सोचे बिना वे सभी लोगों के सुख का रास्ता बताते हैं, वे धोखा देने की कोशिश नहीं करते, साफ़ कहते हैं कि रास्ता कठिन है ओर वे किसी को इस रास्ते पर चलने पर मजबूर नहीं करते। लेकिन जो आदमी भी एक बार उनका साथ पकड़ लेता है वह उन्हें कभी छोड़ नहीं सकता, क्योंकि वह देखता है कि यही रास्ता ठीक है – इस रास्ते के अलावा कोई दूसरा रास्ता है ही नहीं!"

माँ को इस बात से रोमांच हो रहा था कि वह इस समय ऐसा काम कर रही थी जिसकी लालसा बहुत समय से उसके मन में थी। वह स्वयं लोगों को सच्चाई की बातें बता रही थी!

"ऐसे लोगों के पीछे चलने में कोई ख़तरा नहीं है। वे थोड़ी–बहुत सफवाले

जीव नहीं हैं। जब तक वे हर धोखेबाजी, हर लालच और हर बदी को जड़ से नहीं उखाड़ फेकेंगे, तब तक वे दम नहीं लेंगे। वे अपने हाथ उस समय तक नहीं रोकेंगे, जब तक सब लोग मिलकर एक आवाज़ से यह न पुकार उठें, 'मैं मालिक हूँ! मैं ख़ुद वे क़ानून बनाऊँगा जो सब के लिए एक जैसे होंगे!.."

सहसा उसे थकन सी महसूस होने लगी। उसने बोलना बन्द करके अपने श्रोताओं पर एक नज़र डाली, उसे यह जानकर ख़ुशी हो रही थी कि उसने जो कुछ कहा था वह बेकार नहीं गया था। दोनों किसान बड़ी उत्सुकता से उसे देखते रहे। प्योत्र अपने सीने पर दोनों हाथ बाँधे, आँखें सिकोड़े बैठा था, उसके होंठों पर मुस्कराहट खेल रही थी। स्तेपान मेज पर कुहनी टिकाये अपने पूरे शरीर का बोझ देकर इस तरह आगे झुका हुआ था, मानो अभी तक माँ की बातें सुन रहा हो। उसके मुँह पर साया पड़ रहा था और शायद इसीलिए उसकी आकृति अब अधिक पूर्ण मालूम हो रही थी। उसकी पत्नी जो माँ के बगल में बैठी थी, घुटनों पर कुहनियाँ टिकाये फ़र्श को ग़ौर से देख रही थी।

"यही तो बात है!" प्योत्र ने बहुत धीमे स्वर में कहा और धम से बेंच पर बैठ गया।

स्तेपान तनकर बैठ गया ओर बीवी की तरफ़ देखकर उसने अपनी बाँहें इस तरह फैलायीं मानो वह वहाँ बैठे हुए तमाम लोगों को सीने से लगाना चाहता हो...

"हाँ, यह बात तो है कि अगर एक बार इस काम में हाथ डाला," उसने बहुत विचारपूर्वक कहना शुरू किया, "तो फिर तो तन-मन से इसी में जुट जाना पड़ता है..."

"पीछे लौटने का कोई सवाल ही नहीं!" प्योत्र ने कुछ झिझकते हुए कहा।

"ऐसा लगता है कि बहुत-से लोग इस काम में हाथ डालते हैं!" स्तेपान ने कहा।

"सारी दुनिया इसी की तरफ़ खिंचकर आती है!" प्योत्र ने कहा।

18

माँ दीवार का सहारा लेकर बैठ गयी और सिर पीछे टिकाकर सुनने लगी कि वे लोग किस प्रकार शान्त स्वर में विभिन्न विषयों पर अपना मत प्रकट कर रहे थे। तत्याना ने उठकर चारों तरफ़ नज़र डाली और फिर बैठ गयी। किसानों की ओर तिरस्कार तथा घृणा से देखते उसकी कंजी आँखों में एक क्रूर चमक थी। सहसा वह माँ की ओर मुड़ी।

"तुमने तो अपनी ज़िन्दगी में बहुत मुसीबत झेली होगी?" उसने कहा।

"हाँ, झेली तो है!" माँ ने उत्तर दिया।

"तुम्हें बातें करते सुनना मुझे अच्छा लगता है – तुम्हारी बातों से दिल के तार झनझना उठते हैं। जब मैं तुम्हें बातें करते हुए सुनती हूँ तो सोचने लगती हूँ – हे भगवान, जैसे लोगों की तुम बातें करती हो अगर मैं ऐसे लोगों का दर्शन भी कर पाती तो मैं अपना सब कुछ न्योछावर कर देती! क्योंकि वहीं तो सच्चा जीवन है। हम अपनी ज़िन्दगी में क्या देखते हैं? हम भेड़ों के गल्ले की तरह हैं, बस और कुछ नहीं! मुझे ही ले लो। मैं किताबें पढ़ती हूँ और बहुत सोचती भी हूँ – कभी-कभी तो मैं सोचने में इतना खो जाती हूँ कि रात-रात भर मुझे नींद नही आती। लेकिन क्या फ़ायदा इससे? अगर मैं सोचना बन्द कर दूँ, तो मेरा जीवन यों ही व्यर्थ हो जायेगा और अगर मैं सोचती भी रहूँ, तो वह भी बेकार है।"

उसकी आँखों में व्यंग्य था और कभी-कभी तो ऐसा मालूम होता था कि वह अपने शब्दों को इतने झटके से तोड़ देती है जैसे सुई से धागा तोड़ लिया गया हो। किसानों ने कुछ नहीं कहा। हवा खिड़की के शीशों को थपक रही थी, चिमनी में मरमर ध्वनि करती हुई घुस रही थी और छत के फूस पर से सरसराती हुई गुजर रही थी। कहीं से कुत्ते के भूँकने की आवाज़ आयी। बीच-बीच में वर्षा की कोई बूँद खिड़की से टकरा जाती थी। लैम्प की लौ काँपी और प्राय: बिल्कुल बुझ गयी, पर शीघ्र ही वह फिर सँभल गयी और स्थिर होकर तेज़ी से जलने लगी।

"जब मैंने तुम्हारी बातें सुनीं, तो मैंने अपने मन में कहा : 'लोग इसी के लिए पैदा हुए थे!' और यह बड़ी अजीब बात है कि मुझे ऐसा लगा कि यह सब तो मैं पहले से जानती हूँ! लेकिन मैंने ऐसी बातें पहले कभी नहीं सुनी थीं और मेरे दिमाग में कभी ऐसे विचार नहीं आये थे..."

"आओ, हम लोग कुछ खा लें, और देखो, तत्याना, बत्ती बुझा दो!" स्तेपान ने त्योरियों पर बल डालकर धीरे से कहा। "लोग देखेंगे, तो सोचेंगे कि चुमाकोव के घर में आज रोज़ से ज़्यादा देर तक बत्ती क्यों जल रही है। हमारा तो कुछ नहीं बिगड़ेगा, पर इन पर आँच आ सकती है..."

तत्याना उठकर चूल्हे की तरफ़ चली गयी।

"हाँ भाई, आजकल फूँक-फूँककर क़दम रखना पड़ता है!" प्योत्र ने मुस्कराकर कहा। "जैसे ही इन अखबारों की ख़बर लगेगी..."

"मुझे अपनी फिकर नहीं है। अगर मुझे गिरफ़्तार कर लेंगे, तो कोई ऐसा बहुत नुकसान नहीं होगा!"

उसकी बीवी मेज के पास आकर बोली :

"ज़रा उठो तो..."

स्तेपान उठ खड़ा हुआ और तत्याना को मेज पर खाना लगाते देखता रहा।

"भाई, हमारे तुम्हारे जैसे लोग तो टके सैकड़ा मिलते हैं," उसने व्यंगपूर्वक मुस्कराकर कहा।

माँ को उस पर तरस आ रहा था, वह उसे जितना देखती थी उतना ही वह अच्छा लगता था। इतनी बातें कर चुकने पर अब उसे ऐसा लग रहा था जैसे दिन-भर की गन्दगी से वह पाक हो गयी हो; वह मन ही मन अपने आप पर ख़ुश थी और उसके हृदय में सबके लिए सद्भावनाएँ थीं।

"हमारा दोस्त है ही कौन?" उस किसान ने निराशा-भरे स्वर में कहा। "हम लोग तो हमेशा रोटी के एक-एक टुकड़े के लिए लड़ते रहते हैं..."

"तुम गलत कहते तो!" माँ ने कहा। "तुम्हारा ख़ून चूसने वाले लोग तुम्हारा जो मोल लगायें उसे तुम क्यों स्वीकार करते हो? तुम्हें अपना मोल ख़ुद आँकना चाहिए – मोल तो तुम्हारे गुणों का होता है। तुम्हारा मोल वह है जो तुम्हारे दोस्त आँकें, न कि वह जो तुम्हारे दुश्मन लगायें..."

"लेकिन मैं जो तुमसे कहती हूँ कि आम लोगों के दोस्त हैं..."

"होंगे, मगर यहाँ तो यहीं हैं!" स्तेपान ने कुछ सोचते हुए कहा।

"यहाँ भी ढूँढ़ने की कोशिश क्यों नहीं करते?"

स्तेपान ने कुछ देर सोचकर उत्तर दिया :

"हुँ:! हाँ, मैं भी यही सोचता हूँ कि हमें यही करना पड़ेगा..."

"आ जाओ, खाना लग गया!" तत्याना ने कहा।

खाना खाते समय प्योत्र में जैसे दुबारा जान आ गयी। ऐसा प्रतीत होता था कि माँ ने जो कुछ कहा था उससे वह बहुत प्रभावित हुआ था।

"माँ, तुम बहुत सबेरे उठकर यहाँ से चली जाना ताकि कोई देख न पाये," उसने कहा। "सीधे शहर में न जाकर दूसरी चौकी तक चली जाना। घोड़ागाड़ी कर लेना..."

"आख़िर क्यों? मैं गाड़ी पर पहुँचा आऊँगा," स्तेपान ने कहा।

"नहीं, तुम न जाना! अगर उन लोगों ने तुमसे सवाल-जवाब किया, तो क्या होगा – 'वह रात यहाँ ठहरी थी?' – 'हाँ, ठहरी थी।' – अब कहाँ गयी?' – 'मैं उसे घोड़ागाड़ी की चौकी पर पहुँचा आया था।' – 'अच्छा, तो तुमने उसे यहाँ से भाग निकलने में मदद दी!' और फिर तुम जेल भेज दिये जाओगे। समझे? इतनी जल्दी जेल जाने से फ़ायदा भी क्या? हर चीज़ का वक़्त होता है। जिसे कहते हैं कि ज़ार भी तभी मरेगा जब उसका वक़्त आयेगा। अगर अकेली जायेंगी, तो यह होगा कि रात यहाँ ठहरी थीं, सबेरे किराये की घोड़ागाड़ी करके चली गयीं! बहुत-से लोग रात यहाँ बसर करते हैं, हमारा गाँव बड़ी सड़क पर जो है..."

"प्योत्र, तुम्हें इतना दब्बूपन किसने सिखाया है?" तत्याना ने व्यंग्य से कहा।

"बहन, आदमी को सभी कुछ जानना चाहिए – कब नरम पड़ जाये, कब अकड़ जाये!" प्योत्र ने अपने घुटने पर हाथ मारते हुए कहा। "याद है जब वगानोव के पास अखबार पकड़ा गया था, तब उसकी कैसी ठुकाई हुई थी? अब कोई लाख कोशिश करे, पर वह किताब को हाथ तक नहीं लगाने का। मगर माँ तुम मुझ पर भरोसा रखो। मैं बड़ा चलता पुर्ज़ा हूँ। मैं तुम्हारे सब अखबार और पर्चे बाँट दूँगा – जितने तुम कहोगी – और ठीक जगहों पर बाँटूगा। यह सही है कि हमारे यहाँ के ज़्यादातर लोग पढ़े-लिखे नहीं हैं और फिर वे डरते भी हैं लेकिन कभी-कभी ऐसा भी होता है कि इंसान चारों तरफ़ से अइतनी बुरी तरह घिर जाता है कि उसे आँखें खोलनी ही पड़ती हैं ओर सोचना पड़ता है कि आख़िर इसका क्या इलाज किया जाये? इन पर्चों में साफ़-साफ़ लिखा होता है : सोचो! अपनी अकल इस्तेमाल करो! कुछ बेपढ़े-लिखे लोग ऐसे भी होते हैं जो पढ़े-लिखों से, और ख़ासतौर पर उन लोगों से जिनके पेट भरे होते हैं ज़्यादा जानते हैं! मैं इधर के इलाके के कोने-कोने में घूमा-फिरा हूँ और मैंने यहाँ की हर चीज़ देखी है! हम सब इन्तज़ाम कर लेंगे, लेकिन हमें अपनी अकल से काम लेना पड़ेगा और होशियार रहना पड़ेगा, नहीं तो हम शुरू में ही पकड़ लिये जायेंगे। अफ़सरों को इस बात की भनक मिल गयी है कि किसान का रवैया अब उनकी तरफ़ दोस्ती का नहीं रह गया – उसने मुस्कराना छोड़ दिया है और अफ़सरों के लिए उसके दिल में ज़रा भी इज्जत नहीं है। मालूम तो यही होता है कि वह हाकिमों से अपना नाता बिल्कुल तोड़ लेगा! अभी उसी दिन की बात है, यहाँ पास ही स्मोल्याकोवो नाम का एक गाँव है; जब सरकारी अफ़सर वहाँ लगान वसूल करने गये, तो किसानों ने हाथ में लाठियाँ लेकर उनका स्वागत किया! थानेदार तो साफ़ कहता है, 'तो तुम लोग ज़ार के ख़िलाफ़ हो, क्यों बदमाशो?' वह यही चिल्लाता रहता है। स्पिवाकिन नाम के एक किसान ने तो उसे मुँहतोड़ जवाब दिया, 'तुम भी ज़ार के साथ जहन्नुम में जा! किस काम का वह ज़ार जो आपके तन के लत्ते तक छीन ले?..' माँ, बात यहाँ तक बढ़ चुकी है! उन्होंने स्पिवाकिन को तो जेल में डाल दिया, लेकिन उसकी बातों को तो जेल में बन्द नहीं किया जा सकता। बच्चे-बच्चे को याद है कि उसने क्या कहा था। उसके शब्द आज तक चिल्ला-चिल्लाकर हमसे कुछ कहते हैं!"

प्योत्र ने कुछ खाया नहीं, बस धीमी आवाज़ में जल्दी-जल्दी बोलता रहा और अपनी धूर्त्त, चमकदार काली आँखों से चारों तरफ़ देखता रहा, वह किसानों के जीवन के बारे में अपने अनुभव माँ को इस प्रकार सुना रहा था मानो बटुवे में से सिक्के उँड़ेल रहा हो।

बीच में दो बार स्तेपान ने उसे टोककर कहा :

"कुछ खा लो..."

दोनों बार प्योत्र ने एक रोटी का टुकड़ा और चम्मच उठा लिया और ऐसे सरल प्रवाह के साथ अपनी कहानियाँ सुनाता रहा मानो कोई पक्षी चहक रहा हो। जब खाना ख़त्म हुआ, तो वह सहसा उछलकर खड़ा हो गया।

"मुझे अब घर चलना चाहिए!.. अच्छा माँ, तो मैं चलता हूँ!" उसने माँ से हाथ मिलाते हुए कहा। "मुमकिन है अब हमारी मुलाक़ात कभी न हो, लेकिन मैं तुम्हें इतना बता दूँ कि मैं बहुत ख़ुश हूँ – इस बात पर कि तुमसे मिला और तुम्हारी बातें सुनीं! तुम्हारे उस सूटकेस में काग़ज़ों के अलावा और कुछ भी है? एक ऊनी शाल होगी? अच्छा, ऊनी शाल आ जायेगी। स्तेपान, याद रखना! माँ, तुम्हारा सूटकेस अभी एक मिनट में आ जायेगा! आओ, स्तेपान चलो! अच्छा, सलाम!.."

उनके चले जाने के बाद तिलचट्टों के इधर-उधर भागने की आवाज़ तक सुनायी देने लगी। हवा छत पर जन्नाटे के साथ चल रही थी और चिमनी में गरजती हुई घुस रही थी; पानी की फुहारें खिड़की के शीशों पर पड़ रही थीं। तत्याना ने आतिशदान के ऊपर मचान पर से गद्दे वग़ैरह उतारकर एक बेंच पर बिछा दिये और माँ के लिए बिस्तर तैयार कर दिया।

"बड़ा तेज़ आदमी है!" माँ ने कहा।

तत्याना ने त्योरियाँ चढ़ाकर माँ की तरफ़ देखा :

"बस बकता ही बहुत है, लेकिन इससे फ़ायदा कुछ नहीं होता।"

"और तुम्हारा पति?" माँ ने पूछा।

"वह ठीक है – बहुत भला आदमी है। शराब बिल्कुल नहीं पीता। हम दोनों की अच्छी निभती है। लेकिन बहुत कमज़ोर दिल का आदमी है..."

वह तनकर खड़ी हो गयी।

"अब हम लोग क्या करें?" उसने कुछ देर रुककर कहा। "क्या हमें बगावत नहीं करनी चाहिए? ज़रूर करनी चाहिए! हर आदमी यही सोच रहा है, लेकिन हर आदमी बस अपने मन में ही सोचता है। उन्हें अपने मन की बात ज़ोर से करनी चाहिए... किसी को तो पहल करनी ही चाहिए..."

यह कहकर वह बेंच पर बैठ गयी।

"तुम कहती हो कि कुलीन लड़कियाँ भी यह काम करती हैं – मज़दूरों से मिलती हैं, उन्हें किताबें पढ़कर सुनाती हैं। क्या ऐसा नहीं है कि यह काम इन भले घर की लड़कियों के बस का नहीं है? क्या उन्हें डर नहीं लगता?" उसने माँ से सहसा पूछा।

माँ का उत्तर सुनकर तत्याना ने गहरी साँस ली और सिर झुकाकर नज़रें नीची कर लीं।

"मैंने एक किताब पढ़ी थी जिसमें ये शब्द आये थे – 'व्यर्थ जीवन'। पढ़ते ही मैं इसका मतलब पूरी तरह समझ गयी! मैं बहुत अच्छी तरह जानती हूँ कि यह ज़िन्दगी कैसी होती है – मतलब तो सब समझ में आ गया। मगर हर बात मेरे दिमाग में बिखरी-बिखरी-सी रही – जैसे बिना गड़रिये के भेड़ें हों... व्यर्थ जीवन इसी को कहते हैं। अगर मेरा बस चले, तो मैं ऐसी ज़िन्दगी को छोड़कर भाग जाऊँ और एक बार भी मुड़कर न देखूँ। जब बातें समझ में आने लगती हैं, तो आदमी बहुत दुखी हो जाता है!"

उसकी कंजी आँखों की शुष्क चमक में, उसके मुरझाये हुए चेहरे में माँ को यह व्यथा दिखायी दे रही थी, उसके स्वर में इस व्यथा की गूँज सुनायी दे रही थी। माँ उसे दिलासा देना चाहती थी।

"लेकिन, बहन, रास्ता तो तुमने देख लिया है..."

"इतना ही काफ़ी नहीं है। हमें आगे बढ़ने का तरीक़ा भी मालूम होना चाहिए!" तत्याना ने बात काटते हुए बहुत धीरे से कहा। "अच्छा, लो तुम्हारा बिस्तर तैयार हो गया!"

वह चूल्हे के पास जाकर चुपचाप खड़ी हो गयी – गम्भीर, निश्चल, विचारों में खोयी हुई माँ वही कपड़े पहने-पहने लेट गयी। थकन के मारे उसक शरीर में इतनी पीड़ा हो रही थी कि उसके मुँह से एक हल्की-सी कराह निकल गयी। तत्याना ने लैम्प बुझा दिया और जब झोपड़ी में अँधेरा छा गया, तो वह बहुत ही मन्द सपाट स्वर में बोलने लगी। ऐसा प्रतीत होता था कि उसका स्वर अन्धकार की निष्प्रभ मुखाकृति पर से कुछ पोंछे ले रहा है।

"तुम भी प्रार्थना नहीं करतीं। मैं भी ईश्वर में विश्वास नहीं रखती। चमत्कारों को भी नहीं मानती।"

माँ ने करवट बदली। खिड़की में से अभेद्य अन्धकार उसे घूर-घूरकर देख रहा था और हल्की-हल्की आवाज़ें, क्षीण से क्षीण आहटें निस्तब्धता में रेंगती हुई आ रही थीं। उसने भयभीत स्वर में प्रायः बिल्कुल कान में चुपके से तत्याना का उत्तर दिया :

"जहाँ तक ईश्वर का सवाल है मैं ठीक से नहीं कह सकती। पर ईसा मसीह पर मेरा विश्वास है... मुझे उनके इन शब्दों पर विश्वास है : 'दूसरों को भी अपनी ही तरह प्यार करो!' मैं इस बात में यकीन रखती हूँ!.."

तत्याना चुप रही। आतिशदान की काली पृष्ठभूमि पर माँ को उसकी तनी हुई आकृति की धुँधली रूपरेखा दिखायी दे रही थी। वह निश्चल खड़ी थी। माँ

ने उदास होकर अपनी आँखें मूँद लीं।

सहसा उसने तत्याना को कठोर स्वर में कहते सुना :

"अपने बच्चों की मौत के लिए मैं ईश्वर या मनुष्य दोनों में से किसी को भी माफ़ नहीं कर सकती। कभी नहीं!.."

पेलागेया निलोवना अत्यन्त विचलित होकर उठ बैठी। तत्याना के शब्दों के पीछे जो वेदना छुपी हुई थी उसे माँ की आत्मा भली भाँति समझती थी।

"अभी तुम्हारी उमर ही क्या है, – और बच्चे हो जायेंगे," माँ ने बड़ी ममता से कहा।

"अब नहीं होंगे!" तत्याना ने कुछ देर रुककर मन्द स्वर में कहा। "मेरे शरीर में कोई बिगाड़ हो गया है। डॉक्टर ने कहा है कि अब मेरे बच्चे नहीं हो सकते..."

एक चूहा भागता हुआ फ़र्श पर से गुज़रा। किसी चीज़ के टूटने की आवाज़ आयी। ध्वनि ने अदृश्य वज्रपात से निस्तब्धता भंग हो गयी। छत पर मेंह की सरसर ध्वनि फिर सुनायी देने लगी, ऐसा मालूम होता था कि कोई घबराया हुआ पतली–पतली उँगलियों से छप्पर के फूस में कुछ ढूँढ़ रहा है। पानी टपकने की भयावह ध्वनि शरद रात्रि में मन्द प्रवाह की सूचना दे रही थी...

माँ को नींद आने लगी। ऊँघते–ऊँघते उसने बाहर और फिर ड्योढ़ी में किसी के भारी क़दमों की आहट सुनी। बड़ी सावधानी से किसी ने दरवाज़ा खोला।

"सो गयीं, तत्याना?" मर्दानी आवाज़ सुनायी दी।

"नहीं तो।"

"वह सो गयीं?"

"मेरे ख़याल से सो ही गयीं।"

सहसा प्रकाश हुआ, कुछ देर के लिए ज्योति की लौ काँपी और फिर अन्धकार में विलीन हो गयी। किसान ने माँ के बिस्तर के पास जाकर उसके पैरों पर पड़ा हुआ कोट सम्भाल दिया। यह देखकर कि वह उसके आराम का कितना ध्यान रखता है माँ का हृदय कृतज्ञता से भर उठा और उसने मुस्कराकर फिर आँखें बन्द कर लीं। स्तेपान ने कुछ कहे बिना कपड़े बदले और चबूतरे पर जाकर लेट गया। चारों ओर फिर निस्तब्धता छा गयी।

माँ चुपचाप लेटी बड़े ध्यान से इस स्वप्निल निस्तब्धता के आरोहावरोह को सुन रही थी; उसकी आँखों के आगे रीबिन का रक्त–रंजित चेहरा घूमने लगा...

चबूतरे पर कोई फुसफुसाया :

"कैसे–कैसे लोग इस काम में खिंचकर आते हैं? अधेड़ उमर के लोग

जिन्होंने अपने जीवन-भर व्यथा के घूँट पिये हैं। इन लोगों को अब आराम से बैठना चाहिए, पर वे यह काम करते हैं! तुम नौजवान और होशियार हो – ओह, मेरे स्तेपान..."

"मुझे पहले अच्छी तरह सोच-विचार कर लेना चाहिए," किसान ने अपनी भारी गूँजदार आवाज़ में कहा।

"मैं यह बात पहले भी सुन चुकी हूँ..."

वे दोनों एक मिनट तक चुप रहे, स्तेपान कहने लगा :

"हमें काम इस तरह शुरू करना होगा : पहले किसानों से अलग-अलग बात करनी पड़ेगी – जैसे अलेक्सेई माकोव से। वह पढ़ना जानता है, उसके दिल में जोश है और वह हाकिमों से बहुत जला बैठा है। सेर्गेई शोरिन भी बहुत होशियार किसान है। क्नियाजेव भी ईमानदार है और बिल्कुल नहीं डरता। काम शुरू करने के लिए इतने लोग काफ़ी हैं! हमें ऐसे लोगों से मिलना होगा जिनके बारे में वह बता रही थीं। मैं एक कुल्हाड़ा लेकर शहर की तरफ़ जाऊँगा ताकि लोग यह समझें कि मैं लकड़ी चीरकर कुछ फालतू पैसे कमाने जा रहा हूँ। हमें सावधान रहना है। वह ठीक ही कहती थीं कि आदमी को अपना मोल ख़ुद आँकना चाहिए। आजवाले उस किसान को ही ले लो। अगर वह ईश्वर के सामने भी खड़ा होता, तो अपनी बात से रत्ती भर न हटता। और वह निकीता? उसने भी यह दिखा दिया कि उसके भी आत्मा है। उससे उतनी उम्मीद किसे थी?"

"वे किसी आदमी को तुम्हारे सामने पीटते हैं और तुम लोग मुँह बाये खड़े देखते रहते हो..."

बस, रहने दो! अरे, तुम्हें ख़ुश होना चाहिए कि हम लोगों को उसे मारना नहीं पड़ा!"

वह बड़ी देर तक खुसुर-फुसुर करता रहा; कभी तो वह इतने धीमे स्वर में बोलने लगता कि माँ एक शब्द भी न समझ पाती और कभी वह फिर भारी गूँजती हुई आवाज़ में बोलने लगता। बीच-बीच में उसकी बीवी उसे टोक देती :

"धीरे बोलो, नहीं तो वह जाग जायेंगी!.."

माँ गहरी नींद में सो गयी। नींद एक घने बादल की तरह आकर उस पर छा गयी।

जब प्रभात का धुँधलका खिड़कियों में झाँकने लगा, तो तत्याना ने माँ को जगा दिया। गिरजाघर के घण्टे की आवाज़ शीत निस्तब्ध वातावरण में हवा की लहरों पर तैरती हुई आ रही थी और अलसाये हुए स्वर में रात का पहरा समाप्त होने की सूचना दे रही थी।

"मैंने समोवार गरम कर दिया है, एक गिलास चाय पी लो; उठते ही चल

पड़ीं तो सर्दी लग जायेगी..."

स्तेपान ने अपनी उलझी हुई दाढ़ी में कंघी करते हुए माँ से उसका शहर का पता पूछा। माँ ने देखा कि रात-भर आराम कर लेने से स्तेपान के चेहरे पर ताज़गी आ गयी थी – उसकी आकृति अब अधिक पूर्ण दिखायी दे रही थी। चाय पीते समय स्तेपान ने हँसकर कहा :

"यह भी कैसी अजीब बात हुई!"

"क्या?" तत्याना ने पूछा।

"हम लोगों की जान-पहचान हो जाना! और इतनी आसानी से..."

"हमारे काम में हर चीज़ में यही सादगी है," माँ ने विचारमग्न होकर कहा।

माँ को विदा करते हुए किसान दम्पति ने विशेष कुछ कहा तो नहीं, पर असंख्य छोटी-छोटी बातों से यह साबित कर दिया कि उन्हें माँ की सुविधा का कितना ध्यान था।

गाड़ी में बैठकर माँ सोचने लगी कि स्तेपान चूहों की तरह सतर्क रहकर चुपके-चुपके अपना काम करेगा और कभी थककर बैठेगा नहीं। उसकी पत्नी की शिकायतें हमेशा उसके कानों में गूँजती रहेंगी; उसकी कंजी आँखों में वह ज्वाला हमेशा सुलगती रहेगी और जब तक वह जीवित रहेगी उसके हृदय से अपने मृत बच्चों के लिए एक माँ की हिंसक पशुओं जैसी प्रतिरोधपूर्ण व्यथा कभी दूर न होगी।

उसे रीबिन की याद आयी – उसके घाव, उसका चेहरा, उसकी धधकती आँखें और उसकी बातें। और इस पाशविकता के सम्मुख लाचारी की कटु भावना से उसका हृदय मसोस उठा। शहर तक की पूरी यात्रा के दौरान मिख़ाइलो की आकृति उस नीरस दिन की पृष्ठभूमि पर उसकी आँखों के सामने नाचती रही। माँ ने देखा कि वह उसकी आँखों के सामने खड़ा था – हट्टा-कट्टा शरीर, काली दाढ़ी, फटी क़मीज़, बिखरे बाल और हाथ पीछे बँधे हुए। यह एक ऐसे व्यक्ति का चित्र था जिसके हृदय में क्रोध की ज्वाला धधक रही थी और जो उस सत्य पर पूरा विश्वास रखता था जिसका वह प्रचार करता था। माँ इस पृथ्वी के असंख्य विपदाग्रस्त गाँवों के बारे में सोचने लगी, उन लोगों के बारे में सोचने लगी जो मन ही मन पृथ्वी पर न्याय का राज्य स्थापित होने की प्रतीक्षा कर रहे थे; वह उन हज़ारों लोगों के बारे में सोचने लगी जो अपने जीवनभर चुपचाप निरुद्देश्य भाव से और अपने जीवन में किसी सुधार की आशा के बिना काम करते रहते थे।

माँ को ऐसा लगा कि जीवन दूर तक फैला हुआ एक ऐसा खेत है जिसे कभी जोता न गया हो और जो चुपचाप इस प्रतीक्षा में हो कि कोई आकर उसे

जोते। ऐसा प्रतीत होता था कि मानो वह स्वतन्त्र ईमानदार लोगों से कह रहा हो :

"मुझे में सत्य और न्याय के बीच बोओ, और मैं तुम्हें तुम्हारे परिश्रम का सौगुना फल दूँगा!"

स्वयं अपने प्रयासों की सफलता को याद करके उसे हर्ष का रोमांच हुआ जिसे उसने विनम्रता के कारण दबा दिया।

19

निकोलाई ने माँ के लिए दरवाज़ा खोला; उसके कपड़े अस्त-व्यस्त दशा में थे और हाथ में एक किताब थी।

"इतनी जल्दी लौट आयीं?" उसने पुलकित स्वर में माँ का स्वागत करते हुए कहा।

ऐनक के पीछे उसकी स्नेहपूर्ण आँखें झपकती रहीं। उसने माँ का कोट उतरवाया और बड़ी प्यार-भरी मुस्कराहट के साथ उसे घूरता रहा।

"कल रात हमारे घर की तलाशी ली गयी थी," निकोलाई ने कहा। "मुझे डर हुआ कि कहीं तुम्हें कुछ हो न गया हो। लेकिन उन लोगों ने मुझे गिरफ़्तार नहीं किया। अगर तुम गिरफ़्तार हो गयी होतीं, तो वे मुझे भी ज़रूर पकड़ कर ले जाते!..."

वह माँ को खाने के कमरे में ले गया और सारी देर बातें करता रहा :

"ख़ैर, मुझे नौकरी से तो निकाल दिया ही जायेगा। लेकिन मुझे उसकी कोई परेशानी नहीं है। मैं इस काम से उकता गया हूँ कि मेज पर बैठा-बैठा यह हिसाब लगाता रहूँ कि कितने किसानों के पास घोड़े नहीं हैं!"

कमरा ऐसा लग रहा था मानो किसी दानव ने गुस्से में आकर घर की एक-एक दीवार हिला दी हो और हर चीज़ उलट-पुलट दी हो। फ़र्श पर तस्वीरें बिखरी पड़ी थीं, दीवार का कागज़ कई जगह से नोच लिया गया था और उसकी धज्जियाँ लटक रही थीं, एक जगह फ़र्श का तख़्ता उखाड़ लिया गया था, एक खिड़की की चौखट उखाड़ ली गयी थी और चूल्हे की राख फ़र्श पर बिखरी पड़ी थी। माँ ने यह चिर-परिचित दृश्य देखकर सिर हिलाया और बड़े ध्यान से निकोलाई को देखने लगी मानो उसने उसमें कोई नया गुण देखा हो।

मेज का ठण्डा समोवार रखा हुआ था और चाय के बर्तन बिना धुले पड़े थे; पनीर और सासेज तश्तरी के बजाय कागज़ पर रखे हुए थे; मेजपोश पर किताबें, रोटी और समोवार के लिए कोयले के टुकड़े पड़े थे। माँ धीरे से हँसी और निकोलाई उदास होकर मुस्करा दिया।

"निलोवना, इस तमाम गड़बड़ में मेरा भी हाथ है, लेकिन कोई बात नहीं

है! मैंने सोचा मुमकिन है वे लोग फिर आयें, इसलिए मैंने सफ़ाई नहीं की। हाँ, यह तो बताओ कि सफर कैसा कटा?"

यह प्रश्न माँ के हृदय पर एक भारी बोझ की तरह गिरा। रीबिन की सूरत एक बार फिर उसकी नज़रों के सामने फिरने लगी; माँ इस बात पर लज्जित थी कि उसने रीबिन के बारे में फ़ौरन क्यों नहीं बताया। आगे झुककर बैठते हुए उसने अपनी दास्तान शुरू की। वह अपनी भावनाओं को वश में रखने का प्रयत्न कर रही थी कि कहीं कोई बात कहने से छूट न जाये।

"वह गिरफ़्तार कर लिया गया..."

निकोलाई का चेहरा उतर गया।

"सच?"

माँ ने इशारे से उसे ख़ामोश कर दिया और इस प्रकार अपना वृत्तान्त सुनाती रही मानो वह स्वयं साकार न्याय के सामने खड़ी हो और उस अत्याचार के विरुद्ध प्रतिरोध कर रही हो जो उसने एक मनुष्य के साथ होते देखा था। निकोलाई का चेहरा बिल्कुल पीला पड़ गया था और वह अपनी कुर्सी पर पीछे सहारा लगाये बैठा होंठ काट रहा था। उसने धीरे-धीरे अपनी ऐनक उतारकर मेज पर रख दी और अपने मुँह पर इस तरह हाथ फेरा मानो कोई अदृश्य मकड़ी का जाला पोंछ रहा हो। सहसा उसकी मुखाकृति की रेखाएँ और स्पष्ट हो गयीं, उसके गालों की हड्डियाँ और उभर आयीं और उसके नथुने काँपने लगे। माँ ने उसका ऐसा रूप पहले कभी नहीं देखा था, और इससे वह कुछ भयभीत हो गयी।

जब माँ अपनी बात पूरी कर चुकी, तो निकोलाई उठा और दूर तक अपनी बन्द मुट्ठियाँ जेब में डालकर इधर-उधर टहलने लगा।

"वह बहुत ही बड़ा आदमी होगा," उसने दाँत भींचकर अस्फुट स्वर में कहा। "उसे जेल में बड़ी तकलीफ होगी; ऐसे लोगों पर यह वक़्त बहुत बुरा गुजरता है!"

अपने आवेश को दबाये रखने के लिए वह अपनी मुट्ठियों को जेबों में और दूर तक ठूँसकर टहल रहा था; परन्तु माँ को उसकी उद्विग्नता का पता था और स्वयं उसके हृदय में भी उसी उद्विग्नता थी। निकोलाई ने अपनी आँखें सिकोड़ लीं, यहाँ तक कि वे खंजर की नोक जैसी दिखायी देने लगीं। कमरे में इधर से उधर टहलते हुए वह तिरस्कार और क्रोध से कहता गया :

"ज़रा सोचो तो, कितनी भयानक बात है! जनता पर अपना विनाशकारी प्रभुत्व बनाये रखने के लिए मुट्ठी-भर सिरफिरे मार-पीट करते हैं, जानें ले लेते हैं, सभी को कुचलते हैं। बर्बरता बढ़ती जाती है ओर निर्दयता का ही चारों तरफ़ राज है। ज़रा सोचो! कुछ लोग तो बिल्कुल जंगली जानवरों की तरह मनमानी करते

हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि वे क़ानून की पकड़ से बाहर हैं। दूसरों को सताने में उन्हें मजा आता है। यह दासता से मुक्त हुए गुलामों की अपनी दासता की भावनाओं और पाशविक इच्छाओं को तृप्त करने की इच्छा के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। कुछ ऐसे हैं जिनकी मनोवृत्ति बदला लेने की इच्छा से विषाक्त है। कुछ लोग ऐसे हैं जो कोड़ों की मार खा-खाकर किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये हैं। लोगों को भ्रष्ट किया जा रहा है, सारी जनता को!"

वह बोलते-बोलते रुका और उसने अपने दाँत भींच लिये।

"इस जानवरों जैसी ज़िन्दगी में लाख न चाहने पर भी आदमी जानवर हो जाता है!" उसने धीरे से कहा।

बड़ी कोशिश करके उसने अपनी भावनाओं को वश में किया और प्रायः बिल्कुल शान्त भाव से माँ की तरफ़ देखा। माँ रो रही थी, उसकी आँखों में एक अविचल ज्योति थी।

"लेकिन निलोवना, हमें देर नहीं करनी चाहिए! प्रिय साथी, हमें अपनी भावनाओं को वश में रखना होगा..."

एक उदास मुस्कराहट के साथ वह माँ के पास गया और उसका हाथ थाम लिया :

"तुम्हारा सूटकेस कहाँ है?"

"रसोई में!"

"फाटक पर राजनीतिक पुलिस के आदमी तैनात हैं। हम उनकी नज़रें बचाकर इतना बहुत-सा सामान तो ले नहीं जा सकते और छुपाने की कोई जगह ही नहीं है। मेरा ख़याल है कि वे आज रात फिर तलाशी लेंगे, इसलिए हमें कलेजे पर पत्थर रखकर हर चीज़ जला देनी होगी।"

"क्या जलाना है?" माँ ने पूछा।

"तुम्हारे सूटकेस में जो कुछ भी है।"

यकायक माँ की समझ में आया कि निकोलाई का इशारा किन चीज़ों की तरफ़ है; अपनी व्यथा के बावजूद वह गर्व की भावना से बरबस मुस्करा उठी।

"उसमें तो कुछ भी नहीं है - एक पर्चा भी नहीं है!" उसने कहा और निकोलाई को अपना सारा क़िस्सा सुनाने लगी। बातें करते हुए धीरे-धीरे उसके शरीर में जैसे फिर शक्ति लौटकर आने लगी। शुरू में तो निकोलाई बहुत चिन्तित भाव से माथे पर बल डाले सुनता रहा, पर शीघ्र ही चिन्ता की यह मुद्रा विस्मय में बदल गयी और आख़िरकार उसने बहुत उत्साह से बात काटते हुए कहा :

"लेकिन यह तो कमाल हो गया! तुम्हारी तकदीर ने भी कैसा साथ दिया!..."

उसने माँ के दोनों हाथ अपने हाथों में ले लिये।

"लोगों पर तुम्हारा जितना विश्वास है उसे देखकर बड़ी ख़ुशी होती है और मैं तुमसे इतना प्यार करता हूँ – जैसे तुम मेरी अपनी माँ हो!.."

माँ उसे देखकर मुस्करा दी, उसे आश्चर्य हो रहा था कि सहसा वह इतना स्पष्ट और सप्राण क्यों हो गया था।

"आम तौर पर तो परिस्थिति बड़ी आशाजनक है!" उसने अपने हाथ रगड़ते हुए गद्गद् स्वर में कहा। "पिछले कुछ दिनों से मैं भी बड़े आनन्द की ज़िन्दगी गुज़ार रहा हूँ – पढ़ता हूँ और मज़दूरों से बात करता हूँ और उनका अध्ययन करता हूँ। मज़दूरों के साथ थोड़ी देर भी बैठ लेने के बाद दिल में एक अजीब शान्ति और उत्साह पैदा हो जाता है। निलोवना, बहुत शानदार होते हैं ये लोग! मेरा मतलब नौजवान मज़दूरों से है – इतने दृढ़ और इतने संवेदनशील और सीखने के लिए इतने उत्सुक कि क्या कहूँ! उन्हें देखकर अनायास ही यह विचार पैदा होता है कि किसी दिन रूस संसार का सबसे लोकतान्त्रिक देश बन जायेगा!"

वह बात करते-करते रुक गया और इस तरह अपना हाथ ऊपर उठा लिया मानो शपथ ले रहा हो।

"लेकिन साल-भर तक किताबें पढ़ते-पढ़ते और आँकड़ों का हिसाब लगाते-लगाते मैं सील गया हूँ। लानत है! मैं मज़दूरों के बीच रहने का आदी हूँ। उनके अलावा मैं जहाँ भी जाता हूँ मुझे यही लगता है कि यहाँ मेरी जगह नहीं है – न जाने क्यों दिमाग में एक तनाव-सा रहता है, दिल पर एक बोझ-सा रखा रहता है। लेकिन अब मैं फिर स्वच्छन्द मनुष्य की तरह रहूँगा। मैं अब हमेशा उन्हीं के साथ रहूँगा और उन्हीं के साथ काम करूँगा। समझीं तुम? मैं वहाँ रहूँगा जहाँ नये विचार पनपते हैं, मैं यौवनमय सृजनात्मक शक्ति के सम्मुख रहूँगा। कितनी साधारण और सुन्दर, कितनी भव्य और जीवनप्रद! इस वातावरण में मनुष्य फिर जवान हो जाता है, उसमें शक्ति आ जाती है। निलोवना, यह भरपूर ज़िन्दगी का रास्ता है!"

वह जी खोलकर कुछ झेंपता हुआ हँस दिया। माँ उसके उल्लास को समझ गयी और स्वयं भी उसी उल्लास का अनुभव करने लगी।

"और तुम? बस कमाल हो तुम तो!" निकोलाई ने प्रशंसा के भाव से कहा। "तुम लोगों का वर्णन कितने स्पष्ट रूप से करती हो और कितनी अच्छी तरह समझती हो उन्हें!.."

वह माँ के पास आकर बैठ गया। पहले तो अपनी खिसियाहट को छुपाने के लिए वह उल्लास से खिला हुआ अपना चेहरा उसकी ओर से फेरे बैठा रहा, पर थोड़ी देर बाद माँ की तरफ़ मुँह करके बैठ गया और उसके अनुभव का सरल

तथा रोचक वृत्तान्त सुनने लगा।

"बाल-बाल बच गयीं!" उसने कहा। "तुम बड़ी आसानी से गिरफ़्तार की जा सकती थीं, लेकिन उसे बजाय!.. सचमुच, ऐसा मालूम होता है कि किसान जाग रहे हैं – और यह स्वाभाविक भी है! वह औरत – मैं भली-भाँति कल्पना कर सकता हूँ कि वह कैसी होगी!.. हमें गाँव में काम करने के लिए ख़ास लोगों को भेजना पड़ेगा। लोग! हमारे पास हैं कहाँ काम करने वाले लोग... हमें सैकड़ों लोगों की ज़रूरत है..."

"काश, पावेल जेल से बाहर होता! और अन्द्रेई भी!" माँ ने धीरे से कहा।

"निकोलाई ने कनखियों से माँ की तरफ़ देखा और आँखें नीची कर लीं।

"निलोवना, मेरे मुँह से यह बात सुनकर तुम्हें तकलीफ हो, लेकिन मैं पावेल को बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। वह जेल से भागने पर कभी राजी न होगा! वह चाहता है कि उस पर मुक़दमा चलाया जाये। वह इस बात का मौक़ा चाहता है कि वह सब को जता दे कि वह क्या है, और वह ऐसा मौक़ा अपने हाथ से कभी नहीं जाने देगा। और जाने भी क्यों दे? वह साइबेरिया से भाग आयेगा।"

"ख़ैर, अपना भला-बुरा सबसे अच्छी तरह जानता है," माँ ने आह भरकर कहा।

"काश, वह तुम्हारा वाला किसान जल्दी ही यहाँ आ जाये," निकोलाई ने एक क्षण रुककर अपनी ऐनक के पीछे से घूरते हुए कहा। "हमें किसानों के लिए रीबिन के बारे में एक पर्चा तैयार करना चाहिए। इससे उसे तो कोई नुकसान होगा नहीं, क्योंकि वह ख़ुद बहुत मुँहफट है। मैं आज ही लिख दूँगा और लूदमीला उसे आनन-फानन छाप देगी... लेकिन पर्चे उन लोगों के पास पहुँचेंगे कैसे?"

"मैं ले जाऊँगी..."

"नहीं, तुम्हारा बहुत शुक्रिया!" निकोलाई ने जल्दी से कहा। "लेकिन क्या वेसोवश्चिकोव यह काम नहीं कर सकता?"

"मैं उससे बात करके देखूँगी।"

"अच्छा, बात करना! और उसे सब कुछ अच्छी तरह समझा देना।"

"लेकिन मेरे लिए क्या काम है?"

"अरे, तुम्हारे लिए कोई न कोई काम निकल आयेगा।"

निकोलाई जाकर मेज के पास बैठ गया। माँ कनखियों से उसे देखते हुए मेज साफ़ करती रही। माँ ने देखा कि निकोलाई के हाथ में उसकी कलम काँप रही थी। बीच-बीच में उसकी गर्दन फड़क उठती और जब वह अपनी गर्दन पीछे डालकर आँखें मूँद लेता, तो माँ देखती कि उसकी ठोड़ी काँप रही है। इससे उसे बड़ी चिन्ता हुई

"तैयार हो गया!" उसने आख़िरकार उठते हुए कहा। "लो यह काग़ज़ कहीं अपने कपड़ों में छुपा लो – लेकिन अगर पुलिस आयी, तो वे तुम्हारी भी तलाशी ज़रूर लेंगे।"

"भाड़ में जायें, तलाशी लेकर मेरा क्या बिगाड़ लेंगे!" माँ ने निश्चल भाव से उत्तर दिया।

उसी दिन शाम को डॉक्टर इवान दनीलोविच उनके घर आये।

"यकायक सरकारी अफ़सरों में इतनी खलबली क्यों मच गयी है?" उसने तेज़ी से कमरे में इधर से उधर टहलते हुए पूछा। "कल रात उन्होंने सात घरों की तलाशी ली थी। मेरा मरीज कहाँ गया, क्यों?"

"वह कल चला गया!" निकोलाई ने उत्तर दिया। "आज सनीचर है और वह अपने मण्डल की पढ़ाई छोड़ना नहीं चाहता था..."

"यह तो सरासर बेवक़ूफ़ी है – सिर फटा हुआ है, मगर मण्डल की पढ़ाई में जाना ज़रूरी है..."

"मैंने उसे समझाने की बहुत कोशिश की, लेकिन मैं उसे रोक न सका..."

"मुझे यकीन है कि उसने शेखी के मारे ही ऐसा किया। उसने अपने मन में कहा होगा, 'देखते हो – ख़ून बहाकर भी...' " माँ ने कहा।

डॉक्टर ने जल्दी से माँ पर दृष्टि डाली और बनावटी कठोरता की मुद्रा धारण करते हुए अपनी भवें सिकोड़ लीं।

"तुम भी कितनी सख़्तदिल हो..." उसने कहा।

"अच्छा इवान, तुम्हें यहाँ कोई काम तो है नहीं, और हमारे मेहमान भी आते होंगे। तुम जाओ! निलोवना, वह पर्चा इन्हें दे दो..."

"एक और पर्चा?" डॉक्टर ने विस्मय से कहा।

"हाँ, ले जाकर छापेख़ाने में दे दो।"

"अच्छा भाई, ले लिया और दे आऊँगा। और कुछ?"

"बस, और कुछ नहीं। फाटक पर जासूस खड़ा है।"

"मैंने देखा था उसे। एक मेरे घर के दरवाज़े पर भी खड़ा है। अच्छा, तो मैं चला। निर्दयी औरत, तुम्हें भी सलाम। हाँ, दोस्तो, वह क़ब्रिस्तान की लड़ाई बहुत काम की साबित हुई! सारे शहर में उसकी चर्चा हो रही है। तुमने जो पर्चा लिखा था वह बहुत अच्छा था और निकला भी वह ठीक वक़्त पर। मैं तो हमेशा कहता हूँ कि अच्छी लड़ाई बुरी शान्ति से बेहतर होती है..."

"अच्छा, अब तुम जाओ..."

"अच्छी आवभगत की तुमने हमारी आज! निलोवना, लाओ हाथ मिला लें! उस लड़के ने यहाँ से जाकर बड़ी बेवक़ूफ़ी की। तुम्हें कुछ मालूम है कि वह

कहाँ रहता है?"

निकोलाई ने उसे उसका पता बता दिया।

"मैं कल उसे देखने जाऊँगा। बड़ा अच्छा बच्चा है, है न?"

"बहुत..."

"हमें उसकी देखभाल करनी चाहिए। बड़ा होनहार लड़का है!" डॉक्टर ने बाहर निकलते हुए कहा। "ऐसे ही लोग हैं जिनसे हमें सर्वहारा बुद्धिजीवियों का निर्माण करना चाहिए ताकि जब हम लोग उस लोक के लिए कूच करें जहाँ मेरे विचार में कोई वर्गभेद नहीं है, तो वे हमारी जगह ले सकें..."

"इवान, तुम इधर कुछ दिनों से बहुत बातें करने लगे हो..."

"इसकी वजह यह है कि मैं आजकल बड़े जोश में हूँ। तो तुम जेल जाने की तैयारी कर रहे हो? चलो, आराम करने को मिलेगा।"

"शुक्रिया, मगर मैं थका हुआ नहीं हूँ।"

माँ इस बात पर बहुत प्रसन्न थी कि इन लोगों को एक मज़दूर का कितना ध्यान था।

डॉक्टर के चले जाने के बाद माँ और निकोलाई खाना खाने बैठे। अपने रात्रिकालीन अतिथियों की प्रतीक्षा में वे दोनों बहुत चुपके-चुपके बातें कर रहे थे। निकोलाई ने माँ को निर्वासन में अपने साथियों के बारे में बहुत-सी बातें बतायीं और उन लोगों के बारे में भी जो वहाँ से भाग आये थे और अपना नाम बदलकर अब भी काम कर रहे थे। सूनी दीवारों से टकराकर उसके शब्द इस प्रकार लौट रहे थे मानो संसार को बदलने के महान ध्येय के लिए अपने आपको बलि चढ़ा देने वाले इन विनम्र सूरमाओं के बारे में उसके क़िस्से अविश्वसनीय हों। माँ पर ममता की भावना छा गयी और उसका हृदय इन अज्ञात लोगों के प्रति प्रेम से भर उठा। उसकी कल्पना में इन सब लोगों ने मिलकर एक महान निर्भीक व्यक्ति का रूप धारण कर लिया जो धीरे-धीरे पर दृढ़ विश्वास के साथ आगे बढ़ रहा था और झूठ की युगों पुरानी तह को हटा रहा था ताकि लोग जीवन के सरल और स्पष्ट सत्य को देख सकें। और जब इस महान सत्य का पुनर्जन्म होगा, तो वह सब लोगों को एक कर देगा और उन्हें लोभ, घृणा और झूठ के तीन पिशाचों से मुक्ति दिला देगा जिन्होंने पूरे संसार को आतंकित कर रखा है और गुलाम बना रखा है... इस कल्पना से माँ के हृदय में जो भावना जागृत हुई वह उल्लास और कृतज्ञता की उसी भावना जैसी थी जो वह किसी ऐसे दिन के अन्त पर, जो अन्य दिनों की अपेक्षा कम कष्टदायक रहा हो, देव-प्रतिमा के सामने घुटने टेकने पर अनुभव करती थी। अतीत के इन इने-गिने दिनों को वह भूल चुकी थी, परन्तु उन्होंने जो भावना जागृत की थी वह बढ़ते-बढ़ते और भी ज्योतिर्मय और

उल्लासपूर्ण हो गयी थी; इस भावना की जड़ें उसकी आत्मा में गहराई तक जम गयी थीं और वह भावना एक सजीव वस्तु के रूप में प्रस्फुटित हो उठी थी।

"अभी तक पुलिस नहीं आयी!" निकोलाई ने सहसा चौंककर कहा।

"मैं कहती हूँ भाड़ में जाये पुलिस!" माँ ने उस पर एक सरसरी नज़र डालकर कहा।

"हाँ, भाड़ में जाये! लेकिन, निलोवना, अब तुम्हारा सोने का वक़्त हो गया है। तुम बहुत थक गयी होगी। तुम्हारे शरीर में भी कितना दम है! इतने ख़तरे और इतनी परेशानी से गुजरने के बाद भी तुम्हें ज़रा भी फ़िक्र नहीं! लेकिन तुम्हारे बाल सफ़ेद हो चले हैं। अच्छा, अब जाकर थोड़ी देर सो लो।"

20

रसोई के दरवाज़े पर किसी के ज़ोर से खटखटाने की आवाज़ सुनकर माँ की आँख खुल गयी। जो कोई भी था वह बड़े धैर्य के साथ लगातार दरवाज़ा भड़भड़ाता रहा। अभी तक अँधेरा छाया हुआ था और इस प्रकार निरन्तर दरवाज़ा खटखटाने में भय की भावना मिली हुई थी। माँ ने जल्दी से कन्धे पर एक कपड़ा डाला और रसोई में जाकर दरवाज़े पर रुक गयी।

"कौन है?" उसने पूछा।

"मैं हूँ!" किसी के अपरिचित स्वर में उत्तर मिला।

"कौन?"

"दरवाज़ा खोलिये!" उस व्यक्ति ने बड़े विनीत स्वर में कहा।

माँ ने कुण्डी खोलकर पाँव से दरवाज़े को ठेल दिया। इगनात अन्दर आया।

"तो मैं ठीक जगह पर आ गया!" उसने ख़ुश होकर ऊँचे स्वर में कहा।

वह कमर-कमर तक कीचड़ में सना हुआ था। उसका चेहरा विवर्ण और आँखें धँसी हुई थीं और घुँघराले बाल उसकी टोपी के नीचे से चारों तरफ़ निकले हुए थे।

"हम लोग मुसीबत में फँस गये हैं!" उसने दरवाज़ा बन्द करते हुए चुपके से कहा।

"मुझे मालूम है..."

लड़के को यह सुनकर कुछ आश्चर्य हुआ।

"आपको कैसे मालूम हुआ?" लड़के ने अपनी आँखें झपकाते हुए कहा।

माँ ने संक्षेप में उसे सारा क़िस्सा सुना दिया।

"क्या पुलिस तुम्हारे उन दो साथियों को भी पकड़ ले गयी?"

"नहीं, वे वहाँ नहीं थे। वे फ़ौज में भरती हो गये हैं, हाजिरी देने गये थे!

पाँच आदमी गिरफ़्तार किये गये जिनमें चाचा मिख़ाइलो भी थे..."

उसने एक गहरी साँस ली और धीरे से हँसकर कहा :

"सिर्फ़ मैं बच गया। वे मुझे ढूँढ़ रहे होंगे।"

"तुम बचकर निकल कैसे आये?" माँ ने पूछा। दूसरे कमरे का दरवाज़ा धीरे से खुला।

"मैं?" इगनात ने बेंच पर बैठकर चारों ओर नज़र डालते हुए कहा। "उनके आने से कोई एक-दो मिनट पहले जंगल का रखवाला भागा-भागा आया और उसने हमारी खिड़की को खटखटाया। उसने चिल्लाकर कहा, 'होशियार रहना, पुलिस तुम्हारी तलाश में है...' "

वह चुपचाप हँस दिया और अपने कोट के दामन से मुँह पोंछने लगा।

"मगर चाचा मिख़ाइलो रत्ती-भर नहीं घबराये। उन्होंने मुझसे कहा, 'इगनात, तुम जल्दी से भागकर शहर चले जाओ! वह बूढ़ी औरत तुम्हें याद है न?' और बातें करते-करते वह काग़ज़ के एक पुर्जे पर कुछ लिखने लगे, फिर मुझसे बोले, 'लो, यह ले जाकर उस दे आओ!' मैं जल्दी से झाड़ी में दुबक गया और पुलिसवालों की आहट सुनता रहा। बहुत-से सिपाही चारों तरफ़ से दबे पाँव रेंगते हुए आ रहे थे, शैतान कहीं के! उन्होंने हमारे तारकोल के कारख़ाने को घेर लिया। मैं झाड़ियों में चुपचाप दुबका पड़ा रहा। वे मेरे पास से होकर गुजर गये! फिर मैं उठा और अपनी पूरी शक्ति लगाकर तेज़ी से क़दम बढ़ाता हुआ चल पड़ा! मुझे चलते-चलते पूरी दो रातें और एक दिन हो गया है, बीच में मैं कहीं रुका भी नहीं।"

माँ ने देखा कि वह अपनी इस सफलता पर बहुत प्रसन्न है। उसकी बादामी रंग की आँखों से मुस्कराहट झाँक रही थी और उसके भरे हुए लाल होंठ फड़क रहे थे।

"मैं तुम्हारे लिए अभी चाय बनाये लाती हूँ!" माँ ने समोवार की तरफ़ बढ़ते हुए कहा।

"रुक्का तो लीजिये..."

बड़ी कठिनाई से इगनात ने अपना पाँव उठाया और दर्द के मारे कराहते हुए बहुत मुँह बनाकर पाँव बेंच पर रख लिया।

इतने में निकोलाई दरवाज़े पर आया।

"सलाम, कामरेड!" उसने अपनी आँखें सिकोड़कर कहा। "लाओ, मैं तुम्हारी मदद करूँ।"

वह झुका और इगनात के पाँव पर बँधे हुए गन्दे चीथड़े खोलने लगा।

"नहीं, रहने दीजिये," लड़के ने अपना पाँव खींचते हुए आश्चर्य से माँ की

ओर देखा।

"हमें इसके पाँवों पर वोदका की मालिश करनी पड़ेगी," माँ ने उसकी दृष्टि की ओर कोई ध्यान न देते हुए कहा।

"सो तो है!" निकोलाई ने उत्तर दिया।

इगनात कुछ खिसियाकर बुड़बुड़ाने लगा।

निकोलाई ने रुक्का उठाकर उस भिंचे हुए बादामी काग़ज़ को सीधा किया और आँख के पास लाकर पढ़ने लगा :

"माँ, हमारे काम से हाथ न खींच लेना ओर उस लम्बे कदवाली महिला से कह देना कि वह हम लोगों के बारे में पहले से भी ज़्यादा लिखा करे। अच्छा, विदा। रीबिन।"

निकोलाई ने अपना वह हाथ जिसमें पर्चा था नीचे कर लिया।

"कमाल है!.." उसने अस्फुट स्वर में कहा।

इगनात बैठा उन लोगों को देख रहा था और बड़ी सावधानी से अपने नंगे पाँव की गन्दी उँगलियाँ चिटका रहा था। माँ ने अपनी आँखों के आँसू छिपाने का प्रयत्न करते हुए पानी का एक तसला लाकर उसके सामने रख दिया और घुटनों के बल बैठकर उसके पाँव की तरफ़ हाथ बढ़ाया।

"नहीं, नहीं, रहने दीजिये!" इगनात भयभीत होकर चिल्लाया और उसने अपना पाँव बेंच के नीचे कर लिया।

"लाओ, जल्दी से अपना पाँव इधर लाओ..."

"मैं स्पिरिट लिये आता हूँ," निकोलाई ने कहा।

लड़के ने अपना पाँव बेंच के और नीचे खींच लिया।

"क्या है, यह कोई अस्पताल है क्या?" लड़का बुड़बुड़ाया।

माँ उसके दूसरे पाँव पर बँधे हुए चीथड़े खोलने लगी।

इगनात ने ज़ोर से नाक सिकोड़ी और गर्दन मोड़-मोड़कर माँ को देखता रहा।

"उन लोगों ने मिख़ाइलो इवानोविच को बहुत मारा, "माँ ने काँपते हुए स्वर में कहा।

"सच?" लड़के ने भयभीत होकर धीरे से पूछा।

"हाँ, जिस वक़्त पुलिसवाले उसे निकोल्स्कोये लाये उसी वक़्त उसकी हालत बहुत ख़राब थी और वहाँ पुलिस के सार्जेन्ट और थानेदार ने उसे बहुत मारा – मुँह पर मारा, ठोकरें मारीं, यहाँ तक कि उसका सारा शरीर ख़ून से लथपथ हो गया!"

"मारने में तो वे बहुत उस्ताद हैं!" लड़के ने भवें चढ़ाकर कहा। उसके

कन्धे फड़क उठे। "मुझे तो जितना डर पुलिसवालों से लगता है उतना अगर हज़ार राक्षस भी आ जायें तो न लगे! क्या किसानों ने भी उसे मारा?"

"थानेदार के हुकुम पर एक किसान ने मारा था। लेकिन बाक़ी लोग ठीक थे। उन्होंने तो उसका पक्ष भी लिया – उन्होंने चिल्ला-चिल्लाकर कहा कि पुलिस को मारने का कोई हक नहीं है..."

"हुँः! तो किसान अब समझने लगे हैं कि कौन किसकी तरफ़ है और किसलिए।"

"उनमें भी कुछ लोग समझदार हैं..."

"समझदार लोग हर जगह हैं। मुफलिसी ने लोगों को इस हालत में पहुँचा दिया है! समझदार लोग हैं तो, लेकिन उन्हें ढूँढ़ना मुश्किल होता है।"

निकोलाई स्पिरिट की बोतल लेकर आया और समोवार में कोयले डालकर बिना कुछ कहे बाहर चला गया। इगनात उसे चुपचाप देखता रहा।

"यह साहब कौन हैं – डॉक्टर हैं क्या?" निकोलाई के बाहर चले जाने के बाद उसने माँ से पूछा।

"यहाँ साहब कोई नहीं है। हम सब कामरेड हैं..."

"बड़ी अजीब बात मालूम होती है यह तो मुझे!" इगनात ने कहा। उसकी मुस्कराहट में शंका और खिसियाहट झलक रही थी।

"क्या बात अजीब मालूम होती है?"

"सभी बातें आम तौर पर। एक तरफ़ तो वे लोग हैं जो हमारी नाक तोड़ देते हैं और दूसरी तरफ़ इन्हीं में ऐसे लोग हैं जो हमारे पैर तक धोने को तैयार हो जाते हैं। इन दोनों के बीच में क्या है?"

दरवाज़ा खुला और निकोलाई ने कहा :

"बीच में वे लोग हैं जो नाक तोड़नेवालों के तलवे चाटते हैं और जिन लोगों की नाकें टूटती हैं उनका ख़ून चूसते हैं। बस यही है बीच में!"

इगनात ने बड़े आदर से उसकी तरफ़ देखा और कुछ देर रुककर कहा :

"मेरे ख़याल से यही सच बात है!"

लड़का उठा और पैर जमाकर दो-चार क़दम चला।

"बिल्कुल ठीक हो गये मेरे पैर!" उसने कहा। "धन्यवाद..."

फिर वे लोग चाय पीने के लिए खाने के कमरे में चले गये और इगनात ने गहरे और गम्भीर स्वर में बोलते हुए उन्हें अपने जीवन के बारे में बताया :

"मैं अपने लोगों का अखबार बाँटा करता था – मैं चलने में बहुत होशियार हूँ।"

"क्या गाँव में बहुत-से लोग यह अखबार पढ़ते हैं?" निकोलाई ने पूछा।

"जितने लोग भी पढ़ना जानते हैं सब पढ़ते हैं, अमीर लोग भी पढ़ते हैं। यह बात ज़रूर है कि अमीरों को यह अखबार हमसे नहीं मिलता... वे लोग इतने चालाक तो है ही कि इस बात को समझ सकें कि किसान अपना ख़ून बहाकर उनके पैरों तले की ज़मीन खिसका देगा। और ज्यों ही यह हो गया वे हर चीज़ आपस में बाँट लेंगे, यहाँ तक कि न कोई ज़मींदार रह जायेगा न खेत-मज़दूर। यह बात तो साफ़ है! नहीं तो लड़ाई शुरू ही क्यों की जाये?"

ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो वह बुरा मान गया हो, वह निकोलाई को प्रश्न और सन्देह-भरी दृष्टि से देख रहा था। निकोलाई मुस्करा दिया, कुछ बोला नहीं।

"अगर हम आज सारी दुनिया के ख़िलाफ़ लड़कर जीत जायें और कल फिर सारी दुनिया में अमीर और ग़रीब बाक़ी रहें, तो इस लड़ाई से फ़ायदा ही क्या होगा? नहीं, माफ़ कीजिये! आप हमें बेवक़ूफ़ नहीं बना सकते। माया आनी-जानी है – वह एक जगह पर नहीं टिकती, चारों ओर घूमती रहती है! नहीं, हमें यह नहीं चाहिए!"

"अच्छा, अच्छा, नाराज़ न हो!" माँ ने हँसकर कहा।

"मुझे फिकर इस बात की है कि रीबिन की गिरफ़्तारी के बारे में जो पर्चा तैयार किया गया है उसे तुम्हारे लोगों के पास तक जल्दी से जल्दी कैसे पहुँचाया जाये," निकोलाई ने सोच में पड़कर कहा।

इगनात के कान खड़े हुए।

"क्या कोई पर्चा ऐसा तैयार किया गया है?" उसने पूछा।

"हाँ।"

"मुझे दे दीजिये, मैं ले जाऊँगा!" लड़के ने उत्साह से अपने हाथ रगड़ते हुए कहा।

माँ उसकी ओर देखे बिना चुपचाप हँस दी और बोली :

"मगर तुम तो थके हुए हो और तुम कह रहे थे कि तुम्हें डर भी लगता है।"

"डर अलग बात है, काम अलग बात है!" उसने अपना पंजा फैलाकर घुँघराले बाल पीछे करते हुए दो-टूक बात कह दी। "आप हँस किस बात पर रही हैं? आप भी ख़ूब हैं!"

"नादान बच्चे!" माँ को इस लड़के की बात से जो ख़ुशी हुई थी उसे बिना छिपाये उसने कहा।

"हुँः – बच्चा!" उसने तुनककर कहा।

"तुम अब वहाँ वापस नहीं जाओगे," निकोलाई ने बड़े प्यार से उसकी तरफ़ एक आँख दबाकर देखते हुए कहा।

“क्यों नहीं? फिर मैं कहाँ जाऊँगा?” इगनात ने कुछ सिटपिटाकर पूछा।

“पर्चा लेकर कोई और चला जायेगा; तुम बस अच्छी तरह उसे इतना समझा देना के वह कहाँ जाये और क्या करे, समझा दोगे?”

“अच्छी बात है!” इगनात ने निराश भाव से कहा।

“हम लोग तुम्हारे लिए नये शिनाख्ती काग़ज़ बनवाकर तुम्हें जंगल के रखवाले का काम दिलवा देंगे।”

लड़के ने जल्दी से नज़रें ऊपर उठाकर देखा।

“अगर किसान लकड़ी चुराने आयेंगे, तो मैं क्या करूँगा – उन्हें पकड़ लूँगा? यह काम तो मुझसे नहीं होगा,” उसने कुछ घबराकर कहा।

माँ हँस दी और निकोलाई भी; लड़के को यह बुरा लगा और वह फिर कुछ खिसिया गया।

“तुम्हें किसानों को पकड़ना नहीं पड़ेगा,” निकोलाई ने उसे तसल्ली देते हुए कहा, “तुम इसकी फिकर न करो!..”

“तो फिर ठीक है!” इगनात ने सन्तोष से मुस्कराते हुए कहा। “लेकिन मैं तो किसी कारख़ाने में काम करना चाहता हूँ। सुना है कारख़ाने में काम करने वाले बड़े होशियार होते हैं...”

माँ उठकर खिड़की के पास चली गयी।

“ज़िन्दगी भी अजीब है – छिड़ में हँसना छिड़ में रोना!” उसने विचारों में डूबकर कहा। “अच्छा, इगनात, तुम्हारा सब काम हो गया? अब सो जाओ.. .”

“मुझे नींद नहीं आ रही है...”

“आओ, आओ, सो जाओ...”

“आप तो बहुत सख़्त हैं, क्यों हैं न? अच्छा, आता हूँ... चाय के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद... और आपकी हर मेहरबानी के लिए...”

माँ के बिस्तर पर लेटकर वह अपना सिर खुजाकर मन ही मन बुड़बुड़ाने लगा :

“हर चीज़ में अब तारकोल की बदबू बस जायेगी... इस सब झमेले की क्या ज़रूरत थी... मुझे नींद आ ही नहीं रही है... वह दोनों के बीचवाली बात उसने कितनी चालाकी से समझा दी थी... शैतान कहीं के...”

उसे पता भी नहीं चला कि कब नींद ने उसे आ दबोचा; वह खर्राटे ले रहा था, उसका मुँह आधा खुला और भवें तनी हुई थीं।

21

उसी रात को इगनात एक छोटे से तहख़ाने में वेसोवश्चिकोव के सामने बैठा बड़े रहस्यपूर्ण ढंग से उससे कह रहा था :

"बीचवाली खिड़की पर चार बार..."

"चार बार?" निकोलाई न उत्सुकता से पूछा।

"पहले तीन बार – इस तरह!"

और इगनात ने मेज पर खटखटाकर बताया :

"एक, दो, तीन। फिर ज़रा रुककर एक बार और।"

"समझ गया।"

"एक लाल बालोंवाला किसान दरवाज़ा खोलेगा और पूछेगा : 'दाई को बुलाने आये हो?' तुम जवाब दोगे : 'हाँ, मैं कारख़ानेदारिन की ओर से आया हूँ!' बस, वह समझ जायेगा!"

वे दोनों सिर जोड़े बैठे थे, दोनों ही हट्टे-कट्टे बलिष्ठ जवान थे। वे बहुत ही दबी जबान में बातें कर रहे थे, माँ हाथ बाँधे खड़ी उन्हें देख रही थी। इन रहस्यमय खटखटाहटों और संकेत-वाक्यों पर उसे हँसी आ रही थी।

"अभी बच्चे ही हैं," उसने अपने मन में सोचा।

दीवार पर एक लैम्प जल रहा था। उसका प्रकाश फ़र्श पर पड़ी हुई कुछ टूटी-फूटी बाल्टियों और लोहे की चादरों को आलोकित कर रहा था। कमरे में जंग, रंग-रोगन और सीलन की बू बसी हुई थी।

इगनात बहुत खुरदरे कपड़े का बना हुआ एक भारी-सा कोट पहने था। ऐसा लगता था कि यह कोट उसे बहुत पसन्द था। माँ ने उसे बड़े चाव से अपनी आस्तीन पर हाथ फेरते और गर्दन मोड़कर कोट के कन्धों का निरीक्षण करते हुए देख लिया।

"बिल्कुल बच्चे हैं!" माँ ने सोचा। "मेरे प्यारे बच्चे..."

"बस, यही है!" इगनात ने उठते हुए कहा। "पहले मुरातोव के यहाँ जाकर नाना के बारे में पूछना मत भूलना..."

"नहीं भूलूँगा!" वेसोवश्चिकोव ने उत्तर दिया।

पर इगनात को सन्तोष नहीं हुआ और उसने चलते-चलते हाथ मिलाने से पहले एक बार फिर सारे इशारे और संकेत-वाक्य उसे समझाये।

"सब से मेरा सलाम कहना!" उसने कहा। "तुम देखोगे कि वे लोग बहुत ही अच्छे हैं..."

उसने सिर झुकाकर अपने कोट पर एक नज़र डाली और बहुत ख़ुश होकर उस पर हाथ फेरने लगा।

“अब मैं चलूँ न?” उसने माँ से पूछा।

“तुम्हें रास्ता मिल जायेगा?”

“क्यों नहीं! अच्छा, कामरेड, मैं चलता हूँ, सलाम!”

यह कहकर वह कन्धे ऊँचे किये, सीना ताने, अपनी नयी टोपी एक कान पर झुकाये और दोनों हाथ बड़े रोब से जेबों में डाले बाहर चला गया। उसकी कनपटियों के पास घुँघराले सुनहरे बालों की लटें झूल रही थीं।

“तो अब मुझे भी काम मिल गया!” वेसोवश्चिकोव ने धीरे से माँ के पास आकर कहा। “मैं तो ख़ाली बैठे-बैठे उकता चला था और पछताता था कि मैं जेल से भागा ही क्यों? यहाँ मैं दिन-रात छुपे पड़े रहने के अलावा करता ही क्या हूँ। वहाँ तो कुछ सीखता भी था। पावेल ने हमें अपनी अकल से काम लेना सिखा दिया था! निलोवना, उनके जेल से भागने के बारे में क्या तय हुआ?”

“मालूम नहीं!” माँ न अनायास ही आह भरकर कहा।

निकोलाई ज़ोर से अपना हाथ माँ के कन्धे पर रखकर उसकी तरफ़ झुक गया।

“उनको किसी तरह समझा-बुझाकर राजी कर लो,” उसने कहा। “वे तुम्हारी बात मान जायेंगे – यह बहुत ही आसान काम है! देखो, यह जेलख़ाने की दीवार, उससे मिला हुआ यह सड़क की बत्ती का खम्भा है; सड़क के पार ख़ाली जगह है, बायीं ओर क़ब्रिस्तान और दाहिनी ओर सड़कें और इमारतें हैं। लैम्प साफ़ करने वाला हर रोज़ आता है। एक दिन वह दीवार के सहारे सीढ़ी खड़ी कर देगा और ऊपर चढ़कर दीवार पर लगी हुई ईंटों में रस्सी की एक सीढ़ी फँसा देगा और उसे जेलख़ाने के आँगन में लटका देगा और बस – झटपट चलता बनेगा! अन्दर लोगों को मालूम ही होगा कि यह सब किस वक़्त होगा; वे फ़ौजदारी के कैदियों को भड़काकर उस वक़्त कोई हो-होल्ला करा दें या ख़ुद ही कोई झगड़ा कर दें ताकि सन्तरी उसमें फँसे रहें और जिन्हें भागना है वे सीढ़ी पर चढ़ जायें। एक, दो, तीन – बस ख़त्म! सच कहता हूँ बहुत आसान है!”

वह हाथ हिला-हिलाकर अपनी योजना समझा रहा था, मालूम होता था कि उसने इस योजना पर ख़ूब सोच-विचार किया था और वह बहुत स्पष्ट और सरल प्रतीत होती थी। माँ उसे हमेशा से बहुत बुद्धू और निकम्मा समझती आयी थी और माँ को ऐसा लगता था कि वह हर चीज़ को संशय और गम्भीर द्वेष की भावना से देखता है। परन्तु इस समय उसकी आँखें पहले जैसी नहीं थीं – माँ को समझाते समय उन आँखों में उत्साह की चमक थी...

“असल बात यह है कि उन्हें सब दिन के समय करना चाहिए!.. दिन में, यह ख़याल रहे। यह बात किसी के ध्यान में भी नहीं आयेगी कि दिन के समय

जब जेलख़ाने के सारे सन्तरी चौकस रहते हैं कोई कैदी भागने की कोशिश करेगा..."

"वे गोली तो नहीं चलायेंगे?" माँ ने भय से काँपकर पूछा।

"कौन? वहाँ सिपाही तो होते नहीं और जेलख़ाने के सन्तरी अपनी पिस्तौलों से सिर्फ़ कीलें ठोंकने का काम लेते हैं..."

"यह तो इतना आसान मालूम होता है कि यकीन नहीं आता..."

"तुम देख लेना। बस किसी तरह उन्हें समझा-बुझाकर राजी कर लो। मेरे पास हर चीज़ तैयार है - रस्सी की सीढ़ी, ऊपर के लिए कुण्डा - और मेरा मकान-मालिक बत्ती जलाने वाला बनकर जायेगा..."

दरवाज़े की दूसरी तरफ़ कोई खाँसा, और अपने पैर घसीटता हुआ जो चला, तो पुराने लोहे से ढेर से टकरा गया और बड़े ज़ोर की खड़बड़ हुई।

"यह वही है!" निकोलोई ने कहा।

दरवाज़े में एक टीन का नहाने का टब दिखायी दिया और किसी ने भर्रायी हुई आवाज़ में बुड़बुड़ाकर कहा :

"अबे शैतान के बच्चे, घुस भी जा अन्दर..."

टब के ऊपर एक अत्यन्त सहृदय व्यक्ति के चेहरे की झलक दिखायी दी : उसकी आँखें बाहर को निकली पड़ रही थीं और उसके सिर और मूँछों के बाल बिल्कुल सफ़ेद थे।

निकोलाई ने टब उठाने में उसे सहारा दिया। कमरे में एक लम्बे कदवाले आदमी ने प्रवेश किया जिसकी कमर कुछ झुकी हुई थी। वह दमे के रोगियों की तरह अपने गाल फुलाकर, जिन पर दाढ़ी नहीं थी, ज़ोर से खाँसा और बलगल थूककर उसने भर्राये हुए स्वर में माँ को अभिवादन किया।

"आप कुशल से हैं?"

"लो, इनसे पूछ लो!" निकोलाई ने जल्दी से कहा।

"क्या पूछ लें मुझसे?"

"वही भगाने के बारे में..."

"अच्छा!" मालिक ने अपनी मैली उँगलियाँ मूँछों पर फेरते हुए कहा।

"याकोव वासील्येविच, इन्हें यकीन ही नहीं आता कि यह काम इतना आसान है।"

"नहीं आता, क्यों नहीं आता? मेरे ख़याल से तो यह यकीन करना ही नहीं चाहतीं। लेकिन मैं और तुम यकीन करना चाहते हैं इसलिए हमें यकीन आ जाता है!" मालिक ने शान्त भाव से कहा। सहसा वह कमर दोहरी करके फिर खाँसने लगा। जब खाँसी का दौरा ख़त्म हुआ, तो वह कुछ देर तक कमरे के बीच में

खड़ा अपना सीना मलता रहा और आँखें फाड़कर माँ को ध्यान से देखता रहा।

"इस बात का फ़ैसला पावेल और उसके साथी करेंगे," माँ ने कहा।

निकोलाई ने सोच में सिर झुका लिया।

"यह पावेल कौन है?" मालिक ने बैठते हुए कहा।

"मेरा बेटा।"

"पूरा नाम क्या है?"

"व्लासोव।"

उसने सिर हिलाया और तम्बाकू का बटुआ निकालकर अपना पाइप भरने लगा।

"नाम तो सुना है," उसने कहा। "मेरा भतीजा उसे जानता है। मेरा भतीजा भी जेल में है – येवचेन्को है उसका नाम – सुना है कभी उसका नाम? मेरा नाम गोबून है। थोड़े ही दिन में वे सारे नौजवानों को पकड़कर जेल में बन्द कर देंगे – हम बूढ़ों के लिए बाहर और जगह हो जायेगी! एक पुलिस अफ़सर मुझे कहता था कि मेरे भतीजे को साइबेरिया भेज दिया जायेगा। उन सुअरों से कुछ ताज्जुब नहीं!"

वह निकोलाई की तरफ़ मुड़ा और पाइप का कश लेने लगा। बीच-बीच में वह फ़र्श पर थूकता जाता था।

"तो यह यकीन करना नहीं चाहतीं? यह जानें इनका काम जाने!" उसने कुछ बिगड़कर कहा। "आजाद आदमी की बात ही दूसरी होती है, बैठे-बैठे थक गया – घूमे-फिरे, चलते-चलते थक गया – बैठकर आराम करे। वे हमें लूटें, तो आँखें बन्द कर लें, पीटें तो रोयें नहीं, मार डालें – उफ न करें। इस बात को तो सभी जानते हैं। लेकिन मैं अपने भतीजे को तो बाहर निकाल ही लाऊँगा, सच कहता हूँ, देख लेना।"

अपने छोटे-छोटे वाक्यों को उसने जैसे भूँक-भूँककर कहा, माँ को उससे आश्चर्य हुआ, पर जिस दृढ़ विश्वास के साथ उसने अन्तिम शब्द कहे थे, उससे उसे ईर्ष्या भी हो रही थी।

सड़क पर चलते-चलते माँ निकोलाई के बारे में सोच रही थी; ठण्डी हवा के झोंके और मेंह की बौछार उसके मुँह पर लग रही थी।

"वह कितना बदल गया है! यकीन नहीं आता!"

गोबून को याद करके उसने प्रायः इस ढंग से कहा मानो ईश्वर की प्रार्थना कर रही हो :

"तो देखा तुमने कि मैं ही अकेली नहीं हूँ जिसने नये सिरे से अपना जीवन आरम्भ किया है!"

फिर वह अपने बेटे के बारे में सोचने लगी :

"बस, वह किसी तरह राजी हो जाये!"

22

अगले इतवार को जब वह जेलख़ाने के दफ़्तर में पावेल से विदा होते समय उससे हाथ मिला रही थी, तो उसने अनुभव किया कि पावेल ने काग़ज़ की एक छोटी-सी गोली उसकी हथेली में रख दी। वह इस तरह चौंक पड़ी, मानो किसी ने हाथ पर अँगारा रख दिया हो; वह प्रश्न-भरी दृष्टि से पावेल की सूरत देखती रही, पर उसे वहाँ कोई उत्तर न मिला। पावेल की नीली आँखों में वही हमेशा जैसी शान्त और दृढ़ मुस्कराहट थी।

"अच्छा, तो चलती हूँ!" माँ ने आह भरकर कहा।

पावेल ने फिर अपना हाथ बढ़ा दिया और उसके चेहरे पर स्नेह की एक लहर सी दौड़ गयी।

"अच्छा, माँ, विदा!"

वह थोड़ी देर तक उसका हाथ पकड़े रही।

"चिन्ता न करना, और मुझसे नाराज़ न होना!" उसने कहा।

इन शब्दों में और उसकी त्योरियों के बलों में माँ को अपने प्रश्न का उत्तर मिल गया।

"मेरे लाल," उसने सिर झुकाकर बुदबुदाकर कहा, "क्या कह रहे हो तुम..."

वह पावेल की तरफ़ देखे बिना जल्दी से बाहर चली गयी ताकि वह कहीं उसकी आँखों में उमड़ते आँसू और उसके होंठों का कम्पन देख न ले। घर पहुँचने तक रास्ते-भर उसे ऐसा लगता रहा कि जिस हाथ में वह काग़ज़ का पुर्ज़ा लिये थी उसमें दर्द हो रहा है; उसकी बाँह इस तरह झूल रही थी, मानो किसी ने उसके कन्धे पर ज़ोर की चोट मार दी हो। घर पहुँचते ही उसने रुक्का निकोलाई को दे दिया और खड़ी प्रतीक्षा करती रही कि वह रुक्का खोलकर पढ़े; उसके हृदय में आशा पंख फड़फड़ा रही थी। पर निकोलाई ने उसकी तमाम आशाओं पर पानी फेर दिया। उसने कहा :

"मैं तो पहले से ही यह जानता था। उसने लिखा है : 'साथियो, हम भागने की कोशिश नहीं करेंगे। हम यह नहीं कर सकते। हममें से कोई भी नहीं। अगर हम भागे, तो हमारे आत्म-सम्मान को धक्का लगेगा। लेकिन उस किसान की मदद करने की कोशिश करो जो अभी गिरफ़्तार होकर आया है। उसे तुम्हारी मदद की ज़रूरत है और वह तुम्हारी पूरी मदद पाने का हकदार है। यहाँ उसकी बड़ी

बुरी हालत है – रोज़ हाकिमों से उसका झगड़ा होता है। वह चौबीस घण्टे काल–कोठरी में बिता चुका है। वे उसे सता–सताकर मार डालेंगे। हम सब यही चाहते हैं कि तुम लोग उसकी मदद करो। मेरी माँ को समझा देना। उसे सब कुछ बता देना, वह समझ जायेगी।"

माँ ने अपना सिर उठाया।

"बताने को है ही क्या? मैं सब समझती हूँ!" उसने काँपते हुए स्वर में कहा।

निकोलाई जल्दी से एक तरफ़ मुड़ा और रूमाल निकालकर उसने ज़ोर से नाक छिनकी।

"मालूम होता है मुझे जुकाम हो गया है..."

उसने चश्मा नाक के ऊपर सरकाकर कमरे में इधर–उधर टहलते हुए बुदबुदाकर कहा : "असल बात तो यह है कि हमारे पास सब इन्तज़ाम करने का वक़्त भी नहीं था..."

"अच्छा, तो मुक़दमा ही हो जाने दो!" माँ ने त्योरियाँ चढ़ाकर कहा; उसके हृदय पर उदासी कुहरे के तरह छा गयी।

"अभी मेरे पास पीटर्सबर्ग से एक साथी का खत आया है..."

"आख़िर, वह साइबेरिया से भी तो भागकर आ सकता है... है कि नहीं?"

"आ क्यों नहीं सकता है! इस साथी ने लिखा है कि मुक़दमा जल्दी ही होने वाला है और सजाएँ भी तय कर ली गयी हैं – सब लोगों को निर्वासित किया जायेगा। इन बदमाशों ने अपनी ही अदालतों को बिल्कुल एक ढोंग बना रखा है। ज़रा सोचो – मुक़दमा शुरू होने से पहले ही पीटर्सबर्ग मे सजाएँ भी तय कर ली गयी हैं..."

"निकोलाई इवानोविच, फिकर न करो!" माँ ने दृढ़तापूर्वक कहा। "तुम्हें मुझे समझाने या तसल्ली देने की ज़रूरत नहीं। पावेल जो करेगा ठीक ही करेगा। वह अपने आपको और अपने साथियों को बेकार तकलीफ नहीं देगा! वह मुझे बहुत प्यार करता है! तुम ख़ुद ही देख लो वह मेरा कितना ख़याल रखता है। उसने लिखा है तुम माँ को समझा देना; उसे तसल्ली देना..."

माँ का दिल धड़कने लगा और उसका सिर चकराने लगा।

"तुम्हारा बेटा बहुत ही कमाल का आदमी है!" निकोलाई ने अस्वाभाविक रूप से ऊँचे स्वर में कहा। "मैं बता नहीं सकता कि मैं उसकी कितनी इज्जत करता हूँ!"

"रीबिन की मदद करने की कोई तरकीब सोचनी चाहिए!"

माँ चाहती थी कि इसी दम कुछ हो जाये – वह कहीं चली जाना चाहती

थी, चलते-चलते थककर चूर हो जाना चाहती थी।

"अच्छी बात है!" निकोलाई ने कमरे में टहलते हुए कहा। "हमें साशा की ज़रूरत है..."

"वह आयेगी। मैं जिस दिन पावेल से मिलने जाती हूँ उस दिन वह ज़रूर आती है..."

निकोलाई कोच पर माँ के बगल में बैठ गया। वह सिर झुकाकर विचारों में डूब गया और होंठ काटकर अपनी दाढ़ी ऐंठने लगा।

"यह बहुत बुरा हुआ कि मेरी बहन यहाँ नहीं है..."

"अगर हम पावेल के वहाँ रहते हुए यह कर सकें, तो बहुत अच्छा हो, वह बहुत ख़ुश होगा!" माँ ने कहा।

कुछ देर तक दोनों ने कुछ नहीं कहा।

"लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि आख़िर वह क्यों नहीं चाहता?.." माँ ने अचानक कहा।

निकोलाई उछलकर खड़ा हो गया, लेकिन उसी समय घण्टी बजी। दोनों ने एक-दूसरे की तरफ़ देखा।

"शायद साशा होगी!" निकोलाई ने धीरे से कहा।

"उससे कैसे कहेंगे?" माँ ने भी उतने ही धीरे से पूछा।

"हुँः..."

"मुझे उस पर बड़ा तरस आता है..."

घण्टी फिर बजी, पर इस बार उसकी आवाज़ में वह ज़ोर नहीं था; ऐसा मालूम होता था कि जो आदमी घण्टी बजा रहा था वह कुछ हिचकिचा रहा था। निकोलाई और माँ दोनों दरवाज़े की तरफ़ चले, लेकिन रसोई में पहुँचकर निकोलाई रुक गया।

"तुम अकेली ही जाओ, तो अच्छा है..." उसने कहा।

"क्या उसने इंकार कर दिया?" माँ के दरवाज़ा खालते ही लड़की ने पूछा।

"हाँ।"

"मैं तो पहले ही जानती थी कि वह इंकार कर देगा!" साशा ने सादगी से कहा, पर उसके चेहरे का रंग उतर गया। उसने अपने कोट के बटन खोले, फिर कुछ बटन बन्द करके कोट को अपने कन्धों पर से नीचे सरका देने का प्रयत्न किया।

"हवा और पानी – बहुत बुरा मौसम है!" साशा ने कहा। "वह अच्छा तो है?"

"हाँ।"

“अच्छा भी है और ख़ुश भी,” साशा ने अपनी हथेली को बड़े ध्यान से देखते हुए धीरे से कहा।

“उसने लिखा है कि हमें रीबिन को छुड़ाने की कोशिश करनी चाहिए!” माँ ने साशा की तरफ़ देखे बिना ही कहा।

“अच्छा, यह लिखा है? अगर हमें उसे छुड़ाना है, तो हमें अपनी वही पुरानी तरकीब काम में लानी पड़ेगी,” लड़की ने धीरे-धीरे कहा।

“मेरा भी यही ख़याल है,” निकोलाई ने सहसा दरवाज़े पर आकर कहा। “हेलो, साशा!”

लड़की ने अपना हाथ बढ़ा दिया।

“इसमें बुराई ही क्या है? सभी लोग कहते हैं कि वह तरकीब अच्छी है?”

“लेकिन उसका इन्तज़ाम कौन करेगा? हम सब लोग तो काम में फँसे हुए हैं...”

“मैं करूँगी!” साशा ने जल्दी से उठते हुए कहा। “मेरे पास वक़्त है।”

“अच्छी बात है! लेकिन तुम्हें दूसरे लोगों से मिलना पड़ेगा...”

“मैं मिल लूँगी! मैं अभी जाती हूँ।”

वह फिर अपने कोट के बटन बन्द करने लगी; इस बार उसकी पतली-पतली उँगलियाँ बड़े विश्वास के साथ काम कर रही थीं।

“तुम पहले थोड़ी देर आराम कर लो!” माँ ने कहा।

“मैं थकी हुई नहीं हूँ,” लड़की ने चुपके से मुस्कराकर कहा।

चुपचाप वह सबसे हाथ मिलाकर चली गयी; उसकी मुद्रा हमेशा जैसी भावहीन तथा कठोर थी।

माँ और निकोलाई ने खिड़की के पास जाकर देखा कि उसने बाग पा किया और फाटक के बाहर कहीं ग़ायब हो गयी। निकोलाई ने हल्की सी सीटी बजायी और मेज पर बैठकर फिर कुछ लिखने लगा।

“वह इस काम में फँसी रहेगी, तो ज़्यादा शान्त रहेगी!” माँ ने कुछ सोचते हुए कहा।

“यह तो है ही!” निकोलाई ने उत्तर दिया और फिर मुस्कराता हुआ माँ की तरफ़ मुड़कर बोला, “इस मुसीबत से शायद तुम बची रहीं, निलोवना – तुम्हें तो अपने प्रेमी की याद में कभी तड़पना नहीं पड़ा न?”

“तड़पना!” माँ ने हाथ झटककर कहा। “मुझे तो बस यही डर लगा रहता था कि किसी से मेरा ब्याह न कर दिया जाये।”

“क्या तुम्हें कभी किसी से प्रेम नहीं हुआ?”

उसने कुछ सोचकर जवाब दिया :

"मुझे तो याद नहीं पड़ता। शायद था तो। प्रेम तो किसी न किसी से ज़रूर रहा होगा, पर मुझे याद नहीं पड़ता किससे।"

माँ ने उसकी तरफ़ देखा और सरलता तथा शान्त उदासी से अपनी बात यों समाप्त की :

"मेरे पति ने मुझे मार-मारकर ब्याह से पहले की सारी बातें मेरे दिमाग से निकाल दीं।"

निकोलाई फिर मेज के पास जाकर बैठ गया और माँ एक क्षण के लिए कमरे से बाहर चली गयी। जब वह लौटकर आयी, तो वह पुरानी स्मृतियों में खोया हुआ था।

"जहाँ तक मेरा सवाल है, मुझ पर भी कुछ वही गुजरी जो साशा पर गुजर रही है!" उसने बड़े प्यार से एकटक माँ की तरफ़ देखते हुए कहा। "मुझे एक लड़की से प्रेम था – बहुत ही अच्छी लड़की थी वह। जिस समय मेरी उससे मुलाक़ात हुई, तब मैं कोई बीस बरस का था और तब से आज तक मैं उससे प्रेम करता आया हूँ। अब भी मुझे उससे उतना ही प्रेम है जितना तब था! मैं अपने पूरे हृदय से, बड़ी कृतज्ञता के साथ हमेशा उससे प्रेम करता रहूँगा..."

माँ उसके बिल्कुल पास खड़ी थी; उसे निकोलाई की आँखों में एक आशा-भरी निर्मल ज्योति की चमक दिखायी दे रही थी। वह एक कुर्सी की पीठ पकड़े अपने हाथों पर सिर रखे कहीं बहुत दूर शून्य में देख रहा था; उसका दुबला-पतला पर बलिष्ठ शरीर किसी स्वप्न की ओर इस तरह खिंच रहा था जैसे फूल सूर्य के प्रकाश की ओर खिंचता है।

"तुम उससे शादी क्यों नहीं कर लेते?"

"चार साल हुए उसकी शादी हो गयी..."

"तुमने पहले क्यों नहीं कर ली?"

वह एक क्षण तक कुछ सोचता रहा।

"बस यों ही, हो नहीं पायी। जब मैं जेल से बाहर आता था, तो वह जेल या निर्वासन में होती थी और जब वह छूटकर आती, तो मैं जेल में होता। बिल्कुल साशा और पावेल जैसी हालत थी, क्यों है न? आख़िरकार उसे दस साल के लिए साइबेरिया में कहीं बहुत दूर निर्वासित कर दिया गया! मैं उसके साथ-साथ जाना चाहता था, पर मुझे शर्म आती थी और उसे भी। वहाँ उसकी मुलाक़ात एक दूसरे आदमी से हो गयी – बहुत अच्छा आदमी है वह, मेरा साथी है। वे दोनों वहाँ से साथ भाग निकले और अब विदेश में रहते हैं..."

निकोलाई ने अपनी ऐनक उतारकर साफ़ की और रोशनी के सामने शीशों को देखकर एक बार साफ़ किया।

"हाय बेचारा!" माँ ने सिर हिलाकर बड़ी ममता से कहा। माँ को उस पर बड़ा तरस आ रहा था, पर साथ ही उसकी न जाने किस बात पर वह इस तरह मुस्करा रही थी जैसे माँ बच्चे को देखकर मुस्कराती है। वह मुड़कर बैठ गया और कलम उठाकर कुछ बोलने लगा, बोलते-बोलते वह अपने शब्दों की ताल पर कलम हिलाता रहा :

"परिवार बसा लेने से क्रान्तिकारी की शक्ति निचुड़ जाती है – इससे उसे कोई मदद नहीं मिल सकती! बच्चे, तंगदस्ती, बाल-बच्चों का पेट पालने के लिए काम करने की ज़रूरत। क्रान्तिकारी को अपनी शक्ति बचाकर रखनी चाहिए ताकि ज़्यादा काम कर सके। यह वक़्त का तकाजा है – हमें हमेशा सबसे आगे चलना चाहिए, क्योंकि हम वे मज़दूर हैं जिन्हें इतिहास ने पुरानी दुनिया को बदलकर उसकी जगह एक नयी दुनिया बनाने के लिए चुना है। अगर हम पीछे रह जायें, थककर या अपनी किसी छोटी-सी विजय पर सन्तोष करके बैठे रहें, तो हम एक ऐसे अपराध के दोषी होंगे जो अपने लक्ष्य के साथ विश्वासघात से कम नहीं है! कोई दूसरा ऐसा नहीं है जिसके साथ हम अपने ध्येय को हानि पहुँचाये बिना चल सकें; और हमें इस बात को कभी नहीं भूलना चाहिए कि हमारा लक्ष्य कोई छोटी-मोटी जीत नहीं, बल्कि पूर्ण विजय है।"

उसके स्वर में दृढ़ता आ गयी थी, उसका चेहरा पीला पड़ गया था और उसकी आँखों में वही हमेशा जैसी गम्भीरता की चमक थी। दरवाज़े पर फिर घण्टी बजी। इस बार लूदमीला आयी; उसके गाल सर्दी के कारण लाल हो रहे थे; वह एक पतला-सा कोट पहने थी जो इस मौसम के लिए बिल्कुल काफ़ी नहीं था।

"मुक़दमा अगले हफ़्ते होगा!" उसने अपने फटे हुए रबड़ के जूते उतारते हुए चिड़चिड़ाकर कहा।

"पक्की तरह मालूम है?" निकोलाई ने दूसरे कमरे से चिल्लाकर पूछा।

माँ भागी-भागी निकोलाई के पास गयी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि उसका सीना भय के कारण धड़क रहा है या ख़ुशी के मारे। लूदमीला भी उसके साथ गयी।

"हाँ, मुझे पक्की तरह मालूम है! अदालत में सब लोग खुलेआम इस बात को मानते हैं कि सजाएँ पहले से तय कर ली गयी हैं," उसने किंचित व्यंग्य के साथ कहा। "क्या ख़याल है तुम्हारा इसके बारे में? क्या सरकार डरती है कि उसके अफ़सर उसके दुश्मनों के साथ नरमी से पेश आयेंगे? क्या वह डरती है कि इतने दिन तक इतनी मेहनत के साथ अपने नौकरों के दिमागों को दूषित करने के बावजूद वे फिर भी शरीफ़ साबित हो सकते हैं..."

वह कोच पर बैठ गयी और दोनों हाथों से अपने पतले-पतले गाल मलने लगी। उसकी आँखों में घोर तिरस्कार था और उसका स्वर अधिकाधिक रोषपूर्ण होता जा रहा था।

"लूदमीला, क्यों अपने आपको बेकार परेशान करती हो," निकोलाई ने उसे धीरज बँधाने का प्रयत्न करते हुए कहा। "जानती हो कि तुम्हारी बातें उन लोगों के कानों तक नहीं पहुँच सकतीं..."

माँ लूदमीला की बातें सुनती रही, पर उसकी समझ में कुछ नहीं आया। उसके दिमाग़ पर बस यही एक विचार छाया हुआ था कि "मुक़दमा अगले हफ़्ते होगा!"

सहसा उसे ऐसा लगा कि कोई क्रूर अमानुषिक शक्ति उसकी तरफ़ बढ़ी चली आ रही है।

23

एक दिन तक, दो दिन तक माँ उदासी, आशंका, और चिन्ता के वातावरण में घिरी रही; तीसरे दिन जाकर साशा आयी।

"सब तैयारियाँ हो गयी हैं! आज एक बजे..." उसने निकोलाई से कहा।

"इतनी जल्दी?" उसने आश्चर्य से पूछा।

"क्या बहुत जल्दी हो गया? मुझे तो बस रीबिन के लिए कुछ कपड़ों और उसके छुपने के लिए एक जगह का ही इन्तज़ाम करना पड़ा। बाक़ी सब गोबून ने कर लिया। रीबिन को भागकर कोने तक जाना पड़ेगा; वहाँ वेसोवश्चिकोव बहुरूपिया बनकर उसके लिए एक कोट और टोपी लिये खड़ा रहेगा और उसे रास्ता बतायेगा। मैं कुछ दूर आगे दूसरे कपड़े लेकर खड़ी रहूँगी।"

"ठीक है! लेकिन यह गोबून कौन है?" निकोलाई ने पूछा।

"तुम जानते हो उसे! तुम जब मिस्त्रियों के मण्डल में पढ़ाने जाया करते थे, वह वहीं तो होता था।"

"हाँ, मुझे याद है। कुछ अजीब-सा आदमी है वह..."

"उसे फ़ौज से पेंशन हो गयी है – अब ठठेरे का काम करता है। बिल्कुल जाहिल है, मगर हर किस्म के जुल्म के ख़िलाफ़ उसके दिल में सख़्त नफ़रत है... कुछ थोड़ा-थोड़ा दार्शनिक भी है," साशा खिड़की के बाहर देखते हुए कुछ विचारों में खोयी-खोयी-सी बोली। उसकी बातें सुनकर माँ के हृदय में एक अस्पष्ट-सा संकल्प जन्म लेने लगा।

"गोबून अपने भतीजे को छुड़ाना चाहता है – येवचेन्को की याद है न? तुम्हें वह बहुत पसन्द था, हमेशा साफ़-सुथरा और चुस्त रहता था।"

निकोलाई ने सिर हिला दिया।

"उसने सब इन्तज़ाम कर लिया है," साशा कहती रही, "लेकिन मुझे कुछ-कुछ डर लगने लगा है कि शायद हमारी यह कोशिश कामयाब नहीं होगी। यह सब कुछ उस वक़्त होना है जब कैदी हवा खाने के लिए बाहर निकाले जायेंगे, मुझे डर है कि जब वे सीढ़ी लगी हुई देखेंगे, तो बहुत-से लोग उसका फ़ायदा उठाने की कोशिश करेंगे..."

साशा आँखें बन्द करके ख़ामोश हो गयी। माँ उसके और निकट आ गयी।

"वे लोग सब चौपट कर देंगे, कोई फ़ायदा नहीं उठा पायेगा..."

वे तीनों खिड़की के पास खड़े थे; साशा और निकोलाई आगे थे और माँ उन दोनों के पीछे। वे दोनों जल्दी-जल्दी जो कर रहे थे उससे माँ के हृदय में मिश्रित भावनाएँ उत्पन्न हो रही थीं...

"मैं भी जाऊँगी!" सहसा माँ ने कहा।

"क्यों?" साशा ने पूछा।

"न जाओ, माँ! कहीं किसी मुसीबत में ही न फँस जाओ! न जाओ!" निकोलाई ने सलाह देते हुए कहा।

माँ ने उसकी तरफ़ देखा।

"नहीं, मैं तो जाऊँगी..." उसने धीरे से पर दृढ़ता के साथ कहा।

दोनों ने जल्दी से एक-दूसरे को देखा।

"मैं समझती हूँ," साशा ने कन्धे बिचकाकर कहा और माँ की ओर बढ़कर उसकी बाँह पकड़ ली।

"लेकिन तुम्हें इस बात को समझना चाहिए कि बेकार उम्मीद बाँधने से कोई फ़ायदा नहीं," उसने यह बात इतनी सादगी से कही कि माँ का हृदय द्रवित हो उठा।

"मेरी बच्ची! मैं जानती हूँ," उसने काँपते हुए हाथों से साशा को अपने और करीब खींचते हुए उत्तर दिया। "लेकिन मुझे अपने साथ तो ले चलो, मैं कोई रुकावट नहीं डालूँगी! मेरा जाना ज़रूरी है। मैं यकीन नहीं कर सकती कि यह मुमकिन है - कि कोई जेल से भाग भी सकता है!"

"माँ हमारे साथ जायेंगी!" साशा ने निकोलाई से कहा।

"जैसा तुम कहो!" उसने सिर झुकाकर उत्तर दिया।

"लेकिन कोई हम लोगों को एक-दूसरे के साथ न देखने पाये। तुम उधर जाना जिधर बगीचे हैं; वहाँ से तुम्हें जेलख़ाने की दीवार दिखायी देगी। लेकिन अगर किसी ने तुमसे पूछा तो क्या कहोगी?"

"मैं कोई बात बना दूँगी!.." माँ ने बड़ी ख़ुशी और उत्सुकता से उत्तर दिया।

“यह न भूलना कि जेलख़ाने के सन्तरी तुम्हें पहचानते हैं!” साशा ने माँ को चेतावनी दी। “और अगर उन लोगों ने तुम्हें वहाँ देख लिया तो...”

“वे मुझे नहीं देख पायेंगे!”

माँ के हृदय में जिस आशा की चिंगारी कुछ समय से धीरे-धीरे सुलग रही थी वह अब सहसा ज्वाला बनकर भड़क उठी और माँ में जैसे फिर से जान आ गयी...

“मुमकिन है वह भी भाग आये...”

घण्टे-भर बाद वह भी जेलख़ाने के पास खड़ी थी। तेज़ हवा चल रही थी। हवा के झोंके उसका साया खींच रहे थे, बर्फ़ से ढँकी हुई ज़मीन पर थपेड़े मार रहे थे और जिस बगीचे के पास से होकर वह गुजर रही थी उसके जीर्ण-शीर्ण जंगल को झँझोड़ते हुए जेलख़ाने की दीवार पर पूरे ज़ोर से प्रहार कर रहे थे। हवा के यही झोंके जेलख़ाने के आँगन से वहाँ के निवासियों के क्रन्दन को अपने साथ उड़ाते हुए आकाश पर पहुँचा रहे थे; एक-दूसरे का पीछा करते हुए बादल आकाश की नीली गहराइयों की पृष्ठभूमि पर एक झलक दिखाकर ग़ायब हो जाते थे।

माँ के पीछे बगीचा था और सामने क़ब्रिस्तान। उससे कोई सत्तर फीट की दूरी पर दाहिनी तरफ़ जेलख़ाना था। क़ब्रिस्तान के पास एक सिपाही घोड़े को चक्कर खिला रहा था और पास ही एक दूसरा सिपाही खड़ा ज़मीन पर पैर पटक-पटककर चिल्ला रहा था, कहकहे लगा रहा था और सीटी बजा रहा था। जेलख़ाने के पास और कोई नहीं था।

माँ उनके पास से गुजरती हुई क़ब्रिस्तान की चहारदीवारी के पास जा पहुँची; वह नज़रें बचाकर अपने पीछे दाहिनी तरफ़ देखती जा रही थी। सहसा उसे ऐसा लगा कि उसके घुटने जवाब दे रहे हैं और उसके पाँव मानो ज़मीन में गड़ गये हैं। मोड़ के पास एक बत्ती जलानेवाला कमर झुकाये, एक कन्धे पर सीढ़ी लटकाये लपका चला आ रहा था, जैसे बत्ती जलानेवाले आम तौर पर चलते हैं। भय से आँखें झपकाते हुए माँ ने सिपाहियों की तरफ़ देखा : वे एक जगह पर खड़े थे और घोड़ा उनके चारों ओर चक्कर लगा रहा था; माँ ने सीढ़ीवाले आदमी की तरफ़ देखा। उसने सीढ़ी दीवार के सहारे लगा दी थी और धीरे-धीरे ऊपर चढ़ रहा था। ऊपर पहुँचकर उसने ज़ोर से एक हाथ घुमाया और जल्दी से नीचे उतरकर मोड़ के कोने पर ग़ायब हो गया। माँ का हृदय ज़ोर से धड़क रहा था; एक-एक क्षण उसे पहाड़ जैसा मालूम हो रहा था। जेलख़ाने की दीवार पर धब्बे पड़े हुए थे, जगह-जगह से उसका रंग उतर गया था और जहाँ पलस्तर टूट गया था वहाँ दीवार की ईंटें नीचे से झाँक रही थीं। इस अन्धकारमय पृष्ठभूमि

पर सीढ़ी बिल्कुल दिखायी ही नहीं दे रही थी। सहसा दीवार के ऊपर किसी का काला सिर और फिर उसका पूरा शरीर दिखायी दिया; वह आदमी पैर लटकाकर दीवार पर इस प्रकार बैठ गया, मानो घोड़े पर सवार हो और फिर रेंगकर दीवार से नीचे उतर आया। फर की टोपी पहने एक दूसरा सिर दिखायी दिया और एक काला-सा गोला ज़मीन पर लुढ़कता हुआ मोड़ के पास जाकर ग़ायब हो गया। मिख़ाइलो तनकर सीधा खड़ा हो गया और चारों तरफ़ नज़र डालकर उसने अपना सिर हिलाया...

"भागो, भागो!" माँ ने पैर पटकते हुए धीरे से कहा।

माँ के कान गूँजने लगे; उसने ज़ोर-ज़ोर से लोगों के चिल्लाने की आवाज़ सुनी। दीवार के ऊपर एक तीसरा सिर दिखायी दिया। माँ ने अपना सीना थाम लिया और दम साधे खड़ी देखती रही। एक नौजवान का सिर, जिसके बाल सुनहरे थे और जिसके चेहरे पर दाढ़ी नहीं थी, झटके के साथ ऊपर उठा, मानो वह अपने आपको किसी से छुड़ा रहा हो, पर अचानक वह फिर दीवार के पीछे ग़ायब हो गया। चीख़-पुकार और तेज़ होती गयी; उसमें घबराहट भी बढ़ती गयी और सीटियों का कर्कश स्वर हवा की लहरों पर तैरने लगा। मिख़ाइलो दीवार के किनारे-किनारे चल रहा था। वह दीवार के सामने से गुजरता हुआ जेलख़ाने और शहर के मकानों के बीच के खुले मैदान को पार कर गया। माँ को लगा कि वह बहुत धीरे-धीरे चल रहा है और फजूल ही अपना सिर इतना ऊँचा किये हुए है। जिस किसी ने उसे एक बार भी देखा है उसे उसकी सूरत ज़रूर याद होगी।

"जल्दी... जल्दी..." माँ ने दबी जबान में कहा।

जेलख़ाने की दीवार के उस पार एक धमाका हुआ और माँ को काँच टूटने की आवाज़ सुनायी दी। उन दोनों सिपाहियों में से एक ज़मीन पर पैर जमाये खड़ा था और घोड़े की रस्सी खींच रहा था; दूसरा अपना हाथ मुँह के पास किये जेलख़ाने की दिशा में चिल्लाकर कुछ कह रहा था। जब वह अपनी बात कह चुका, तो जवाब सुनने के लिए उसने अपना कान हवा के रुख पर कर दिया।

माँ बहुत घबरायी हुई सीधी तनकर खड़ी थी और चारों तरफ़ सिर घुमा-घुमाकर देखती जा रही थी; उसकी आँखों ने देखा सब कुछ था, पर उसे किसी बात पर विश्वास नहीं आ रहा था। जिस चीज़ को वह इतना पेचीदा और ख़तरनाक समझ रही थी वह इतनी आसान निकली और इतनी जल्दी हो गयी; उसका इतनी जल्दी हो जाना ही उसके दिमाग पर छाया रहा और वह कोई दूसरी बात सोच ही नहीं पा रही थी। रीबिन ग़ायब हो गया था; एक लम्बा-सा आदमी लम्बा-सा कोट पहने सड़क पर चला आ रहा था; एक लड़की उससे आगे दौड़ रही थी। जेल की दीवार के कोने की तरफ़ से तीन सन्तरी एक-दूसरे से सटे

हुए और अपने दाहिने हाथ आगे बढ़ाये लपके चले आ रहे थे। एक सिपाही उनसे मिलने के लिए भागा, दूसरा घोड़े के चारों तरफ़ चक्कर काट रहा था, वह कूदकर घोड़े की पीठ पर सवार होना चाहता था, पर वह अड़ियल घोड़ा सहसा हवा में उछला और ऐसा मालूम हुआ कि उसके साथ ही बाक़ी सब चीज़ें भी हवा में उछल गयीं। सीटियाँ बार-बार घबरा-घबराकर बजायी जा रही थीं। सीटियों के बौखलाये हुए कर्कश स्वर से माँ को संकट का आभास हुआ; वह काँप उठी और सन्तरियों पर नज़रें गड़ाये क़ब्रिस्तान की चहारदीवारी के किनारे-किनारे आगे बढ़ी। पर तीनों सन्तरी और सिपाही जेल के दूसरे कोने पर पहुँचकर कहीं ग़ायब हो गये। शीघ्र ही उनके पीछे एक आदमी कोट के बटन खोले उधर से गुज़रा; माँ ने पहचान लियाा कि वह नायब जेलर था। पुलिस घटनास्थल पर आ गयी और भीड़ जमा होने लगी।

हवा नाचती हुई चल रही थी, मानो ख़ुशी मना रही हो, हवा के झोंकों के साथ माँ के कानों में चीख़-पुकार और सीटियों की उखड़ी-उखड़ी आवाज़ें आ रही थीं... इस कोलाहल से वह बहुत प्रसन्न थी। उसने अपने क़दम और तेज़ कर दिये।

"मेरा बेटा भी इतनी ही आसानी से भाग सकता था!" माँ ने सोचा।

सहसा दो पुलिसवाले दीवार के कोने की तरफ़ से झपटते हुए आये।

"ठहरो!" उनमें से एक ने चिल्लाकर कहा; उसका दम फूल रहा था। "तुमने किसी आदमी को तो इधर जाते नहीं देखा है – दाढ़ी थी उसके?"

माँ ने बगीचे की ओर इशारा करते हुए शान्त भाव से कहा :

"वह भागकर उधर गया है। क्यों, क्या हुआ?"

"येगोरोव! सीटी बजाओ!"

माँ घर की तरफ़ चल दी। उसे किसी बात का दुख था, उसके हृदय में कटुता और खेद की भावना थी। खुली जगह को पार करके जब वह सड़क पर निकली, तो एक घोड़ागाड़ी उसके पास से होकर गुजरी। उसने अन्दर झाँककर देखा; एक नौजवान गाड़ी में बैठा था। उसकी मूँछें सुनहरे रंग की थीं और चेहरा पीला तथा थका हुआ था। उसने भी माँ का देखा। वह तिरछा बैठा हुआ था और इसीलिए उसका दाहिना कन्धा उसके बायें कन्धे से कुछ ऊँचा था।

निकोलाई ने बहुत ख़ुश होकर माँ का स्वागत किया।

"बताओ, क्या हुआ?"

"सब ठीक हो गया..."

उसने निकोलाई को कैदियों के भागने को पूरा वृत्तान्त सुनाया। वह कोशिश कर रही थी कि कोई छोटी-से-छोटी बात भी कहने से रह न जाये। परन्तु वह

इस प्रकार बोल रही थी, मानो किसी दूसरे से सुना हुआ ऐसा क़िस्सा सुना रही हो जिस पर उसे स्वयं विश्वास न हो।

"किस्मत हमारे साथ है!" निकोलाई ने अपने हाथ रगड़ते हुए कहा। "सच कहता हूँ कि मैं तो बहुत परेशान था कि तुम्हें कहीं कुछ हो न गया हो! सुनो, निलोवना, एक दोस्त की हैसियत से मेरी सलाह मानो, मुक़दमे से डरना छोड़ दो! जितनी जल्दी हो जायेगा उतनी ही जल्दी पावेल आजाद हो जायेगा! शायद वह निर्वासन-स्थान के लिए जाते समय रास्ते से ही भाग आयेगा। जहाँ तक मुक़दमे का सवाल है, तो उसमें होगा यह कि..."

वह बड़ी देर तक मुक़दमे की कार्रवाई बयान करता रहा। जब वह बोल रहा था, माँ को ऐसा लगा कि यद्यपि वह उसे धीरज बँधाने का प्रयत्न कर रहा था, पर वह स्वयं किसी बात से डर रहा था।

"क्या तुम यह डरते हो कि मैं अदालत में कोई ऐसी बात कह दूँगी जो मुझे नहीं कहनी चाहिए?" माँ ने अचानक उससे पूछा। "या यह कि मैं उनसे किसी चीज़ की प्रार्थना करूँगी?"

निकोलाई उछलकर खड़ा हो गया और हाथ हिलाने लगा।

"नहीं नहीं, बिल्कुल नहीं!" उसने कुछ बुरा मानकर कहा।

"मैं इससे इंकार नहीं करती कि मुझे डर लगता है। लेकिन मुझे ख़ुद भी नहीं मालूम कि मैं किस बात से डरती हूँ!.." वह बोलते-बोलते रुक गयी और कमरे में चारों तरफ़ नज़र दौड़ाने लगी :

"कभी-कभी मुझे यह डर लगता है कि वे पावेल से बदतमीजी से बात करेंगे : वे कहेंगे, 'अबे देहाती, किसान के बच्चे! आख़िर तू चाहता क्या है?' पावेल बहुत अभिमानी लड़का है और वह पलटकर उन्हें जवाब देगा! या अन्द्रेई ही उन पर फब्ती कसेगा। दूसरे लोग भी गरम मिजाज के हैं। मान लो अगर उन लोगों ने इन बातों को बरदाश्त न किया और सजा बदल दी, तो फिर हमें कभी उनकी सूरत भी देखने को नहीं मिलेगी!"

निकोलाई के माथे पर बल पड़ गये। उसने कोई उत्तर नहीं दिया और अपनी दाढ़ी नोचने लगा।

"अब मेरे दिमाग में ऐसे विचार आते हैं, तो मैं क्या करूँ!" माँ ने धीरे से कहा। "इसीलिए मुक़दमे से मुझे इतना डर लगता है! अगर उन्होंने खोद-खोदकर हर बात का पता लगाना और हर बात पर विचार करना शुरू किया, तो क्या होगा! बहुत डर लगता है मुझे तो! मुझे सजा से डर नहीं लगता, बस मुकमदे से डर लगता है। मेरी समझ में नहीं आता कि कैसे समझाऊँ तुम्हें अपनी बात..."

माँ जानती थी कि निकोलाई उसकी बात समझा नहीं, इसीलिए अपने भय

को शब्दों में व्यक्त करना उसके लिए और कठिन हो रहा था।

24

माँ का भय फफूँदी की तरह उसके हृदय में बढ़ता जा रहा था और उसका दम घोंटे दे रहा था। मुक़दमे के दिन अदालत की तरफ़ जाते समय उसके लिए अपना सिर उठाना या सीधे तनकर चलना भी कठिन हो गया।

फ़ैक्टरी के मज़दूरों की बस्ती के जान-पहचानवाले लोगों ने उसे सलाम किया, तो वह चुपचाप सिर हिलाकर उनके सलाम का जवाब देती हुई भीड़ को चीरती आगे बढ़ गयी। एकत्रित जन-समुदाय पर गम्भीरता छायी हुई थी। बरामदे में और अदालत के कमरे में उसकी मुलाक़ात उन लोगों के रिश्तेदारों से हुई जिन पर मुक़दमा चलाया जा रहा था; वे भी बहुत धीमी आवाज़ में बातें करते। माँ को ऐसा लग रहा था कि ये सब शब्द बेकार थे; वह उन्हें समझ ही नहीं पर रही थी। सबके हृदय में एक ही पीड़ा थी। माँ इस बात को समझ गयी और इससे उसकी व्यथा और भी बढ़ गयी।

"आओ, बैठ जाओ!" सिजोव ने बेंच पर एक तरफ़ को सरकते हुए कहा।

माँ चुपचाप बैठ गयी और अपना साया ठीक करके उसने चारों ओर नज़र डाली। उसकी आँखों के आगे हरे और लाल धब्बे और धारियाँ और बहुत पतले-पतले पीले धागे नाच रहे थे।

"तुम्हारे बेटे ही के कारण मेरे ग्रीशा पर भी यह मुसीबत आयी!" माँ के पास बैठी हुई एक औरत ने धीमी आवाज़ में कहा।

"बन्द करो यह बकवास, नताल्या!" सिजोव ने गम्भीर मुद्रा बनाकर कहा।

माँ ने उस औरत की तरफ़ देखा। वह समोइलोव की माँ थी। उसके बगल में उसका पति बैठा था, जो एक गंजा, सुडौल आदमी था; उसका चेहरा पतला और लम्बी-सी लाल दाढ़ी थी। वह आँखें सिकोड़कर लगातार सामने घूर रहा था और उसकी दाढ़ी काँप रही थी।

ऊँची-ऊँची खिड़कियों से, जिन पर बाहर की तरफ़ बर्फ़ जमी हुई थी, अदालत के कमरे में एक धुँधली-सी रोशनी आ रही थी। दो खिड़कियों के बीच में एक चमकदार सुनहरे फ्रेम में ज़ार की तस्वीर लगी हुई थी। खिड़कियों पर पड़े हुए उन्नाबी रंग के मोटे-मोटे परदों की सिलवटों ने दोनों तरफ़ फ्रेम का कुछ भाग ढँक रखा था। तस्वीर के सामने एक मेज थी जिस पर हरी बनात बिछी हुई थी, मेज की लम्बाई लगभग एक दीवार से दूसरी दीवार तक थी। दाहिनी तरफ़ की दीवार से मिला हुआ एक कटहरा था जिसमें दो लकड़ी की बेंचें पड़ी हुई थीं, बायीं तरफ़ की दीवार के सहारे हत्थेदार कुर्सियों की दो कतारें लगी हुई थीं, इन

कुर्सियों की गद्दियों पर भी उन्नाबी रंग का कपड़ा चढ़ा हुआ था। हरे कालरों और सुनहरे बटनों वाली वर्दियाँ पहने अदालत के चपरासी चुपचाप इधर-उधर भाग-दौड़ कर रहे थे। घुटी हुई हवा में खुसुर-फुसुर की आवाज़ और दवाओं की बू बसी हुई थी। ये सब चीज़ें - ये रंग और चमक, आवाज़ें और ख़ुशबुएँ - उसकी आँखों और कानों को दुखदायी प्रतीत हो रही थीं और श्वास के साथ उसके शरीर में घुसकर उसके हृदय में एक खोखला कष्टप्रद भय उत्पन्न कर रही थीं।

सहसा कोई ऊँचे स्वर में बोला। माँ चौंक पड़ी और जब सब लोग उठकर खड़े हो गये, तो वह भी सिजोव का हाथ पकड़कर खड़ी हो गयी।

बायीं तरफ़ एक ऊँचा-सा दरवाज़ा खुला और ऐनक लगाये हुए एक बूढ़ा फुदकता हुआ कमरे में दाखिल हुआ। उसके भूरे चेहरे पर सफ़ेद गलमुच्छे झूल रहे थे। उसकी मूँछें बिल्कुल सफाचट थीं और ऊपरवाले मसूढ़े में एक भी दाँत न होने के कारण ऊपरवाला होंठ अन्दर को चला गया था, उसकी ठोड़ी और जबड़े उसकी वर्दी के ऊँचे से कालर पर इस तरह टिके हुए थे कि मानो उसके गर्दन हो ही नहीं। एक लम्बा-सा नौजवान, जिसके गोल चिकने चेहरे पर लाली थी, उसे सहारा दिये हुए था। उसके पीछे तीन आदमी सुनहरी झालरोंवाली वर्दियाँ पहने और तीन आदमी साधारण पोशाक में चले आ रहे थे।

उन्हें उस लम्बी-सी मेज के पास अपनी-अपनी जगहों पर बैठने में काफ़ी समय लगा। जब वे ठीक से बैठ गये, तो एक व्यक्ति जिसकी दाढ़ी सफाचट थी और जिसके चेहरे पर हर चीज़ के प्रति एक विरक्ति का भाव था, सामने झुककर अपने मोटे-मोटे होंठ हिला-हिलाकर उस बूढ़े के कान में कुछ कहने लगा। बूढ़ा विचित्र ढंग से तनकर सीधा बैठा हुआ उसकी बात सुनता रहा; उसकी ऐनक के शीशों के पीछे माँ को दो छोटे-छोटे नीरस धब्बे दिखायी पड़ रहे थे।

मेज के एक सिरे पर एक और लिखने की मेज रखी हुई थी जिसके पास एक लम्बा-सा आदमी खड़ा था, जिसका सिर कुछ-कुछ गंजा हो चला था; उसने दस्तावेजों के पन्ने उलटते हुए अपना गला साफ़ किया।

बूढ़ा आगे झुककर बोलने लगा। वह अपने वाक्यों के पहले शब्द तो बहुत साफ़ उच्चारित करता था, पर बाक़ी शब्द इस तरह गड्डमड्ड होकर निकलते थे कि उन्हें समझना भी कठिन था।

"मैं ऐलान करता हूँ... मुलजिमों को हाजिर किया जाये..."

"देखो!" सिजोव ने माँ को कुहनी से ठेलते हुए कहा और उठकर खड़ा हो गया।

कटहरे के पीछेवाला दरवाज़ा खुला और एक सिपाही कन्धे पर नंगी तलवार

लिये हुए अन्दर आया, उसके पीछे पावेल, अन्द्रेई, फ्योदोर माजिन, दोनों गूसेव भाई, समोइलोव, बूकिन, सोमोव और पाँच अन्य नौजवान थे जिसके नाम माँ नहीं जानती थी। पावेल मुस्कराया और अन्द्रेई ने भी खीसें निकालकर सिर हिलाया; न जाने क्यों उनकी मुस्कराहट, उनके सप्राण चेहरों और हाव-भाव से अदालत के कमरे के अस्वाभाविक वातावरण का तनाव कम हो गया; सुनहरी झालरों की चमक फीकी पड़ गयी। कैदी अपने साथ जो आत्म-विश्वास और उत्साह की भावना लेकर आये थे उससे माँ के हृदय में फिर साहस का संचार हुआ। पीछे की बेंचो से, जहाँ से, जहाँ अब तक लोग निराशा भाव से प्रतीक्षा कर रहे थे, एक शान्त मरमर ध्वनि सुनायी दी।

"वे बिल्कुल नहीं डर रहे हैं!" सिजोव ने चुपके से कहा; समोइलोव की माँ धीरे-धीरे सिसक रही थी।

"ख़ामोश!" किसी ने कठोर स्वर में डाँटा।

"मैं चेतावनी देता हूँ..." बूढ़े ने कहा।

पावेल और अन्द्रेई एक-दूसरे के बगल में सामनेवाली बेंच पर माजिन, समोइलोव और गूसेव के साथ बैठे थे। अन्द्रेई ने अपनी दाढ़ी मुँड़ा दी थी, पर मूँछें बढ़ा ली थीं, उसकी मूँछें नीचे को लटकी हुई थीं जिसके कारण उसकी सूरत बिल्लियों जैसी लगने लगी थी। उसके चेहरे पर एक नया भाव आ गया था – उसके मुँह पर कटुता और व्यंग्य का भाव था और आँखों में तिरस्कार। माजिन के ऊपरी होंठ पर एक काली रेखा-सी दिखायी देने लगी थी और उसका चेहरा गोल हो गया था। समोइलोव के बाल हमेशा की तरह घुँघराले थे और इवान गूसेव हमेशा की तरह बत्तीसी खोलकर मुस्करा रहा था।

"आह, फ्योदोर, फ्योदोर!" सिजोव ने सिर झुकाकर कराहते हुए कहा।

माँ उन अबोधगम्य प्रश्नों को सुनती रही जो वह बूढ़ा उन कैदियों की तरफ़ देखे बिना अपना सिर अपने कालर पर निश्चल भाव से टिकाये उनसे पूछ रहा था। उसने अपने बेटे के शान्त तथा संक्षिप्त उत्तर भी सुने और उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि बड़े जज और उसके सहायक उन लोगों के साथ निर्दयता का व्यवहार नहीं करेंगे। यह अनुमान लगाने का प्रयत्न करते हुए कि इस मुक़दमे का फल क्या होगा उसने जब मेज के सामने बैठे हुए लोगों के चेहरों को ध्यान से देखा, तो उसे अपने हृदय में बढ़ती हुई आशा का आभास हुआ।

उस चिकने-चुपड़े चेहरेवाले अफ़सर ने सपाट स्वर में एक काग़ज़ पढ़कर सुनाया। उसकी आवाज़ इतनी उकता देनेवाली थी कि श्रोता मूर्तिवत् बैठे रहे। चार वकील मुलजिमों से बड़ी तल्लीनता से बातचीत कर रहे थे। उनकी गति में तेज़ी और ज़ोर था और उन्हें देखकर माँ को अनायास ही बड़ी-सी काली चिड़िया की

याद आती थी।

बूढ़े के एक तरफ़वाली हत्थेदार कुर्सी में एक जज का स्थूल शरीर समा नहीं पा रहा था; इस जज की छोटी-छोटी आँखें चरबी की तहों में दबकर रह गयी थीं। बूढ़े के दूसरी तरफ़ एक गोल कन्धों वाला जज बैठा हुआ था जिसके गलमुच्छे खिजाबी रंग के और चेहरा पीला था। वह अपना सिर कुर्सी की पीठ पर टिकाये आँखें बन्द किये इस प्रकार कल्पना के पंखों पर उड़ रहा था मानो बहुत उकता गया हो। सरकारी वकील के चेहरे पर भी उकताहट और थकन के चिह्न थे। जजों के पीछे तीन और आदमी बैठे थे; एक तो मेयर जो गठे हुए शरीर का रोबदार व्यक्ति था और लगातार अपने गालों को थपथपा रहा था; दूसरा मार्शं आफ दि नोबिलिटी, जिसके बाल सफ़ेद और गाल लाल-लाल थे, उसके लम्बी-सी दाढ़ी और बड़ी-बड़ी प्यार-भरी आँखें थीं; तीसरा था जिलाधीश, जो शायद और बड़ी-बड़ी तोंद से बहुत परेशान था क्योंकि वह बार-बार उसे अपने कोट के दामनों से ढँकता था पर वे बार-बार फिसल जाते थे।

"यहाँ न कोई अपराधी है न कोई जज," पावेल का दृढ़ स्वर सुनायी दिया, "यहाँ सिर्फ़ कैदी हैं और वे लोग हैं जिन्होंने उन्हें कैदी बनाया है..."

अदालत में सन्नाटा छा गया। कुछ सेकण्ड तक माँ को एक कलम की तेज़ सरसराहट और अपने दिल की धड़कन के अलावा और कुछ भी सुनायी न दिया।

ऐसा प्रतीत होता था कि बड़े जज भी सारी बातें सुन रहे थे और आगे की कार्रवाई की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनके सहकारी हिले-डुले। आख़िरकार बड़े जज ने कहा :

"हुँः! अन्द्रेई नाखोदका! क्या तुम अपने जुर्म को कबूल करते हो?.."

अन्द्रेई धीरे-धीरे उठा और अपने कन्धे ऊँचे करके मूँछें ऐंठते हुए उसने आँखें तरेरकर बूढ़े की तरफ़ देखा।

"मैं इस जुर्म का इकबाल कैसे कर सकता हूँ?" उसने अपनी धीमी सुरीली आवाज़ में कन्धे बिचकाकर उत्तर दिया। "मैंने न किसी का कत्ल किया है, न किसी के घर चोरी की है। मैं तो सिर्फ़ ज़िन्दगी के उस ढर्रे के ख़िलाफ़ हूँ जो लोगों को एक-दूसरे को लूटने और कत्ल करने पर मजबूर कर देता है..."

"संक्षेप में जवाब दो!" बूढ़े ने बड़ी कोशिश करके कहा।

पीछे की बेंचों पर कुछ खलबली हुई लोग कानाफूसी करने लगे और इधर-उधर सरकने लगे, मानो अपने आपको उस शब्दजाल से मुक्त कर रहे हों जो उस चिकनी सूरतवाले ने उनके चारों ओर बुन रखा था।

"सुना, क्या कह रहे हैं वे लोग?" सिजोव ने चुपके से कहा।

"जवाब दो, फ़्योदोर माजिन..."

"नहीं, मैं जवाब नहीं दूँगा!" फ़्योदोर ने उछलकर खड़े होते हुए कहा। उसका चेहरा तमतमाया हुआ था, आँखें चमक रही थीं और न जाने क्यों वह अपने हाथ पीछे किये हुए था।

सिजोव ने एक गहरी साँस ली और माँ की आँखें आश्चर्य से फैल गयीं।

"मैंने अपनी सफ़ाई में वकील करने से इंकार किया था और मैं ख़ुद अपनी सफ़ाई में कुछ कहने से भी इंकार करता हूँ। मैं इस मुक़दमे को ग़ैर-क़ानूनी समझता हूँ! आप हैं कौन? क्या जनता ने आपको हमारा न्याय करने का अधिकार दिया है? नहीं, कभी नहीं दिया और इसीलिए मैं आपके अधिकार को मानने से इंकार करता हूँ!"

वह बैठ गया और उसने अपना तमतमाया हुआ चेहरा अन्द्रेई के कन्धे के पीछे छुपा लिया।

मोटे जज ने बड़े जज की तरफ़ देखकर अपना सिर हिलाया और उसके कान में चुपके से कुछ कहा। पीले चेहरेवाले जज ने अपनी आँखें खोलीं, एक नज़र कैदियों को कनखियों से देखा और अपने सामने रखे हुए काग़ज़ पर पेंसिल से कुछ लिख लिया। जिलाधीश ने अपना सिर हिलाया और अपने पैर खिसकाये ताकि वह अपनी तोंद ज़्यादा आसानी से घुटनों पर टिका सके और उसे अपने हाथों से ढँक सके। अपना सिर घुमाये बिना बूढ़े ने अपना पूरा शरीर उस लाल बालोंवाले जज की तरफ़ मोड़ा और बिना कुछ आवाज़ निकाले अपने होंठ हिलाने लगा। दूसरे जज ने अपना सिर झुका दिया। मार्शल आफ दि नोबिलिटी ने सरकारी वकील से कुछ कहा और मेयर, जो अब तक अपने गाल थपथपा रहा था, उसकी की बात सुनने का प्रयत्न करने लगा। इसके बाद बड़ा जज फिर अपने नीरस स्वर में बोलने लगा।

"सुना, उसने कैसा जवाब दिया उन्हें?" सिजोव ने आश्चर्य के भाव से माँ के कान में कहा। "सबसे अच्छा रहा उसका जवाब!"

माँ परेशान होकर मुस्करा दी। इस समय जो कुछ हो रहा था वह उसे शीघ्र ही होने वाली उस भयानक बात की एक उकता देने वाली और अनावश्यक भूमिका मालूम हो रहा था जिसकी क्रूर भयावहता इन सारी बातों पर छा जानेवाली थी। परन्तु पावेल और अन्द्रेई के शब्दों में उसे वही निर्भीकता और दृढ़ता की गूँज सुनायी दी थी, मानो वे शब्द अदालत में नहीं बल्कि मज़दूरों की बस्ती के उसके छोटे से घर में कहे गये हों। फ़्योदोर के जोशीले भाषण से उसके हृदय में भी उत्साह जागृत हुआ था। इस मुक़दमे में कोई अत्यन्त साहसपूर्ण बात हो रही थी और माँ के पीछे बैठे हुए लोगों की हलचल से यह अन्दाजा होता था कि वह अकेली नहीं थी जिसे इस बात का आभास हो।

"आपकी क्या राय है?" बूढ़े ने पूछा।

गंजा सरकारी वकील उठा और छोटी मेज पर हाथ टिकाकर जल्दी-जल्दी बोलते हुए उसने एक भाषण दिया जिसमें उसने कुछ आँकड़े बताये। उसके स्वर में कोई डरावनी बात नहीं थी।

इसी समय माँ को ऐसा लगा कि उसका हृदय सूखता जा रहा है, जैसे उसके हृदय में चींटियाँ-सी काट रही हैं। उसे वातावरण में किसी द्वेषपूर्ण वस्तु के अस्तित्व का अस्पष्ट-सा आभास हो रहा था, जो अपनी मुट्ठियाँ हिला-हिलाकर चिल्ला तो नहीं रही थी पर चुपके-चुपके बिना किसी के जाने हुए बढ़ती जा रही थी। वह वस्तु जजों के पास मण्डला रही थी और ऐसा प्रतीत होता था कि उसने उन्हें एक अभेद्य बादल में ढँक लिया है जिसके कारण उन पर बाहर की किसी चीज़ का प्रभाव हो ही नहीं सकता। माँ ने जजों की तरफ़ देखा, पर उन्हें समझ न सकी। वे पावेल और फ़्योदोर पर नाराज़ नहीं हुए जैसाकि उसे डर था, उन्होंने उनका अपमान भी नहीं किया और उसे तो ऐसा लगा कि वे जो प्रश्न पूछते थे उनको वे स्वयं भी कोई महत्त्व नहीं देते थे। उनके रवैये में हर चीज़ के प्रति एक उदासीनता थी और वे मजबूर होकर अपने प्रश्नों का उत्तर सुनते थे, मानो सब कुछ उन्हें पहले से ही मालूम हो और किसी बात से कोई फरक पड़नेवाला न हो।

अब राजनीतिक पुलिस का एक सिपाही उनके सामने खड़ा गहरी भारी आवाज़ में कह रहा था :

"पावेल व्लासोव के बारे में कहा जाता है कि वही उकसाने में सबसे आगे था..."

"और नाखोदका?" मोटे जज ने क्षीण स्वर में पूछा।

"वह भी..."

एक वकील उठ खड़ा हुआ।

"मैं एक बात कह सकता हूँ?" उसने पूछा।

"आपको कोई एतराज तो नहीं है?" बूढ़े ने किसी से पूछा।

सभी जज सूरत से बीमार लग रहे थे। उनके हाव-भाव और स्वर से एक अस्वस्थ उकताहट व्यक्त होती थी और उनके चेहरों पर भी यही थकन और उकताहट थी। यह स्पष्ट था कि वे इन सब चीज़ों से तंग आये हुए थे - वर्दियाँ, अदालत, राजनीतिक पुलिस के सिपाही, वकील, अपनी हत्थेदार कुर्सियों पर बैठकर प्रश्न पूछने और मुक़दमे की कार्रवाई सुनने की मजबूरी।

वह पीले चेहरे वाला अफ़सर, जिसे माँ जानती थी, अब उनके सामने खड़ा नाक के सुर में ज़ोर-ज़ोर से पावेल और अन्द्रेई के बारे में जो कुछ वह जानता था बता रहा था।

"तुम्हें बहुत ज़्यादा मालूम नहीं है," उसकी बातें सुनकर माँ सोचने लगी।

माँ ने कटहरे के पीछे बैठे हुए लोगों को देखा, उसे अब उनके लिए न कोई डर था और न उसे उन पर तरस ही आ रहा था। उन पर तरस आ भी कैसे सकता था! उसके हृदय में केवल प्रेम और विस्मय की भावना थी – एक शान्त विस्मय, एक प्रफुल्लित प्रेम। वे दीवार के पास बैठे थे, नौजवानी से भरपूर और दृढ़; वे गवाहों और जजों की नीरस बातों और सरकारी वकील के साथ वकीलों की बहस की ओर प्रायः कोई ध्यान नहीं दे रहे थे। बीच-बीच में उनमें से कोई व्यंगपूर्वक हँस पड़ता और अपने साथियों से कुछ कहता और उन सबके चेहरों पर वही व्यंगपूर्ण मुस्कराहट दौड़ जाती। पावेल और अन्द्रेई प्रायः लगातार ही सफ़ाई के एक वकील से, जिसे माँ ने पिछली रात निकोलाई के घर पर देखा था, कुछ खुसुर-फुसुर कर रहे थे। माजिन, जो दूसरों की अपेक्षा अधिक चंचल और उत्तेजित था, उनकी बातें सुन रहा था। बीच में इवान गूसेव से समोइलोव कुछ कह देता और इवान उसे कुहनी मारकर अपनी हँसी रोकने की इतनी कोशिश करता कि उसका चेहरा लाल हो जाता, गाल फूल जाते और उसे मजबूर होकर अपना सिर नीचे झुका लेना पड़ता। दो बार तो वह ठहाका मारकर हँस भी पड़ा, पर इसके फ़ौरन ही बाद अपनी हँसी को वश में रखने के लिए कुछ देर तक बिल्कुल गठरी बना बैठा रहा। सब कैदी नौजवान थे और उनकी नौजवानी उनके उबलते हुए जोश को दबाने के हर प्रयत्न का मुकाबला कर रही थी।

सिजोव ने धीरे से माँ को कुहनी से ठेला। माँ ने मुड़कर देखा कि वह बहुत ख़ुश है, पर साथ ही चिन्तित भी है।

"ज़रा देखो, ये लड़के कितने हिम्मतवाले हैं!" उसने माँ के कान में कहा। "बिल्कुल किसी की परवाह नहीं करते!"

अदालत के कमरे में गवाह जल्दी-जल्दी और बेदिली से और जज लोग बड़े अनमनेपन तथा उदासीनता से आपस में बातें कर रहे थे। मोटे जज ने अपना मोटा-सा हाथ मुँह के सामने रखकर जम्हाई ली; लाल रंग के गलमुच्छोंवाले जज का चेहरा पहले से भी ज़्यादा पीला पड़ गया था और थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह कनपटी पर उँगली रखकर बड़ी व्यथित मुद्रा बनाकर सूनी आँखों से छत की तरफ़ देखने लगता था। बीच में कभी-कभी सरकारी वकील कुछ लिख लेता और फिर चुपके-चुपके मार्शल आफ दि नोबिलिटी से बातें करने लगता, जो अपनी सफ़ेद दाढ़ी पर हाथ फेरकर अपनी बड़ी-बड़ी ख़ूबसूरत आँखें नचाता और मुस्कराकर अपनी गर्दन पीछे तान लेता। मेयर टाँग पर टाँग रखे बैठा उँगलियों से एक घुटने पर तबला बजा रहा था और अपनी उँगलियों को घूर रहा था। जिलाधीश, जिसने अपनी तोंद घुटनों पर टिकाकर उसे अपनी बाँहों में जकड़ रखा

था, वहाँ पर शायद एकमात्र ऐसा व्यक्ति था जो इन सब आवाज़ों की उकता देने वाली भनभनाहट सुन रहा था। सम्भव है कि वह बूढ़ा भी, जो इस तरह निश्चल बैठा था जैसे हवा न चलने पर वायु की दिशा बतानेवाली पंखी निश्चल हो जाती है, इस श्रेय का अधिकारी रहा हो। यह ढोंग इतनी देर तक चलता रहा कि दर्शकगण उकताहट के कारण बिल्कुल शिथिल हो गये।

"मैं ऐलान करता हूँ..." बूढ़े ने खड़े होकर कहा। बाक़ी शब्द उसके पतले होठों में खोकर रह गये।

लोगों के आहें भरने, सहसा चौंककर कुछ कहने, खाँसने और पैर खिसकाने की आवाज़ें सुनायी दे रही थीं। कैदियों को वहाँ से बाहर ले जाया गया। वे अपने सगे-सम्बन्धियों और मित्रों को देखकर मुस्कराये और उन्होंने सिर हिलाकर उनका अभिवादन किया।

"येगोर, हिम्मत न हारना!" इवान गूसेव ने चिल्लाकर कहा।

माँ और सिजोव बाहर बरामदे में चले गये।

"चलकर कहीं एक-एक प्याली चाय न पी आयें?" बूढ़े ने पूछा। "अभी तो डेढ़ घण्टे का वक़्त है हमारे पास।"

"मेरा जी नहीं चाह रहा है।"

"जी तो मेरा भी नहीं चाह रहा है। क्या ख़याल है तुम्हारा उन लड़कों के बारे में, क्यों? वे वहाँ इस शान से बैठे थे जैसे दुनिया में उनके अलावा और कोई है ही नहीं, उन्हें और किसी बात की बिल्कुल परवाह ही नहीं थी। वह फ़्योदोर!"

समोइलोव का बाप अपनी हैट हाथ में लिये उनके पास आया।

"तुमने मेरे ग्रिगोरी को देखा?" उसने उदास मुस्कराहट के साथ कहा। "उसने अपनी तरफ़ से कोई सफ़ाई पेश करने से बिल्कुल इंकार कर दिया, उनसे बात तक नहीं की। सबसे पहले उसी ने यह किया। पेलागेया, तुम्हारा बेटा वकील करने के हक में था, पर मेरे बेटे ने साफ़ इंकार कर दिया! उसके बाद चार और लोगों ने इंकार किया..."

उसकी पत्नी उसके पास ही खड़ी थी। वह तेज़ी से पलकें झपकाकर अपने आँसू रोक रही थी और रूमाल के एक कोने से नाक पोंछती जाती थी।

"बड़ी अजीब बात है!" समोइलोव अपनी दाढ़ी पकड़े फ़र्श पर नज़रें जमाये हुए कहता रहा। "इन शैतानों को देखकर बड़ा अफसोस होता है कि ये नाहक इस झमेले में फँस गये। फिर यह भी ख़याल होता है कि मुमकिन है वे ठीक ही हों? ख़ासतौर पर जब हम देखते हैं कि कारख़ाने में उनकी तादाद कितनी तेज़ी से बढ़ती जा रही है। पुलिस एक-एक करके सबको गिरफ़्तार करती जाती है, पर उनकी तादाद नदी में मछलियों की तरह बढ़ती जाती है! यह देखकर

ख़्याल होता है कि शायद ताकत उन्हीं की तरफ़ हो?"

"स्तेपान पेत्रोविच, हम लोगों के लिए इन बातों का सिर-पैर समझना मुश्किल है!" सिजाव ने कहा।

"हाँ, मुश्किल तो है!" समोइलोव ने सहमति प्रकट की।

"कमबख्त, बड़े ही हृष्ट-पुष्ट हैं सबके सब," समोइलोव की पत्नी ने ज़ोर से नाक से साँस लेते हुए कहा।

फिर वह अपने चौड़े भरे हुए चेहरे पर मुस्कराहट लाकर माँ को सम्बोधित करके बोली :

"निलोवना, मुझसे खफा न होना - अभी थोड़ी देर पहले मैं तुम्हारे बेटे को दोष दे रही थी। मगर भगवान ही जानता है कि दोष सबसे ज़्यादा किसका है! तुमने सुना राजनीतिक पुलिस के सिपाहियों और जासूसों ने हमारे ग्रिगोरी के बारे में क्या कहा। उस लाल बालों वाले शैतान ने भी कुछ कम हिस्सा नहीं लिया था इन सब बातों में!"

उसे अपने बेटे पर गर्व था, पर शायद वह स्वयं भी अपनी भावनाओं को नहीं समझ पा रही थी; पर माँ उसकी भावनाओं को अच्छी तरह समझती थी, इसलिए उसने बड़े प्यार से मुस्कराकर हृदय से निकले हुए शब्दों में उत्तर दिया :

"नौजवानों के दिल सच्चाई को हमेशा ज़्यादा जल्दी पहचान लेते हैं..."

लोग बरामदे में टहल रहे थे और छोटे-छोटे झुण्ड बनाकर धीमी पर उत्तेजित आवाज़ में बातें कर रहे थे। शायद ही कोई ऐसा रहा हो जो अकेला खड़ा हो। हर व्यक्ति के चेहरे पर बात करने, सवाल पूछने और दूसरों की बातें सुनने की उत्सुकता थी। वे दीवारों के बीच उस पतले से सफ़ेद गलियारे में इस तरह टहल रहे थे, मानो तेज़ हवा उन्हें उड़ाये ले जा रही हो; ऐसा प्रतीत होता था कि वे किसी ऐसी ठोस चीज़ की तलाश में थे जिस पर वे लंगर डाल सकें।

बुकिन का बड़ा भाई, जो एक लम्बा-सा आदमी था और अपने भाई की तरह ही गोरा था, ज़ोर-ज़ोर से हाथ हिलाकर कुछ साबित करने की कोशिश कर रहा था।

"वह क्लेपानोव, जिलाधीश, उसे यहाँ होने का कोई हक ही नहीं है..."

"कोंस्तान्तीन, बस चुप रहो!" एक नाटे कद के बूढ़े ने, जो उसका बाप था, चारों तरफ़ जल्दी से देखकर कहा।

"नहीं, मैं चुप नहीं रहूँगा! सुना गया है कि पारसाल उसने अपने एक क्लर्क को उसकी पत्नी के चक्कर में मार डाला और अब वह उसी औरत के साथ रहता है। आख़िर यह क्या है? इसके अलावा, हर आदमी जानता है कि वह चोर है..."

"कोंस्तान्तीन, ईश्वर के लिए चुप रहो!"

“ठीक तो कहता है!” समोइलोव ने कहा। “बिल्कुल ठीक है! कोई नहीं कह सकता कि इस मुक़दमे में इंसाफ़ हो रहा है...”

बुकिन ने उसकी बात सुनी और अपने साथियों को लिये हुए वहीं आ गया। उसका चेहरा लाल हो रहा था और वह अपने दोनों हाथ हिला-हिलाकर बोल रहा था :

“जब कोई कत्ल या चोरी का मामला होता है तो जूरी के सामने मुक़दमा पेश होता है, जिसमें आम लोग होते हैं - किसान, शहर के लोग!” उसने चिल्लाकर कहा। “लेकिन जब लोग हाकिमों को विरोध करते हैं तो यही हाकिम उनके मुक़दमे को फ़ैसला करते हैं। आख़िर यह क्या है? अगर कोई आदमी मेरा अपमान करे और मैं उसके जबड़े पर एक घूँसा रसीद कर दूँ और वही आदमी मेरा फ़ैसला करने के लिए बिठा दिया जाये तो वह तो मुझे अपराधी ठहरायेगा ही। लेकिन इसमें पहले गलती किसने की? उसने!”

एक सफ़ेद बालों वाले सन्तरी ने, जिसकी नाक बिल्कुल तोते की चोंच जैसी थी और सीना तमगों से ढँका हुआ था, भीड़ को तितर-बितर कर दिया और बुकिन की तरफ़ उँगली हिलाकर बोला :

“चिल्लाओ नहीं! यह शराबख़ाना नहीं है!”

“ठीक है, मैं भी जानता हूँ! लेकिन अगर मैं तुम्हें मारूँ और ख़ुद ही फ़ैसला करने बैठ जाऊँ, तो तुम्हारे ख़याल से मैं किसे...”

“मेरा ख़याल तो यह है कि मैं तुम्हें यहाँ से बाहर निकाल दूँगा, और कुछ नहीं होगा!” सन्तरी ने धमकाते हुए कहा।

“मुझे निकाल दोगे? किस लिए?”

“इतना शोर जो मचा रहे हो। सड़क पर निकाल दूँगा...”

बुकिन ने अपने चारों ओर खड़े हुए लोगों को देखा।

“वे सब लोगों की जबान बन्द रखना चाहते हैं...” उसने आवाज़ धीमी करके कहा।

“क्यों न जबान बन्द रखें। तुमने समझ क्या रखा है?!” बूढ़े ने रुखाई से चिल्लाकर कहा।

बुकिन ने अपने कन्धे बिचका दिये और धीमी आवाज़ में बोलने लगा।

“आख़िर लोगों को मुक़दमे की कार्रवाई सुनने की इजाजत क्यों नहीं दी जाती? सिर्फ़ रिश्तेदारों ही को क्यों इजाजत है? अगर मुक़दमा इंसाफ़ से हो रहा है, तो सबको सुनने दो! डर किस बात का है?”

“मुक़दमा तो इंसाफ़ से नहीं हो रहा है, इसमें तो किसी को भी शक नहीं हो सकता!..” समोइलोव ने ऊँचे स्वर में ज़ोर देकर कहा।

माँ उसे बताना चाहती थी कि उसने निकोलाई को मुक़दमे के बारे में क्या कहते सुना था, पर पहली बात तो यह कि वह सब कुछ समझी नहीं थी और फिर वह कुछ शब्द भूल भी गयी थी। इन शब्दों को याद करने का प्रयत्न करती हुई वह एक तरफ़ को चली गयी और उसने देखा कि सुनहरी मूँछोंवाला एक नौजवान उसे देख रहा है। वह दाहिना हाथ अपने पतलून की जेब में डाले हुए था जिसके कारण उसका बायाँ कन्धा दाहिने कन्धे से कुछ नीचा लग रहा था, माँ को उसकी यह विशिष्टता कुछ पहचानी हुई मालूम हुई। पर उसने जल्दी से अपनी पीठ फेर ली और माँ उसे भूल गयी, वह अपने विचारों में खोयी हुई थी।

लेकिन एक मिनट बाद उसने किसी को चुपके से पूछते सुना :

"कौन, वह?"

"हाँ!" किसी ने ख़ुशी-भरी ज़ोरदार आवाज़ में उत्तर दिया।

माँ ने मुड़कर चारों तरफ़ नज़र दौड़ायी। वह नौजवान, जिसका एक कन्धा ऊँचा था, पास ही खड़ा एक दूसरे नौजवान से बातें कर रहा था जिसके काली दाढ़ी थी और जो छोटा-सा कोट और घुटनों तक के बूट पहने था।

माँ ने परेशान होकर याद करने का प्रयत्न किया कि उसने उसे कहाँ देखा था, पर उसे याद न आया। उसकी प्रबल इच्छा हो रही थी कि वह लोगों को अपने बेटे के ध्येय के बारे में बताये। वह जानना चाहती थी कि आख़िर लोग उसके ख़िलाफ़ क्या कहते हैं, ताकि वह अन्दाजा लगा सके कि मुक़दमे का फ़ैसला क्या होगा।

"क्या यही तरीक़ा है मुक़दमा चलाने का?" उसने सतर्क रहकर सिजोव से कहना आरम्भ किया। "वे सारी देर यही मालूम करने का प्रयत्न करते हैं कि किसने क्या किया, इस ओर कोई ध्यान ही नहीं देता कि आख़िर उन्होंने ऐसा क्यों किया। और वे सब बूढ़े हैं। नौजवानों का मुक़दमा तो नौजवानों के सामने पेश होना चाहिए..."

"होना तो यही चाहिए," सिजोव ने सहमति प्रकट की। "हमारे लिए ये सब बातें समझना बहुत कठिन है, बहुत ही कठिन!" उसने विचारमग्न होकर अपना सिर हिलाया।

सन्तरी ने अदालत के कमरे का दरवाज़ा खोल दिया।

"कैदियों के रिश्तेदार! अपना टिकट दिखायें..." उसने आवाज़ लगायी।

"टिकट!" किसी ने व्यंग्य से कहा। "क्या कोई सर्कस है!"

लोगों में एक अस्पष्ट-सी झुँझलाहट दिखायी पड़ रही थी। वे ज़्यादा बातें कर रहे थे, उनका तनाव कम हो गया था और वे बात-बात पर सन्तरियों से उलझ पड़ते थे।

25

सिजोव ने बेंच पर अपनी जगह बैठते हुए बुदबुदाकर कुछ कहा।

"क्या हुआ?" माँ ने पूछा।

"कोई ख़ास बात नहीं! लोग बेवक़ूफ़ हैं..."

घण्टी बजी। किसी ने निरपेक्ष भाव में घोषणा की :

"जज आ रहे हैं!.."

जजों ने फिर लाइन लगाकर कमरे में प्रवेश किया और अपनी-अपनी जगहों पर उसी क्रम से बैठ गये जैसे पहले बैठे थे। जजों के आते ही सब लोग एक बार फिर खड़े हो गये। कैदियों को उनकी जगहों पर पहुँचाया गया।

"ज़रा कलेजा थामकर बैठो!" सिजोव ने मन्द स्वर में कहा। "सरकारी वकील भाषण करने जा रहे हैं।"

माँ किसी भयानक बात की नयी आशंका से अपना पूरा शरीर आगे झुकाकर ध्यान से सुनने लगी।

सरकारी वकील जजों के बगल में उनकी तरफ़ मुँह किये एक कुहनी मेज पर टिकाये खड़ा था। गहरी साँस लेकर और अपना दाहिना हाथ घुमाकर वह बोलने लगा। उसके पहले शब्द माँ को ठीक से सुनायी नहीं दिये। उसकी आवाज़ मोटी और प्रवाहमय थी पर प्रवाह की गति में असमानता थी – कभी तेज़ हो जाती थी, कभी धीमी। थोड़ी देर तक तो शब्द धीरे-धीरे और समान गति से आते रहते थे जैसे कोई बड़ी मेहनत से टप्पे डाल रहा हो फिर सहसा वे दल बाँधकर इस तरह गूँज उठते जैसे गुड़ पर मक्खियाँ भिनभिनाती हैं। पर माँ को इन शब्दों में कोई भयानक बात प्रतीत नहीं हुईं ये शब्द, जो बर्फ़ की तरह सर्द और राख की तरह बेरंग थे, कमरे के वातावरण में तैर रहे थे और धीरे-धीरे उसमें एक ऐसी वस्तु का संचार कर रहे थे जो बहुत बारीक सूखी धूल की तरह अरुचिकर थी। यह भाषण, जिसमें इतना प्रवाह होते हुए भी भावनाओं का सर्वथा अभाव था, पावेल और उसके साथियों के कानों तक मानो पहुँच ही नहीं रहा था; कम से कम उन पर इसका कोई प्रभाव नहीं हो रहा था। वे वहाँ पहले की तरह ही निश्चिन्त भाव से बैठे थे, चुपके-चुपके आपस में बातें कर रहे थे, कभी-कभी मुस्करा देते और कभी अपनी हँसी छुपाने के लिए त्योरियाँ चढ़ा लेते।

"झूठ बोलता है!" सिजोव ने दबी जबान में कहा।

माँ इस विषय में निश्चय के साथ कुछ भी न कह सकती थी। सरकारी वकील बिना किसी अपवाद के सभी कैदियों पर आरोप लगा रहा था। पावेल के बारे में कह चुकने के बाद उसने फ़्योदोर के बारे में बोलना शुरू किया और जब वह फ़्योदोर के बारे में सब कुछ कह चुका, तो उसने बुकिन की ख़बर लेना शुरू

किया। ऐसा प्रतीत होता था कि वह एक-एक करके उनको बड़ी विधि से एक थैले में रखता जा रहा है। पर उसके शब्दों के शाब्दिक अर्थ से माँ सन्तुष्ट नहीं थी; इन शब्दों को सुनकर न वह उत्तेजित हो रही थी न भयभीत ही। उसके हृदय में अभी तक किसी भयावह चीज़ की आशंका बनी हुई थी और वह इन शब्दों से परे – उसके चेहरे में, उसकी आँखों में, उसकी आवाज़ में, उसके उस सफ़ेद हाथ में जिसे वह लगातार बड़े अन्दाज से हिला रहा था – उस भयावह वस्तु को खोजने लगी। वहाँ कोई भयावह चीज़ थी ज़रूर। माँ जानती थी कि वह है, पर अपने हृदय की चेतावनी के बावजूद वह उसे पकड़ नहीं पा रही थी, उसकी व्याख्या नहीं कर पा रही थी।

उसने जजों की तरफ़ देखा। वे सरकारी वकील के भाषण से ऊब गये थे। उनके निष्प्राण, बेरंग और पीले चेहरों पर कोई भाव व्यक्त नहीं हो रहा था। सरकारी वकील के शब्दों से एक अदृश्य कुहरा-सा छा गया, यह कुहरा जजों के चारों तरफ़ बहुत घना हो गया था और उसने उन्हें उदासीनता और शैथिल्यपूर्ण प्रतीक्षा के बादलों में छुपा लिया था। बड़ा जज लकड़ी की तरह सीधा तनकर बैठा हुआ था और थोड़ी-थोड़ी देर बाद उसकी ऐनक के पीछेवाले दो बेरंग धब्बे द्रवीभूत होकर उसकी मुखाकृति के विवर्ण विस्तार में घुल-मिल जाते थे।

इस निश्चेत उदासीनता, इस भावहीन विरक्ति को देखकर माँ के मन में बरबस यह प्रश्न उठता था :

"क्या ये लोग सचमुच इंसाफ़ करने बैठे हैं?"

यह प्रश्न उठते ही उसका हृदय संकुचित हो उठा, धीरे-धीरे उसके हृदय से सारा भय निचुड़ गया और उसमें केवल ठेस की एक तीव्र भावना बाक़ी रह गयी।

सरकारी वकील का भाषण अचानक समाप्त हो गया। उसने भाषण समाप्त करते हुए कुछ टप्पे और मारे और जजों की तरफ़ बड़े सम्मान से झुककर बैठ गया और अपने हाथ मलने लगा। मार्शल आफ दि नोबिलिटी ने उसकी तरफ़ देखकर सिर हिलाया और अपनी आँखें नचाने लगा; मेयर ने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया और जिलाधीश बैठा अपनी तोंद को घूरता रहा और मुस्कराता रहा।

यह बात स्पष्ट थी कि जज उसके भाषण से ख़ुश नहीं थे। उन पर कोई प्रभाव नहीं हुआ।

"अब," बूढ़े ने एक काग़ज़ अपनी आँखों के बहुत पास लाकर कहना शुरू किया, "अदालत फेदोसेयेव, मारकोव और जगारोव के वकील का बयान सुनेगी।"

वह वकील, जिसे माँ ने निकोलाई के घर पर देखा था, उठकर खड़ा हुआ।

उसका चेहरा चौड़ा और हँसमुख था; उसकी छोटी-छोटी आँखें इस तरह चमकती थीं, मानो उसकी लाल भवों के नीचे से दो तेज़ छुरियाँ बाहर निकली हुई हों जो कैंचियों की तरह हवा को काट रही थीं। वह ऊँचे स्वर में, साफ़-साफ़ और बड़े इत्मीनान से बोल रहा था, पर माँ उसका भाषण समझ नहीं सकी।

"समझीं उसने क्या कहा?" सिजोव ने चुपके से माँ के कान में कहा। "समझीं? उसने कहा कि कैदी उस वक़्त अपने होश में नहीं थे। मेरा फ़्योदोर तो ऐसा नहीं मालूम होता।"

माँ इतनी क्षुब्ध थी कि वह कोई उत्तर न दे सकी। उसकी ठेस की भावना बढ़ती गयी, यहाँ तक कि वह उसके दिल पर एक बोझ बन गयी। अब उसकी समझ में साफ़ आ रहा था कि उसने न्याय की आशा की थी। उसे आशा थी कि उसके बेटे और उस पर आरोप लगाने वालों के बीच बड़ी ईमानदारी से फ़ैसला किया जायेगा, उसे आशा थी कि जज उससे बड़ी देर तक और बहुत ध्यान देकर यह मालूम करने का प्रयत्न करेंगे कि किन भावनाओं ने उसे ऐसा करने पर उत्प्रेरित किया; कि वे उसके समस्त विचारों तथा कर्मों को पैनी दृष्टि से जाँचेंगे। और जब वे सच्चाई को देखेंगे, तो वे न्यायप्रियता के साथ ऊँचे स्वर में घोषणा करेंगे :

"यह आदमी सही है!"

पर यह कुछ भी नहीं हुआ। ऐसा प्रतीत होता था कि अभियुक्तों और जजों के बीच एक अपार दूरी थी और यह स्पष्ट था कि कैदियों के लिए ये जज बिल्कुल बेकार थे। अपनी थकन के कारण माँ को मुक़दमे की कार्रवाई में कोई दिलचस्पी नहीं रह गयी और जो कुछ वहाँ कहा जा रहा था उसे वह अब सुन भी नही रही थी।

"मुक़दमा इसी को कहते हैं?" उसने झुँझलाकर अपने मन में सोचा।

"कस-कसके लगाये जाओ!" सिजोव ने प्रशंसा के भाव से दबे स्वर में कहा।

इस समय एक दूसरा वकील बोल रहा था। वह एक छोटे-से डीलडौल का आदमी था, नाक-नक्शा बहुत उभरा हुआ, चेहरे का रंग पीला, ऐसा मालूम होता था कि मुँह चिढ़ा रहा है। जज बीच-बीच में उसे टोकते जा रहे थे।

सरकारी वकील सहसा क्रोध में आकर उछल खड़ा हुआ और उसने अदालत की कार्रवाई के बारे में कुछ कहा जिस पर बूढ़े जज ने उसे धीरे से मना लिया। वकील बड़े सम्मान से सिर झुकाये सुनता रहा और फिर उसने अपना भाषण जारी रखा।

"बात की तह तक पहुँच जाओ!" सिजोव ने कहा।

वकील के तीक्ष्ण आरोप इन मोटी खालवाले जजों पर छुरी की तरह वार कर रहे थे; श्रोताओं की उत्तेजना बढ़ती जा रही थी। ऐसा प्रतीत होता था कि उसके वाक्चातुर्य के तीखे प्रहार का मुकाबला करने के लिए तीनों जज मुँह लटकाये उदास-उदास-से एक-दूसरे से सटे बैठे थे।

इसके बाद पावेल उठकर खड़ा हुआ और कमरे में बिल्कुल ख़ामोशी छा गयी। माँ आगे झुककर सुनने लगी। पावेल बड़े शान्त भाव से बोल रहा था।

"पार्टी के एक सदस्य की हैसियत से मैं केवल अपनी पार्टी के फ़ैसले को ही मानता हूँ, इसलिए मैं अपनी सफ़ाई में कुछ नहीं कहूँगा; लेकिन अपने साथियों के कहने पर, जिन्होंने भी अपनी सफ़ाई में कुछ कहने से इंकार कर दिया है, मैं आप लोगों को कुछ ऐसी बातें समझाने की कोशिश करूँगा जिन्हें आप नहीं समझ सके हैं। सरकारी वकील ने कहा है कि सामाजिक-जनवाद के झण्डे के नीचे हमारा प्रदर्शन शासन-सत्ता के ख़िलाफ़ विद्रोह था और उसने हमेशा हमें इस नज़र से देखा है कि हम ज़ार का तख़्ता उलटने की कोशिश कर रहे थे। मैं इस बात को साफ़ कर देना चाहता हूँ कि हम ज़ार के निरंकुश शासन को एकमात्र बँधन नहीं समझते जिसने हमारे देश को जकड़ रखा है; यह केवल पहली जंजीर है जिससे अपने देश की जनता को मुक्त कराना हमारा कर्तव्य है..."

पावेल अपने दृढ़ स्वर में बोलता रहा और कमरे में निस्तब्धता और गहरी होती गयी; ऐसा प्रतीत होता था कि वह कमरा बड़ा होता जा रहा है और पावेल का कद कुछ और बढ़ गया है और वह सब पर छाया हुआ है।

जज कुछ बेचैन होकर अपनी कुर्सियों पर पहलू बदल रहे थे। मार्शल आफ दि नोबिलिटी ने उस उदासीन सूरतवाले जज के कान में कुछ कहा और उसने सिर हिलाकर बूढ़े जज के दाहिने कान में कुछ कहा और इसी समय उस बीमार सूरतवाले जज ने उसके बायें कान में कुछ कहा। दाहिनी बायीं दोनों तरफ़ डोलने से झुँझलाकर बूढ़े जज ने ऊँचे स्वर में कुछ कहा, पर पावेल के भाषण के पाटदार तथा सुगम प्रवाह में उसकी आवाज़ डूबकर रह गयी।

"हम समाजवादी हैं। इसका मतलब है कि हम निजी सम्पत्ति के ख़िलाफ़ हैं; निजी सम्पत्ति की पद्धति समाज को छिन्न-भिन्न कर देती है, लोगों को एक-दूसरे का दुश्मन बना देती है, लोगों के परस्पर हितों में एक ऐसा द्वेष पैदा कर देती है जिसे मिटाया नहीं जा सकता, इस द्वेष को छुपाने या न्याय-संगत ठहराने के लिए वह झूठ का सहारा लेती है और झूठ, मक्कारी और घृणा से हर आदमी की आत्मा को दूषित कर देती है। हमारा विश्वास है कि वह समाज, जो इंसान को केवल कुछ दूसरे इंसानों को धनवान बनाने का साधन समझता है, अमानुषिक है और हमारे हितों के विरुद्ध है। हम ऐसे समाज की झूठ और मक्कारी

से भरी हुई नैतिक पद्धति को स्वीकार नहीं कर सकते। व्यक्ति के प्रति उसके रवैये में जो बेहयाई और क्रूरता है उसकी हम निन्दा करते हैं। इस समाज ने व्यक्ति पर जो शारीरिक तथा नैतिक दासता थोप रखी है, हम उसके हर रूप के ख़िलाफ़ लड़ना चाहते हैं और लड़ेंगे; कुछ लोगों के स्वार्थ और लोभ के हित में इंसानों को कुचलने के जितने साधन हैं हम उन सबके ख़िलाफ़ लड़ेंगे। हम मज़दूर हैं; हम वे लोग हैं जिनकी मेहनत से बच्चों के खिलौनों से लेकर बड़ी–बड़ी मशीनों तक दुनिया की हर चीज़ तैयार होती है; फिर भी हमें ही अपनी मानवोचित प्रतिष्ठा की रक्षा करने के अधिकार से वंचित रखा जाता है। कोई भी अपने निजी स्वार्थ के लिए हमारा शोषण कर सकता है। इस समय हम कम से कम इतनी आजादी हासिल कर लेना चाहते हैं कि आगे चलकर हम सारी सत्ता अपने हाथों में ले सकें। हमारे नारे बहुत सीधे–सादे हैं : निजी सम्पत्ति का नाश हो – उत्पादन के सारे साधन जनता की सम्पत्ति हों – सत्ता जनता के हाथ में हो – हर आदमी को काम करना चाहिए। अब आप समझ गये होंगे कि हम विद्रोही नहीं हैं!"

पावेल धीरे से मुस्कराया और धीरे–धीरे अपने बालों में उँगलियाँ फेरने लगा। उसकी नीली आँखों की चमक पहले से बहुत बढ़ गयी थी।

"मैं तुमसे कहता हूँ कि बस मतलब भर की बात कहो!" बूढ़े ने ज़ोर से स्पष्ट स्वर में कहा और पावेल की ओर मुड़कर देखा। माँ की कल्पना में यह बात आयी कि उस जज की निस्तेज बायीं आँख में लोलुपता और कुत्सा की चमक थी। तीनों जज उसके बेटे को देख रहे थे, उनकी नज़रें उसके चेहरे पर जमी हुई थीं, ऐसा मालूम होता था कि वे अपनी पैनी नज़रों से उसकी शक्ति चूसे ले रहे हैं; वे उसके ख़ून के प्यासे लग रहे थे, मानो इससे उनके शक्तिहीन शरीर में फिर से जान आ जायेगी। परन्तु पावेल अपना लम्बा–चौड़ा बलिष्ठ शरीर लिये साहस के भाव से सीधा तनकर खड़ा था और अपना हाथ उठाकर कह रहा था :

"हम क्रान्तिकारी हैं और उस वक़्त तक क्रान्तिकारी रहेंगे जब तक इस दुनिया में यह हालत रहेगी कि कुछ लोग सिर्फ़ हुक्म देते हैं और कुछ लोग सिर्फ़ काम करते हैं। हम उस समाज के ख़िलाफ़ हैं जिसके हितों की रक्षा करने की आप जज लोगों को आज्ञा दी गयी है। हम उसके कट्टर दुश्मन हैं और आपके भी और जब तक इस लड़ाई में हमारी जीत न हो जाये, हमारी और आपकी कोई सुलह मुमकिन नहीं है। और हम मज़दूरों की जीत यकीनी है! आपके मालिक उतने ताकतवर नहीं हैं जितना कि वे अपने आपको समझते हैं। वही सम्पत्ति जिसे बटोरने और जिसकी रक्षा करने के लिए वे अपने एक इशारे पर लाखों लोगों की जान कुर्बान कर देते हैं, वही शक्ति जिसकी बदौलत वे हमारे ऊपर शासन करते

हैं, उनके बीच आपसी झगड़ों का कारण बन जाती है और उन्हें शारीरिक तथा नैतिक रूप से नष्ट कर देती है। सम्पत्ति की रक्षा करने के लिए उन्हें बहुत भारी क़ीमत चुकानी पड़ती है। असल बात तो यह है कि आप सब लोग, जो हमारे मालिक बनते हैं, हमसे ज़्यादा गुलाम हैं। हमारा तो सिर्फ़ शरीर गुलाम है, लेकिन आपकी आत्माएँ गुलाम हैं। आपके कन्धे पर आपकी आदतों और पूर्व–धारणाओं का जो जुआ रखा है उसे आप उतारकर फेंक नहीं सकते। लेकिन हमारी आत्मा पर कोई बन्धन नहीं है। आप हमें जो ज़हर पिलाते रहते हैं वह उन ज़हरमार दवाओं से कहीं कमज़ोर होता है जो आप हमारे दिमागों में अपनी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ उँड़ेलते रहते हैं। हमारी चेतना दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है ओर सबसे अच्छे लोग, वे सभी लोग जिनकी आत्माएँ शुद्ध हैं हमारी ओर खिंचकर आ रहे हैं; इनमें आपके वर्ग के लोग भी हैं। आप ही देखिये – आपके पास कोई ऐसा आदमी नहीं है जो आपके वर्ग के सिद्धान्तों की रक्षा कर सके; आपके वे सब तर्क खोखले हो चुके हैं जो आपको इतिहास के न्याय के घातक प्रहार से बचा सकें, आपमें नये विचारों को जन्म देने की क्षमता नहीं रह गयी है, आपकी आत्माएँ निर्जन हो चुकी हैं। हमारे विचार बढ़ रहे हैं, अधिक शक्तिशाली होते जा रहे हैं, वे जन–साधारण में प्रेरणा फूँक रहे हैं और उन्हें स्वतन्त्रता के संग्राम के लिए संगठित कर रहे हैं। यह जानकर कि मज़दूर वर्ग की भूमिका कितनी महान है, सारी दुनिया के मज़दूर एक महान शक्ति के रूप में संगठित हो रहे हैं – नया जीवन लाने की जो प्रक्रिया चल रही है, उसके मुकाबले में आपके पास क्रूरता और बेहयाई के अलावा और कुछ नहीं है। परन्तु आपकी बेहयाई बहुत भोंडी है और आपकी क्रूरता से हमारा क्रोध और बढ़ता है। जो हाथ आज हमारा बला घोंटने के लिए इस्तेमाल किये जाते हैं वही कल साथियों की तरह हमारे हाथ थाम लेने को आगे बढ़ेंगे। आपकी शक्ति धान बढ़ाते रहने की मशीनी शक्ति है, उसने आपको ऐसे दलों में बाँट दिया है जो एक–दूसरे को खा जाना चाहते हैं। हमारी शक्ति सारी मेहनतकश जनता की एकता की निरन्तर बढ़ती हुई चेतना की जीवन–शक्ति में है। आप लोग जो कुछ करते हैं वह पापियों का काम है, क्योंकि वह लोगों को गुलाम बना देता है। आप लोगों के मिथ्या प्रचार और लोभ ने पिशाचों और राक्षसों की अलग एक दुनिया बना दी है जिसका काम लोगों को डराना–धमकाना है। हमारा काम जनता को इन पिशाचों से मुक्त कराना है। आप लोगों ने मनुष्य को जीवन से अलग करके उसे नष्ट कर दिया है; समाजवाद आपके हाथों टुकड़े–टुकड़े की गयी दुनिया को जोड़कर एक महान रूप देता है और यह होकर रहेगा!"

पावेल रुका और उसने एक बार फिर ज़्यादा ज़ोर देकर पर धीमे स्वर में

कहा :

"यह होकर रहेगा!"

जज आपस में कानाफूसी करने और तरह-तरह के मुँह बनाने लगे, पर उन्होंने अपनी ललचायी हुई नज़रें पावेल के चेहरे पर से नहीं हटायीं। माँ को ऐसा लगा कि वे अपनी वक्र दृष्टि से, जिसमें पावेल के स्वास्थ्य और बल तथा स्फूर्ति के प्रति ईर्ष्या भरी हुई थी, उसके बलिष्ठ शरीर को विषाक्त कर रहे हैं। कैदी अपने साथी का भाषण बड़े ध्यान से सुन रहे थे, उनके चेहरों का रंग यद्यपि पीला था, पर उनकी आँखें हर्ष से चमक रही थीं। माँ अपने बेटे के शब्दों को अमृत की बूँदों की तरह पी रही थी और वे उसके मस्तिष्क पर इस प्रकार अंकित हो गये, मानो किसी ने वे पंक्तियाँ उसके मस्तिष्क पर गर्म लोहे से दाग दी हों। कई बार किसी न किसी बात के स्पष्टीकरण के लिए बूढ़े जज ने पावेल को बीच में टोका और एक बार तो वह उदास भाव से मुस्कराया भी। पावेल हर बार रुक जाता, पर फिर शान्त दृढ़ता के साथ बोलने लगता जिसके कारण लोग उसकी बात सुनने पर बाध्य होते; उसकी इच्छाशक्ति ने जजों की इच्छाशक्ति को अपने वश में कर लिया था। परन्तु आख़िरकार बूढ़ा जज हाथ उठाकर कुछ चिल्लाया, इस पर पावेल के स्वर में किंचित व्यंग्य का पुट आ गया।

"मैं बस खतम ही कर रहा हूँ। मैं आपकी निजी भावनाओं को कोई ठेस पहुँचाना नहीं चाहता, बल्कि इसके विपरीत जब मैं यहाँ बैठा अपनी इच्छा के विरुद्ध आपके इस ढोंग को देख रहा था, जिसे आप मुक़दमा कहते हैं, तो मुझ आपके साथ बड़ी हमदर्दी होने लगी। आख़िरकार आप भी इंसान हैं और किसी भी इंसान को, चाहे वह हमारे लक्ष्य का दुश्मन ही क्यों न हो, पाशविक बल की सेवा में इतने लज्जास्पद ढंग से पतित होते देखकर, मानव सम्मान की भावना से इतनी पूर्णत: वंचित देखकर, बड़े अपमान का अनुभव होता है..."

यह कहकर वह जजों की तरफ़ देखे बिना बैठ गया, पर माँ दम साधे उन्हें देखती रही।

कसकर पावेल का हाथ दबाते समय अन्द्रेई का चेहरा खिल उठा। समोइलोव, माजिन और दूसरे अभियुक्त उसकी तरफ़ आगे झुके और उनके इस प्रशंसा के व्यवहार पर पावेल कुछ शरमाकर मुस्करा दिया। उसने माँ की ओर देखकर इस भाव से सिर हिलाया, मानो पूछ रहा हो :

"तुम सन्तुष्ट तो हो?"

माँ ने एक हर्ष-भरी आह से उसका उत्तर दिया और उसके चेहरे पर ममता की एक लहर दौड़ गयी।

"अब असली मुक़दमा शुरू होता है!" सिजोव ने मन्द स्वर में कहा।

"उसने बहुत खरी-खरी सुना दी, क्यों है न?"

माँ ने बिना कुछ उत्तर दिये सिर हिला दिया, उसे इस बात की ख़ुशी थी कि उसका बेटा इतना निडर होकर बोला था – शायद उसे इस बात की और भी ज़्यादा ख़ुशी थी कि उसने अपना भाषण समाप्त कर लिया था। परन्तु एक प्रश्न उसके मस्तिष्क को निरन्तर कोंचता रहा :

"अब वे क्या करेंगे?"

26

उसके बेटे ने कोई बात ऐसी नहीं कही थी जो माँ के लिए नयी रही हो। माँ उसके सभी विचारों से भली भाँति परिचित थी, पर यहाँ अदालत के सामने पहली बार उसे यह आभास हुआ कि उसका बेटा जिस विचारधारा का अनुयायी है उसमें कितना विचित्र आकर्षण है। पावेल के गम्भीर तथा शान्त स्वभाव पर माँ को आश्चर्य हुआ और उसका भाषण तो उसके लिए एक ऐसे चमकदार सितारे की तरह था जो अपने ध्येय के प्रति उसकी आस्था और अन्ततः अपनी विजय के प्रति उसके विश्वास का प्रतीक था। माँ सोच रही थी कि अब जज लोग उससे गरमागरम बहस छेड़ देंगे, क्रोधपूर्वक उसकी हर बात का खण्डन करेंगे और स्वयं अपने विचार प्रस्तुत करेंगे। लेकिन इसके बजाय अन्द्रेई उठा और कुछ झूमकर उसने भवें तानकर जजों की तरफ़ देखा और बोला :

"माननीय वकीलो..."

"तुम जजों से बात कर रहे हो वकीलों से नहीं!" उस बीमार सूरतवाले जज ने क्रुद्ध होकर ऊँचे स्वर में कहा। माँ ने अन्द्रेई के चेहरे पर शरारत का भाव देखा; उसकी मूँछें फड़क रही थीं और उसकी आँखों में वही चिर-परिचित बिल्लियों की आँखों जैसी चमक थी। उसने अपने पतले-पतले लम्बे हाथ से अपना सिर ज़ोर से रगड़ा और एक आह भरी।

"अच्छा, यह बात है?" उसने अपना सिर हिलाते हुए कहा। "मुझे तो ऐसा लगता है कि आप जज नहीं केवल वकील हैं..."

"मैं कहता हूँ मतलब की बात करो!" बूढ़े ने रुखाई से कहा।

"मतलब की? अच्छी बात है, तो मान लीजिये मैं थोड़ी देर को इस बात पर यकीन किये लेता हूँ कि आप लोग सचमुच जज हैं, मान-मर्यादा और स्वतन्त्र विचारवाले लोग हैं..."

"अदालत को तुम्हारी सनद की ज़रूरत नहीं है!"

"सच? ख़ैर मैं तो अपनी बात जारी रखता हूँ... अच्छा, तो मान लीजिये आप निष्पक्ष लोग हैं, आप पहले से किसी के बारे में कोई राय नहीं क़ायम करते,

आपके दिल में 'तेरा' और 'मेरा' बिल्कुल नहीं है। आपके सामने दो आदमी लाये जाते हैं। एक कहता है : 'इसने मुझे लूटा है और मारते-मारते मेरा कचूमर निकाल दिया है!' दूसरा कहता है : 'मुझे लोगों को लूटने और मारते-मारते उनका कचूमर निकाल देने का अधिकार है, क्योंकि मेरे हाथ में बन्दूक है...' "

"क्या तुम्हें मतलब की कोई बात नहीं कहनी है?" बूढ़े ने अपना स्वर ऊँचा करते हुए पूछा। उसका हाथ काँप रहा था; माँ ख़ुश हुई कि वह बहुत ग़ुस्सा है। पर उसे अन्द्रेई का यह व्यवहार अच्छा नहीं लगा – वह उसके बेटे के भाषण से मेल नहीं खाता था। वह चाहती थी कि उनके तर्क में गम्भीरता और मर्यादा हो।

उक्रइनी फिर बोलना आरम्भ करने से पहले चुपचाप बूढ़े जज को देखता रहा।

"मतलब की?" उसने अपना माथा पोंछकर गम्भीर मुद्रा बनाते हुए कहा। "मैं आपसे मतलब की बात क्यों करूँ? इस वक़्त आपके लिए जितना जानना ज़रूरी है वह सब मेरे साथी ने आपसे कह दिया है। बाक़ी जो है वह दूसरे लोग अपनी बारी आने पर आपसे कहेंगे..."

बूढ़ा जज अपनी कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया और चिल्लाया :

"बैठ जाओ! इसके बाद – ग्रिगोरी समोइलोव!"

उक्रइनी अपने होंठ भींचकर बड़े इत्मीनान से बैठ गया। समोइलोव उठा और अपने घुँघराले बाल पीछे को झटककर उसके बगल में खड़ा हो गया।

"सरकारी वकील ने मेरे साथियों को जंगली कहा है, सभ्यता का दुश्मन कहा है..."

"सिर्फ़ वही बातें कहो जिनका इस मुक़दमे से सम्बन्ध हो!"

"मेरी बात का सम्बन्ध इस मुक़दमे से ही है। ऐसी कोई बात है ही नहीं जिसमें ईमानदार लोगों को दिलचस्पी न हो। आप मेहरबानी करके मुझे बीच में मत टोकिये। मैं यह जानना चाहता हूँ कि आख़िर आप सभ्यता कहते किसे हैं?"

"हम लोग यहाँ तुमसे शास्त्रार्थ करने के लिए नहीं बैठे हैं! इधर-उधर की बातें बिल्कुल न होनी चाहिए!" बूढ़े ने अपने दाँत खोलकर कहा।

अन्द्रेई के व्यवहार से जजों के रवैये में एक परिवर्तन आ गया था – ऐसा मालूम होता था कि जैसे उन पर से कोई छिलका उतार लिया गया हो। उनके बेरंग चेहरों पर धब्बे-से पड़ गये और उनकी आँखों में हरी-हरी ठण्डी चिंगारियाँ चमकने लगीं। उन्हें पावेल का भाषण सुनकर झुँझलाहट तो हुई थी, पर उसके शब्दों में जो शक्ति थी उससे वे उसका सम्मान करने और दिखावे के लिए ही सही शान्त तथा गम्भीर बने रहने पर बाध्य हुए थे। उक्रइनी ने उनका ऊपरी

आवरण चीर दिया था और उसके नीचे की वास्तविकता को सामने खोलकर रख दिया था। जज आपस में कानाफूसी कर रहे थे और मुँह बना-बनाकर बड़े ज़ोरों से हाथ हिला रहे थे; सहसा उनमें इतनी स्फूर्ति न जाने कहाँ से आ गयी थी।

"आप लोगों को जासूस बनाते हैं, आप औरतों और लड़कियों को भ्रष्ट करते हैं, आप मर्दों को चोर और हत्यारा बना देते हैं, आप उनकी आत्मा में वोद्का का ज़हर घोलते हैं, लोगों के बीच सभी तरह के युद्ध, झूठ, व्यभिचार और बर्बरता – यही है आपकी सभ्यता! हम ऐसी सभ्यता के दुश्मन हैं!"

"मैं तुमसे कहता हूँ!" बूढ़े ने चिल्लाकर कहा। पर समोइलोव का भी चेहरा तमममाया हुआ था, उसकी आँखें चमक रही थीं, उसने चीख़कर उत्तर दिया :

"हम उस दूसरी सभ्यता का सम्मान और कदर करते हैं जिसका प्रचार करने वालों को आप जेलों में सड़ाते तथा पागल बना देते हैं..."

"बैठ जाओ! अब फ़्योदोर माजिन!"

छोटे कदवाला फ़्योदोर माजिन उछलकर तीर की तरह सीधा खड़ा हो गया।

"मैं... मैं कसम खाकर कहता हूँ! मैं जानता हूँ कि आप लोगों ने मेरे लिए सजा पहले से तय कर ली है," उसने हाँफते हुए कहा, उसका चेहरा इतना पीला पड़ गया था कि बस उसकी आँखें ही दिखायी दे रही थीं। "लेकिन मैं कसम खाकर कहता हूँ कि आप मुझे चाहे जहाँ भी भेज दें मैं वहाँ से भाग आऊँगा और अपना काम करता रहूँगा, ज़िन्दगी भर यही काम करता रहूँगा।" उसने एक हाथ ऊपर उठाया मानो शपथ ले रहा हो और बोला, "मैं कसम खाकर कहता हूँ!"

सिजोव ज़ोर से गुर्राया और अपनी जगह पर पहलू बदलकर बैठ गया। दर्शकों में उत्तेजना की एक लहर दौड़ गयी और वे बड़े अर्थपूर्ण ढंग से अस्फुट स्वर में कुछ कहने लगे। किसी औरत ने सिसकी ली और किसी को खाँसी का दौरा पड़ गया। सन्तरियों ने कैदियों को बुद्धुओं की तरह आश्चर्य से और श्रोताओं को क्रोध से देखा। जज अपनी कुर्सियों पर बैठे झूम रहे थे।

"इवान गूसेव!" बूढ़े ने चिल्लाकर कहा।

"मैं कुछ कहना नहीं चाहता!"

"वासीली गूसेव!"

"मैं भी कुछ नहीं कहना चाहता!"

"फ़्योदोर बुकिन!"

वह सफ़ेद विवर्ण चेहरेवाला व्यक्ति बहुत अलसाता हुआ उठा।

"आप लोगों को अपने आप पर शर्म आनी चाहिए!" उसने अपना सिर हिलाते हुए धीरे-धीरे कहना आरम्भ किया। "मैं बड़ा टेढ़ा आदमी हूँ, लेकिन मैं तक इसको समझता हूँ कि इंसाफ़ किस बात में है!" उसने अपनी एक बाँह सिर

के ऊपर उठायी और चुप होकर अपनी आँखें इस प्रकार आधी मूँद लीं कि जैसे बहुत दूर किसी चीज़ को देख रहा हो।

"क्या मतलब है तुम्हारा?" बूढ़े जज ने अपनी कुर्सी पीछे झुकाते हुए आश्चर्य और झुँझलाहट से चिल्लाकर कहा।

"बस, रहने दीजिये..." इतना कहकर बुकिन मुँह लटकाकर बैठ गया। उसके शब्दों में कोई अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात छिपी हुई थी – कोई बहुत ही भोलेपन की बात जिसमें उदासी भी थी और भर्त्सना भी। सबने इस बात को अनुभव किया, जजों के भी कान खड़े हुए, ऐसा प्रतीत होता था कि वे उस प्रतिध्वनि की प्रतीक्षा में थे जो शायद बुकिन ने जो कुछ कहा था उससे अधिक स्पष्ट हो। कमरे में चारों ओर जमी हुई बर्फ़ का सा सन्नाटा छाया हुआ था, बीच-बीच में केवल किसी के रोने की दबी हुई आवाज़ से ही यह निस्तब्धता भंग हो जाती थी। आख़िरकार सरकारी वकील अपने कन्धे बिचकाकर धीरे से हँसा, मार्शल आफ दि नोबिलिटी को खाँसी आ गयी और लोग खुसुर-फुसुर करने लगे।

"अब क्या जज लोग बोलेंगे?" माँ ने सिजोव के कान में कहा।

"सब कार्रवाई पूरी हो गयी... अब सिर्फ़ सजा सुनाना बाक़ी है..."

"बस?"

"हाँ, बस..."

माँ को विश्वास नहीं हुआ।

समोइलोव की माँ कुछ बेचैन होकर बेंच पर कसमसायी और उसने अपने कन्धे तथा कुहनी से पेलागेया को ठेल दिया।

"क्या मतलब? क्या मुक़दमा ख़त्म हो गया? यह कैसे हो सकता है?" उसने अपने पति से पूछा।

"क्यों नहीं हो सकता, अभी ख़ुद ही देख लेना!"

"हमारे ग्रीशा को क्या सजा देंगे?"

"मेरा पिण्ड छोड़ो..."

हर आदमी को इस बात का आभास था कि किसी बात का उल्लंघन किया जा रहा है, कोई गड़बड़ हो रही है, कोई चीज़ टूट रही है। लोगों की समझ में कुछ नहीं आ रहा था; वे अपनी आँखें इस प्रकार झपका रहे थे, मानो किसी ऐसी जलती हुई चीज़ का चकाचौंध कर देने वाला प्रकाश देख रहे हों जिसकी रूपरेखा निर्धारित न की जा सकती हो, जिसका महत्त्व अस्पष्ट हो, पर जिसकी शक्ति अदम्य हो। चूँकि वे उस बहुत बड़ी बात को समझने में असमर्थ थे जिसका रहस्योद्घाटन सहसा उनके सामने हुआ था, इसलिए वे अपने दिल का सारा गुबार

उन छोटी-छोटी बातों पर बहस करके निकाल रहे थे जिन्हें वे समझते थे।

"सुनो, आख़िर उन लोगों ने उन्हें अपनी बात पूरी तरह कहने क्यों नहीं दी?" बुकिन के बड़े भाई ने साफ़ तौर से कहा। "सरकारी वकील को तो उन्होंने जो उसके जी में आया कहने का पूरा मौक़ा दिया..."

एक अफ़सर बेंचों के पास खड़ा लोगों के सिरों के ऊपर अपना हाथ हिला-हिलाकर डाँटकर कह रहा था :

"ख़ामोश रहो! ख़ामोश..."

समोइलोव अपनी बीवी की पीठ के पीछे झुका हुआ उखड़े-उखड़े वाक्य बोल रहा था :

"अच्छा, मान लिया कि कसूर था उनका। मगर उन्हें अपनी सफ़ाई देने का मौक़ा तो दिया जाना चाहिए था! वे किसके ख़िलाफ़ हैं? मैं तो बस यह जानना चाहता हूँ! मैं भी अपने स्वार्थ रखता हूँ..."

"शु:!" उस अफ़सर ने समोइलोव की तरफ़ उँगली उठाकर चेतावनी दी।

सिजोव उदास होकर अपना सिर हिलाने लगा।

माँ अपनी नज़रें जजों पर जमाये रही और उसने देखा कि आपस में बातें करते हुए उनकी उत्तेजना बढ़ती ही जा रही है। उनकी आवाज़ की सर्द और चिपचिपी ध्वनि उसके चेहरे का स्पर्श कर रही थी, जिसके कारण उसके गाल काँप रहे थे और उसके मुँह में एक अत्यन्त बेहूदा और अरुचिकर स्वाद पैदा हो गया था। न जाने क्यों उसे ऐसा लगा कि वे उसके बेटे और उसके साथियों के शरीरों के बारे में, उनके जवानी से भरपूर अंगों और मांसपेशियों के बारे में बातें कर रहे थे, जिनकी नस-नस में जवानी का ख़ून और स्फूर्ति भरी हुई थी। ऐसे शरीरों को देखकर उनके हृदय में भिखारियों जैसी नीच ईर्ष्या और रोगियों तथा अशक्त लोगों जैसी अदम्य लोलुपता उत्पन्न होती थी। उनके मुँह में पानी भर आता था और वे चाहते थे कि उनके शरीर भी ऐसे ही होते, जो काम कर सकते और धन बटोर सकते, सुख का सृजन और भोग कर सकते। अब ये शरीर उनके दैनिक जीवन के क्षेत्र से हटाये जा रहे थे, उन्हें रद्द किया जा रहा था, जिसका अर्थ यह था कि अब उन पर किसी का अधिकार नहीं हो सकता था, उनका शोषण नहीं किया जा सकता था, उनका उपभोग नहीं किया जा सकता था। और यही कारण था कि इन नौजवानों को देखकर उन बूढ़े जजों के हृदय में उन जीर्ण-शीर्ण हिंसक पशुओं जैसा प्रतिशोधपूर्ण तीव्र क्रोध उत्पन्न होता था जो अपने सामने ताजा शिकार देखते थे, पर उसे प्राप्त करने की शक्ति नहीं रखते थे, ऐसे पशु जिनमें अन्य पशुओं की शक्ति से अपना पेट भरने की क्षमता नहीं रह गयी थी, और जो अपनी तृप्ति के साधन को अपने हाथों से निकलता देखकर केवल गुर्राकर कराह

उठते थे।

जजों को और ध्यान से देखने पर ऐसे विचित्र तथा बेतुके विचार उसके मस्तिष्क में और स्पष्ट रूप धारण करते गये। उनमें उन क्षुधाग्रस्त पशुओं जैसी लोलुपता थी जो अपने ज़माने में अच्छे से अच्छे शिकार का स्वाद ले चुके थे और साथ ही उन्हें अपनी बेबसी पर क्षोभ भी था; और वे अपनी इन भावनाओं को छुपाने का भी कोई प्रयत्न नहीं कर रहे थे। उसके लिए, जो एक औरत थी और एक माँ थी, जिसे अपने बेटे का शरीर आत्मा से भी बढ़कर प्रिय था, यह देखना अत्यन्त भयानक बात थी कि उन लोगों की नीरस आँखें उसके बेटे के चेहरे पर रेंगे, उसके सीने को, उसके कन्धों को, उसकी बाँहों को छुएँ, जीवन से भरपूर उसके माँस से इस तरह रगड़ खायें, मानो इस घर्षण से स्वयं उनकी गठियाई हुई नसों में बहते हुए ख़ून और अशक्त माँसपेशियों में फिर से गर्मी आ जायेगी। इन नौजवानों को ध्यान से देखकर, जिन्हें वे सजा देने का निश्चय कर चुके थे, और जिनके शरीरों से वे अपने आपको हमेशा के लिए वंचित करने जा रहे थे, उनके हृदय में जो लिप्सा और ईर्ष्या उत्पन्न हुई थी उससे उनके शरीर में फिर कुछ जान पड़ गयी थी। माँ कल्पना करने लगी कि पावेल को भी इस चिपचिपे अरुचिकर स्पर्श का आभास था और उसने उसे सिहरकर देखा।

पावेल माँ को बड़े शान्त भाव से और प्यार से देख रहा था, उसकी दृष्टि में किंचित शैथिल्य था। थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह माँ की ओर देखकर सिर हिला देता और मुस्करा देता।

"शीघ्र ही - आजादी!" माँ ने उसकी मुस्कराहट में ये शब्द पढ़े; अपने बेटे की मुस्कराहट उसे ऐसी लग रही थी मानो वह उसे बड़े प्यार से सहला रही हो।

इसी समय सब जज उठ खड़े हुए। माँ भी उठ खड़ी हुई।

"लो, वे चल दिये!" सिजोव ने कहा।

"सजा तय करने?" माँ ने पूछा।

"हाँ..."

अब तक माँ के हृदय में जो तनाव था वह सहसा टूट गया और थकन के मारे उसे मूर्च्छा-सी आने लगी। उसकी भवें फड़कने लगीं और उसके माथे पर पसीने की बूँदें छलक आयीं। उसके हृदय पर व्यथा और निराशा का एक बोझ-सा गिरा और शीघ्र ही अदालत और जजों के प्रति तिरस्कार में बदल गया। माँ के सिर में पीड़ा हो रही थी; उसने अपने एक हाथ से माथा दबाया और ऊपर देखा : कैदियों के सगे-सम्बन्धी कटहरे के पास चले गये थे और अदालत का कमरा लोगों की बातचीत से गूँज रहा था। वह भी पावेल के पास चली गयी और

उसका हाथ पकड़कर रोने लगी, उसका हृदय व्यथा और हर्ष से आन्दोलित हो उठा था, वह परस्पर विरोधी भावनाओं के जाल में फँसी हुई थी। पावेल बड़े प्यार से उससे बातें कर रहा था और उक्रइनी हँसी-मज़ाक़ कर रहा था।

सभी औरतें रो रही थीं, व्यथा के कारण इतना नहीं जितना आदत से मजबूर होकर। उन पर अनजाने में अचानक कोई मुसीबत का पहाड़ तो टूट नहीं पड़ा था; उन्हें केवल अपने बच्चों से मजबूर होकर बिछुड़ना पड़ रहा था और इसीलिए वे उदास थीं। पर दिन भर में उन्होंने जो कुछ देखा और सुना था उससे उनकी यह व्यथा भी कम हो गयी थी। माता-पिता अपने बेटों को मिश्रित भावनाओं से देख रहे थे, जिसमें नौजवानी के प्रति अविश्वास और अपने को श्रेष्ठ समझने की हमेशा की भावना ने विचित्र ढंग से घुल-मिलकर एक ऐसी भावना का रूप धारण कर लिया था जो बहुत कुछ सम्मान की भावना से मिलती-जुलती थी। अपने भावी जीवन के बारे में उनके हृदय में जो निराशापूर्ण विचार थे वे आश्चर्य की उस भावना में दब गये जो इन नौजवानों के उनके हृदय में उत्पन्न की थी, जो जीवन के एक दूसरे और बेहतर तरीक़े की सम्भावना के बारे में इतना निडर होकर बोले थे। भावनाएँ दबकर रह गयी थीं, क्योंकि लोग उन्हें व्यक्त करने में असमर्थ थे; शब्दों के भण्डार लुटाये जा रहे थे, पर कपड़ों, उनकी धुलाई और स्वास्थ्य जैसी साधारण चीज़ों पर।

बड़े बुकिन ने अपने छोटे भाई से बातें करते हुए हाथ हिलाकर कहा :

"इंसाफ़ बड़ी चीज़ है! बस और कुछ नहीं!"

"मैना का ख़याल रखना..." छोटे भाई ने उत्तर दिया।

"हाँ, ज़रूर!.."

सिजोव ने अपने भतीजे की बाँह पकड़कर कहा :

"अच्छा फ़्योदोर, तो तुम हम लोगों को छोड़कर जा रहे हो..."

फ़्योदोर ने झुककर उसके कान में कुछ कहा और बहुत ख़ुश होकर मुस्कराने लगा। सन्तरी भी मुस्करा दिया, पर शीघ्र ही अपनी मुस्कराहट रोककर गला साफ़ करने लगा।

दूसरी औरतों की तरह माँ भी अपने बेटे से कपड़ों और उसके स्वास्थ्य के बारे में बातें कर रही थी, पर वह उससे साशा के बारे में, अपने बारे में और स्वयं उसके बारे में हज़ारों सवाल पूछना चाहती थी। इन सब बातों के ऊपर अपने बेटे के प्रति असीम प्यार, और उसे ख़ुश करने की, उससे प्यार-भरा व्यवहार करने की इच्छा छायी हुई थी। भावी की आशंका धीरे-धीरे ग़ायब हो गयी, केवल जजों को और मुक़दमे की भयानक बात को याद करके वह खिन्न होकर काँप उठती थी। उसके हृदय में किसी अत्यन्त उल्लासमय और ज्योतिर्मय वस्तु का वास हो

गया था; वह पूरी तरह तो नहीं समझ सकी कि वह क्या चीज़ थी, पर उसने झिझकते-झिझकते उसे स्वीकार कर लिया। उक्रइनी को दूसरे लोगों से बातें करते देखकर और यह अनुभव करके कि उसे पावेल से भी ज़्यादा किसी की ममता की ज़रूरत है, माँ उसकी तरफ़ मुड़ी।

"नहीं पसन्द आया मुझे तुम्हारा यह मुक़दमा!" माँ ने कहा।

"क्यों, माँ?" उसने बड़ी कृतज्ञता से मुस्कराते हुए पूछा। "बड़ी पुरानी चक्की है, पीसती चली जा रही है..."

"उससे किसी के दिल में डर पैदा नहीं हुआ और किसी को कुछ पता भी नहीं चला। कौन सही है, कौन गलत?" माँ ने रुक-रुककर कहा।

"ओहो, तो तुम यह चाहती थीं!" अन्द्रई ने आश्चर्य से कहा। "तो तुम्हारा यह ख़याल था कि उन्हें सच्चाई का पता लगाने में दिलचस्पी है?.."

"मैं तो समझती थी कि मुक़दमा बहुत भयानक होगा..." माँ ने गहरी साँस लेकर मुस्कराते हुए कहा।

"जज आ रहे हैं!"

लोग जल्दी-जल्दी जाकर अपनी जगहों पर बैठ गये।

बड़े जज एक हाथ मेज पर टिकाये और दूसरे में एक काग़ज़ अपनी आँखों के सामने किये आगे को झुके हुए खड़े थे। उन्होंने भौंरे की तरह भनभनाती हुई बारीक आवाज़ में पढ़ना शुरू किया।

"सजा सुना रहे हैं!" सिजोव ने आगे झुककर ध्यान से सुनते हुए कहा।

कमरे में सन्नाटा छा गया। सब लोग बूढ़े पर नज़रें जमाये खड़े थे। वह छोटा सा दुबला-पतला आदमी सीधा तनकर खड़ा हुआ - ऐसा प्रतीत होता था जैसे किसी का अदृश्य हाथ एक डण्डा उठाये हो। दूसरे जज भी खड़े हो गये : जिलाधीश एक तरफ़ को सिर झुकाये छत पर अपनी नज़रें जमाये हुए था; मेयर अपने दोनों हाथ सीने पर बाँधे हुए था और मार्शल आफ दि नोबिलिटी अपनी दाढ़ी पर हाथ फेर रहा था। वह बीमार सूरतवाला जज, उसका तोंदल साथी और सरकारी वकील सब कैदियों को घूर रहे थे; जजों के पीछे ज़ार तस्वीर के चौखटे में से नीचे घूरकर देख रहा था, वह बड़ी तड़क-भड़कदार लाल वर्दी पहने हुए था और उसके चेहरे पर उदासीनता का भाव था और इस समय उसके चेहरे पर एक मक्खी रेंग रही थी।

"निर्वासन!" सिजोव ने बड़े सन्तोष की साँस लेकर कहा। "चलो, शुक्र है, फ़ैसला तो हो गया। मैं तो डर रहा था कि कठोर परिश्रम के साथ निर्वासन की सजा होगी! माँ, यह बेहतर है!"

"मैं तो पहले ही से जानती थी कि यही होगा," माँ ने थके हुए स्वर में

कहा।

"ख़ैर, अब तो यकीन हो गया! उनका कुछ ठीक नहीं, न जाने क्या कर देते!" उसने मुड़कर कैदियों की तरफ़ देखा जिन्हें बाहर लाया जा रहा था।

"विदा, फ़्योदोर!" उसने चिल्लाकर कहा। "और तुम बाक़ी सब लोगों को भी! भगवान तुम्हें सुखी रखे!"

माँ ने चुपचाप अपने बेटे और दूसरे लोगों की तरफ़ देखकर सिर हिलाया। वह रोना चाहती थी, पर ऐसा करते उसे शरम आती थी।

27

अदालत के कमरे से बाहर निकलकर जब माँ ने देखा कि रात हो चुकी है, तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। चौराहों पर बत्तियाँ जल रही थीं और आकाश पर तारे चमक रहे थे। कचहरी के पास लोगों के झुण्ड के झुण्ड जमा हो गये थे; सर्द हवा में बर्फ़ के चरमराने की आवाज़ गूँज रही थी; युवकों के स्वर सुनायी दे रहे थे। एक आदमी ने जो भूरे रंग का कंटोप पहने था, सिजोव के चेहरे को घूरकर देखा।

"क्या सजा सुनायी गयी?" उसने जल्दी से पूछा।

"निर्वासन।"

"सबको?"

"हाँ।"

"शुक्रिया!"

वह आदमी चला गया।

"देखा?" सिजोव ने कहा। "लोगों को बड़ी दिलचस्पी है..."

सहसा लगभग एक दर्जन नौजवान लड़के-लड़कियों ने उन्हें घेर लिया और उनके ज़ोर-ज़ोर से जोश में आकर बोलने की आवाज़ सुनकर दूसरे लोग भी उस छोटी-सी भीड़ की तरफ़ खिंचकर आ गये। माँ और सिजोव रुक गये। उन लोगों ने उनसे पूछा कि क्या सजा मिली, कैदियों का बर्ताव कैसा रहा, कौन-कौन बोला और किसने-किसने क्या-क्या कहा; ये सब प्रश्न इतनी सच्ची उत्सुकता से पूछे जा रहे थे कि माँ ने बड़ी ख़ुशी से उनका जवाब दिया।

"सज्जनो! यह पावेल व्लासोव की माँ हैं," किसी ने कहा और फ़ौरन ख़ामोशी छा गयी।

"मैं आपसे हाथ मिलाना चाहता हूँ!"

किसी ने अपने मज़बूत हाथ में माँ की उँगलियाँ दबा लीं और किसी ने उत्तेजित स्वर में कहा :

"आपके बेटे का साहस हम सब के लिए एक आदर्श है..."

"रूसी मज़दूर ज़िन्दाबाद!" किसी ने ज़ोर से नारा लगाया।

नारे बढ़ते गये और तेज़ होते गये; कभी यहाँ ने नारा लगता तो कभी वहाँ से। लोग चारों तरफ़ से भागे हुए आ रहे थे और सिजोव तथा माँ के चारों ओर भीड़ लगाकर खड़े होते जा रहे थे। पुलिसवालों ने सीटियाँ बजायीं, पर वे इन नारों की आवाज़ को दबा न सकीं; सिजोव हँसने लगा। माँ को यह सब एक सुखद स्वप्न सा लग रहा था। वह मुस्करा रही थी और झुक-झुककर लोगों से हाथ मिला रही थी, उसकी आँखों में हर्ष के आँसू छलक आये थे। थकन के मारे उसके पाँवों में पीड़ा हो रही थी पर भावनाओं से उमड़ते हुए उसके हृदय में उसके अनुभवों का प्रतिबिम्ब उतना ही साफ़ दिखायी दे रहा था जैसे किसी झील के निर्मल पानी में। उसके पास ही खड़ा हुआ कोई व्यक्ति स्पष्ट स्वर में, पर गुस्से से बोलने लगा।

"साथियो, जो राक्षस रूस की जनता को खाये जा रहा है आज उसने अपने लालची जबड़ों में..."

"माँ, आओ, हम लोग चलें!" सिजोव ने कहा।

उसी समय साशा वहाँ आयी और माँ की बाँह पकड़कर उसे सड़क के दूसरी तरफ़ लेकर चली गयी।

"इससे पहले कि कोई लड़ाई-झगड़ा शुरू हो या लोग गिरफ़्तार किये जाने लगें, तुम यहाँ से चली जाओ," उसने माँ से कहा। "निर्वासन हुआ? साइबेरिया भेजे जायेंगे?"

"हाँ!"

"वह कैसा बोला? लेकिन मैं जो जानती हूँ – वह सबसे दृढ़ पर सबसे सादा है। और साथ ही सबसे कठोर भी। उसका स्वभाव बहुत कोमल और संवेदनशील है, पर वह अपना यह स्वभाव प्रकट करने से डरता है।"

साशा के ये प्यार-भरे शब्द सुनकर, जो उसने इतने उत्साह से दबी जबान में कहे थे, माँ का हृदय शान्त हुआ और उसमें नयी शक्ति आ गयी।

"तुम कब उसके पास जाओगी?" माँ ने साशा की बाँह बड़े प्यार से दबाते हुए उससे पूछा।

"ज्यों ही कोई दूसरा आदमी मेरा काम सम्भालने के लिए मिल जायेगा," लड़की ने बड़े विश्वास के साथ अपने सामने शून्य में घूरते हुए उत्तर दिया। "बात यह है कि मुझे भी सजा सुनायी जाने वाली है। मेरा ख़याल है कि मुझे साइबेरिया निर्वासित कर दिया जायेगा। अगर ऐसा हुआ, तो मैं कहूँगी कि मुझे भी वहीं भेज दिया जाये जहाँ वह है।"

"अगर ऐसा हो, तो उससे मेरा सलाम कहना!" सिजोव की आवाज़ आयी। "बस इतना कह देना 'सिजोव ने सलाम कहा है।' वह मुझे जानता है। मैं फ़्योदोर माजिन का चाचा हूँ..."

साशा ने मुड़कर अपना हाथ आगे बढ़ा दिया।

"मैं फ़्योदोर को जानती हूँ। मेरा नाम साशा है।"

"बाप का नाम क्या है?"

साशा नज़रें जमाये उसे देखती रही।

"मेरा बाप नहीं है," उसने कहा।

"मर गया?"

"नहीं, मरा तो नहीं है!" लड़की के स्वर में एक हठ और दृढ़ता का भाव आ गया था जो उसके चेहरे पर भी प्रतिबिम्बित हो रहा था। "वह ज़मींदार है और आजकर गाँवों का हाकिम है – किसानों को लूटता है..."

"हुँः!" सिजोव ने कुछ बौखलाकर कहा। इसके बाद ख़ामोशी छा गयी; वह उस लड़की के बगल में चलता रहा और कनखियों से उसे देखता रहा।

"अच्छा, माँ, मैं तो चलता हूँ!" उसने आख़िरकार कहा। "मुझे यहाँ से बायीं तरफ़ मुड़ना है। अच्छा, बेटी, मैं चलता हूँ। अपने बाप की तरफ़ तुम्हारा रवैया बहुत सख़्त है, क्यों, है न? ख़ैर, वह तुम्हारा मामला है, तुम जानो..."

"अगर तुम्हारा बेटा निकम्मा होता, दूसरों को नुकसान पहुँचाता और तुम्हें उससे नफ़रत होती, तो क्या तुम उसकी निन्दा न करते?" साशा ने जोश में आकर ऊँचे स्वर में कहा।

"हाँ – मुमकिन है मैं करता!" बूढ़े ने एक क्षण रुककर उत्तर दिया।

"अगर तुम्हें इंसाफ़ अपने बेटे से ज़्यादा प्यारा होता, तो तुम ज़रूर करते और मुझे इंसाफ़ अपने बाप से ज़्यादा प्यारा है..."

सिजोव ने मुस्कराकर सिर हिला दिया।

"ख़ैर, तुमसे पार पाना मुश्किल है!" उसने आह भरकर कहा। "अगर तुम इसी तरह अपने हठ पर क़ायम रहीं, तो बूढ़ों को भी नीचा दिखा दोगी – बड़ा जोश है तुममें!.. अच्छा, तो मैं चला, ख़ुश रहो! लेकिन अगर लोगों के साथ इतनी सख़्ती का रवैया न रखो, तो क्या हर्ज है, क्यों? अच्छा, पेलागेया निलोवना, मैं चलता हूँ! जब पावेल से मुलाक़ात हो, तो कहना कि मैंने उसका भाषण सुना था। सब बातें तो मेरी समझ में नहीं आयीं, कुछ बातों को पचाना आसान भी नहीं था, लेकिन कुल मिलाकर भाषण ठीक था!"

उसके टोपी उठाकर सलाम किया और धीरे-धीरे नुक्कड़ पर मुड़ गया।

"अच्छा आदमी मालूम होता है!" साशा ने अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से उसे

जाता देखकर मुस्कराते हुए कहा।

माँ ने देखा कि आज उस लड़की के चेहरे पर हमेशा से ज़्यादा कोमलता और मुधुरता थी।

घर पहुँचकर वे दोनों कोच पर एक-दूसरे के बगल में बैठ गयीं और साशा की पावेल के पास जाने की योजना के बारे में बातें करती रहीं। निस्तब्धता शान्तिमय थी। साशा ने अपनी भवें ऊपर उठाकर अपनी बड़ी-बड़ी स्वप्निल आँखों से दूर शून्य में देखना आरम्भ किया; उसके पीले चेहरे पर शान्त चिन्तन का भाव था।

"जब तुम्हारे बच्चे होंगे मैं उनकी धाय बनकर आऊँगी। फिर वहाँ हमारी ज़िन्दगी किसी भी प्रकार यहाँ से बदतर नहीं रहेगी। पावेल को काम ढूँढ़ने में कोई कठिनाई नहीं होगी – वह अपने हाथों से कोई भी काम कर सकता है..."

साशा ने माँ को प्रश्न-भरी दृष्टि से देखा।

"क्या तुम अभी उसके साथ जाना नहीं चाहतीं?" उसने पूछा।

"किस काम आऊँगी मैं उसके?" माँ ने आह भरकर उत्तर दिया। "अगर उसने भागना चाहा, तो मैं उसकी राह में बाधा बन जाऊँगी। वह नहीं चाहेगा कि मैं जाऊँ..."

साशा ने सिर हिला दिया।

"तुम ठीक कहती हो। वह नहीं चाहेगा।"

"और फिर मुझे यहाँ अपना भी काम है!" माँ ने किंचित गर्व के भाव से कहा।

"हाँ!" साशा ने विचारमग्न होकर उत्तर दिया। "यह अच्छी बात है..."

सहसा उसने अपना हाथ इस प्रकार हिलाया, मानो कुछ फेंक रही हो और शान्त भाव से सीधे-सादे ढंग से बोलने लगी :

"वह वहाँ हमेशा तो रहेगा नहीं। वह ज़रूर भाग आयेगा..."

"और तुम?.. और अगर बच्चा हुआ तो.."

"जब होगा तब देखा जायेगा। उसे मेरे बारे में नहीं सोचना चाहिए और मैं भी कभी उसके रास्ते में बाधा बनकर नहीं आऊँगी। उससे अलग रहना मेरे लिए कठिन होगा, पर मैं बरदाश्त कर लूँगी। मैं उसकी राह मैं कभी बाधा नहीं बनूँगी!"

माँ जानती थी कि साशा जो कुछ कह रही है उसे पूरा करने की वह क्षमता रखती है और यह सोचकर उसे उस लड़की पर तरस आने लगा।

"मेरी बच्ची, तुम्हें बहुत दुख उठाना पड़ेगा!" माँ ने साशा को सीने से लगाकर कहा।

साशा धीरे से मुस्करा दी और माँ से और चिपटकर खड़ी हो गयी।

उसी समय निकोलाई अन्दर आया। वह थका हुआ और परेशान था।

"साशा, अभी मौक़ा है तुम यहाँ से खिसक जाओ!" उसने अपना कोट उतारते हुए कहा। "दो जासूस सुबह से मेरे पीछे लगे हैं – इतने खुले ढंग से मेरा पीछा कर रहे हैं कि मालूम होता है मैं गिरफ़्तार कर लिया जाऊँगा। इस मामले में मेरी अन्तरात्मा मुझे कभी धोखा नहीं देती। कुछ हुआ ज़रूर है। हाँ, यह रहा पावेल का भाषण – हमने इसे छापने का फ़ैसला किया है। तुम इसे लूदमीला के पास ले जाओ और उससे कहना कि इसे जल्दी से जल्दी छाप दे। पेलागेया निलोवना, पावेल ने बहुत अच्छा भाषण दिया!.. साशा, जासूसों से होशियार रहना..."

बात करते हुए वह अपने सर्दी के ठिठुरे हुए हाथ ज़ोर से रगड़ता रहा और फिर मेज के पास जाकर दराजों में से काग़ज़ निकालने लगा। कुछ काग़ज़ तो उसने फाड़ डाले और कुछ को अलग रख दिया। वह परेशान हुआ और चिन्तित दिखायी दे रहा था।

"अभी बहुत दिन नहीं हुए मैंने इन दराजों को साफ़ किया है – न जाने कहाँ से ये नये काग़ज़ फिर आ गये! पेलागेया निलोवना, मेरी राय में अच्छा यही होगा कि तुम भी रात घर पर न रहो। तुम्हारा क्या ख़याल है? वह तमाशा देखकर तुम ऊब जाओगी। और फिर इसका भी डर है कि शायद वे लोग तुम्हें भी गिरफ़्तार कर लें। पावेल का भाषण बाँटने के लिए हमें इधर-उधर भेजने के लिए तुम्हारी ज़रूरत होगी..."

"वे लोग मुझे गिरफ़्तार करके क्या करेंगे?"

निकोलाई ने अपना हाथ झटककर दृढ़तापूर्वक कहा :

"मैं इस तरह के ख़तरे को बहुत दूर से सूँघ लेता हूँ। और फिर तुम लूदमीला की भी बड़ी मदद कर सकती हो। बेकार ख़तरा मोल लेने से क्या फ़ायदा..."

माँ यह सोचकर गद्गद् हो उठी कि वह अपने बेटे का भाषण छापने में मदद देगी।

"अगर ऐसा है, तो मैं चली जाऊँगी," उसने कहा।

और फिर कुछ देर रुककर उसने दृढ़तापूर्वक कहा :

"ईश्वर की कृपा से अब मुझे किसी भी चीज़ का डर बाक़ी नहीं रह गया!" और उसे अपनी इस बात पर स्वयं ही आश्चर्य होने लगा।

"अच्छा है!" निकोलाई ने उसकी ओर देखे बिना ही कहा। "मगर यह तो मुझे बताती जाओ कि मेरा सूटकेस और कपड़े कहाँ हैं। तुमने तो घर को इतनी पूरी तरह अपने कब्जे में कर लिया है कि मैं अपनी चीज़ें भी नहीं ढूँढ़ सकता।"

साशा अँगीठी में काग़ज़ जला रही थी और राख कोयलों में मिलाती जा रही थी।

"साशा, अब तुम जाओ!" निकोलाई ने अपना हाथ आगे बढ़ाते हुए कहा। "अच्छा, विदा! अगर कोई अच्छी किताब आये, तो मुझे भेजना न भूलना। विदा, प्रिय साथी! सावधान रहना..."

"क्या लम्बी सजा होने का डर है?" साशा ने पूछ्ज्ञ।

"कौन जाने? शायद मेरे ख़िलाफ़ कुछ तो है ही। पेलागेया निलोवना, तुम भी साथ क्यों न चली जाओ? एक साथ दो आदमियों का पीछा करना मुश्किल होता है।"

"अच्छी बात है!" माँ ने उत्तर दिया, "मैं अभी कपड़े पहने लेती हूँ..."

उसने निकोलाई को बड़े ध्यान से देखा पर उसमें कोई अन्तर नहीं हुआ था; केवल उसके चेहरे पर हमेशा जो कोमलता और मृदुता का भाव रहता था उस पर चिन्ता के हल्के-हल्के बादल छा गये थे। उसके व्यवहार में बिल्कुल घबराहट नहीं थी; इस व्यक्ति में, जो माँ को दूसरों से अधिक प्रिय हो गया था, न ही उत्तेजना के कोई चिह्न थे। उसने हमेशा सब का बराबर ध्यान रखा था, वह हमेशा सबके साथ उदारता और शान्त स्वभाव से पेश आता और गम्भीरता के साथ सबसे अकेला रहता था। और इस समय भी वह सबके लिए वही था जो हमेशा से था – एक ऐसा आदमी जिसका अपना एक गुप्त आन्तरिक जीवन था और यह जीवन दूसरों के जीवन से श्रेष्ठतर था। माँ जानती थी कि निकोलाई अपनी और माँ की आत्मा में एक समानता पाता था और माँ के हृदय में उसके प्रति ऐसा प्यार था जो अभी तक कोई निश्चित रूप धारण नहीं कर पाया था। अब उसके हृदय में निकोलाई के लिए जो वेदना थी वह असह्य थी, पर वह उसे प्रदर्शित करने का साहस नहीं कर सकती थी, क्योंकि इससे निकोलाई बिल्कुल बौखला जाता और कुछ खिसिया भी जाता। उस दशा में वह कुछ हास्यास्पद भी प्रतीत होता और माँ नहीं चाहती थी कि वह हास्यास्पद प्रतीत हो।

वह जब फिर कमरे में आयी, तो उसने देखा कि निकोलाई साशा का हाथ पकड़े खड़ा है।

"बहुत ही उम्दा! मैं दावे से कहता हूँ कि तुम दोनों के लिए यही सबसे ठीक भी है," वह कह रहा था। "थोड़े से निजी सुख से किसी को कोई नुकसान नहीं होता। पेलागेया निलोवना, तुम तैयार हो गयीं?"

निकोलाई अपना चश्मा ऊपर को सरकाकर मुस्कराता हुआ माँ के पास आ गया।

"अच्छा, विदा – तीन या चार महीने के लिए, ज़्यादा से ज़्यादा छः महीने

का ख़याल है मेरा। छः महीने – ज़िन्दगी का बहुत बड़ा हिस्सा होता है... अपना ध्यान रखना, रखोगी न? लाओ, चलने से पहले एक बार प्यार कर लूँ..."

वह देखने में बहुत दुबला-पतला और नाजुक था; उसने अपने मज़बूत हाथ माँ के गले में डाल दिये और उसकी आँखों में आँखें डालकर देखने लगा।

"ऐसा मालूम होता है कि मुझे तुमसे प्रेम हो गया है," उसने हँसकर कहा। "तुम्हें इस तरह सीने से लगाये खड़ा हूँ कि..."

माँ ने बिना कुछ कहे उसके माथे और गालों पर प्यार किया, पर उसकी बाँहें काँप रही थी। उसने जल्दी से अपने हाथ हटा लिये कि कहीं वह देख न ले।

"कल ख़ासतौर पर सावधान रहना! सुबह किसी लकड़े को इधर भेज देना कि आकर ख़बर ले जाये – लूदमीला जानती है एक ऐसे लड़के को। अच्छा, साथियो, विदा! सब ठीक है!.."

बाहर निकलकर साशा ने चुपके से कहा :

"अगर इसे कभी मौत का सामना करने भी जाना पड़ा, तो इतने ही सीधे-सादे ढंग से चला जायेगा, बस थोड़ी-सी जल्दी और करेगा। और जब मौत आँखों में आँखें डाले इसे घूर रही होगी, तब भी यह अपना चश्मा ऊपर को सरकाकर मरने से पहले कहेगा : 'बहुत ख़ूब!' "

"मैं उसे बहुत प्यार करती हूँ!" माँ ने धीमे स्वर में कहा।

"उसे देखकर मुझे आश्चर्य ज़रूर होता है, पर मैं उससे प्यार नहीं करती! मेरे दिल में उसकी बेहद इज्जत है। वह बहुत नेक है और कभी-कभी उसके बर्ताव में कोमलता भी आ जाती है, पर उसमें एक नीरसता है, उसमें मानव भावनााओं की कुछ कमी है... मुझे ऐसा लगता है कि कोई हमारा पीछा कर रहा है। बेहतर यही है कि हम लोग यहाँ से अलग-अलग हो जायें। अगर तुम्हें ख़याल हो कि कोई तुम्हारा पीछा कर रहा है, तो लूदमीला के यहाँ न जाना।"

"मैं जानती हूँ!" माँ ने कहा।

"बिल्कुल न जाना!" साशा ने आग्रह करते हुए कहा। "मेरे यहाँ चली आना। अच्छा, तो मैं चलती हूँ, नमस्ते!"

वह जल्दी से मुड़ी और जिधर से आयी थी उधर ही लौट पड़ी।

28

कुछ ही मिनट बाद माँ लूदमीला के छोटे-से कमरे में अँगीठी के सामने बैठी आग ताप रही थी। लूदमीला काली पोशाक पहने और चमड़े की पेटी लगाये धीरे-धीरे कमरे में टहल रही थी; कमरा उसकी पोशाक की सरसराहट और

उसकी रोबदार आवाज़ से गूँज रहा था।

अँगीठी से लकड़ी के चटचटाने की आवाज़ आ रही थी और आग की लपटें हवा को अपनी ओर खींचकर गरज रही थीं; लूदमीला की आवाज़ सुगम प्रवाह से बह रही थी।

"लोग दुष्ट उतने नहीं हैं जितने कि वे मूर्ख हैं। वे सिर्फ़ उसी चीज़ को देखते हैं जो बिल्कुल उनकी आँख के सामने हो और जिसे वे आसानी से समझ सकें। लेकिन जो चीज़ बिल्कुल पास होती है उसकी कोई कदर नहीं होती – दूर की चीज़ों की ही कदर होती है। जब हम इस बात की तह में जाकर देखते हैं तो मालूम होता है कि अगर ज़िन्दगी का ढर्रा दूसरा होता, अगर ज़िन्दगी ज़्यादा आसान होती और लोग ज़्यादा समझदारी से काम लेते तो सभी लोग ज़्यादा सुखी रहते और उनका जीवन बेहतर हो जाता। पर इस सबके लिए बहुत यत्न करना पड़ेगा..."

सहसा वह माँ के सामने आकर ठहर गयी।

"मुझे लोगों से मिलने का ज़्यादा मौक़ा नहीं मिलता और जब मिलती हूँ, तो व्याख्यान देने लगती हूँ," उसने मानो सफ़ाई पेश करते हुए कहा। "अजीब-सा लगता है न?"

"ऐसी क्या बात है?" माँ ने कहा। वह यह मालूम करने का प्रयत्न कर रही थी कि यह औरत पर्चे कहाँ छापती है, पर वह कुछ भी पता न लगा सकी। इस कमरे में, जिसकी तीन खिड़कियाँ सड़क पर खुलती थीं, एक कोच, एक किताबों की अल्मारी, एक मेज, कुछ कुर्सियाँ और एक पलँग था। एक कोने में हाथ धोने का तसला लगा था और दूसरे कोने में चूल्हा था। दीवार पर तस्वीरें टंगी थीं। हर चीज़ साफ़-सुथरी और करीने से रखी हुई थी और इन सब चीज़ों पर मकान की मालकिन के कठोर व्यक्तित्व की नीरस छाप थी। माँ समझ रही थी कि कहीं कुछ छुपा ज़रूर है, पर वह समझ नहीं पर रही थी कि कहाँ। उसने दरवाज़ों की तरफ़ देखा। एक दरवाज़े से तो वह अन्दर आयी थी जो बाहर एक छोटी-सी ड्योढ़ी में खुलता था; चूल्हे के बगल में एक और पतला-सा ऊँचा दरवाज़ा था।

"मैं काम से आयी हूँ!" माँ ने कहा; यह देखकर कि लूदमीला उसे बड़े ध्यान से देख रही है वह कुछ सिटपिटा गयी थी।

"मैं जानती हूँ! काम के अलावा कोई मुझसे मिलने आता ही नहीं है..."

माँ को लूदमीला के स्वर में एक विचित्र-सी बात नज़र आयी। उसके पतले-पतले होंठों पर मुस्कराहट की एक हल्की-सी झलक थी और चश्मे के पीछे उसकी धुँधली-सी आँखें चमक रही थी। माँ ने नज़रें फेरकर पावेल का

भाषण उसकी तरफ़ बढ़ा दिया।

"लो, यह लो, उन लोगों ने कहा है कि जितनी जल्दी हो सके इसे छाप दो..."

फिर उसने उसे बताया कि निकोलाई के गिरफ़्तार होने का ख़तरा है।

लूदमीला ने चुपके से पर्चा अपनी पेटी में खोंस लिया और बैठ गयी। उसकी ऐनक के शीशों में आग की लाल-लाल रोशनी चमक रही थी और उसकी निश्चल मुखाकृति पर आग का उष्ण प्रकाश नाच रहा था।

"अगर वे लोग मुझे गिरफ़्तार करने आये, तो मैं उन्हें गोली मार दूँगी!" माँ जब अपनी बात ख़त्म कर चुकी तो लूदमीला ने धीरे से पर दृढ़तापूर्वक कहा। "मुझे हिंसा के विरुद्ध अपनी रक्षा करने का अधिकार है और जब मैं दूसरों को लड़ने के लिए ललकारती हूँ, तो मेरा कर्तव्य हो जाता है कि मैं भी लड़ूँ।"

आग की लपटों की चमक उसके चेहरे पर से ग़ायब हो गयी और उसकी मुद्रा हमेशा की तरह गम्भीर और कठोर दिखायी देने लगी।

"यह ज़िन्दगी का कोई तरीक़ा नहीं है!" माँ के दिमाग में अचानक यह विचार आया और उसका हृदय लूदमीला के प्रति संवेदना से भर गया।

लूदमीला अनमने भाव से पावेल का भाषण पढ़ने लगी, पर जैसे-जैसे वह आगे पढ़ती गयी उसकी दिलचस्पी बढ़ती गयी और आख़िर में पहुँचकर वह बड़ी अधीरता और उत्सुकता से पन्ने पलटने लगी। भाषण पूरा पढ़कर वह उठी और अपने कन्धे सीधे करके माँ के पास आयी।

"बहुत अच्छा भाषण है!" उसने कहा।

एक क्षण तक वह सिर झुकाये विचारों में डूबी खड़ी रही।

"मैं तुमसे तुम्हारे बेटे के बारे में बात करना नहीं चाहती थी – मैं उससे कभी नहीं मिली हूँ और मैं दुखद विषयों को छेड़ना नहीं चाहती। मैं जानती हूँ कि जब किसी ऐसे आदमी को, जो हमें बहुत प्यारा हो, कहीं दूर निर्वासित किया जाता है, तो कितना दुख होता है। लेकिन मैं सोच रही थी क्या सचमुच तुम्हें ऐसे बेटे की माँ होने की बहुत ख़ुशी है?.."

"बहुत!" माँ ने कहा।

"और डर भी नहीं लगता?"

"अब नहीं लगता..." माँ ने गम्भीर मुस्कराहट के साथ उत्तर दिया।

लूदमीला अपने सीधे बालों को एक हाथ से ठीक करती हुई खिड़की की तरफ़ देखने लगी। उसके चेहरे पर एक परछाईं-सी दौड़ गयी – कदाचित यह दबी हुई मुस्कराहट की छाया थी।

"मैं अभी अक्षर बिठाये देती हूँ। तुम लेट जाओ। आज का दिन तुम्हारे ऊपर

बहुत सख़्त बीता है, तुम थक गयी होगी। यहाँ इस बिस्तर पर लेट जाओ। मैं तो सोऊँगी नहीं, मुमकिन है रात को मैं तुम्हें मदद करने के लिए जगाऊँ। जब सोने लगो तो बत्ती बुझा देना।"

उसने अँगीठी में दो लकड़ियाँ डाल दीं और उस पतले-से दरवाज़े से अन्दर जाकर दरवाज़ा कसकर बन्द कर लिया। माँ ने उसे अन्दर जाते देखा और कपड़े बदलते समय भी वह उसी के बारे में सोचती रही :

"उसे किसी बात का बड़ा दुख..."

माँ बहुत थक गयी थी, पर वह एक विचित्र शान्ति का अनुभव कर रही थी और ऐसा प्रतीत होता था कि हर चीज़ एक कोमल मन्द प्रकाश से आलोकित हो उठी है और यही प्रकाश उसकी आत्मा में भी फैला हुआ है। वह पहले भी इस शान्ति का अनुभव कर चुकी थी। जब भी उसकी भावनाओं पर कोई बहुत बड़ा दबाव पड़ता था उसके बाद हमेशा उसे इस शान्ति का आभास होता था। एक समय ऐसा भी था जब उसे इससे डर लगता था पर अब इससे उसकी आत्मा और भी विस्तृत हो उठती थी और उसमें एक महान शक्तिशाली भावना का बल आ जाता था। बत्ती बुझाकर वह ठण्डे बिस्तर पर कम्बल ओढ़कर आराम से लेट गयी और शीघ्र ही गहरी नींद में सो गयी...

जब उसकी आँख खुली, तो कमरे में सर्दियों के निर्मल दिवस का शीतल श्वेत प्रकाश फैला हुआ था। लूदमीला ने कोच पर से, जहाँ वह हाथ में एक किताब लिये लेटी हुई थी, आँख उठाकर देखा और एक असाधारण ढंग से मुस्करा दी।

"कमाल हो गया!" माँ ने कुछ खिसियाकर कहा। "मैं भी अजीब हूँ! क्या बहुत देर हो गयी?"

"सलाम!" लूदमीला ने उत्तर दिया। "दस बजनेवाले हैं, उठो, चाय पियेंगे।"

"तुमने मुझे जगा क्यों नहीं लिया?"

"मैं जगाने जा रही थी, लेकिन जब मैं तुम्हारे पास गयी, तो तुम सोते-सोते इतने प्यारे ढंग से मुस्करा रही थीं कि मेरा जी उठाने को नहीं हुआ..."

वह बड़ी फुर्ती से कोच पर से उठी और माँ के पलँग के पास जाकर उसके ऊपर झुक गयी। उस औरत की आँखों में माँ ने एक ऐसा भाव देखा जिसे वह पहचानती थी और प्यार करती थी।

"मुझे ऐसा लगा कि तुम्हारी नींद में विघ्न डालना तुम्हारे साथ बड़ा अन्याय होगा। तुम शायद कोई सुखद स्वप्न देख रही थीं..."

"नहीं तो!"

"कोई बात नहीं है! मुझे तुम्हारी मुस्कराहट बहुत अच्छी लगी। वह इतनी शान्त और इतनी अच्छी और... इतनी सर्वव्यापी थी कि बस!"

लूदमीला हँस दी, उसकी हँसी में मखमल जैसी नरमी थी।

"तुम्हें मुस्कराता देखकर मैं तुम्हारे बारे में सोचने लगी... क्या तुम्हारा जीवन बहुत दुखी है?"

माँ की भवें फड़कने लगीं और वह ख़ुद भी सोचने लगी कि उसका जीवन दुखी है कि नहीं।

"ज़रूर है!" लूदमीला ने सहसा कहा।

"मैं ठीक से नहीं कह सकती!" माँ ने धीरे से कहा। "कभी-कभी दुख ज़रूर होता है। लेकिन मेरा जीवन इतना भरपूर है – और उसमें हर चीज़ इतनी महत्त्वपूर्ण और आश्चर्यजनक है और सारी बातें एक के बाद एक इतनी जल्दी-जल्दी होती रहती हैं कि..."

जैसाकि बहुधा होता था इस समय भी सहसा उसके हृदय में उत्साह का एक तूफान उमड़ने लगा; उसके मस्तिष्क में विचारों और कल्पनाओं की भीड़ लग गयी; वह उठकर पलँग पर बैठ गयी और विचारों तथा कल्पनाओं को शब्दों में सजाने-सँवारने लगी।

"ज़िन्दगी का क्रम चलता रहता है – हमेशा एक लक्ष्य की दिशा में... लेकिन कभी-कभी बहुत दुख भी होता है! लोग मुसीबतें उठाते हैं, मार खाते हैं, बड़ी बेरहमी से मारे जाते हैं और उनसे बहुत-सी खुशियाँ छीन ली जाती हैं। यह देखकर तो दुख होता ही है!"

लूदमीला अपना सिर पीछे को झटककर माँ को बड़े प्यार से देखने लगी।

"लेकिन तुम अपने बारे में तो कुछ बताती ही नहीं!"

माँ पलँग से उठी और कपड़े पहनने लगी।

"जब आदमी को इससे भी प्यार हो, उससे भी प्यार हो और सबके लिए उसका दिल डरता हो, सब पर उसे तरस आता हो, तो आदमी अपने आपको दूसरों से अलग करके अपने बारे में कैसे सोच सकता है?.. वह अपने आपको उनसे अलग कैसे कर सकता है?"

वह एक क्षण तक आधे कपड़े पहने हुए कमरे के बीच में विचारों में खोयी-खोयी खड़ी रही। माँ को ऐसा आभास हुआ कि अब वह वही औरत नहीं रह गयी है जिसका हृदय अपने बेटे के लिए इतना भयभीत और आतंकित था, जो अपने बेटे के शरीर को बचाने के लिए इतनी बेताब थी। अब उस औरत का अस्तित्व ही बाक़ी नहीं रह गया था। वह कहीं छुप गयी थी, कहीं बहुत दूर चली गयी थी, या कदाचित वह अपने ही भावावेश की ज्वाला में जल गयी थी और

इस आग में तपकर उसकी आत्मा शुद्ध होकर निखर आयी थी और उसमें नयी शक्ति का संचार हुआ था। उसने अपने हृदय को टटोला, उसका स्पन्दन सुना और डरने लगी कि पुरानी आशंकाएँ कहीं फिर न पैदा हो जायें।

"क्या सोच रही हो?" लूदमीला ने उसके पास जाकर पूछा।

"मालूम नहीं!" माँ ने उत्तर दिया।

वे दोनों चुपचाप एक-दूसरे को देखकर मुस्कराती रहीं; फिर लूदमीला यह कहती हुई कमरे से बाहर चली गयी :

"मालूम नहीं मेरे समोवार को क्या हो गया है?"

माँ ने खिड़की के बाहर देखा। सर्दी पड़ रही थी और चारों ओर धूप फैली हुई थी। उसके हृदय में भी इसी धूप जैसा प्रकाश फैला हुआ था और गर्मी भी थी। वह हर चीज़ के बारे में बातें करना चाहती थी – बड़ी देर तक और उल्लास के साथ बातें करना चाहती थी। उसकी आत्मा में जो कुछ समाया हुआ था और जो वहाँ सूर्यास्त से पहले की सुन्दर ज्योति से जगमगा रहा था, उसके लिए उसके हृदय में किसी के प्रति कृतज्ञता की एक अस्पष्ट-सी भावना थी। बहुत दिन बाद उसके हृदय में ईश्वर की प्रार्थना करने की इच्छा उत्पन्न हुई। उसके मस्तिष्क में किसी का नौजवान चेहरा बिजली की तरह कौंध गया और उसने किसी को स्पष्ट स्वर में पुकारकर कहते सुना, "यह पावेल व्लासोव की माँ हैं!.." उसने साशा की भीगी हुई चमकदार आँखें, रीबिन की काली आकृति, अपने बेटे की काँसे की मूर्ति जैसी कठोर मुखाकृति, निकोलाई की शर्मीली आँख मारती हुई नज़रें देखीं और सहसा ये सब चीज़ें एक गहरी आह में घुल-मिल गयीं, और उन्होंने इन्द्रधनुष के रंग के बहुत ही पतले बादल का रूप धारण कर लिया, जो उसके समस्त विचारों पर छा गया और उसे शान्ति का अनुभव होने लगा।

"निकोलाई ठीक कहता था!" लूदमीला ने कमरे में वापस आकर कहा। "वह गिरफ़्तार कर लिया गया। तुम्हारे कहने के मुताबिक मैंने लड़के को भेजा था। उसने बताया कि आँगन में उसने कई पुलिसवालों को देखा और एक पुलिसवाला फाटक के पीछे भी छुपा हुआ था। चारों तरफ़ से जासूसों ने उस जगह को घेर रखा है।"

"बेचारा!" माँ ने सिर हिलाते हुए कहा।

उसने आह भरी, पर उसके हृदय में कोई व्यथा नहीं थी और इस पर उसे मन ही मन बड़ा आश्चर्य भी हुआ।

"वह इधर कुछ दिनों से शहर में मज़दूरों को पढ़ाता था। उसके पकड़े जाने का वक़्त आ गया था!" लूदमीला ने शान्त स्वर में कहा, पर उसकी भवें तनी हुई थीं। "उसके साथियों ने उससे कहा था कि वह कहीं भाग जाये, पर उसने

एक न सुनी। मेरा तो ख़याल है कि लोगों को ऐसी हालत में समझाने-बुझाने के बजाय उन्हें ज़बरदस्ती कहीं भेज देना चाहिए..."

इसी समय काले बालों और लाल गालोंवाला एक लड़का दरवाज़े पर दिखायी दिया; उसकी नीली आँखें बहुत ख़ूबसूरत और नाक तोते की चोंच की तरह मुड़ी हुई थी।

"समोवार ले आऊँ?" उसने ऊँची आवाज़ में पूछा।

"ले आओ तो बड़ी मेहरबानी होगी, सेर्गेई" फिर वह माँ की तरफ़ मुड़कर बोली, "इसे मैंने पाला है।"

आज माँ को लूदमीला कुछ बदली हुई, ज़्यादा सीधी-सादी और अधिक घनिष्ठ लग रही थी। उसके शरीर के लोच में आज पहले से ज़्यादा सौन्दर्य और शक्ति थी और इससे उसके पीले कठोर चेहरे पर एक कोमलता आ गयी थी। रात-भर काम करने के कारण उसकी आँखों के नीचे के काले घेरों का रंग कुछ और गहरा हो गया था और उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था कि उसकी आत्मा में एक तनाव है, धनुष की प्रत्यंचा जैसा तनाव।

लड़का समोवार ले आया।

"सेर्गेई, आओ तुम्हारा परिचय करा दूँ! यह पेलागेया निलोवना हैं; कल जिन मज़दूरों को सजा हुई है उनमें इनका बेटा भी था।"

सेर्गेई ने बिना कुछ कहे झुककर माँ से हाथ मिलाया और कमरे से बाहर चला गया; थोड़ी देर बाद वह एक डबलरोटी लेकर लौटा और आकर मेज के पास अपनी जगह बैठ गया। चाय उँड़ेलते हुए लूदमीला ने माँ को इस बात पर राजी करने का प्रयत्न किया कि वह उस समय तक घर लौटकर न जाये जब तक यह मालूम न हो जाये कि पुलिस वहाँ किसकी ताक में है।

"शायद तुम्हारे इन्तज़ार में ही हों! शायद तुम्हें भी पूछताछ के लिए बुलायेंगे..."

"बुलाने दो!" माँ ने कहा, "और अगर चाहते हैं, तो मुझे गिरफ़्तार कर लें – ऐसा कौन बड़ा नुकसान हो जायेगा। बस इतना है कि पहले पावेल का भाषण छपकर बँट जाये।"

"मैंने अक्षर तो बिठा दिये हैं। कल तक शहर में और मज़दूरों की बस्ती में बाँटने भर को काफ़ी पर्चे तैयार हो जायेंगे... तुम नताशा को जानती हो?"

"हाँ, जानती क्यों नहीं हूँ!"

"उसके पास ले जाना..."

लड़का अखबार पढ़ रहा था और ऐसा मालूम हो रहा था कि वह उसकी बातें सुन ही नहीं रहा है, लेकिन बीच-बीच में वह माँ के चेहरे पर एक सरसरी

दृष्टि डाल लेता था। माँ को उसकी चमकदार आँखें बहुत अच्छी लगती थीं, इसलिए वह भी उसे देखकर मुस्करा देती थी। निकोलाई की बात करते समय लूदमीला के हृदय में कोई व्यथा नहीं थी; माँ को यह बात स्वाभाविक ही मालूम हुई। समय बहुत जल्दी बीतता गया; जब उन लोगों ने नाश्ता ख़त्म किया उस समय लगभग दोपहर हो चुकी थी।

"कितनी देर हो गयी!" लूदमीला ने विस्मय से कहा।

इतने में किसी ने बहुत घबराकर दरवाज़ा खटखटाया। लड़का उठा और उसने लूदमीला को प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

"सेर्गेई, दरवाज़ा खोल दो। कौन हो सकता है?"

बिना विचलित हुए लूदमीला ने अपने साये की जेब में हाथ डाल लिया और माँ से बोली :

"देखो, अगर पुलिस हो तो, पेलागेया निलोवना, तुम वहाँ कोने में खड़ी हो जाना और सेर्गेई तुम..."

"मैं जानता हूँ!" लड़के ने बाहर जाते हुए कहा।

माँ मुस्करा दी। अब इन तैयारियों से उसे कोई उलझन नहीं होती थी – उसे यह नहीं लगता था कि जैसे कोई बहुत बड़ी विपदा आने वाली है।

लेकिन आगन्तुक वही छोटे कदवाला डॉक्टर था।

"पहली बात तो यह है," उसने जल्दी से कहा, "निकोलाई गिरफ़्तार कर लिया गया है। अहा, तो यहाँ हो तुम, निलोवना? जब वह पकड़ा गया तब क्या तुम घर पर नहीं थीं?"

"उसी ने मुझे यहाँ भेजा था।"

"हुँ:! मेरे ख़याल में इससे काम नहीं चलेगा!.. और दूसरी बात यह है कि कल रात कुछ नौजवानों ने भाषण की कोई पाँच सौ कापियाँ साइक्लोस्टाइल करके छापी हैं। मैंने देखा है उन्हें, बुरी नहीं छापी हैं, बड़ी साफ़-सुथरी छपाई है। वे आज रात उन्हें शहर में बाँटना चाहते हैं, लेकिन मैं इसके ख़िलाफ़ हूँ। मेरा ख़याल है कि शहर में छपी हुई कापियाँ बाँटना ही अच्छा होगा और उन्हें किसी दूसरी जगह के लिए रखा जा सकता है।"

"मैं उन्हें नताशा के पास लेकर चली जाऊँगी!" माँ ने उत्सुकता से कहा। "मुझे दे दो!"

वह अपने पावेल के भाषण को जल्दी से जल्दी प्रसारित करने के लिए, अपने बेटे के शब्दों को सारी पृथ्वी पर फैला देने के लिए बहुत बेचैन थी; उत्तर की प्रतीक्षा में वह बड़ी विनय-भरी दृष्टि से डॉक्टर के चेहरे को देखती रही।

"मालूम नहीं तुम्हें यह काम इस वक़्त करना भी चाहिए कि नहीं!" डॉक्टर

ने अपनी घड़ी निकालकर देखते हुए संशय के भाव से कहा। "इस वक़्त बारह बजने में सत्रह मिनट बाक़ी हैं। दो बजकर पाँच पर एक गाड़ी जाती है जो तुम्हें वहाँ सवा पाँच बजे पहुँचा देगी। उस वक़्त शाम का वक़्त होगा, लेकिन बहुत देर नहीं हुई होगी। लेकिन असल बात यह नहीं है..."

"नहीं, यह असल बात नहीं है!" लूदमीला ने भवें तानकर कहा।

"फिर असल बात क्या है?" माँ ने उसके निकट आकर पूछा। "बस यही न कि काम अच्छी तरह पूरा हो जाये..."

लूदमीला ने उसे बड़े ग़ौर से देखा, मानो उसके चेहरे में कुछ ढूँढ़ रही हो।

"तुम्हारे लिए यह काम ख़तरनाक है..." लूदमीला ने अपने माथे पर हाथ फेरते हुए कहा।

"क्यों?" माँ ने बड़े उत्साह और हठ से पूछा।

"इसकी वजह यह है," डॉक्टर ने बहुत जल्दी-जल्दी उखड़े हुए स्वर में कहना शुरू किया, "तुम निकोलाई के गिरफ़्तार होने के ठीक घण्टे भर पहले घर से निकली थीं। तुम उस कारख़ाने में गयी थीं जहाँ लोग तुम्हें नताशा की चाची की हैसियत से जानते हैं। उसके थोड़ी ही देर बाद कारख़ाने में ग़ैर-क़ानूनी पर्चे पाये गये। ये सब बातें मिलकर तुम्हारे गले में फन्दा डालने के लिए काफ़ी सबूत हो जायेगा।"

"मुझे कोई नहीं देख पायेगा!" माँ ने उत्सुकता से कहा। "और अगर उन्होंने मेरे वापस आने पर पूछा कि मैं कहाँ गयी थी तो..."

वह एक सेकण्ड के लिए रुकी।

"मैं जानती हूँ मैं क्या कहूँगी!" उसने ज़ोर से कहा। "मैं वहाँ से सीधे बस्ती में जाऊँगी, वहाँ मेरा एक दोस्त है सिजोव। मैं कह दूँगी के मुक़दमे के बाद मैं सीधे उसके घर चली गयी थी ताकि हम दोनों एक-दूसरे को धीरज बँधा सकें। उसके भतीजे को भी सजा हुई है। वह आख़िर तक मेरा साथ देगा।"

माँ को विश्वास था कि वे उसकी यह इच्छा पूरी कर देंगे और वह इस मामले को जल्दी तय कर लेने के लिए उत्सुक थी, इसीलिए वह आग्रह करती रही। आख़िरकार वे राजी हो गये।

"अच्छी बात है, ले जाओ!" डॉक्टर ने अनिच्छा से कहा।

लूदमीला कुछ नहीं बोली, वह बस विचारों में डूबी हुई इधर-उधर टहलती रही। उसका चेहरा बहुत क्षीण दिखायी दे रहा था; उसकी गर्दन की पेशियाँ जिस तरह तनी हुई थीं उससे मालूम होता था कि अपने सिर को सीने पर लुढ़क जाने से रोकने के लिए उसे कितना प्रयास करना पड़ रहा था। माँ ने यह देख लिया।

"तुम लोग मेरे कारण परेशान हो रहे हो!" उसने मुस्कराकर कहा, "लेकिन

तुम अपनी चिन्ता बिल्कुल नहीं करते..."

"करते क्यों नहीं हैं!" डॉक्टर ने कहा। "हमें करनी पड़ती है! और हम उन लोगों के साथ बड़ी सख़्ती से पेश आते हैं जिन्हें हम अपनी शक्ति व्यर्थ नष्ट करते देखते हैं! अच्छी बात है, तो तुम्हें भाषण की कापियाँ स्टेशन पर मिल जायेंगी..."

उसने माँ को समझा दिया कि इसके लिए क्या प्रबन्ध किया जायेगा।

"सलामत रहो!" उसने अपनी बात खतम करते हुए कहा।

लेकिन जब वह बाहर गया, तो ऐसा प्रतीत होता था कि वह किसी बात से असन्तुष्ट है। लूदमीला माँ के पास चली आयी।

"मैं समझती हूँ..." उसने धीरे से हँसकर कहा।

वह माँ की बाँह पकड़कर फिर इधर-उधर टहलने लगी।

"मेरा भी एक बेटा है, वह 13 साल का है। वह अपने बाप के साथ रहता है। मेरे पति छोटे सरकारी वकील हैं और लड़का उन्हीं के साथ रहता है। उसका क्या होगा? मैं अक्सर इस बात के बारे में सोचती हूँ..."

उसका स्वर रुँध गया।

"जनता के एक कट्टर दुश्मन के हाथों उसका पालन-पोषण हो रहा है – उन लोगों के शत्रु के हाथों जिन्हें मैं प्यार करती हूँ और जिन लोगों को मैं इस पृथ्वी पर सबसे अच्छा समझती हूँ। मुमकिन है कि मेरा बेटा बड़ा होकर स्वयं मेरा दुश्मन बन जाये। मैं उसे अपने साथ नहीं रख सकती – मैं अपना नाम बदलकर जो रहती हूँ। मैंने उसे आठ बरस से नहीं देखा है – आठ बरस! कितने दिन हो गये!"

वह खिड़की के पास जाकर खड़ी हो गयी और बाहर फीके रंग के शून्य आकाश को देखने लगी।

"अगर वह मेरे साथ रहता होता, तो मुझमें ज़्यादा शक्ति आ जाती। मेरे हृदय में तब यह निरन्तर पीड़ा न होती... अगर वह मर जाता, तो भी मुझे सन्तोष हो जाता..."

"हाय बेचारी!" माँ ने एक लम्बी साँस लेकर कहा; उसका हृदय वेदना से फटा जा रहा था।

"तुम भी कितनी भाग्यवान हो!" लूदमीला ने एक कटु मुक्कराहट के साथ अस्फुट स्वर में कहा। "माँ और बेटे का कन्धे से कन्धा मिलाकर साथ चलना कितनी शानदार बात है और ऐसा बहुत कम ही होता है!"

"हाँ, बहुत ही शानदार बात है!" पेलागेया ने कहा और उसे अपनी बात पर स्वयं विस्मय होने लगा। फिर उसने अपना स्वर धीमा करके इस प्रकार कहा, मानो कोई भेद बता रही हो, "और आप सभी लोग – तुम, निकोलाई इवानोविच,

और वे सभी जो सच्चाई के रास्ते पर चल रहे हैं – एक–दूसरे के कन्धे से कन्धा मिलाकर चल रहे हैं। अचानक सब लोग एक जैसे हो गये हैं और मैं तुम सब लोगों की भावनाएँ भली–भाँति समझती हूँ। तुम लोग जो कुछ कहते हो उसे तो मैं पूरी तरह समझ नहीं पाती, पर और सब बातें मैं समझती हूँ!"

"हाँ, यही बात है!" लूदमीला ने अस्फुट स्वर में कहा। "यही बात है..."

माँ अपना हाथ लूदमीला के सीने पर रखकर इतने धीमे–धीमे बोलती रही, मानो जो कुछ वह कह रही थी उसे वह अपनी कल्पना में देख भी रही हो।

"हमारे बच्चे दुनिया में आगे बढ़ रहे हैं! मैं तो इसे इसी तरह देखती हूँ – वे सारी दुनिया में फैल गये हैं और दुनिया के कोने–कोने से आकर वे एक ही लक्ष्य की ओर बढ़ रहे हैं! जिन लोगों के हृदय सबसे शुद्ध हैं, जिनके मस्तिष्क सबसे श्रेष्ठ हैं वे पाप के ख़िलाफ़ बढ़ रहे हैं और झूठ को अपने ताकतवर पाँवों तले कुचल रहे हैं। वे नौजवान हैं और स्वस्थ हैं और उनकी सारी शक्ति एक ही लक्ष्य – न्याय – को प्राप्त करने के लिए, व्यय हो रही है। वे मनुष्य के दुख को मिटाने के लिए, इस पृथ्वी पर से विपदा का नाम–निशान मिटा देने के लिए और कुरूपता पर विजय प्राप्त करने के लिए मैदान में उतरे हैं – और विजय उनकी अवश्य होगी! जैसाकि किसी ने कहा है वे एक नया सूर्य उगाने के लिए निकले हैं और वे इस सूर्य को उगाकर रहेंगे! वे टूटे हुए दिलों को जोड़ने के लिए निकले हैं और वे उन्हें जोड़कर रहेंगे!"

उसे भूली हुई उन प्रार्थनाओं के शब्द याद आने लगे, जो उसके हृदय में चिंगारियों की तरह भड़क रही थीं और एक नये विश्वास की ज्योति जगा रही थीं।

"हमारे बच्चे सच्चाई और न्याय के पथ पर चल रहे हैं, लोगों के हृदय में एक नये प्रेम का संचार कर रहे हैं, उन्हें एक नये स्वर्ग का चित्र दिखा रहे हैं और पृथ्वी को एक नयी ज्योति से आलोकित कर रहे हैं – आत्मा की अखण्ड ज्योति से। इसकी नयी ज्वाला से एक नये जीवन का उदय हो रहा है; यह जीवन समस्त मानवता के प्रति हमारे बच्चों के प्रेम से उत्पन्न हो रहा है। इस प्रेम की ज्योति को कौन बुझा सकता है? कौन बुझा सकता है? कौन सी शक्ति इसे नष्ट कर सकती है और इसका मुकाबला कर सकती है? इस प्रेम को पृथ्वी ने जन्म दिया है और स्वयं जीवन उसकी विजय के लिए लालायित है – स्वयं जीवन!"

अपने भावावेश के उद्वेग से माँ की शक्ति क्षीण हो गयी और वह वहाँ से दूसरी तरफ़ जाकर बैठ गयी और हाँफने लगी। लूदमीला भी चुपचाप बड़ी सतर्कता से क़दम रखती हुई वहाँ से चली गयी, मानो उसे यह डर हो कि कहीं कोई चीज़ टूट न जाये। बहुत ढीले–ढीले क़दमों से वह कमरे में टहल रही थी

और अपनी निस्तेज आँखों से सामने शून्य में घूर रही थी। ऐसा प्रतीत होता था कि वह कुछ और लम्बी हो गयी थी, उसका शरीर कुछ और तन गया था और वह कुछ और नाजुक हो गयी थी। उसके दुबले-पतले कठोर चेहरे पर गहरी चिन्ता की छाप थी और उसके होंठ घबराहट के कारण भिंचे हुए थे। कमरे की निस्तबधता के कारण थोड़ी देर बाद माँ का उद्वेग शान्त हो गया।

"मैंने कोई ऐसी बात तो नहीं कह दी जो मुझे नहीं कहनी चाहिए थी?.." लूदमीला का चिन्तित देखकर उसने क्षमा-याचना के भाव से पूछा।

लूदमीला ने मुड़कर प्राय: भयातुर होकर माँ की तरफ़ देखा, फिर वह जल्दी-जल्दी बोलने लगी और इस प्रकार हाथ फैला दिया जैसे कुछ रोकना चाहती हो।

"नहीं नहीं! तुमने जो कहा वही सच बात है, पर हम अब उसके बारे में कुछ नहीं कहेंगे। बस, जो तुमने कहा है उसमें कुछ बदलने की ज़रूरत नहीं।" उसका स्वर कुछ और शान्त हो गया और वह बोली, "तुम्हें बस अब जल्दी ही चल देना चाहिए - बहुत दूर है!"

"काश तुम्हें मालूम होता कि मैं कितनी ख़ुश हूँ! दूसरों के पास अपने बेटे के शब्द, स्वयं अपने रक्त-मांस के शब्द ले जाते हुए मुझे कितनी ख़ुशी हो रही है! ऐसा मालूम होता है जैसे मैं स्वयं अपनी आत्मा बाँटने जा रही हूँ!"

यह कहकर माँ मुस्करायी पर लूदमीला के चेहरे पर उसकी इस मुस्कराहट का केवल एक हल्का-सा ही प्रतिबिम्ब दिखायी दिया। माँ को ऐसा लगा कि इस औरत के संयम के कारण उसका उल्लास मन्द पड़ता जा रहा था और सहसा उसकी यह उत्कट इच्छा हुई कि वह अपनी आत्मा की आग लूदमीला की कठोर आत्मा में उँड़ेल द, और उसमें भी हर्ष के तूफान से उमड़ते हुए एक हृदय के प्रति संवेदना जागृत कर दे। उसने लूदमीला के दोनों हाथ अपने हाथों में कसकर दबा लिये और बोली :

"प्यारी बहन! यह जानकर कितनी ख़ुशी होती है कि एक ज्योति ऐसी भी है जो दुनिया के सारे लोगों को रास्ता दिखा रही है, कि एक दिन ऐसा समय भी आयेगा जब सब लोग इस ज्योति को देखेंगे और सच्चे हृदय से इसका अनुसरण करेंगे!"

माँ के बड़े-से उदार चेहरे पर कम्पन की एक लहर दौड़ गयी; उसकी आँखें चमकने लगीं और आँखों के ऊपर उसकी भवें इस प्रकार फड़कने लगीं, मानो आँखों की चमक पंख लगाकर उड़ रही हो। उसके मस्तिष्क में वे महान विचार चक्कर काट रहे थे जिनमें उसने अपनी समस्त आत्मा, अपना सारा अनुभव और सारी वेदना भर दी थी। उसने इन विचारों के सार-तत्व को शब्दों के कठोर

चमकदार स्फटिकों के रूप में ढाल लिया था जो उसके पतझड़ जैसे निर्जन हृदय में आकार व संख्या में बढ़ते जा रहे थे और वसन्त ऋतु के सूर्य की सृजनात्मक शक्ति से आलोकित होकर उत्तरोत्तर बढ़ती हुई ज्योति से उद्दीप्त हो रहे थे।

"ऐसा मालूम होता है कि जैसे मनुष्य के लिए एक नये ईश्वर का जन्म हुआ हो! हर चीज़ सब के लिए – सब एक–दूसरे के सुख–दुख के साझेदार! मैं तो इसे इसी ढंग से समझती हूँ। वास्तव में ही तुम लोग साथी हो, सब एक ख़ून के रिश्ते से बँधे हो, सब एक ही माँ की सन्तान हो और वह माँ है सत्य!"

एक बार फिर वह भावनाओं की लहरों पर तैरने लगी। उसने रुककर एक गहरी साँस ली और अपने हाथ फैलाकर बोली :

"और जब भी मैं अपने मन में 'साथी' शब्द कहती हूँ, तो मैं अपने हृदय में अपने साथियों की आहट सुनती हूँ!"

माँ जो चाहती थी उसमें वह सफल हो गयी – लूदमीला के चेहरे पर लाली दौड़ गयी, उसके होंठ काँपने लगे और आँसू की बड़ी–बड़ी गोल बूँदें उसके गालों पर ढलकने लगीं।

माँ ने उसे अपनी भुजाओं में जकड़ लिया और बड़े कोमल भाव से मुस्कराने लगी; अपने हृदय की विजय पर वह अत्यन्त मधुर पुलक का अनुभव करने लगी।

जब वे एक–दूसरे से विदा हुए, तो लूदमीला माँ के चेहरे की तरफ़ देखकर धीरे से बोली :

"तुम्हें नहीं मालूम कि तुम्हारे साथ रहकर कितनी ख़ुशी होती है!"

29

बाहर क़दम रखते ही ठण्डी हवा ने बड़ी क्रूरता से उसे आ दबोचा, उसकी नाक पर हवा तीर की तरह लगने लगी और उसकी साँस फूलने लगी। उसने रुककर अपने चारों ओर नज़र दौड़ायी। सड़क के नुक्कड़ पर एक घोड़ागाड़ीवाला फर की टोपी पहने खड़ा था; उससे कुछ आगे एक आदमी कमर दोहरी किये अपना सिर दोनों कन्धों के बीच दुबकाये सड़क पर चला जा रहा था और उसके आगे एक सिपाही अपने कानों को मलता हुआ भागा जा रहा था।

"सिपाही को शायद किसी ने दुकान तक भेजा होगा!" माँ ने सोचा और आगे बढ़ गयी; अपने पाँवों तले बर्फ़ के चरमराने की ज़ोरदार आवाज़ सुनकर वह बहुत ख़ुश हो रही थी। वह गाड़ी के वक़्त से पहले ही स्टेशन पहुँच गयी, लेकिन तीसरे दर्जे के गन्दे, धुएँ से काले मुसाफिरख़ाने में लोगों की भीड़ लगी हुई थी। सर्दी से बचने के लिए रेल की लाइन पर काम करने वाले मज़दूर, घोड़ागाड़ीवाले

और फटे–पुराने कपड़े पहने बहुत–से बेघरबार लोग वहाँ आ गये थे। कुछ यात्री भी थे, जिनमें कुछ किसान, रीछ की खाल का कोट पहने हुए एक मोटा–सा बनिया, एक पादरी और उसकी चेचकरू बेटी, पाँच या छः सिपाही और कुछ बौखलाये हुए टुटपुँजिये थे। लोग सिगरेट का धुआँ उड़ा रहे थे, बातें कर रहे थे और चाय और वोद्का पी रहे थे। रेस्तरां में कोई ठहाका मारकर हँस पड़ा; हर चीज़ पर धुएँ के घने बादल छा गये। जब दरवाज़ा खोला जाता, तो उसमें चूँ–चूँ की आवाज़ निकलती और जब बन्द किया जाता, तो खिड़कियों के शीशे हिलकर खड़खड़ा उठते। कमरे में तम्बाकू और नमक लगी मछली की बू बसी हुई थी।

माँ दरवाज़े के पास ही एक ऐसी जगह पर बैठकर प्रतीक्षा करने लगी जहाँ उसे आसानी से देखा जा सके। जब भी दरवाज़ा खुलता माँ ठण्डी हवा का तेज़ झोंका अन्दर आता हुआ अनुभव करती; यह हवा उसे बहुत सुखकर प्रतीत होती और दरवाज़ा खुलने पर हर बार वह गहरी–गहरी साँसें लेने लगती। अधिकांश लोगों के पास गठरियाँ थीं और दरवाज़े से घुसते समय वे उसमें फँस जाते थे; वे गालियाँ बकते हुए अपनी गठरियाँ फ़र्श पर या बेंच पर पटक देते और अपनी आस्तीनों और कालर, मूँछों और दाढ़ियों पर से बर्फ़ झाड़ते हुए गुर्राते थे।

एक नौजवान चमड़े का सूटकेस लिये हुए दरवाज़े से अन्दर आया और जल्दी से चारों ओर नज़र डालकर सीधे माँ के पास चला गया।

"मास्को जा रही हैं आप?" उसने धीमे स्वर में पूछा।

"हाँ, तान्या के पास," माँ ने उत्तर दिया।

"यह लीजिये!"

उसने सूटकेस बेंच पर माँ के पास रख दिया और एक सिगरेट सुलगाकर अपनी हैट तिरछी करके दूसरे दरवाज़े से बाहर चला गया। माँ ने सूटकेस के ठण्डे चमड़े को हाथ से थपथपाया और उस पर कुहनी टिकाकर बड़े सन्तोष के भाव से अपने चारों ओर लोगों को ध्यान से देखने लगी। एक मिनट बाद वह वहाँ से उठकर दूसरी जगह बैठ गयी जो बाहर निकलने के दरवाज़े से ज़्यादा निकट थी। वह अपना सिर ऊँचा किये चल रही थी और पास से गुजरनेवालों के चेहरों पर नज़र डालती जाती थी; सूटकेस बहुत भारी नहीं था, उसे ले चलने में उसे कोई कठिनाई नहीं हो रही थी।

एक नौजवान, जो बन्द गले का छोटा कोट पहने हुए था, आकर उससे टकरा गया। चुपके से वह एक तरफ़ को हट गया और अपना हाथ उठाकर हैट तक ले गया। माँ को उसमें कोई पहचानी हुई बात दिखायी दी। उसने पीछे मुड़कर उस आदमी पर एक नज़र डाली और देखा कि एक भूरी आँख उसके कालर के ऊपर से उसे घूर रही है। उसका इस प्रकार घूरना माँ के कलेजे पर छुरी की तरह

लगा; जिस हाथ में वह सूटकेस लिये हुए थी वह रह-रहकर काँपने लगा और सहसा उसका बोझ भारी होने लगा।

"मैंने उसे पहले कहीं देखा है!" माँ ने सोचा। उसे देखकर माँ के हृदय में जो अरुचिकर भावना उत्पन्न हुई थी उसका स्थान इस विचार ने ले लिया; वह उस भावना की व्याख्या करने से इंकार कर रही थी जिसके कारण धीरे-धीरे पर अदम्य वेग से उसका दिल बैठा जा रहा था। पर यह भावना बढ़ती गयी और उसके गले में आकर अटक गयी; उसके मुँह का स्वाद कड़वा हो गया। बार-बार पीछे मुड़कर उसे देखे बिना माँ का जी नहीं मानता था। वह पैर बदलता हुआ उसी जगह खड़ा था, मानो यह फ़ैसला करने का प्रयत्न कर रहा हो कि क्या करे। वह बायाँ हाथ अपनी जेब में और दाहिना कोट के बटनों के बीच रखे हुए था, उसका दाहिना कन्धा बायें कन्धे से कुछ ऊँचा लग रहा था।

माँ बेंच के पास जाकर धीरे से और बड़ी सावधानी से उस पर बैठ गयी, मानो उसे यह डर हो कि उसके शरीर के अन्दर किसी चीज़ को ठेस न लग जाये। आशंकाओं में ग्रस्त वह अपने मस्तिष्क पर ज़ोर देने लगी और उसे याद आया कि उसने इससे पहले दो बार इस आदमी को देखा था : एक बार तो शहर के सिरेवाले खुले मैदान में जब रीबिन जेल से भागा था और दूसरी बार मुक़दमे के समय अदालत में। अदालत के कमरे में वह उसी पुलिसवाले के बगल में खड़ा था जिसे माँ ने रीबिन का पीछा करने के लिए गलत रास्ता बता दिया था। माँ समझ गयी कि वे उसे जानते हैं और उसका पीछा कर रहे हैं। अब इसमें कोई सन्देह हो ही नहीं सकता था।

"पकड़ी गयी?" उसने अपने आपसे पूछा।

"मुमकिन है अभी नहीं," उसने काँपकर स्वयं ही उत्तर दिया।

"पकड़ी गयी!" एक ही क्षण बाद उसने सच्चाई का सामना करने का फ़ैसला करते हुए अपने मन में घोषणा की।

वह चारों ओर नज़रें दौड़ा रही थी, पर देख कुछ भी नहीं रही थी। उसके दिमाग में विचार चिंगारियों की तरह भड़क रहे थे।

"क्या मैं सूटकेस यहीं छोड़कर चली जाऊँ?"

एक दूसरी चिंगारी ने, जो ज़्यादा चमकदार थी, इस विचार का स्थान ले लिया :

"क्या? अपने बेटे के शब्दों को इस तरह छोड़ जाऊँ? उन्हें ऐसे हाथों में सौंप जाऊँ?"

उसने सूटकेस मज़बूती से पकड़ लिया।

"क्या मैं इसे लेकर चली जाऊँ?.. यहाँ से भाग जाऊँ?.."

ऐसे विचार उसके शत्रु थे, वे बाहर से ज़बरदस्ती उस पर थोपे जा रहे थे। वे उसके मस्तिष्क को झुलसा दे रहे थे, उसके हृदय को मानो आग के धागे से सी रहे थे। इन विचारों की पीड़ा से व्याकुल होकर माँ अपने आपको भूल गयी, पावेल को और हर उस चीज़ को भूल गयी जो उसे इतनी प्रिय थी। उसे ऐसा लगा कि कोई शत्रुतापूर्ण शक्ति उसके कन्धों और सीने पर बोझ की तरह रखी हुई है, और इस घातक भय से उसका गला घोंटे दे रही है। उसकी कनपटियों की नसें ज़ोर से धड़कने लगीं और उसे ऐसा मालूम हुआ कि उसके बालों की जड़ों में गरमी रेंगकर आ रही है।

सहसा अपनी पूरी शक्ति लगाकर उसने अपने विचारों को दूर हटा दिया, इन सब तुच्छ कमज़ोर चिंगारियों को कुचल दिया और बड़े गर्व से अपने मन में कहा :

"धिक्कार है मुझे!"

उसकी तबीयत फ़ौरन सँभल गयी; वास्तव में उसमें साहस आ गया और उसने अपने मन में कहा :

"अपने बेटे के नाम पर कलंक का टीका न लगाओ! डर की ऐसी–तैसी!"

उसकी आँखों ने दो नीरस और भीरु घूरती हुई आँखों को देखा; उसके मस्तिष्क में रीबिन का चेहरा बिजली की तरह कौंध गया। संकोच में उसने जो कुछ क्षण बिताये थे उनसे अब उसका विश्वास और दृढ़ हो गया था।

"अब क्या होगा?" उसने चारों ओर नज़र दौड़ाते हुए सोचा।

जासूस ने एक गार्ड को बुलाकर उसके कान में कुछ कहा और आँखों से माँ की तरफ़ इशारा किया। गार्ड ने उसे देखा और वापस चला गया। इतने में दूसरा गार्ड आया और उसकी बात सुनकर उसकी भवें तन गयीं। यह गार्ड एक बूढ़ा आदमी था – लम्बा कद, सफ़ेद बाल, दाढ़ी बढ़ी हुईं उसने जासूस की तरफ़ देखकर सिर हिलाया और उस बेंच की तरफ़ बढ़ा जिस पर माँ बैठी हुई थी। जासूस कहीं ग़ायब हो गया।

गार्ड बड़े इत्मीनान से आगे बढ़ रहा था और त्योरियाँ चढ़ाये माँ को घूर रहा था। माँ बेंच पर सिमटकर बैठ गयी।

"बस, कहीं मुझे मारें न!" माँ ने सोचा।

गार्ड माँ के सामने आकर रुक गया और एक क्षण तक कुछ नहीं बोला।

"क्या देख रही हो?" उसने आख़िरकार पूछा।

"कुछ भी नहीं," माँ ने उत्तर दिया।

"अच्छा यह बात है, चोर कहीं की! इस उमर में यह सब करते शरम नहीं आती!"

उसके शब्द माँ के गालों पर तमाचों की तरह लगे – एक... दो; उनमें कुत्सा का जो घृणित भाव था वह माँ के लिए इतना कष्टदायक था कि जैसे उसने किसी तेज़ चीज़ से माँ के गाल चीर दिये हों या उसकी आँखें बाहर निकाल ली हों...

"मैं? मैं चोर नहीं हूँ, तुम ख़ुद झूठे हो!" उसने पूरी आवाज़ से चिल्लाकर कहा और उसके क्रोध के तूफ़ान में हर चीज़ उलट-पुलट होने लगी। उसने सूटकेस को एक झटका दिया और वह खुल गया।

"सुनो! सुनो! सब लोग सुनो!" उसने चिल्लाकर कहा और उछलकर पर्चों की एक गड्डी अपने सिर के ऊपर हिलाने लगी। उसके कान में जो गूँज उठ रही थी उसके बीच उसे चारों तरफ़ से भागकर आते हुए लोगों की बातें साफ़ सुनायी दे रही थीं।

"क्या हुआ?"

"वह वहाँ – जासूस..."

"क्या बात है?"

"कहते हैं कि यह चोर है..."

"देखने में तो बड़ी शरीफ़ औरत मालूम होती है! छिः छिः!"

"मैं चोर नहीं हूँ!" माँ ने चिल्लाकर कहा; लोगों की भीड़ अपने चारों तरफ़ एकत्रित देखकर उसकी भावनाओं का प्रबल वेग थम गया था।

"कल राजनीतिक कैदियों पर एक मुक़दमा चलाया गया था और उनमें मेरा बेटा पावेल व्लासोव भी था। उसने अदालत में एक भाषण दिया था – यह वही भाषण है! मैं इसे लोगों के पास ले जा रही हूँ ताकि वे इस पढ़कर सच्चाई का पता लगा सकें..."

किसी ने बड़ी सावधानी से उसके हाथ से एक पर्चा ले लिया। माँ ने गड्डी हवा में उछालकर भीड़ की तरफ़ फेंक दी।

"तुम्हें इसका मजा चखा दिया जायेगा!" किसी ने भयभीत स्वर में कहा।

माँ ने देखा कि लोग झपटकर पर्चे लेते हैं और अपने कोट में तथा जेबों में छुपा लेते हैं। यह देखकर उसमें नयी शक्ति आ गयी। वह अधिक शान्त भाव से और ज़्यादा जोश के साथ बोलने लगी; उसके हृदय में गर्व और उल्लास का जो सागर ठाठें मार रहा था उसका उसे आभास था। बोलते-बोलते वह सूटकेस में से पर्चे निकालकर दाहिने बायें उछालती जा रही थी और लोग बड़ी उत्सुकता से हाथ बढ़ाकर इन पर्चों को पकड़ लेते थे।

"जानते हो मेरे बेटे और उसके साथियों पर मुक़दमा क्यों चलाया गया? मैं तुम्हें बताती हूँ, तुम एक माँ के हृदय और उसके सफ़ेद बालों का यकीन करो

– उन लोगों पर मुक़दमा सिर्फ़ इसलिए चलाया गया कि वे लोगों को सच बातें बताते थे! और कल मुझे मालूम हुआ कि इस सच्चाई से... कोई भी इंकार नहीं कर सकता – कोई भी नहीं!

भीड़ बढ़ती गयी, सब लोग चुप थे और इस औरत के चारों तरफ़ सप्राण शरीरों को घेरा खड़ा था।

"ग़रीबी, भूख और बीमारी – लोगों को अपनी मेहनत के बदले यही मिलता है! हर चीज़ हमारे ख़िलाफ़ है – ज़िन्दगी-भर हम रोज़ अपनी रत्ती-रत्ती शक्ति अपने काम में खपा देते हैं, हमेशा गन्दे रहते हैं, हमेशा बेवक़ूफ़ बनाये जाते हैं और दूसरे हमारी मेहनत का सारा फ़ायदा उठाते हैं और ऐश करते हैं, वे हमें जंजीर में बँधे हुए कुत्तों की तरह जाहिल रखते हैं – हम कुछ भी नहीं जानते, वे हमें डराकर रखते हैं – हम हर चीज़ से डरते हैं! हमारी ज़िन्दगी एक लम्बी अँधेरी रात की तरह है!"

"ठीक बात है!" किसी ने दबी जबान में समर्थन किया।

"बन्द कर दो इसका मुँह!"

भीड़ के पीछे माँ ने उस जासूस और दो राजनीतिक पुलिसवालों को देखा और वह जल्दी-जल्दी बचे हुए पर्चे बाँटने लगी। लेकिन जब उसका हाथ सूटकेस के पास पहुँचा, तो किसी दूसरे के हाथ से छू गया।

"ले लो, और ले लो!" उसने झुके-झुके कहा।

"चलो, हटो यहाँ से!" राजनीतिक पुलिसवालों ने लोगों को ढँकेलते हुए कहा। लोगों ने अनमने भाव से पुलिसवालों को रास्ता दिया; वे पुलिसवालों को दीवार बनाकर पीछे रोके हुए थे; शायद वे जानबूझकर ऐसा नहीं कर रहे थे। लोगों के हृदय में न जाने क्यों इस बड़ी-बड़ी आँखों और उदार चेहरे तथा सफ़ेद बालोंवाली औरत के प्रति इतना अदम्य आकर्षण था। जीवन में वे सबसे अलग-थलग रहते थे, एक-दूसरे से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था, पर यहाँ वे सब एक हो गये थे; वे बड़े प्रभावित होकर इन जोश-भरे शब्दों को सुन रहे थे; जीवन के अन्यायों से पीड़ित होकर शायद उनमें से अनेक लोगों के हृदय बहुत दिनों से इन्हीं शब्दों की खोज में थे। जो लोग माँ के सबसे निकट थे वे चुपचाप खड़े थे; वे बड़ी उत्सुकता से उसकी आँखों में आँखें डालकर ध्यान से उसकी बातें सुन रहे थे और वह उनकी साँसों की गर्मी चेहरे पर अनुभव कर रही थी।

"खिसक जा यहाँ से, बुढ़िया!"

"वे अभी तुझे पकड़ लेंगे!.."

"कितनी हिम्मत है इसमें!"

"चलो यहाँ से! जाओ अपना काम देखो!" राजनीतिक पुलिसवालों ने भीड़

को ठेलते हुए चिल्लाकर कहा। माँ के सामने जो लोग थे वे एक बार कुछ डगमगाये और फिर एक-दूसरे से सटकर खड़े हो गये।

माँ को आभास हुआ कि वे उसकी बात को समझने और उस पर विश्वास करने को तैयार थे और वह जल्दी-जल्दी उन्हें वे सब बातें बता देना चाहती थी जो वह जानती थी, वे सारे विचार उन तक पहुँचा देना चाहती थी जिनकी शक्ति का उसने अनुभव किया था। इन विचारों ने उसके हृदय की गहराई से निकलकर एक गीत का रूप धारण कर लिया था, पर माँ यह अनुभव करके बहुत क्षुब्ध हुई कि वह इस गीत को गा नहीं सकती थी – उसका गला रुँध गया था और स्वर भर्रा गया था।

"मेरे बेटे के शब्द एक ऐसे ईमानदार मज़दूर के शब्द हैं जिसने अपनी आत्मा को बेचा नहीं है! ईमानदारी के शब्दों को आप उनकी निर्भीकता से पहचान सकते हैं!"

किसी नौजवान की दो आँखें भय और हर्षातिरेक से उसके चेहरे पर जमी हुई थीं।

किसी ने उसके सीने पर एक घूँसा मारा और वह बेंच पर गिर पड़ी। राजनीतिक पुलिसवालों के हाथ भीड़ के ऊपर ज़ोर से चलते हुए दिखायी दे रहे थे, वे लोगों के कन्धे और गर्दनें पकड़कर उन्हें ढँकेल रहे थे; उनकी टोपियाँ उतारकर मुसाफिरख़ाने के दूसरे सिरे पर फेंक रहे थे। माँ की आँखों के आगे धरती घूम गयी, पर उसने अपनी कमज़ोरी पर काबू पाकर अपनी बची-खुची आवाज़ से चिल्लाकर कहा :

"लोगो, एक होकर ज़बरदस्त शक्ति बन जाओ!"

एक पुलिसवाले ने अपने मोटे-मोटे बड़े से हाथ से उसकी गर्दन पकड़कर उसे ज़ोर से झंझोड़ा।

"बन्द कर अपनी जबान!"

माँ का सिर दीवार से टकराया। एक क्षण के लिए उसके हृदय में भय का दम घोंट देनेवाला धुआँ भर गया, पर शीघ्र ही उसमें फिर साहस पैदा हुआ यह धुआँ छँट गया।

"चल यहाँ से!" पुलिसवाले ने कहा।

"किसी बात से डरना नहीं! तुम्हारी ज़िन्दगी जैसी अब है उससे बदतर और क्या हो सकती है..."

"चुप रह, मैंने कह दिया!" पुलिसवाले ने उसकी बाँह पकड़कर उसे ज़ोर से धक्का दिया। दूसरे पुलिसवाले ने उसकी दूसरी बाँह पकड़ ली और दोनों उसे साथ लेकर चले।

“उसे कटुता से बदतर और क्या हो सकता है जो दिन–रात तुम्हारे हृदय को खाये जा रही है और तुम्हारी आत्मा को खोखला किये दे रही है!”

जासूस माँ के आगे–आगे भाग रहा था और मुट्ठी तान–तानकर उसे धमका रहा था।

“चुप रह, कुतिया!” उसने चिल्लाकर कहा।

माँ की आँखें चमकने लगीं और क्रोध से फैल गयीं; उसके होंठ काँपने लगे।

“पुनर्जीवित आत्मा को तो नहीं मार सकते!” उसने चिल्लाकर कहा और अपने पाँव पत्थर के चिकने फ़र्श पर जमा दिये।

“कुतिया कहीं की!”

जासूस ने उसके मुँह पर एक थप्पड़ मारा।

“इसकी यही सजा है, इस चुड़ैल बुढ़िया की!” किसी ने जलकर कहा।

एक क्षण के लिए माँ की आँखों के आगे अँधेरा छा गया; उसके सामने लाल और काले धब्बे से नाचने लगे और उसका मुँह रक्त के नमकीन स्वाद से भर गया।

लोगों के छोटे–छोटे वाक्य सुनकर उसे फिर होश आया :

“ख़बरदार, जो उसे हाथ लगाया!”

“आओ, चलो यार!”

“बदमाश कहीं का!”

“एक दे ज़ोर का!”

“वे हमारी चेतना को तो ख़ून से नहीं उँड़ेल सकते!”

वे माँ की पीठ और गर्दन पर घूँसे बरसा रहे थे, उसके कन्धों और सिर पर मार रहे थे; हर चीज़ चीख़–पुकार, क्रन्दन और सीटियों की आवाज़ों का एक झंझावात बनकर उसकी आँखों के सामने नाच रही थी और बिजली की तरह कौंध रही थी। उसके कान में एक ज़ोर का घुटा हुआ धमाका हुआ; उसका गला रुँध गया; उसका दम घुटने लगा और उसके पाँवों तले कमरे का फ़र्श धँसने लगा; उसकी टाँगें जवाब देने लगीं; वह तेज़ छुरी के घाव जैसी चुभती हुई पीड़ा से तिलमिला उठी, उसका शरीर बोझल हो गया और वह निढाल होकर झूमने लगी। पर उसकी आँखों में अब भी वही चमक थी। उसकी आँखें बाक़ी सब लोगों की आँखों को देख रही थीं; उन सब आँखों में उसी साहसमय ज्योति की आग्नेय चमक थी जिसे वह भली–भाँति जानती थी और जिसे वह बहुत प्यार करती थी।

पुलिसवालों ने उसे एक दरवाज़े के अन्दर ढँकेल दिया।

उसने झटका देकर अपनी एक बाँह छुड़ा ली और दरवाज़े की चौखट पकड़ ली।

“सच्चाई को तो ख़ून की नदियों में भी नहीं डुबोया जा सकता...”

पुलिसवालों ने उसके हाथ पर ज़ोर से मारा।

“अरे बेवक़ूफ़ो, तुम जितना अत्याचार करोगे, हमारी नफ़रत उतनी ही बढ़ेगी! और एक दिन यह सब तुम्हारे सिर पर पहाड़ बनकर टूट पड़ेगा!”

एक पुलिसवाला उसकी गर्दन पकड़कर ज़ोर से उसका गला घोंटने लगा।

“कमबख्तो...” माँ ने साँस लेने को प्रयत्न करते हुए कहा।

किसी ने इसके उत्तर में ज़ोर से सिसकी भरी।

परिशिष्ट

फ्माँय़ उपन्यास के नायकों के गाढ़े समय में गोर्की अपने पाठकों से विदा ले लेते हैं। पावेल व्लासोव हज़ारों किलोमीटर की दूरी पर सदा के लिए साइबेरिया में निर्वासित किया जानेवाला है और उसकी माँ पेलागेया निलोवना उस सूटकेस के साथ, जिसमें मुव़फदमे के समय पावेल के भाषण के छपे हुए ग़ैर-व़फानूनी पर्चे भरे थे, राजनीतिक पुलिसवालों के हत्थे चढ़ जाती है। वे उसका अपमान करते हैं, मारते-पीटते हैं, मगर वह इर्द-गिर्द जमा लोगों को जीवन की सच्चाई बताने को मौव़फा हाथ से नहीं जाने देती... वह चिल्लाकर अपने जल्लादों से कहती है - फ्सच्चाई को तो खून की नदियों में भी नहीं डुबोया जा सकता... बेवव़फूप़फो, तुम जितना अत्याचार करोगे, हमारी नप़फरत उतनी ही बढ़ेगी!य़

गोर्की के उपन्यास के मुख्य पात्रों के मूल रूपों – प्योत्र जालोमोव और उनकी माँ आन्ना किरील्लोवना के साथ आगे क्या बीती?

प्योत्र जालोमोव बहुत साल ज़िन्दा रहे और 1955 में 78 साल के वृद्ध होकर परलोक सिधारे। उनकी माँ आन्ना किरील्लोवना ने भी काफ़ी लम्बी उम्र पायी। उनके बारे में गोर्की ने लिखा है – "सोर्मोवो में पहली मई के जुलूस के लिए 1902 में सजा पाने वाले प्योत्र जालोमोव की माँ का ही रूप पेलागेया निलोवना थीं। वे गुप्त संगठन में काम करती थीं और भिक्षुणी के भेस में साहित्य ले जाती थीं..."

आन्ना किरील्लोवना का जन्म 1849 में एक मोची के घर में हुआ। उनकी ज़िन्दगी कठिन रही। पति की मृत्यु के बाद तो उन्हें ख़ासतौर पर बहुत बुरा वक़्त देखना पड़ा – उनके सात बच्चे थे... वे "विधवा घर" के अँधेरे और ठण्डे तहख़ाने में अपने बच्चों के साथ रहती थीं। माँ की दृढ़ता और श्रमप्रियता ने ही परिवार को बचाया। बच्चे धीरे–धीरे बड़े होते गये – कुछ काम करने लगे, कुछ पढ़ते रहे। प्योत्र क्रान्तिकारी मण्डल में शामिल हो गये और "हमारे जीवन में ताज़गी और स्फूर्ति लानेवाली हवा का झोंका आया," प्योत्र की छोटी बहन वर्वारा जालोमोव के स्मरण करते हुए बाद में कहा। जल्दी ही पूरा जालोमोव–परिवार क्रान्तिकारी आन्दोलन में हिस्सा लेने लगा।

महान अक्टूबर समाजवादी क्रान्ति के बाद आन्ना किरील्लोवना अपने बच्चों के साथ रहीं – कभी तो छोटी बेटी के पास लेनिनग्राद में और कभी बेटों के पास सोर्मोवो में।

छोटा कद, अत्यधिक सजीव आँखें और मधुर मुस्कान – ऐसी थीं यह बुजुर्ग महिला। अपने पके बालों पर वे अक्सर पुराने ढंग का लैसवाला काला रूमाल बाँधे रहती थीं। लेनिनग्राद की उरीत्स्की फ़ैक्टरी की मजदूरिनों, नीज्नी नोवगोरोद के स्कूली छात्रों, सोर्मोवो के मज़दूरों और उन सभी लोगों के मानस-पट पर आन्ना किरील्लोवना का ऐसा ही चित्र अंकित होकर रह गया है, जिन्होंने उन्हें देखा और सुना था। वे बहुत ही सीधे और सरल ढंग से अतीत की, अपने क्रान्तिकारी काम और बेटे की चर्चा किया करती थीं...

आन्ना किरील्लोवना का देहान्त 1938 में हुआ।

तो आइये, अब प्योत्र जालोमोव की ओर लौटें... ज़ारशाही अदालत की सजा के मुताबिक प्योत्र जालोमोव को 1903 में साइबेरिया के लिए रवाना कर दिया गया। एक साल तक पैदल चलने के बाद वह येनीसेई नदी पर पहुँचे और क्रास्नोयार्स्क से 300 किलोमीटर के फासले पर माक्लाकोव्का नाम की एक छोटी-सी बस्ती में रहने लगे... "निर्वासन में दो साल बिताये, स्थानीय किसानों में प्रचार करता रहा, जिले के मुंशी और उसके दो सहायकों को अपने विचारों से प्रभावित कर लिया। अलेक्सेई मक्सिमोविच गोर्की मुझे हर महीने जो आठ रूबल भेजते थे, उन्हें थानेदार हजम कर जाता था। मैं भूखों मरता था और मुझे शीताद हो गया..." प्योत्र जालोमोव ने अपने संस्मरणों में लिखा है।

1904 के मार्च महीने की धूप नहायी सुबह प्योत्र के जीवन का एक सुखद दिन लेकर आयी। वे अपने छोटे-से कमरे में स्की बना रहे थे। "दिल चैन और सम-गति से धड़क रहा था। अचानक दरवाज़ा खुला। हज़ारों किलोमीटर का फासला तय करके जोज़ेफीना मेरे यहाँ आयी थी। वह गिलहरी की फर का पुराना-सा कोट पहने थी और पाले से लाल हो रही थी।"

इन दो पेशेवर गुप्त क्रान्तिकारी कार्यकर्त्ताओं का प्रेम-मार्ग बड़ा कठिन रहा था। मास्कोवासिनी अध्यापिका जोज़ेफीना (जो फ़्रांसीसी राष्ट्रीयता थीं) के साथ प्योत्र का परिचय 1901 में ही हो गया था। वे मज़दूरों की बैठकों, सभाओं में, नीज्नी नोवगोरोद की सड़कों पर मिलते, मगर अपनी प्रणय-भावनाओं को छिपाये रहे। हाँ, प्योत्र जालोमोव जब गिरफ़्तार होने के बाद बुतिर्स्काया जेल में अपने भाग्य-निर्णय की प्रतीक्षा कर रहे थे, तब जोज़ेफीना "मंगेतर" के रूप में आन्ना किरील्लोवना के साथ उनसे मिलने आयीं...

गोर्की की मदद से जालोमोव के साइबेरिया से भाग निकलने की व्यवस्था

की गयी। वे पीटर्सबर्ग में गुप्त बोल्शेविक संगठन में काम करने लगे और 1905 की क्रान्ति के समय उन्होंने मास्को के हथियारबन्द मज़दूर दस्तों के संगठन में भाग लिया।

गोर्की के साथ प्योत्र जालोमोव की पहली मुलाक़ात 1905 की गर्मी में पीटर्सबर्ग के निकट कुओक्काला में गोर्की के देहाती बंगले पर हुई।

भावी उपन्यास के लेखक और भावी पावेल व्लासोव के मूल रूप कई साल से एक-दूसरे को जानते थे, मगर केवल पत्रों द्वारा ही। सोर्मोवो के मई दिवस के पहले ही गोर्की ने जालोमोव से मिलना चाहा। किन्तु प्योत्र को डर था कि इससे गोर्की को हानि पहुँच सकती है, क्योंकि उनका नाम पुलिस की काली सूची में आ चुका था और उन्हें यह भी मालूम था कि राजनीतिक पुलिसवाले क्रान्तिकारी लेखक को बदनाम करने का कोई भी मौक़ा हाथ से नहीं जाने देंगे। प्रथम मई के जुलूस और उसके नेताओं की गिरफ़्तारी के बाद गोर्की ने जालोमोव और उनके साथियों की बड़ी देखभाल की। प्योत्र की माँ आन्ना जालोमोव के द्वारा उन्होंने अपने नगर-भाइयों, नीज्नी नोवगोरोद के साथियों की मदद का वादा किया। गोर्की हर महीने उन्हें ख़र्च के लिए साइबेरिया पैसे भेजते रहे और जब उन्हें जालोमोव की पारिवारिक चिन्ताओं का पता चला, तो दुगनी रकम भेजने लगे। आख़िर वहाँ से भागने के लिए तीन सौ रूबल भेजे।

तो निर्वासित जालोमोव भागकर पीटर्सबर्ग आ गये। पहली बार गोर्की से मिलने पहुँचे।

इस ख़याल से कि कोई जासूस पीछे न लग जाये, वह स्टेशन तक न जाकर पहले ही गाड़ी से उतरकर जंगल में चले गये। बंगले के फाटक के पास रुके और आँगन में उन्हें चित्रों द्वारा अच्छी तरह जाना-पहचाना लम्बा, दुबला-पतला व्यक्ति दिखायी दिया।

"अलेक्सेई मक्सिमोविच!.." प्योत्र ने उन्हें सम्बोधित किया और अपना नाम बताया।

गोर्की मुस्कराते हुए उनकी ओर बढ़े। नगर-भाई गले मिले। गोर्की ने ख़ुश होते हुए जालोमोव को सिर से पाँव तक ग़ौर से देखकर कहा – "तो ऐसे हैं आप!"

कुछ देर बाद दोनों आराम से कुर्सियों पर बैठ गये और विस्तारपूर्वक बातचीत शुरू हुई। गोर्की ने लेखक की व्यावसायिक कुशलता के अनुरूप प्योत्र से उनके जीवन, माता-पिता, क्रान्तिकारी काम और सोर्मोवो के जुलूस के बारे में पूछताछ शुरू की। मज़दूर प्रचारक ने कामकाजी ढंग से तथ्य बताये, अपनी मन:स्थिति की बहुत कम चर्चा की और सपनों का तो उल्लेख ही नहीं किया।

यह भेंट बहुत ही मधुर और स्नेहपूर्ण रही और उन्होंने भावी मुलाक़ातों के बारे में तय किया। इन्हीं दिनों गोर्की ने अपने एक मित्र को प्योत्र के बारे में यह लिखा – "मेरे यहाँ एक सोर्मोवोवासी आता है। कैसा कमाल का है वह नौजवान!"

प्योत्र ने एक के बाद एक, पार्टी के कई उत्तरदायित्वपूर्ण काम पूरे किये। "मुझे मास्को में हथियारबन्द मज़दूर दस्तों का संगठनकर्ता नियुक्त किया गया। मास्को के सशस्त्र विद्रोह के आरम्भ होने से कुछ पहले अपनी पत्नी जोज़ेफीना एडुआर्डोव्ना के साथ मिलकर, जो दस महीने की बेटी लिये हुए साइबेरिया से मेरे पास आयी थी, बमों के खोल बनाता रहा... विद्रोह के समय मोर्चेबन्दियों की लड़ाइयों में भाग लिया। 1906 की गर्मियों के बीच मुँह से ख़ून आने और पूरी तरह शक्तिहीन हो जाने के कारण गुप्त काम छोड़ना पड़ा।"

गुप्त काम छोड़ने पर जालोमोव राजधानी से चले गये। नीज्नी नोवगोरोद के कारीगर प्योत्र जालोमोव अपने परिवार के साथ कूर्स्क गुबेर्निया के छोटे-से सूद्ज नगर में जा बसे। सूद्ज का जीवन प्योत्र के लिए वास्तव में दूसरा निर्वासन ही हो गया। उन्हें शहर से बाहर जाने और कहीं भी काम करने की इजाजत नहीं थी। पुलिस उनकी हर गतिविधि पर कड़ी नज़र रखती थी। फाकों, जेलों और निर्वासन से जर्जर जालोमोव का स्वास्थ्य इन वर्षों के दौरान और बिगड़ गया। पत्नी जोज़ेफीना एडुआर्डोवना सूद्ज के हाई-स्कूल में अध्यापिका हो गयी थीं और उन्हीं के वेतन से परिवार का ख़र्च चलता था। इस वक़्त के बारे में ख़ुद जालोमोव ने यह लिखा है – "1917 की फरवरी क्रान्ति तक मुझ पर जासूसों और राजनीतिक पुलिसवालों की गुप्त कड़ी नज़र रही। अलग-अलग किसानों के बीच ही काम कर पाया।"

1917 की फरवरी क्रान्ति आयी और उसके पीछे अक्टूबर क्रान्ति की गूँज सुनायी दे रही थी। सोर्मोवो के ध्वजवाहक, साहसी क्रान्तिकारी फिर से संघर्ष-क्षेत्र में आ डटे। पहली आम सभा में ही जालोमोव ने ज़ोरदार भाषण दिया, सभा में एकत्रित किसानों और मज़दूरों को पीटर्सबर्ग की घटनाओं का सार स्पष्ट किया।

अपने भाई अलेक्सान्द्र के नाम लिखे गये एक पत्र में प्योत्र जालोमोव ने क्रान्ति और गृह-युद्ध के वर्षों में अपने जीवन का सजीव वर्णन यों किया है – "...1917 में मैंने जिले में सोवियत सत्ता की स्थापना में हिस्सा लिया... जल्दी ही श्रम-कमिसार चुन लिया गया।

"सूद्ज पर सफ़ेद गार्डों के कब्जे के वक़्त उन्होंने कई बार मुझे सूली देनी चाही, मगर तीन बार मैं बच निकलने में कामयाब हो गया। आख़िरी बार देनीकिनवालों ने मुझे गिरफ़्तार किया और फ़ौजी अदालत में मुझ पर मुक़दमा

चलाया गया। जेलर मेरी खिल्ली उड़ाते थे और लगभग हर दिन मुझे सूली देने या गोली से उड़ाने की धमकी देते थे... अगर लाल सेना न आ जाती तो वे अपने निर्णय को अमली शक्ल दे भी देते।"

लाल सेना ने जालोमोव को मौत से बचाया। मगर शरीर बिल्कुल जवाब दे गया था – डटकर इलाज कराने की ज़रूरत थी। जालोमोव मास्को गये और देर तक अस्पताल में रहे। जिस्म में कुछ जान आयी, पुराने मैत्री–सम्बन्ध बहाल हुए (प्रसिद्ध क्रान्तिकारी, लेनिनवादी ग्लेब क्रजिजानोव्स्की के परिवार के साथ) और गोर्की के नायक के जीवन ने नया मोड़ लिया।

जन्मजात प्रचारक प्योत्र जालोमोव ने किसानों में बहुत प्रचार–कार्य किया – वे उन्हें समाचारपत्र पढ़कर सुनाते, देहातों में लोगों को सोवियत सत्ता की नीति, सरकार की नयी आज्ञप्तियाँ और निर्णय सीधे–सादे और साफ़ ढंग से समझाते।

जब सामूहिक फार्मों का आन्दोलन शुरू हुआ, तो प्योत्र ने सूद्ज के किसानों का "लाल अक्टूबर" फार्म संगठित किया। कई साल तक वे उसके अध्यक्ष और बाद में प्रबन्ध–समिति के सदस्य रहे।

सख़्त और जानलेवा बीमारी और डॉक्टरों की मनाही के बावजूद प्योत्र जालोमोव काम करते रहे। उन्होंने अपनी क्रान्तिकारी जवानी और गोर्की से मुलाक़ातों के संस्मरण लिखे, गोर्की के "माँ" उपन्यास के पाठकों के साथ बड़ा पत्र–व्यवहार करते रहे। अपने मित्रों – क्रजिजानोव्स्की परिवारवालों – को एक पत्र में जालोमोव ने अपना जीवन–दृष्टिकोण यों व्यक्त किया था – "मेरे ख़्याल में तो दास वह है जो अपने दयनीय जीवन को बदलने के लिए छटपटाता नहीं; जो आजादी के लिए संघर्ष करने का फ़ैसला कर लेता है, वह आजाद व्यक्ति हो जाता है, चाहे उसके हाथों में हथकड़ियाँ ही क्यों न पड़ी हों। मैं चाहता हूँ कि दास न हों, दास मुझे पसन्द नहीं हैं, संघर्षकर्त्ता, ऐसे लोग ही मुझे अच्छे लगते हैं जिनमें स्वतन्त्र व्यक्ति का दम–खम है।"

प्योत्र जालोमोव क्रान्ति के साधारण सैनिक थे। अपने समय में उन्होंने गोर्की का मन मोह लिया था और उनकी दृढ़ता, उनकी नैतिक निर्मलता आज हमें भी मुग्ध कर लेती है। उनके व्यक्तित्व, उनके जीवन और भाग्य में बीसवीं सदी के सजग रूसी मज़दूर क्रान्तिकारी के श्रेष्ठ गुण प्रतिबिम्बित हुए हैं।

• • •

परिकल्पना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित गोर्की की अन्य कृतियाँ

उपन्यास

माँ

वे तीन

मेरा बचपन

जीवन की राहों पर

मेरे विश्वविद्यालय

फोमा गोर्देयेव

अभागा

बेकरी का मालिक

कहानियाँ

चुनी हुई कहानियाँ (खण्ड 1)

चुनी हुई कहानियाँ (खण्ड 2)

चुनी हुई कहानियाँ (खण्ड 3)

हिम्मत न हारना मेरे बच्चो

कामो : एक जाँबाज़ इन्क़लाबी मज़दूर की कहानी

सम्पूर्ण पुस्तक सूची तथा पुस्तकें मँगाने के लिए
हमारे मुख्य वितरक से सम्पर्क करें

जनचेतना

डी-68, निरालानगर,
लखनऊ-226020
फ़ोन : 0522-2786782
ईमेल : **janchetna@rediffmail.com**
वेब : **janchetnaa.blogspot.com**

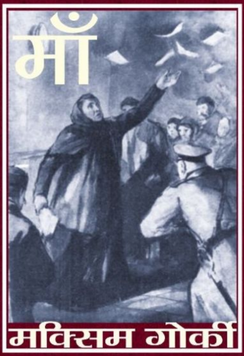

एक बार जब हम इस विचार को स्वीकार कर लेते हैं कि कला जनता को एकजुट करने का एक साधन है, तो फिर हम गोर्की के सम्पूर्ण कृतित्व की, और ख़ास तौर पर उनके 'माँ' उपन्यास की महत्ता स्वीकार किये बिना नहीं रह सकते। ...'माँ' मज़दूर वर्ग के बारे में है, मानव-सम्बन्धों को सुधारने में मज़दूर वर्ग की भूमिका के बारे में है। इसका मतलब यह है कि यह पुस्तक सिर्फ़ मज़दूर वर्ग के लिए ही नहीं है, बल्कि पूरी दुनिया की समूची जनता के लिए है।

– बुर्सोव

परिकल्पना प्रकाशन

ISBN 978-81-89760-40-3
मूल्य : रु. 95.00